राजस्थान के इतिहास के स्रोत

पुरातत्व भाग 1

लेखक

डा० गोपीनाथ शर्मा

एम. ए., पीएच. डी., डी. लिट्.

प्रोफेसर, इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग,

राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी

जयपुर

प्रस्तावना

भारत की स्वतन्त्रता के बाद इसकी राष्ट्रभाषा को विश्वविद्यालय शिक्षा के माध्यम के रूप में प्रतिष्ठित करने का प्रश्न राष्ट्र के सम्मुख था। किन्तु हिन्दी मे इस प्रयोजन के लिए अपेक्षित उपयुक्त पाठ्यपुस्तकें उपलब्ध नही होने से यह माध्यम परिवर्तन नही किया जा सकता था। परिणामत भारत सरकार ने इस न्यूनता के निवारण के लिए 'वैज्ञानिक तथा पारिभाषिक शब्दावली आयोग' की स्थापना की थी। इसी योजना के अन्तर्गत पीछे १९६९ मे पाँच हिन्दी भाषी प्रदेशो मे ग्रन्थ अकादमियो की स्थापना की गयी।

राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी हिन्दी मे विश्वविद्यालय स्तर के उत्कृष्ट ग्रन्थ निर्माण मे राजस्थान के प्रतिष्ठित विद्वानो तथा अध्यापको का सहयोग प्राप्त कर रही है और मानविकी तथा विज्ञान के प्राय सभी क्षेत्रो मे उत्कृष्ट पाठ्य ग्रन्थो का निर्माण करवा रही है। अकादमी चतुर्थ पचवर्षीय योजना के अन्त तक तीन सौ से भी अधिक ग्रन्थ प्रकाशित कर सकेगी, ऐसी हम आशा करते हैं। प्रस्तुत पुस्तक इसी क्रम मे तैयार करवायी गयी है। हमे आशा है कि यह अपने विषय मे उत्कृष्ट योगदान करेगी।

चन्दनमल बैद

अध्यक्ष

विषय-सूची

क्र० स०	विषय	पृष्ठ स०
	प्रवेशक	
१.	पुरातत्व सम्बन्धी सामग्री कालीबगा के उत्खनन से प्राप्त सामग्री—ग्राहड़ का उत्खनन ग्रौर सामग्री—वागोर का उत्खनन ग्रौर सामग्री—रंगमहल का उत्खनन ग्रौर सामग्री—बैराट् का उत्खनन ग्रौर सामग्री—रैड के उत्खनन से प्राप्त सामग्री—साभर का उत्खनन ग्रौर सामग्री—नोह का उत्खनन ग्रौर सामग्री ।	१
२.	सिक्के ऐतिहासिक सामग्री के रूप में ग्राहड़ के उत्खनन से प्राप्त सिक्के ग्रौर सीलें—रेड के उत्खनन से प्राप्त सिक्के ग्रौर मुहरें—मालवगण के सिक्के—राजन्य सिक्के—नगर मुद्राएं—रगमहल से प्राप्त सिक्के—बैराट् के उत्खनन से प्राप्त मुद्राएं—साभर के उत्खनन से प्राप्त मुद्राएं—गुप्तकालीन सिक्के—गुर्जर प्रतिहारों के सिक्के—चौहानो के सिक्के—मेवाड मे चलने वाले सिक्के—डूंगरपुर राज्य के सिक्के—प्रतापगढ राज्य के सिक्के—बांसवाडा राज्य के सिक्के—जोधपुर राज्य के सिक्के—बीकानेर राज्य के सिक्के—जयपुर राज्य के सिक्के—बून्दी की मुद्राएं—कोटा राज्य के सिक्के—किशनगढ राज्य के सिक्के—झालावाड राज्य के सिक्के—जैसलमेर के सिक्के—ग्रलवर राज्य के सिक्के—करोली राज्य के सिक्के—भरतपुर राज्य के सिक्के—धोलपुर के सिक्के—सिरोही की मुद्राएं—शाहपुरा के सिक्के ।	१८
३.	शिलालेख (ग्र) शिलालेख (संस्कृत एव भाषा), (४२) (ब) शिलालेख (फारसी), (२१६)	४१
४.	दान-पत्र दान-पत्र (सस्कृत एव भाषा)	२३६
	सहायक ग्रन्थो की सूची	२८२
	ग्रनुक्रमणिका	२८५
	शुद्धि-पत्र	३०५

प्रवेशक

इस क्षण की घटना आगे आने वाले क्षण का इतिहास बन जाता है। इसी तरह अतीत के राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक तथा आर्थिक परिवर्तन वर्तमान-कालीन इतिहास के प्रेरणा-स्रोत हो जाते हैं। इस अतीत और वर्तमान को जोडने वाली कडी ऐतिहासिक साधन है। इन साधनो मे काव्य, कथा, ख्यात, वशावली आदि हैं जिनमे कुछ-न-कुछ ऐतिहासिक वृत्तान्त मिल जाता है। इनमे कई राजवशो के राजाओ की नामावलियाँ, उनके राजत्व काल के वर्षों की सख्या, उनकी उपलब्धियाँ तथा अनेक ऐतिहासिक पुरुषो के नाम एव उनका कुछ वृत्तान्त रहता है। राजस्थान के इतिहास के लिए इन साधनो से भी अधिक सहायक साधन शिलालेख और दानपत्र हैं जो यहाँ की कई ऐतिहासिक घटनाओ तथा ऐतिहासिक पुरुषो तथा वशक्रम का विवेचन देते हैं। इनके अतिरिक्त समय समय पर यहाँ आने वाले कई यात्री भी रहे हैं जिन्होने कई घटनाओ के सम्बन्ध मे अपनी आँखो देखा वर्णन दिया है। मुसलमानों की लिखी हुई फारसी पुस्तको मे भी कुछ बातें ऐसी मिल जाती हैं जो अन्य साधनो मे नही मिलती। इस दृष्टि से उनका भी एक स्वतन्त्र महत्त्व है। इसी प्रकार कई अवसरो पर दिये गये पट्टे, परवाने, दस्तावेज आदि भी उपलब्ध हैं जिनमे अनेकानेक घटनाओ तथा व्यक्तियो की विशेषताओ का उल्लेख मिलता है। राजाओ, महाराजाओ, राजकुमारो, महारानियो आदि की जन्म कुण्डलियाँ भी तिथि, वार, नक्षत्र की सूचना व्यक्तिविशेष के जन्म सम्बन्धीत देकर समय निर्धारण मे सहायक सिद्ध होती हैं। यहाँ के इतिहास के लिए खाते, बहियाँ हकीकतें आदि भी बडे काम के हैं जिनसे कई नए ऐतिहासिक तथ्यो का पता चलता है। इन साधनो के अतिरिक्त प्राचीन खण्डरो, मूर्तियो के अवशेषो, मुद्राओ, चित्रो आदि से भी जन-जीवन तथा सास्कृतिक स्थिति पर प्रकाश पडता है।

परन्तु आज तक लिखे गए इतिहास मे इन सभी साधनो का समुचित उपयोग किया गया हो, ऐसा नहीं है। इसका कारण यह रहा है कि विदेशी आक्रमणो के कारण इन साधनो की उपलब्धि आसानी से नही होने पाई और उनका समुचित उपयोग भी नही हो सका। दूसरा कारण यह भी रहा है कि इतिहास लिखने का दृष्टिकोण भी समय-समय पर विभिन्न रूप से रहा है। एक समय व्यक्तिगत जीवन तथा दरबारी ठाठ के वर्णनो को ही प्राधान्यता दी जाती थी

जिससे लेखकों का ध्यान उन्हीं साधनों पर केन्द्रित रहता था, जिनमें इनका वर्णन हो। काव्य कृतियों में, जिनमें प्रसंगवश राजाओं के वर्णन मिलते हैं, प्राधान्यता व्यक्तिविशेष को दी गई है और उन विशेषताओं को व्यक्त करने के लिए काव्य लिखने की शैली को प्रधान माध्यम चुना गया है, न कि इतिहास लिखने की शैली को। पृथ्वीराजरासो इसका बहुत बड़ा प्रमाण है। जितना बृहद् कलेवर इस काव्य का है उतनी ऐतिहासिक सामग्री उसमें नहीं मिलती और न उससे इतने ऐतिहासिक तथ्य ही प्राप्त किये जा सकते हैं। शिलालेखों के लिखने में भी आश्रित कवियों ने इतिहास को गौण बना कर काव्य को प्रधान विषय चुना। जब यहाँ ख्यातों के द्वारा ऐतिहासिक वर्णन लिखने का प्रचलन रहा तब लोक-वार्ताओं को प्राधान्यता दी गई और काल-क्रम की उपेक्षा की गई। इसीलिए इन ख्यातों में तिथि-क्रम और संख्या के सम्बन्ध में अनेक अशुद्धियाँ मिलती हैं। जहां तक फारसी तवारीखों का प्रश्न है वे बहुधा एकपक्षीय दिखाई देती हैं जिनमें स्थानीय शासकों की पराजय और मुस्लिम सुलतानों और सम्राटों की पराजयों को भी विजय अंकित किया गया है।

जब हमारे यहाँ की ऐतिहासिक सामग्री की यह स्थिति थी तो मुहणोत नैणसी ने इधर-उधर के बिखरे हुए साधनों को जुटाया और अपनी एक ख्यात तैयार की जो राजस्थान की लोकवार्ताओं तथा तिथिक्रमों के उल्लेखों को ऐतिहासिक क्रम में सम्बद्ध करती है। परन्तु कर्नल टॉड का प्रयास विशेष श्लाघनीय है जिसने प्राचीन ग्रन्थों, शिलालेखों, दानपत्रों, सिक्कों, ख्यातों और वंशावलियों के संग्रह और अध्ययन के आधार पर 'एनल्स एण्ड एन्टिक्वीटीज ऑफ राजस्थान' नामी अपने सुप्रसिद्ध और विद्वत्तापूर्ण इतिहास की रचना की। अपना स्थानीय भाषा सम्बन्धी ज्ञान अधूरा होने से तथा सभी प्रकार की सामग्री का उपयोग न किये जाने से उसके इतिहास में कुछ अशुद्धियाँ रह गईं। भावुकता से उसने कई राजाओं की उपलब्धियों के वर्णनों को, जिन्हें भाटों की पोथियों ने अतिशयोक्तिपूर्ण दिया गया था, वैसे ही मान लिया। अनेक अनिश्चित दन्तकथाओं को अपने इतिहास में स्थान देकर वह अपने इतिहास को दोष रहित न बना सका। फिर भी टॉड का यह प्रथम प्रयास महत्त्वपूर्ण था। उसने राजस्थान के इतिहास को एक गति प्रदान की। उसके पदचिह्नों पर चल कर तथा उसमें नई शोध को स्थान देकर कविराज श्यामलदास तथा डॉ० ओझा ने यहाँ का सम्मार्जित इतिहास लिखा जो क्रमशः वीर विनोद तथा राजपूताने के इतिहास के नाम से विख्यात हैं।

परन्तु इन सभी गतिविधियों में राजस्थान का इतिहास विविध रियासतों तथा उनके शासकों को केन्द्रित कर प्रस्तुत किया गया है। कहीं-कहीं सभी ऐतिहासिक सामग्रियों का संतुलित उपयोग का अभाव भी दिखाई देता है। इनमें लोक-जीवन, भौतिक और आध्यात्मिक उत्थान एवं पुनरुत्थान की विवेचना का अभाव है। इस कमी की पूर्ति तभी हो सकती है जब अथक परिश्रम तथा अध्यवसाय

एवं उपनिदेशक का आभारी है जिन्होंने इस ग्रन्थ को लिखने का अवसर दिया। आशा है पाठक इसमें होने वाली भूलों को सुधार कर पढ़ेंगे।

जयपुर–१–१२–७३ डॉ० गोपीनाथ शर्मा

घनाने की भी पद्धति का प्रचार भी यहां होना दिखाई देता है। छत पर जाने की सीढ़िया भी यहां देखी गई हैं। पक्की ईंटो का प्रयोग कुम्रो एव नालियो मे किया जाता था ऐसा कई अवशेषो से प्रमाणित होता है।

दूसरा टीला कुछ छोटा है जिसमे एक निर्माण करने के लिए मिट्टी की चोरस ऊँचाई दिखाई देती है जिसके चारो ओर चौडी दीवारें एवं खाइयां बनाई गई थी। इसमे बडे-बडे कमरे, एक कुआ तथा दालान है जिससे अनुमानित होता है कि वस्ती के ठीक निकट एक दुर्ग की व्यवस्था थी जो नगर व्यवस्था का केन्द्रीय स्थान था या सुरक्षा का साधन था। संभवत सरस्वती नदी के क्षेत्र की सत्ता का यह प्रमुख केन्द्र हो।

बर्तन---कालीवगा के उत्खनन से मिट्टी के कई बर्तन और उनके अवशेष मिले हैं जिनकी पांच मज्ञा की जाती है। यहां के बर्तनो की विशेषता मे उनका पतला एवं हल्का होना पाया जाता है। उन्हे चाक से बनाया जाता था फिर भी उनको भोंडे ढंग से बनाया जाना स्पष्ट है। इन का रग लाल है परन्तु ऊपर और मध्य भाग मे काली एवं सफेद रग की रेखाएं दिखाई देती हैं। इन पर अलकरण चौकोर, गोल, जालीदार, वृत्ताकार, घुमावदार, त्रिकोण एव समानान्तर रेखाओ से किया जाता था। फूल, पत्ती, चौपड, पक्षी, खजूर आदि का अलकरण भी इन पर रहता था। बर्तनो मे घडे, प्याले, लोटे, हाण्डियां, रकाबियां, सगवलें, पेंदेवाले ढक्कन व लोटे भी होते थे। मछली, कछुए, बतख, हिरन आदि की आकृतियां भी इन पर बनाई जाती थी।

अन्य वस्तुएं :

मकानो के अवशेषो व बर्तनो के अतिरिक्त यहां कई अन्य प्रकार की वस्तुएं भी उपलब्ध हुई है जिनमे खिलौने, पशुओ के एव पक्षियों के स्वरूप, मिट्टी की मुहरे, चूडियां, तोल, तावे की चूडियां, चाकू, तावे के औजार, काच के मणिय आदि हैं। मिट्टी के भान्डो पर एव मुहरो पर अ कित लिपि सैन्धव लिपि के तुल्य है जिसे पढा नहीं जा सका है।

आहड का उत्खनन और सामग्री[२]

आहड उदयपुर के निकट एक कस्बा है जिसकी सस्कृति लगभग चार हजार वर्ष प्राचीन है। यहां प्राचीन प्रस्तर युगीय मानव रहता था। इस स्थिति का पता आहड के दो टीलो से लगने पाया जिनकी खुदाई राजस्थान सरकार द्वारा तथा डॉ० सकालिया, पूना विश्वविद्यालय के द्वारा करवाई गई। आहड का दूसरा नाम ताम्रवती नगरी भी मिलता है जिससे यहां तावे के औजारो के बनने का केन्द्र प्रमाणित होता है। १०-११ शताब्दी मे इसे आघाटपुर या आघाट दुर्ग के नाम से जाना गया था। बोलचाल की भाषा मे इसे धूलकोट भी कहते हैं। ये धूलकोट प्राचीन

२ एक्सकेवेशन ऐट आहड, सकालिया, पूना १९६९ के आधार पर।

नगरी के अवशेष को आच्छादित किये हुऐ हैं जिनमें से बड़ा धूलकोट १५०० फीट लंबा और लगभग ४५ फुट ऊँचा है इसके बारे मे जानकारी के लिए कई खाइयाँ खोदी गईं जिनसे कई उपकरण उपलब्ध हुए हैं। उत्खनन के फलस्वरूप यहाँ की बस्तियों के कई स्तर भी मिले हैं। पहले स्तर में कुछ मिट्टी की दीवारें, मिट्टी के बर्तनों के टुकड़े तथा पत्थर के ढेर प्राप्त हुए हैं। दूसरे स्तर की बस्ती से जो प्रथम स्थर ही पर बसी थी, कुछ कूट कर तैयार की गई दीवारें और मिट्टी के बर्तन के टुकड़े मिले हैं। तीसरी बस्ती में कुछ चित्रित बर्तन और उनका घरों में प्रयोग होना प्रमाणित होता है। चौथी बस्ती के स्तर में एक बर्तन से दो तांबे की कुल्हाड़ियां मिली है जो बड़े महत्त्व की हैं। इस प्रकार इन स्तरों पर उत्तरोत्तर चार और बस्तियों के स्तर मिलते हैं जिनमें मकान बनाने की पद्धति, बर्तन बनाने की विधि आदि में परिवर्तन दिखाई देता है। ये सभी आठ स्तर एक दूसरे-स्तर पर बनते और बिगड़ते गये जो हमें आहड़ की ऐतिहासिकता समझने में बड़े सहायक हैं। ये समूची बस्तियां आहड़ नदी की सभ्यता कही जा सकती हैं। इस सभ्यता को हम कई पहलुओं से जान सकते हैं जो इसकी साधन सामग्री है।

निवास स्थान :

आहड़ की खुदाई में कई घरों की स्थिति का पता चलता है। सबसे प्रथम बस्ती नदी के ऊपर के भाग की भूमि पर बसी थी जिस पर उत्तरोत्तर बस्तियाँ बनती चली गईं। यहाँ मुलायम काले पत्थरों से मकान बनाये गये थे। ये मकान छोटे व बड़े बने थे। नदी के तट से लाई गई मिट्टी से मकानों को बनाया जाता था। यहाँ बड़े कमरों की लम्बाई चौड़ाई ३३ × २० फीट तक देखी गई है। इनकी छतें बांसों से ढकी जाती थीं। मकानों के फर्श को काली मिट्टी के साथ नदी की बालू को मिला कर बनाया जाता था। कुछ मकानों में २ या ३ चूल्हे और एक मकान में तो ६ तक चूल्हों की संख्या देखी गई। इससे अनुमानित है कि आहड़ में बड़े परिवारों के भोजन की व्यवस्था थी या संभवतः सार्वजनिक भोजन बनाने की भी व्यवस्था यहां की जाती थी। यहाँ कुछ नाज रखने के बड़े भाण्ड भी गड़े हुए मिले हैं जिन्हें स्थानीय भाषा में 'गोरे' व 'कोठे' कहा जाता है। इस व्यवस्था से प्राचीन आहड़ की समृद्धि प्रमाणित होती है।

मुद्राएं व मुहरें :

आहड़ के द्वितीय काल वाली खुदाई से ६ तांबे की मुद्राएँ और तीन मुहरें प्राप्त हुई हैं। इनमें कुछ मुद्राएँ अस्पष्ट हैं। एक मुद्रा में त्रिशूल खुदा हुआ दिखाई देता है और दूसरी में खड़ा हुआ अपोलो है जिसके हाथों में तीर व पीछे तरकस है। इस मुद्रा के किनारे यूनानी भाषा में कुछ लिखा हुआ है जिससे इसका काल दूसरी सदी ईसा पूर्व आंका जाता है। यहाँ से मिलने वाली तीन मुहरों पर 'विहितभ विस', 'पलितसा' तथा 'तातीय तोम सन' अंकित हैं, जिनका अर्थ स्पष्ट तो नहीं है परन्तु

लिपि से यह अनुमानित किया जाता है कि ये सामग्री आहड की तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व से प्रथम सदी ईसा की स्थिति पर प्रकाश डालने मे सहायक है।

मध्यपाषाण युग के उपकरण :

आहड के आसपास पत्थरो की बहुतायत से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि यहाँ पत्थरो के शस्त्रो के बनाने का बहुत बडा केन्द्र रहा होगा। परन्तु उत्खनन की सामग्री से यहाँ मध्यपाषाणयुगीय उपकरणो के तुल्य मुख्य रूप से रामसंकाश्म (Chert) एवं स्फटिक (Quartz) के थोडे ही उपकरण प्राप्त हुए हैं। यहा के कई मकानो की दीवारो की रक्षा के लिए स्फटिक पत्थरों के बडे २ टुकडे काम मे लाये जाते थे और इन्ही से पत्थर के औजार भी बनाये जाते थे। यहाँ की सभ्यता के प्रथम चरण से सम्बन्ध रखने वाले छीलने, छेद करने तथा काटने के विविध आकार के पत्थर के उपकरण देखे गये हैं। कुछ ऐसे औजार चतुष्कोण गोल तथा बेडौल आकृति के मिले जो आकार मे छोटे है परन्तु जिनके एक या दो किनारे बडे तेज दिखाई देते हैं। चारों ओर उभरे तथा पैने किनारो के उपकरण भी यहाँ मिले हैं जो चमडे या हड्डी छीलने के प्रयोग मे लाये जाते हो। इसके अतिरिक्त यहा से प्राप्त सामग्री मे पत्थर के गोले, शिलाएँ, गदाएँ, ओखलियाँ आदि है।

आहड से तावे की छ कुल्हाडियाँ, अंगूठियाँ, चूडियाँ आदि भी मिली हैं जो इस बात का प्रमाण हैं कि तावें की खानो के निकट होने से यहाँ इस धातु के उपकरण लकडी काटने, छीलने, शिकार करने आदि कामो के लिए विशेषरूप से काम मे लाए जाते थे। बडे पैमाने पर यदि इस स्थल का उत्खनन किया जाए तो इस धातु के अन्य उपकरण भी उपलब्ध हो सकते हैं। ये स्थिति तभी इस बात पर पूरा प्रकाश डाल सकती है कि आखिर आहड से अधिक संख्या मे पत्थर के औजार क्यो उपलब्ध नही हो सके। तावे की खानो के बीच में आहड का होना इस बात की पुष्टि करता है कि यह स्थान तांबे के औजार बनाने का अवश्य ही एक बहुत बडा केन्द्र रहा हो। यहा से मिलने वाले ७६ लोहे के उपकरण भी मिले हैं जिनका उपयोग कुल्हाडी, चाकू, कील, अगूठियो की तरह होता था।

मृदभाण्ड—ऐतिहासिक युग की सामग्री मे मृदभाण्डो का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। आहड मे जितनी आभूषणो, तथा औजारो से सम्बन्ध रखने वाली सामग्री उपलब्ध नही हुई है उतनी मृदभाण्ड से सम्बन्धित सामग्री मिली है। यह सामग्री अपनी विविधता तथा प्रचुरता के विचार से बडे महत्त्व की है। आहड का कुम्भकार इस बात मे निपुण दिखाई देता है कि बिना चित्राकन के भी मिट्टी के बर्तन सुन्दर बनाये जा सकते हैं। काट कर, छील कर तथा उभार कर इन बर्तनो को आकर्षक बनाया जाता था और ऊपरी भागो पर पतली भीतर गढी हुई रेखा बना दी जाती थी जिससे भाण्ड मे एक स्वाभाविक अलकरण उत्पन्न हो जाता था।

यहाँ पे मिलने वाले बर्तनो की सज्ञा लाल व भूरे भाण्डो

में दैनिक कामों में आने वाले वर्तन सभी आकार के मिलते हैं जिनमें घड़े, कटोरियाँ, रकाबियाँ, प्याले, मटके, कुण्डे, भण्डार के कलश आदि हैं। यहाँ से मिलने वाले काले व लाल रंग के वर्तनों पर सफेदा लगा लिया जाता था और जब वर्तन पक जाता था तो उस रंग की हलकी रेखा अपने आप में बड़ी पुख्ता बन जाती थी। गोलाकार तथा तंग मुँह वाले घड़े, बिना स्टेण्ड तथा स्टेण्ड वाली रकाबियाँ, ढक्कन तथा बिना ढक्कन के कटोरे, लोटे के आकार के भाण्ड, वर्तनों के रखने की इन्डोनियां, उभरे अलंकरण के घड़े आदि भाण्डों के अनेक आकार व रूप यहाँ उपलब्ध होते हैं जिससे आहड़ निवासियों की रुचि-वैचित्र्य का पता चलता है। साधारणतया ये मिट्टी के वर्तन हाथ से बनते थे, परन्तु चाक का भी प्रयोग इनके बनाने में किया जाता था। कई वर्तनों का ऊपरी भाग चाक से बनाया जाता था और पैंदे के भाग को हाथ से बनाकर उसके साथ जोड़ दिया जाता था। अलंकरण में छेद करना, रंगना, उभार या गड़ाव देना सम्मिलित था। लड़ी वाली रेखाएं, गोलाकार आकृतियां तथा चक्कर वाली रेखाएं अलंकरण में प्रयुक्त होती थीं और ऐसा अलंकरण भाण्डों के ऊपर के भाग तक सीमित था।

मणियाँ

मूल्यवान पत्थरों जैसे गोमेद, स्फटिक आदि से आहड़ निवासी गोल मणियाँ बनाते थे। ऐसे मणियों के साथ काँच, पक्की मिट्टी, सीप और हड्डी के गोलाकार छेद वाले अंड भी लगाये जाते थे। इनको सुरक्षित करने के लिए मिट्टी के वर्तनों या टोकरियों का प्रयोग किया जाता था। इनका उपयोग आभूषण बनाने तथा तावीज की तरह गले में लटकाने के लिए किया जाता था। इनके ऊपर सजावट का काम भी रहता था। आकार में ये गोल, चपटे, चतुष्कोण तथा षट्कोण होते थे। ये सामग्री आहड़ सभ्यता के दूसरे चरण की मालूम होती है।

अन्य उपकरण—

आहड़ के ऐतिहासिक काल के अन्य उपकरणों में चमड़े के टुकड़े, मिट्टी के पूजा के पात्र, चूड़ियाँ तथा खिलौनों का भी अपना स्थान है। पूजा के पात्र भी विविध आकार के देखे गये हैं जिनके किनारे ऊँचे या नीचे हुआ करते थे और किसी-किसी में दीपक की व्यवस्था भी रहती थी। खिलौनों में बैल, घोड़े, हाथी, चक्र आदि मुख्य हैं।

इन सभी उपकरणों के आधार पर कहा जा सकता है कि आहड़ की एक सभ्यता थी जिसका समृद्ध काल १६०० ई. पू. से १२०० ई. पू. आँका जा सकता है। इस युग का मानव यहाँ कच्चे मिट्टी के ढलवां छत के मकान बनाकर रहता था। वह विशेषरूप से मांसाहारी था। परन्तु ऐसा भी दिखाई देता है कि वह गेहूँ का आगे चलकर प्रयोग करने लगा। यहां पत्थर, तांबा और लोहे एवं हड्डी औजारों तथा आभूषणों के बनाने में काम में लिये जाते थे। मिट्टी के वर्तन तथा खिलौने बनते थे।

तर धातु युग का यह स्थान तांबे के औजार बनाने का एक बडा केन्द्र रहा हो, जैसाकि उसकी तांबे की खानो के बीच मे होने से तथा यहा से प्राप्त अनेक उपकरणो से प्रमाणित होता है ।

बागोर का उत्खनन और सामग्री[3]

बागोर मेवाड के अन्तर्गत भीलवाडा जिले मे एक कस्बा है जो भीलवाडा से लगभग पच्चीस किलोमीटर की दूरी पर है। यह कस्बा बनास की एक सहायक नदी कोठारी के किनारे पर बसा हुआ है । इस नदी के तट पर यत्र-तत्र छोटे-मोटे रेतीले टीले मिलते हैं जो प्रागैतिहासिक स्थल के प्रतीक हैं । इन टीलो मे कस्बे के पूर्व की ओर स्थित टीले का उत्खनन कार्य १९६७–६८, १९६८–६९ मे डा० वीरेन्द्रनाथ मिश्र, डा० एल. एस लेशनि एव पूना विश्वविद्यालय और राजस्थान पुरातत्व विभाग के सहयोग से सम्पादित किया गया । यह टीला कई वर्ग एकड क्षेत्र मे फैला हुआ है तथा नदी की सतह से लगभग दस मीटर ऊँचा है । इसमे कई खाइयाँ २०×८ मीटर, ९×४ मीटर, २०×६ आदि लम्बाई चौडाई के क्षेत्र मे इस अवधि मे खोदी गई । फलस्वरूप इनसे प्रस्तर उपकरण ताम्र उपकरण, लौह उपकरण, मृद भाण्डो के टुकडे, आभूषण, पशुओ की हड्डिया, फर्श, दीवारें गृहो के अवशेष आदि उपलब्ध हुए हैं । ये उपकरण तथा सामग्री विभिन्न काल की स्थानीय सस्कृति तथा जीवन के स्तर को नापने के अच्छे आधार हैं ।

प्रस्तरीय उपकरण—ये उपकरण काल विभाजन के क्रम से तीन चरण मे विभाजित किये गये हैं । प्रथम काल ३००० वर्ष पूर्व से लेकर २००० वर्ष, द्वितीय ईसा से पूर्व २००० वर्ष से लेकर ईसा से पूर्व ५०० वर्ष तथा तृतीय ईसा से ५०० वर्ष पूर्व से लेकर ईसवी सन् के प्रारम्भ तक है । इन उपकरणो को स्फटिक (Quartz) तथा रामसैकाश्म (Chert) पत्थरो से बनाया जाता था और इनसे मुख्यत आतरक, पृथुक (Flake) फलक (Blade) और अपखण्ड (Chip) बनाये जाते थे । ये सामग्री पुरातत्व की शब्दावली मे 'लघुपाषाणोपकरण' (Microlith) कहलाती है और पाषाणकालीन उपकरणों की अपेक्षा आकार–प्राकार मे छोटी है । इनकी लम्बाई एक सेन्टीमीटर से लेकर चार सेन्टीमीटर तक पाई गई है । इनका स्वरूप या तो रम्भाकार है या ज्यामिति आकृति वाला है । इसमे नोकदार तीक्ष्ण धार वाले फलक (Blade) कु ठित फलक, तिरछे फलक, वटक फलक, त्रिभुज फलक आदि बनाये जाते थे । इन्हे सम्भवत किसी लकडी या हड्डी के बडे टुकडो पर लगा दिया जाता था । इनको मछली मारने, जगली जानवरो की शिकार करने, छीलने, छेद करने आदि कार्यों के लिए उपयोग मे लाया जाता था । यहाँ से मिलने वाले हथौडे, गोफनो की गोलियाँ, चपटी व गोल शिलाएँ, छेद वाले पत्थर आदि यहाँ के निवासियो के

---

३. डॉ० मिश्रा बागोर म उत्खनन का तृतीय वर्ष, प्रताप-शोध–प्रतिष्ठान पत्रिका, उदयपुर के आधार पर ।

आखेटी जीवन, युद्ध-प्रियता तथा खेती की प्रवृत्ति के द्योतक हैं।

इन उपकरणों से यहाँ के निवासियों का मुख्य उद्योग—आखेट करना एवं कन्द-मूल एकत्रित करने की स्थिति पर प्रकाश पड़ता है। इनसे स्थानीय आखेट-जीवी उपकरण-निर्माता समूहों का हमें ज्ञान होता था। सम्भवतः ये लोग अपने तौर से ही इन उपकरणों को बनाते थे और वे ही इनका उपयोग करते थे। इन स्थलों में मिलने वाली अनावश्यक सामग्री से अनुमान लगाया जाता है कि बागोर अपने प्रथम चरण में एक प्रकार से पाषाण उपकरणों का औद्योगिक स्थल था। छेद वाले चपटे पत्थरों से या तो वे गदा का प्रयोग करते थे या उनमें लकड़ी लगाकर उनका हल की तरह प्रयोग करते थे। इन उपकरणों के अध्ययन से बागोर का आदि निवासी या तो घुमक्कड़ हो सकता है अथवा आखेट या कन्द-मूल के तलाश में पर्यटक माना जा सकता है। उत्खनन में कहीं घर या फर्श की उपलब्धि यहाँ के प्रागैतिहासिक काल में न होना भी इस स्थिति का पोषक है।

ताम्र उपकरण

बागोर उत्खनन के द्वितीय चरण, अर्थात् ईसा से पूर्व २००० वर्ष से लेकर ईसा से पूर्व ५०० वर्ष तक के काल के अन्त तक केवल पाँच ताम्र उपकरण उपलब्ध हुए हैं। इनमें से एक १०५ सेन्टीमीटर लम्बी छेद वाली सुई है, दूसरा कुन्ताग्र (spearhead) है और तीसरा उपकरण त्रिभुजाकार शस्त्र-सा है जिसमें दो-दो छेद हैं। ये उपकरण बागोर निवासियों की पहले काल की अपेक्षा अच्छी स्थिति के द्योतक है। ऐसा भी अनुमान लगाया जा सकता है कि इस काल में बागोर की बस्ति में स्थायित्व आ गया था। इसकी पुष्टि इस काल के मकानों के अवशेष करते हैं।

अस्थियाँ

बागोर उत्खनन में अनेक अस्थियों के टुकड़े भी मिले हैं इनमें कुछ तो इतने छोटे हैं कि उनसे यह अनुमान लगाना कठिन है कि वे किन-किन पशुओं के है। परन्तु द्वितीय काल की कुछ हड्डियों के विषय में श्रीमती डी० आर० शाह का मत है कि वे अस्थियाँ गाय, बैल, मृग, चीतल, बारासिंघा, सुअर, गीदड़, कछुआ आदि की है। यदि यह अनुमान ठीक है तो यह मानना उपयुक्त होगा कि उस समय का मानव माँसाहारी भी था और कृषि भी करना सीख चुका था। कुछ जली हुई हड्डियां माँस के भुने जाने का प्रमाण हैं तथा हड्डियों का तृतीय चरण में कम होना कृषि की प्राधान्यता बढ़ाना प्रमाणित करता है।

बागोर उत्खनन में कुल ५ कंकाल मिले है जो यहाँ की संस्कृति के तीनों चरणों पर शव-निवर्तन पद्धति पर प्रकाश डालते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि शवों के दक्षिण पूर्व, उत्तर-पश्चिम दिशा में लिटाया जाता था और टाँगे मोड़ दी जाती थी। तृतीय चरण में शव की टाँगे सीधी रखी जाती थी और शव को उत्तर-दक्षिण में लिटाया जाता था। प्राय: सभी कंकालों के देखने से प्रतीत होता है कि शव को घर में या

उसके निकट ही गाड दिया जाता था और उसको मोती के हार, ताम्बे का लटकन, मृद्माण्ड, मांस आदि उपकरणो सहित दफनाया जाता था। ये स्थिति मृत निवर्तन के सम्बन्ध मे हमे अन्य देशो मे भी प्रागैतिहासिक काल मे मिलती है। खाद्य पदार्थ और पानी हाथ के पास होते थे और अन्य मृत भाण्ड आगे पीछे रखे जाते थे। तृतीय काल के एक कक्काल पर ईटो की दीवार भी यहां मिली है जो समाधि बनाने की द्योतक है।

मिट्टी के वर्तन

ये उपकरण द्वितीय व तृतीय चरण की बागोर की सभ्यता के प्रतीक हैं। द्वितीय चरण के मिट्टी के बर्तनो के अवशेषो का रग मटमैला है और वे कुछ मोटे और जल्दी टूटने वाले हैं। इनकी प्रचुरता इस बात का प्रमाण है कि बागोर निवासी कृषि का प्रयोग जान गया था। ये बर्तन शरावले, तश्तरियो, कटोरो, लोटो, थालियो तथा तग मुँह के घडो और बोतलो के रूप मे मिलते हैं। अब मानव के खाद्य पदार्थों व सग्रह के उपकरणो मे विविधता आ गई थी और सभ्यता का विकास हो गया था। ये भाण्ड रेखा वाले तो होते थे परन्तु इनमे अलकरण का अभाव था। ऊपर से लाल रग इन पर शोभा के लिए लगा दिया जाता था परन्तु भीतर का भाग काला व कच्चा रहता था। ये भाण्ड हाथ से बनाये जाते थे।

तृतीय चरण के भाण्ड पतले व टिकाऊ होते थे तथा इनको चाक से बनाया जाता था। इनमे रग व रेखाएं तो होती थी परन्तु अलङ्करण की प्रचुरता अब तक इनमे नही आने पाई थी।

आभूषण

बागोर सभ्यता मे आभूषणों का प्रयोग प्रथम सभ्यता के चरण से ही दिखाई देता है। ये आभूषण मोतियो के रूप मे अधिक दिखाई देते हैं। हार तथा कान के लटकनो मे मोतियो का प्रचुर प्रयोग होता था जो पालपत्थर (agate), इन्द्रगोप (Carnelian), तथा काँच के बनते थे। इनको धागे मे पिरोकर पहिना जाता था। ताम्रपट भी हार के लटकन के काम करते थे जैसाकि कुछ यहाँ से प्राप्त उपकरणों से सिद्ध है। लाल व पीले गेरू के जो अनेक टुकडे मिले हैं वे भी इस बात के साक्षी हैं कि बागोर निवासी अलकरण के लिए इन रगो को काम मे लाते हो।

गृह के अवशेष

बागोर संस्कृति के द्योतक कुछ घरो के अवशेष भी हैं जो द्वितीय तथा तृतीय चरण के काल के हैं। घरो को नदी के चट्टानो के पत्थरो को तोड कर बनाया जाता था। इन्हे चपटे और चौडे दीवारो मे लगाया जाता था। इनके साथ नदी के गोल पत्थर भी लगाये जाते थे। घरो के फर्श को पत्थरो को जमाकर समतल बना दिया जाता था। इन फर्शों पर छोटी मोटी अनेक हड्डियो के टुकडे मिलते हैं जिनके साथ पत्थर के हथौडे भी देखे गये हैं। इससे प्रमाणित होता है कि यहाँ के निवासी इस

दोनों कालों में अधिकांश माँसाहारी थे। ऐसे घरों के साथ वृत्ताकार पत्थरों के ढेर भी उपलब्ध हुए हैं जो लकड़ी या घास-फूस के कुटीरों के अवशेष के बचे हुए भाग हैं। इन्हीं घरों में मिट्टी के बर्तनों के टुकड़े, लोह तथा ताम्बे के उपकरण मिलते हैं, जिनका प्रयोग यहाँ के निवासी करते रहे थे।

रंगमहल का उत्खनन और सामग्री[४]

सरस्वती नदी के मैदान का केन्द्रीय भाग जिसे आजकल घग्घर का मैदान कहते हैं प्राचीनता की दृष्टि से बड़ा सम्पन्न है। ४००० से ३००० ई० पू० से छठी सदी ईसा काल तक ये भाग आजकल की भांति सूखा और रेतीला न था। इस क्षेत्र में हमेशा बहने वाली नदियाँ तथा इनके तटीय भागों पर घनी बस्तियाँ थीं। वर्षा के प्राचुर्य से इस क्षेत्र में हरियाली भी अधिक थी। ये स्थिति धीरे-धीरे समाप्त होने लगी। पुरातत्वीय आधार पर ऐसा अनुमानित है कि छठी शताब्दी ई० के मध्य से जो घग्घर क्षेत्र क्रमशः सूख गया और तब से यहां की रहीसही बस्तियाँ भी उजड़ गईं। हनुमानगढ़ के निकट वाली बस्तियाँ जिनमें बडोपोल, मुंडा, डोबेरी, रंगमहल, आदि हैं और जिनके निकट कई टीले हैं, अपनी प्राचीनता के लिए बडे प्रसिद्ध हैं। इस अवस्था को ध्यान में रखते हुए १९५२-५४ ई० में एक स्वीडिश दल ने रंगमहल के टीलों की जो सूरतगढ़ से दो मील उत्तर-पूर्व स्थित हैं, खुदाई की और जिसके फलस्वरूप कई तथ्य हमारे सामने आये जो ऐतिहासिक सामग्री के रूप में बड़े महत्त्व के हैं।

मृद्भाण्ड—रंगमहल की खुदाई में अलग-अलग बिन्दुओं पर खुदाई की गई तथा साँपों, कीड़ों और चूहों के रन्ध्रों द्वारा पहुँचाए गए, मिट्टी के बर्तनों के टुकड़ों का परीक्षण भी किया गया। रेत के टीलों की सतहों का भी वर्गीकरण किया गया। इन प्रयोगों के फलस्वरूप रंगमहल में बसने वाली बस्तियों को तीन बार बसने और उजड़ने के संकेत मिले। परन्तु इन तीनों बस्तियों के मृद्भाण्डों में कोई विशेष अन्तर नहीं दिखाई देता सिवाय इसके कि बड़े प्राचीन समय के मृद्भाण्ड मोटे और खुरदरे रहे और इनमें क्रमशः दृढ़ता व चिकनापन एवं अलंकरण बढ़ता गया। यहाँ के मृद्भाण्ड विशेषतः लाल या गुलाबी रंग को लिए हुए दिखाई देते हैं। ये अधिकाँश में चाक से बने होते थे। इनके मध्य वाले व नीचे वाले भाग पर भी बनाने वाला थप्पियाँ मार कर ठीक किया करता था जैसाकि उन पर चाट्ट के चिह्न से प्रमाणित होता है। भीतर के भाग को एक प्रकार के ब्रश अथवा कपड़े से चिकना किया जाता था ऐसा उन पर लगे हुए रेशों के चिह्नों से स्पष्ट है। इन बर्तनों को आग में तपाया जाता था। भोजन बनाने के काम में आने वाले मिट्टी के बर्तन, जिनमें हंडियां, परात, थालियां आदि मुख्य हैं, सादे होते थे या उनमें मिट्टी से

---

४. हन्नारेढ : रंगमहल—दि स्वीडिश आर्कियालोजिकल एक्स्पीडीशन टु इंडिया, १९५२-१९५४ (लूंड, १९५९) के आधार पर।

हुई है जो कला की दृष्टि से बडी रोचक हैं। इनसे उस युग की धार्मिक तथा कलात्मक स्थिति का पता चलता है।

धातु के उपकरण

यहा धातु से बनी हुई कई वस्तुएं मिली हैं जिनमे लोहे व ताबे की वस्तुएं प्रमुख हैं। चाकू, छुरे, कीलियाँ, दरवाजो के अटकन, कुन्दे, चूलिया आदि भी लोह के उपकरणो मे मुख्य हैं। ताबे की थालिया, चम्मच और आभूषण भी यहा के उत्खनन के उपकरण हैं। कुछ सोने के कुण्डल, लटकन, हार भी यहा के घरो से उपलब्ध हुए हैं। पीतल व सीप का प्रयोग भी आभूषणो के लिए यहा किया जाता था, जैसाकि यहा से प्राप्त वस्तुओ से स्पष्ट है। सोने, चाँदी तथा ताबे के सिक्के भी यहा से मिले है जिनका वर्णन यथा प्रसग किया जायगा।

नोह का उत्खनन और उससे प्राप्त सामग्री[८]

कुछ ही वर्षों से भरतपुर जिले मे नोह मे राजस्थान पुरातत्व विभाग ने उत्खनन कार्य आरम्भ किया है। इस कार्य से कई ऐतिहासिक तथ्यो पर प्रकाश पडता है। इस खुदाई से यहा की प्राचीन बस्ती का पता चला है। इसके द्वारा सबसे महत्त्वपूर्ण जानकारी हमे यह मिली है कि भारतवर्ष मे ईसा पूर्व १२वी शताब्दी मे लोहे का प्रयोग ज्ञात था। यहां से प्राप्त भाण्डो की विशेपता 'ब्लेक एवं लाल वेयर' है जिसमे तश्तरिया, ढकने, सरावले, घडे आदि हैं। इन पर सजावट का काम अपनी विशेपता लिए हुए है। भाण्डों पर कपडो के अवशेपो का चिपकन इस बात को प्रमाणित करता है कि राजस्थान के इस भाग मे कपडो की-बुनाई ईसा पूर्व १,१०० से ६०० ईसा पूर्व तक ज्ञात थी। प्राचीन ऐतिहासिक काल मे यहा सफाई के लिए गदे पानी को समावेशित करने के साधन थे जो गोलाकार मिट्टी के 'रिंगवेल्स' से स्पष्ट है। यहा की खुदाई से एक स्थान से १६ 'रिंगवेल' मिले हैं जो अध्ययन के अच्छे साधन हैं। इसी प्रकार यहा से प्राप्त मूर्तियो से मौर्यकालीन, शु ग एव कुशानकालीन सभ्यता एव कला का हमे अच्छा परिज्ञान होता है।

---

८. टाइम्स ऑफ इण्डिया, १४-१०-७२ के उप उपाध्याय

कई महत्त्वपूर्ण विषयों पर प्रकाश पड़ता है। इन सिक्कों को धरण, पुराना या पण कहा गया है जिन पर अलग-अलग ठप्पे से चिह्न लगाये गये हैं। कभी-कभी ये चिह्न एक-दूसरे पर भी आ गये है। इनके आकार में भी एकरूपता नहीं दिखाई देती, अलबत्ता इनके तोल में ३२ रत्ती या ५७ ग्रेन या ३$\frac{3}{4}$ ग्राम की समता है। जो मुद्राएँ चौकोर हैं उन्हें टुकड़ों में पहिले काट लिया जाता था और फिर उनको बराबर तोल के टुकड़ों में विभाजित कर दिया जाता था। तोल में एकरूपता के लिए इनके किनारों को भी घिस दिया जाता था। इनको देखने से प्रतीत होता है कि इन मुद्राओं के एक तरफ पांच चिह्न जिनमें सूर्य, तीर, मछली, घण्टा, कोई पौधा या पशु आदि अंकित किये जाते थे। दूसरी तरफ या तो खाली रहता था या एक दो चिह्न लगा दिये जाते थे। कभी-कभी इन पर गण का नाम, शासक का नाम या किसी के इष्टदेव के नाम का भी उल्लेख रहता था। चिह्नों के भी कई रूप होते थे जिनका वर्गीकरण ४० के लगभग हो सकता है। इन चिह्नों की कभी सार्थकता रहती थी और कभी इनका कोई विशेष अभिप्राय नहीं होता था। ऐसा भी अनुमानित किया जाता है कि पांच चिह्न किन्हीं पांच मुखियाओं की संस्था के चिह्न के द्योतक होते थे। पृष्ठ भाग के चिह्नों से कभी-कभी टकसाल के चिह्न का बोध होता था। इन सिक्कों का समय छठवीं शताब्दी ई. पू. से द्वितीय शताब्दी ई. पू. आंका गया है।

रेढ में चांदी के पंच-मार्क सिक्कों के अतिरिक्त तांबे के भी सिक्के मिले हैं जो मालव, मित्र, सेनापति, इण्डो-ससेनियम आदि वर्ग के हैं। इन सिक्कों को गण-मुद्राएं कहा गया है।

मालवगण के सिक्के

ये सिक्के उस जाति के हैं जो मौर्य, कुशान, गुप्ता आदि की अधीनता में थे। इनका समय ईसा पूर्व दूसरी सदी से ईसा की दूसरी सदी तक का है। ये सिक्के रेढ तथा पूर्वी राजस्थान में हजारों की संख्या में पाये गये है। इनका आकार छोटा है और इनमें कई एकों का व्यास आध इंच के लगभग है। इनका तोल डेढ ग्रेन से दस ग्रेन तक का देखा गया है। इन पर कहीं 'मालवाना जय' अथवा मालव सेनापतियों के नाम जैसे माप्य, मजुप, मापेजय, मगजश अंकित रहता है। अग्रभाग में कई सिक्कों पर बोधिवृक्ष और पृष्ठ भाग में सूर्य, सिंह, नन्दि, राजा का मस्तक, नन्दि अथवा सूर्य का चिह्न भी अंकित रहता है।

सेनापति मुद्राएं

ये मुद्राएं छः के समुदाय में रेढ से प्राप्त हुई हैं, जिनमें पांच चौकोर और एक गोल है। इन पर ब्राह्मी लिपि में 'वच्छघोष' अंकित है। यह लिपि ईसा पूर्व ३-२ सदी की है। इन पर भी नन्दी का आकार देखा गया है।

मित्र मुद्राएं

ये मुद्राएं ईसा पूर्व द्वितीय शताब्दी के हैं जिन पर सूर्यमित्र, ब्रह्ममित्र ध्रुव-

मित्र आदि नाम अ कित हैं। ये कन्नौज, पाञ्चाल के मित्रो के सदृश दिखाई देते हैं। इन मुद्राओ पर त्रिशूल, ताल मे तीन मछलिया, बैल आदि भी रहते हैं। ब्रह्ममित्र मुद्रा मे लक्ष्मी की मूर्ति दिखाई गई है।

राजन्य सिक्के[3]

पूर्वी राजस्थान मे 'राजन्य' अकित किये गये सिक्के मिले हैं जिन्हे ईसा पूर्व पहली सदी मे तैयार किया गया था। ये गण [एक विशेष जाति] द्वारा तैयार किये गये थे। सिक्को के अग्रभाग पर मनुष्य की मूर्ति अकित रहती थी और उन पर खरोष्ठी मे 'राजन्य जनपदस' लिखा रहता था। पृष्ट भाग पर नन्दि की आकृति दिखाई जाती थी।

योधेय सिक्के[4]

ये सिक्के राजस्थान के उत्तरी भाग तथा पश्चिमी भाग मे बहुधा मिलते हैं जिनका अस्तित्व ईसा पूर्व ४०० वर्ष से गुप्त साम्राज्य के पतन तक देखा गया है। ईस्वी पूर्व दूसरी सदी के सिक्को पर नन्दि तथा स्तम्भ की आकृति मिलती है और उन पर ब्राह्मी लिपि मे 'योधेयाना बहुधान के' अ कित रहता है। ईसा की दूसरी सदी के सिक्को के अग्रभाग मे षडानन की मूर्ति कमल पर खडी दिखलाई देती है और उसी ओर ब्राह्मी अक्षरो मे योधेयों के ब्रह्मण्य देव का नाम अथवा 'भागवत यधेयेन' अ कित रहता है। ईसवी सन् की चौथी सदी मे योद्धा ढग के सिक्के मिलते हैं जिसमे कार्तिकेय की मूर्ति तथा देवमूर्ति या सूर्यमूर्ति का होना पाया गया है।

नगर मुद्राए[5]

नगर या कर्कोट नगर जो उणियारा ठिकाने के क्षेत्र मे जयपुर के निकट है अपनी प्राचीनता के लिए बडा प्रसिद्ध है। कार्लाइल ने चार वर्ग मील के घेराव मे इस क्षेत्र का परिवेक्षण किया। उन्हे यहा से छ हजार तांबे के सिक्के उपलब्ध हुए।

इन सिक्को के अध्ययन से वे इस नतीजे पर पहुँचे कि नगर मे मालवगण की टकसाल रही होगी। ये सिक्के ससार मे प्राप्त सिक्को मे सबसे हल्के व छोटे आकार के हैं जिनपर दूसरी सदी ईसा पूर्व से चौथी सदी ईसा की ब्राह्मी लिपि मे कोई ४० मालव सरदारो के नाम अकित हैं। कुछ नाम उल्टे ढग से लिखे गये हैं जो दाहिने से बाये की ओर पढे जाते हैं। इनमे अकित कुछ मालव सरदारों का विदेशी होना भी पाया जाता है।

रगमहल के उत्खनन के सिक्के[6]

रगमहल के उत्खनन से कुल १०५ तांबे के सिक्के उपलब्ध हुए थे जिनमे

---

३ वासुदेव उपाध्याय, भारतीय सिक्के, पृ. ८७।

४ वासुदेव उपाध्याय, भारतीय सिक्के, पृ० ८०–८२।

५ एक्सकवेशन एट बैराट् पृ० ३–४।

६ स्वीडिश आर्कियोलोजिकल एक्सपिडीशन टू इन्डिया, १९५२–१९५४, पृ. १७१।

अधिकांश के चिह्न नष्ट हो गये हैं। कुछ सिक्कों को जिन्हें श्री वीवर ने अध्ययन किया था, कुशाणोत्तर काल के माने गये हैं और उन्हें 'मुरण्डा' नाम दिया गया है। कुछ एक ईसा पूर्व द्वितीय शताब्दी के हैं और 'पंच-मार्क' एवं 'गण-मुद्राएं' हैं। इनमें से एक सिक्का कनिष्क प्रथम का है जिसे भाले पर झुकता हुआ मय लंबे कोट व वेदी सहित अंकित किया गया है। पृष्ट भाग में इसी मुद्रा पर वायुदेव बाएँ ओर भागता हुआ बतलाया गया है। इस पर यूनानी में ओडो-वायु अंकित है। दूसरी एक मुद्रा पर एक ओर कनिष्क इसी मुद्रा में है और पृष्ट पर देवी की मूर्ति है। इस पर 'नानाइया' अंकित है। इसी तरह हविश्क, वाजिष्क, कनिष्क तृतीय एवं मुरण्डा की मुद्राएँ अपने-अपने विविध चिह्नों सहित पाई गई हैं।

रंगमहल से प्राप्त इन मुद्राओं का एक बड़ा ऐतिहासिक महत्व है। इनके अध्ययन से प्रतीत होता है कि रंगमहल का क्षेत्र कनिष्क तृतीय के काल में अधिवासित हो गया था। इनका मुद्रण भी कनिष्क तृतीय या मुरण्डाओं के समय का था। इसके द्वारा यह भी अनुमानित किया जाता है कि यह क्षेत्र ईसा की दूसरी शताब्दी से लेकर छटी शताब्दी तक बसा रहा।

बैराट् के उत्खनन से प्राप्त मुद्राएँ[७]

बैराट् के उत्खनन में विहार के अवशेष मिले जिसके चौथे कमरे से एक मिट्टी का भाण्ड मिला। इसमें एक कपड़े में बँधी हुई ८ 'पंच-मार्क' चाँदी की मुद्राएँ तथा २८ 'इन्डो-ग्रीक' तथा यूनानी शासकों की मुद्राएँ उपलब्ध हुई। इन मुद्राओं का भिक्षुकों के रहने के स्थान से मिलना आश्चर्यजनक है जबकि इन साधुओं के लिए मुद्राओं का रखना वर्जित था। सम्भवतः इनको किसी साधु ने छिपाकर यहाँ रख लिया हो। इन मुद्राओं से यह प्रमाणित होता है कि बैराट् यूनानी शासकों के अधिकार में था। २८ मुद्राओं में से १६ मुद्राओं का मिनेन्डर का होना इस बात का प्रमाण है। इन मुद्राओं से यह भी स्पष्ट है कि बीजक की पहाड़ी पर बौद्धों के निवास-स्थान थे और वे ५० ई० तक बने रहे।

साँभर के उत्खनन से प्राप्त मुद्राएँ[८]

साँभर के उत्खनन से लगभग २०० मुद्राएं प्राप्त हुई हैं जिनमें ६ चाँदी की पंच-मार्क मुद्राएँ हैं। इन मुद्राओं से यहाँ के मकानों के खण्डहर तथा अन्य वस्तुओं के समय के निर्धारण में बड़ी सहायता मिलती है। इसी तरह पिछली ६ ताँबे की 'इण्डो-सेसेनिय' मुद्राएँ भी अन्य वस्तुओं के समय को बताने में उपयोगी हैं। यहाँ गुप्ताओं की कोई मुद्राएँ नहीं मिली हैं, परन्तु एक हविष्क की मुद्रा प्रमुख खाई से प्राप्त उपकरणों के काल को निर्णीत करने के काम की है। इसी प्रकार एक चाँदी की 'इण्डो-ग्रीक' मुद्रा जो एन्टिमकोजनिकेफोरस की है प्रारम्भिक स्थर का काल

---

७. एक्सकेवेशन्स एट बैराट्, पृ०२१–२२।

८. आर्कियोलॉजी एण्ड हिस्टॉरिकल रिसर्च–साम्भर, पृ० ४८

बतलाती है। यहाँ से कुछ यौधेय मुद्राएं भी मिली है जो रोहतक से यहाँ आई हो। ऐसा प्रतीत होता है कि सम्भवतः वहाँ कोई इन मुद्राओं की टकसाल रही हो। इन मुद्राओं मे से एक यौधेय मुद्रा जो बहुत छोटी है बडे महत्त्व की है। इस पर दो पंक्तियो मे ब्राह्मी लिपि मे 'बबुधना' तथा 'गण' अंकित है।

गुप्तकालीन सिक्के [९]

इस युग के सिक्को मे भरतपुर के बयाना जिले मे नगलाछैल नामक ग्राम से गुप्तकालीन सोने के सिक्को का ढेर मिला जिनमे लगभग १८०० सिक्के उपलब्ध हो सके। इस ढेर मे सबसे अधिक सिक्के चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य के समय के हैं। अन्य सिक्को मे कुमारगुप्त प्रथम तथा समुद्रगुप्त के सिक्के भी उल्लेखनीय हैं। इन सिक्को मे कई नये प्रकार के सिक्के हैं जो गुप्त सिक्को की विविधता प्रमाणित करते हैं। इनसे गुप्तवंशीय काचगुप्त तथा कुमारगुप्त के इतिहास पर नया प्रकाश पडता है। ऐसा अनुमान है कि सन् ५४० ई० के बाद हूणो के आक्रमण के कारण इस खजाने को जमीन मे गाड़ दिया गया हो। इन सिक्को मे चन्द्रगुप्त प्रथम के १०, समुद्रगुप्त के १७३, काचगुप्त के १५, चन्द्रगुप्त द्वितीय के ९६१, कुमारगुप्त प्रथम के ६२३ तथा स्कन्दगुप्त का १ सिक्का एव ५ खडित सिक्के मिले हैं। ये सिक्के शिल्पकला युक्त हैं और इनसे भारतीय सिक्को की मौलिकता पर अच्छा प्रकाश पडता है।

राजस्थान पुरातत्व विभाग ने १९६२ मे भेड से, जो टोंक जिले के प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थान रेड के निकट है, गुप्तकालीन ६ सुवर्ण मुद्राए प्राप्त की। इस स्थान पर ये मुद्राए कैसे पहुची इसके सम्बन्ध मे यही अनुमान लगाया जा सकता है कि या तो इस भाग पर गुप्ताओ का अधिकार रहा हो या व्यापारिक प्रक्रिया के द्वारा ये मुद्राएं किसी तरह यहाँ पहुँच गई हो। इन मुद्राओ मे एक समुद्रगुप्त शैली की मुद्रा है और ४ चन्द्रगुप्त द्वितीय शैली की हैं। इन चारो मे तीन धनुर्धारी और एक छत्र-धारी ढग की है। छठी मुद्रा किदार की है जो पिछला कुशाण शासक हो सकता है। इसके सुवर्ण मे मिलावट अधिक है। समुद्रगुप्त की मुद्रा का तोल ७४५० ग्रेन तथा चन्द्रगुप्त द्वितीय की मुद्रा का तोल ७७३५ ग्रेन है। इसी राजा के दूसरे सिक्कों के तोल मे थोडा-सा अन्तर है। इनमे ब्राह्मी लिपि का प्रयोग किया गया है।

गुर्जर प्रतिहारो के सिक्के [१०]

राजस्थान मे मारवाड के भाग मे गुर्जर प्रतिहारो का राज्य बडा शक्तिशाली था। अपनी शक्ति के सूचक सिक्को पर उन्होंने यज्ञवेदि तथा रक्षक आदि चिह्नो को प्राधान्यता दी। इन सिक्को पर ससैनियन शैली का प्रभाव दिखाई देता है। ये सिक्के

---

९ वासुदेव उपाध्याय—भारतीय सिक्के, पृ०१५२–१५३। जर्नल ऑफ न्युमिसमेटिक सोसाइटी ऑफ इण्डिया, जि०३२ भाग २, पृ०२०३–२०५

१०. वासुदेव उपाध्याय भारतीय सिक्के, पृ० १८१–१८२, एपिग्राफिया इण्डिका, भा० २४, पृ० ३३१–३२

तोल, आकार तथा शैली में ससैनियन सिक्कों के निकट दिखाई देते हैं । ऐसे सिक्के अधिकांश में ताम्बा, मिश्रित चांदी के बनते थे । इनके अग्रभाग में ससैनियन यज्ञकुण्ड तथा 'श्री मदादि वराह' नागरी में अंकित रहता है । पृष्ठ भाग में सूर्यचक्र तथा वराह की मूर्ति बनी रहती है । ऐसे सिक्कों को 'आदि वराह' शैली का नाम दिया गया है ।

मारवाड़ में अनेक ताम्बे के सिक्के भी मिलते हैं जिनका प्रचलन गुर्जर प्रतिहारों के द्वारा किया गया था । इन पर राजा के अर्ध शरीर का चिह्न तथा यज्ञकुण्ड बना रहता है । परन्तु ये चिह्न इतने अस्पष्ट रहते हैं कि उन्हें गधिया सिक्के कहा जाता है, क्योंकि ये अस्पष्ट चिह्न गधे के मुँह सा दिखाई देता है । ये सिक्के ११वीं तथा १२वीं सदी तक प्रचलित रहे परन्तु पीछे से इनको तोल के रूप में काम में लिया जाने लगा ।

एक अन्य संज्ञा के सिक्के जिन्हें 'आदि वराह द्रम्म' भी कहा गया है राजस्थान में पाये गये हैं । इनके प्रचलन का श्रेय मिहिरभोज व विनायकपाल देव को है, जो कन्नौज के सम्राट् थे । अल्लाउद्दीन खिलजी की दिल्ली टकसाल के अधिकारी ठक्कर फेरू ने अपनी 'द्रव्य परीक्षा' नामक पुस्तक में इन शासकों के सिक्कों को 'वराही द्रम्म' और 'विनायक द्रम्म' कहा है । कुछ सिक्के विनायकपाल के समय के मिले हैं जिन पर 'श्री मदादिवराह' का लेख तथा नरवराह की मूर्ति अंकित है ।

चौहानों के सिक्के[11]

राजस्थान में निखात् निधि के रूप में साँभर-अजमेर तथा जालोर-नाडौल के चौहान नरेशों के कई चाँदी व ताँबे के सिक्के प्राप्त हुए हैं । इनका समय ११वीं से १३वीं सदी तक का आँका गया है । चौहानों के शिलालेखों में इन सिक्कों के लिए द्रम्म, विंशोपक, रूपक, दीनार आदि नामों का प्रयोग किया गया है । हर्षनाथ का लेख (सं. १०३०), मेनाल अभिलेख (सं. १२२५), धोड़ अभिलेख (सं. १२२८) तथा जालोर का लेख (सं. १३३१) इन लेखों में प्रमुख हैं । 'पृथ्वीराज विजय' में भी वर्णित है कि अजयराज ने भी सम्पूर्ण पृथ्वी को रूपकों तथा चाँदी के सिक्कों से परिपूर्ण कर दिया । इन सिक्कों पर वीसलप्रिय द्रम्म, अजयदेव द्रम्म, अजयप्रिय रूपक आदि नागरीलिपि में अंकित मिलता है । चौहान नरेशों में अजयराज, सोमेश्वर और पृथ्वीराज तृतीय, तथा जालोर शाखा के कीर्तिपाल और नाडौल के केल्हण के सिक्के विशेष प्रसिद्ध हैं । इन सिक्कों में विशेष रूप से अग्रभाग में वृषभ और अश्वारोही के चित्र अंकित मिलते हैं और पृष्ट भाग पर राजाओं के नाम नागरीलिपि में लिखे प्राप्त होते हैं । ऐसे सिक्के अजमेर म्यूजियम एवं कलकत्ता म्यूजियम में सुरक्षित देखे गये हैं । अजयदेव की रानी सोमलेखा द्वारा चाँदी की

---

११. थाः पठान्स, पृ. ६३: कनिंघम, पृ. ८३; राजकुमार रायः भारतीय इतिहास के स्रोत सिक्के, पृ. ७३, एपिग्राफिया इन्डिका, जि. ३३, पृ. ४६–४९; इण्डियन एण्टीक्वेरी, वर्ष १९१३, पृ. ५७–६७ ।

मुद्रा था तथा सोमेश्वर द्वारा वृषभशैली तथा अश्वारोहीशैली के सिक्को का प्रचलन प्रमाणित है।

पृथ्वीराज की पराजय के बाद चौहान सिक्को के अनुरूप मुहम्मद गोरी ने देवनागरी मे अपना नाम 'मुहम्मद बिन साम' अकित कराकर सिक्के तैयार करवाये जिससे विदेशी शासक प्रजा के प्रिय बन सकें। इस्लाम मतानुयायी होते हुए भी उसने नन्दि को सिक्को पर अंकित करवाया। इन अकनो के अतिरिक्त पृष्ट भाग पर देवनागरी मे हम्मीर शब्द को भी अकित करवाया गया। इन सिक्को के पट की ओर अरबी मे 'अस्सुल्तान-अल आजम-मुईनुद्दीन वा-दीन-अबूमुजफ्र' अकित रहता था। राजस्थान के विभिन्न राज्यो के भी अपने सिक्के रहे है जिनका अध्ययन भी ऐतिहासिक दृष्टि से बडा उपयोगी है। ऐसे राज्यो मे मेवाड, मारवाड, बीकानेर, जयपुर, भरतपुर, अलवर, डूगरपुर, बाँसवाडा, बूँदी, कोटा, किशनगढ, जैसलमेर, करौली, धौलपुर, सिरोही आदि प्रमुख हैं।

मेवाड में चलने वाले सिक्के[१२]

इस राज्य मे प्राचीन काल से ही सोने, चाँदी और ताँबे के सिक्के चलते थे। इनमे कुछ सिक्के मिलावट वाले धातुओ के भी होते थे। वेब के अनुसार ये सिक्के 'इडोसेसेनियन' शैली के थे। चाँदी के सिक्के, द्रम्म, रूपक और ताँबे के कर्षापण कहलाते थे। पुराने सिक्को पर कोई लेख नही रहता था, परन्तु इन पर मनुष्य, पशु, पक्षी, सूर्य, चन्द्र, धनुष, वृक्ष आदि का चिह्न रहता था। वर्तमानकाल तक चलने वाला 'ढीगला' इसी परम्परा का द्योतक माना गया है। इनका आकार भद्दे ढग का चौखूटा होता था और उन्हे किनारो पर कुछ गोल कर दिया जाता था। ऐसे चादी और ताँबे के सिक्के 'नगरी' (मध्यमिका) मे अब भी मिलते हैं। इन पर 'शिबि जनपद' भी अकित रहता है। इन अक्षरो की आकृति से नगरी के सिक्को का समय विक्रम सवत् पूर्व की तीसरी शताब्दी आँका जाता है। वही से यूनानी राजा मिन्नैंडर के 'द्रम्म' भी प्राप्त हुए हैं। इसी प्रकार पश्चिमी क्षत्रपो के कई चाँदी के सिक्के तथा गुप्तो की सोने की मुद्राए कई परिवारो के निजी सग्रह मे देखने को मिलते हैं जिससे प्रमाणित होता है कि इन सिक्को का प्रचलन मेवाड मे रहा हो।

हूणो द्वारा प्रचलित चाँदी और ताँबे के सिक्के जिन्हें 'गधिया मुद्रा' कहा जाता है मेवाड के कई कस्बो के बाजारो से उपलब्ध होते है। वेब के विचार से ये मुद्रा फारस के बादशाह बहराम द्वारा प्रचलित की गई थी और धीरे-धीरे इसका स्वरूप 'गधिया' मुद्रा मे परिणित हो गया। वैसे तो इस मुद्रा को 'गधिया मुद्रा' इसलिए कहा जाता है कि उस पर अकित मूर्ति गधे के मुह की भाँति दिखाई देती

---

१२ वेब करेन्सीज ऑफ दी हिन्दू स्टेट्स ऑफ राजपूताना, पृ. ४-५,
ओझा : उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग १, पृ २३,

है। परन्तु वास्तविकता यह है कि न तो यह फारस की मुद्रा का रूपान्तर है और न यह गधे के मुंह वाली है, यह तो वह मुद्रा है जिस पर क्षत्रप, प्रतिहार आदि शासकों की मुद्रा के चिह्नों को पतला कर दिया गया और ऐसी स्थिति में वृषभ, वराह, देवी आदि का अंकन स्पष्ट नहीं आ सका है। आगे चलकर इन अस्पष्ट चिह्नों को गधिया कहा जाने लगा। ये मुद्राएं मेवाड़ में ही नहीं वरन् नरहद, रैणी, सिरोही, त्रिभुवनगिरी आदि कई स्थानों में चलती रही जिनका उल्लेख फेरू ने भी किया है। ये मुद्राएं 'गधिया' शैली की हैं। जब इनका चलना बन्द हो गया तो व्यापारी आजतक इसका प्रयोग तोल के रूप में करते रहे।[13] गधिया मुद्रा का उद्‌भव आहड के गर्वभ्सेन से भी कुछ लोग मानते हैं जो ठीक नहीं प्रतीत होता।

मेवाड़ राज्य के प्रथम संस्थापक राजा गुहिल ने अपने नाम के सिक्कों का प्रचलन किया जो गुहिल के २००० चाँदी के सिक्कों से, जो आगरा के बड़े संग्रह से प्राप्त हुए हैं, प्रमाणित है। 'गुहिलपति' लेख वाले सिक्कों से भी गुहिल द्वारा सिक्के चलाना माना जाता है। शील का ताँबे का सिक्का तथा बापा की सुवर्ण मुद्रा भी इस वंश के राजाओं की प्राचीन मुद्रा में स्थान रखती हैं। पारुथ द्रम्मों को, जिनका प्रचलन मालवा के परमारों द्वारा किया गया था, मेवाड़ में लेन-देन के काम में लाए जाते थे। यह मुद्रा चाँदी की होती थी और उसे आठ द्रम्मों की कीमत के बराबर मानी जाती थी। नरवर्मन ने इस प्रकार के दो पारुथ चित्तौड़ के करके नाके से दैनिक रूप से अनुदान के रूप में देने का आदेश दिया था। तेजसिंह (१२६१–१२७० ई.) के काल में ताँबे के द्रम्मों का मेवाड़ में चलना स्पष्ट है।[14]

मुस्लिम विजय से १२वीं सदी से 'मुहम्मद बिन साम' व सुरतिन समरुदीन' नाम वाले तथा अश्वारोही व नन्दी शैली के मिलेजुले सिक्के राजस्थान में पाए जाते हैं जिनका प्रचलन मेवाड़ में भी था। इन सिक्कों को 'टका' और 'दिरहम' नाम से पुकारा जाता था। चाँदी के सिक्कों का वजन १७० ग्रेन से १४५ ग्रेन तक एवं ताँबे के सिक्के का वजन ५७० ग्रेन के लगभग था।

महाराणा कुम्भा के चाँदी और ताँबे के सिक्के मिले हैं जो गोल एवं चौकोर थे और जिनका वजन विभिन्न था। इन पर १५१० एवं १५२३ वि. तथा कुम्भकर्ण,

---

१३. जरनल ऑफ न्युमिसमेटिक, भा. ८, पृ. ६६, १५७ आदि;
बिबलियोग्राफी ऑफ इण्डियन कोयन्स, भा. १, पृ. ८८–८९;
गोपीनाथ शर्मा : राजस्थान का इतिहास, पृ १३३–१३४।

१४. खरतरगच्छ पट्टावली, पृ. ८, १०, ३०; जरनल ऑफ न्युमिस भा. २०, पृ. १५, २६, ३०, ३१, ओझा, उदयपुर, भा. १ पृ. ४०८, राजस्थान थ्रू दि एजेज, पृ. ५००–०१.

गोपीनाथ शर्मा : राजस्थान का इतिहास, भा. १, पृ. १३२–१३३।

कुम्भलमेरू अंकित मिलता है। उसके द्वारा मालवा के सुल्तान को चाँदी के अपने नाम के टका देने का भी उल्लेख मिलता है। इस प्रकार महाराणा सग्रामसिंह के ताँबे के सिक्के मिले है जिनपर एक ओर 'सग्रामसिंह' एव १५८० तथा १५७५ अंकित हैं और दूसरी ओर भद्दे फारसी के अक्षर तथा स्वस्तिक या त्रिशूल बने हुए हैं। इन सिक्को का उल्लेख पिन्सेप व कनिंघम ने किया है। इनका वजन १२६ ग्रेन से १४४ ग्रेन एव ५० ताँबे की मुद्रा का मोल एक रुपया के बराबर आका जाता था। महाराणा रतनसिंह, विक्रमादित्य, बनवीर तथा उदयसिंह के भी सिक्के लगभग इसी शैली के मिले हैं[१५]

उदयसिंह के राज्य काल मे ही अकबर ने चित्तौड विजय के उपलक्ष मे मुगल मुद्रा का प्रचलन चित्तौड से प्रारम्भ किया। इस पर 'गा' अक्षर का चिह्न लगाया गया जो चित्तौड विजय के फलस्वरूप हत्या का द्योतक था। सभवत. अकबर द्वितीय ने इसी आशय का एक सिक्का चलाया हो जिस पर एक ओर फारसी मे अंकित था 'सिक्का मुबारक बादशाह गाजी अकबरशाह'। इसके दूसरी ओर 'जरब सन् १४ जूलुस मैमनत मानूस गा' अंकित था। इस सिक्के का वजन १७६ ग्रेन था और उस पर एक भाड का चिह्न भी था। चित्तौड की टकसाल के अकबर के ही सिक्के निकलने लगे। जहाँगीर तथा पिछले सम्राटो के भी सिक्के यहा बनने लगे जिन्हे 'सिक्का एलची' कहते थे। मुहम्मदशाह के समय से मेवाड मे चित्तौड, भीलवाडा और उदयपुर की टकसाल से स्थानीय सिक्का बनने लगा जिसको 'चित्तोडी' 'भीलाडी' और 'उदयपुरी' रुपैया कहते थे। इस पर शाहआलम का लेख फारसी मे रहता था। महाराणा स्वरूपसिंह ने अंग्रेजो से संधि कर 'स्वरूपशाही' रुपया चलाया। इसके एक तरफ 'चित्रकूट-उदयपुर' और दूसरी ओर 'दोस्ति लधन' रहता था। इसी रुपये की अठन्नी, चवन्नी, दुअन्नी तथा एक अन्नी भी चलती थी। स्वरूप-शाही सुवर्ण मुहर का भी प्रचलन था जिसका वजन १०० ग्रेन होता था। 'चांदोडी' सुवर्ण मुहर भी स्वरूपसिंह के समय की थी जिसका वजन ११६ ग्रेन होता था, परन्तु इसमे मिलावट अधिक होती थी। 'शाहआलमी' चित्तौडी रुपया भी होता था जो चाँदी का रहता था। इसी तरह एक किस्म 'उदयपुरी' रुपये की भी होती थी जिसकी कीमत कभी १२½ आने कल्दार के बराबर आती थी। महाराणा भीमसिंह की बहिन चन्द्रकुवर बाई के स्मरण मे उक्त महाराणा ने 'चाँदोडी' रुपया, अठन्नी, चवन्नी, दो अन्नी, और एक अन्नी चलाई जिन पर फारसी अक्षर रहते थे। महाराणा स्वरूपसिंह ने फारसी के बदले इन पर बेल-पत्ती के चिह्न लगवाये। इस मुद्रा की कीमत चाँदी के भाव से बदलती रहती थी और कभी-कभी एक चाँदोडी रुपये का दाम ५-६ आना ही रह जाता था। दान-पुण्य, विवाह, न्यौछावर, इनाम आदि कामो

---

१५ वेब–दि करेन्सीज ऑफ दि हिन्दू स्टेट्स ऑफ राजपूताना, पृ. ६-७, ओझा. उदयपुर, भा १, पृ. २३।

में 'चांदोड़ी' रुपया खूब चलता था।

मेवाड़ में तांबे के भी कई सिक्के चलते थे। इनको 'ढींगला', 'भिलाड़ी, 'त्रिशूलिया', 'भींडरिया', 'नाथद्वारिया' आदि नामों से जाना जाता था। ये विभिन्न आकार तथा तोल एवं मोटाई के होते थे। साधारणतः एक रुपये के १६२ ढींगले होते थे और भीलाडी आदि ४८ पैसे का एक रुपया होता था।

मेवाड़ के जागीरदारों में सलुम्बर, भींडर और शाहपुरा की भी मुद्राएँ देखी गई है। सलुम्बर की तांबे की मुद्रा को 'पदमशाही' कहते थे जिसका प्रचलन १८७० तक रहा। भींडर की मुद्रा को 'भींडरिया पैसा' कहते थे जिसकी कीमत चार पाई के बराबर थी। शाहपुरा में भी सोने, चाँदी तथा तांबे के सिक्के बनते थे जिन पर शाहआलम तथा अन्य चिह्न अंकित रहते थे। यहां के सोने और चांदी के सिक्के को 'ग्यार सनह' और तांबे के सिक्के को 'माधोशाही' कहते थे।[१६]

डूंगरपुर राज्य के सिक्के[१७]

डूंगरपुर के शासकों का यह कहना है कि राज्य को पुराने समय से सिक्के बनाने का अधिकार था। कर्नल निक्सन का कहना है कि इस राज्य में टकसाल थी और चांदी का 'त्रिशूलिया' 'पत्रिसोरिया' सिक्का यहां बनता था। इसी कथन के आधार पर वेब ने इसकी जांच-पड़ताल की परन्तु उसे ऐसी शैली के कोई सिक्के नहीं मिले। वहां के महारावल ने भी इसके समर्थन में कोई सिक्का नहीं बतलाया। वैसे अबतक डूंगरपुर राज्य का कोई चांदी का सिक्का नहीं मिलता है। ऐसा प्रतीत होता है कि यहां मेवाड़ के पुराने 'चित्तौड़ी' और प्रतापगढ़ के 'सालिमशाही' रुपयों का प्रचलन था। इस आधार पर वेब की मान्यता है कि डूंगरपुर में पुराना 'चित्तौड़ी' रुपया कभी बनता हो।

जो सिक्के यहां चलते थे उनके भाव में काफी उतार-चढ़ाव आते रहते थे जिससे व्यापार में बड़ी हानि होती थी। राज्य ने १६०४ ई० में इस असुविधा को समाप्त करने के लिये अंग्रेजी सरकार से समझौता किया जिसके द्वारा १३५ रु० 'चित्तौड़ी' और २०० रु० 'सालिमशाही' के बजाय १०० रु० कलदार देना निश्चित किया। तभी से राज्य में कलदार का प्रचलन आरंभ हो गया। अलबत्ता यहां की टकसाल में तांबे के पैसे बनते रहे जिनपर एक तरफ नागरी में 'सरकर गरपर' और दूसरी ओर संवत् का अंक १६१७, उसके नीचे तलवार का चिह्न और नीचे झाड़ का चिन्ह बना रहता था। इसका तोल १६० ग्रेन था।

---

१६. वेब-दि करेन्सी ऑफ दि हिन्दू स्टेट्स ऑफ राजपूताना, पृ० ७-१६। ओझा, उदयपुर, भा. १, पृ. २३–२४।

१७. वेब : करेन्सीज ऑफ हिन्दू स्टेट्स ऑफ राजस्थान, पृ० २८–३०; ओझा : डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० १३; गोपीनाथ शर्मा : राजस्थान का इतिहास, भा. १, पृ० १३६।

प्रतापगढ राज्य के सिक्के[18]

प्रतापगढ राज्य मे पहले स्वतन्त्र ढग का सिक्का नही चलता था। माण्डू और गुजरात के सिक्के यहा चला करते थे। जब माण्डू और गुजरात अकबर बादशाह के राज्य के अग बन गए तो यहा भी मुगलकालीन सिक्के चलने लगे। अन्य राज्यो की भाँति शाहआलम ने उसके नाम के सिक्के चलाने की आज्ञा महारावल सालिमसिह को दी और ई स १७८४ से प्रतापगढ की टकसाल मे चाँदी के सिक्के बनने लगे। इस सिक्के को 'सालिमशाही' कहते थे जिसके एक तरफ 'सिक्कह मुबारक बादशाहा गाजी शाहआलम, ११९९' और दूसरी ओर जर्ब २५ जुलूस मैमनत मानूस' फारसी मे अकित होने लगा। आमतौर पर यह माना जाता था कि सालिमसिह के समय से इस सिक्के का प्रचलन होने से इसे 'सालिमशाही' कहते हैं, परन्तु इस पर सालिमसिह का नाम न होकर शाहआलम का नाम है। बतलाया जाता है कि यह सिक्का बाँसवाडा मे भी कुछ समय बनाया गया था। कुछ भी हो इस सिक्के का प्रचलन डूगरपुर, बाँसबाडा, उदयपुर, झालावाड, नीबहेडा, रतलाम, जावरा, सीतामऊ, ग्वालियर, मन्दसोर आदि मे था। ई स १८१८ की सधि से शाहआलम का नाम निकालकर उसके स्थान पर 'सिक्का मुबारिकशाह लन्दन, १२३६' अकित किया गया। इस सिक्के को नया सालिमशाही' कहते थे। फिर इसके अठन्नी, चवन्नी तथा दुअन्नी भी बनने लगी। जब आस पास कल्दार का प्रचलन हो गया तो नये 'सालिमशाही' की कीमत घटकर अठन्नी तक रह गई। १९०४ ई से ऐसे सिक्को के बजाय यहाँ कल्दार का प्रचलन आरम्भ हो गया। प्रतापगढ मे पहले ताँबे के सिक्के भी चलते थे जिसके एक ओर 'श्री' और दूसरी ओर कुछ बिंदिया तथा कोई अस्पष्ट चिह्न होता था। पीछे से चलाये गये ताँबे के सिक्के पर एक तरफ नागरी मे प्रतापगढ एव सवत् १९४३ तथा दूसरी तरफ दो तलवारो के बीच सूर्य का चिह्न अकित रहता था। इसका तोल १२० ग्रेन था।

बाँसवाडा राज्य के सिक्के[19]

बाँसवाडा राज्य भी सिक्के बनाने का अपना अधिकार मानता था, परन्तु प्रचलन के विचार से यहाँ बादशाह शाहआलम (दूसरा) फारसी लेखवाला 'सालमशाही' रुपया चलता था। ऐसा भी प्रतीत होता है कि बाँसवाडे मे टकसाल थी, जैसाकि कई सिक्को पर जर्ब बाँस (वाडा)' लेख अंकित पाया गया है। इतना तो स्पष्ट है

---

१८ वेब करेन्सीज ऑफ दी हिन्दू स्टेट्स ऑफ राजपूताना पृ २३-२६, ओझा : प्रतापगढ राज्य का इतिहास, पृ १३-१५, गोपीनाथ शर्मा राजस्थान का इतिहास, भा १, पृ १३५।

१९ वेब : करेन्सीज ऑफ दि हिन्दू स्टेट्स ऑफ राजपूताना पृ० ३३-३४ ओझा बासवाडा राज्य का इतिहास, पृ० ११-१२, गोपीनाथ शर्मा राजस्थान का इतिहास, भा० २, पृ० १३६

करदी। यह रुपया पूर्ण चाँदी का था और उनकी कीमत १३ $\frac{1}{8}$ कल्दार की समता का था। १९२५ ई में अंतिम बार 'चेहरे शाही' रुपया बना तदनन्तर कलदार का प्रचलन रह गया।

ताँबे के सिक्के में पुराना बूँदी का पैसा चलता था जिस पर चाँदी के सिक्के का ठप्पा होता था। ये पैसे चौकोर और कुछ ठीक गोलाकार होते थे जिनका वजन क्रमशः १३५ और २७०–४ ग्रेन रहता था। ३२ बड़े पैसे का एक रुपया होता था। १८५६ से नया बूँदी का पैसा चला। इस पर भी चाँदी के सिक्के जैसे अंकन रहते थे। १८६५ में चलने वाले ऐसे पैसों का वजन २७० ग्रेन और १८७७ में चलने वाले का १७० ग्रेन था।

कोटा राज्य के सिक्के[२४]

कोटा क्षेत्र में भी पहिले गुप्तकालीन और हूणों के सिक्कों का प्रचलन था। मध्यकालीन युग में यहाँ माण्डू और दिल्ली के सुल्तानों के सिक्के चलते रहे। अकबर के राज्य-विस्तार के साथ यहाँ मुगलकालीन सिक्कों का प्रवेश हुआ। प्रिन्सेप के अनुसार राज्य में सुवर्ण मुद्रा बनती थी जिन पर सन् का अंकन और झाड़ एवं फूल बने रहते थे। चाँदी के सिक्के के एक तरफ 'सिक्का मुबारक बादशाह गाजी शाहआलम बहादुर' और दूसरी तरफ 'जर्ब सन् जुलूस मैमनत मानूस' एवं फूल, नक्षत्र और सिकड़ा धनुष बना रहता था। उसका वजन १७१ ग्रेन होता था। सन् १७८८ में मुहम्मद बीदारबक्ष के नाम का सिक्का १७५ ग्रेन का बना। रानी के नाम के सिक्के भी साधारण व नजर के बनाए गए थे और उनकी अठन्नी, चवन्नी और दुअन्निया होती थी। ऊपर की भाँति उन पर लेख होता था। यहाँ पहिले 'हाली' और 'मदनशाही' सिक्कों का भी प्रचलन था। सौ कलदार की कीमत ११४ 'हाली' या ११८ 'मदनशाही' रुपये के बराबर थी। १९०१ से यहाँ अंग्रेजी सिक्का जारी कर दिया गया। यहाँ ताँबे के भी सिक्के बनते थे जो चौकोर आकार के होते थे। जिनका वजन २७८ ग्रेन और २८२ ग्रेन होता था। ऐसे ३४ ताँबे के सिक्के एक रुपये के बराबर होते थे। चाँदी के सिक्कों का प्रचलन अजमेर में भी था। यहाँ का रुपया कोटा, गागरोन एवं झालरापाटन में बनता था।

किशनगढ़ राज्य के सिक्के[२५]

इस राज्य का अपना सिक्का, अन्य राज्यों की भाँति, शाहआलम के नाम का था। सोने के सिक्के का तोल ११ माशा और २$\frac{1}{4}$ रत्ती था। चाँदी के सिक्के का भी यही वजन था, अलबत्ता उसमें दो माशा मिलावट होती थी। इन सिक्कों

---

२४. वेब : दि करेन्सीज ऑफ दि हिन्दू स्टेट्स ऑफ राजपूताना, पृ. ९१–९४; डा. एम. एल. शर्मा : कोटा राज्य का इतिहास, भा. १, पृ. ५; गहलोत, कोटा राज्य का इतिहास, पृ. २०; गोपीनाथ शर्मा, राजस्थान का इतिहास, पृ. १३५–१३६।

२५ वेब : दि करेन्सीज ऑफ दि हिन्दू स्टेट्स ऑफ राजपूताना, पृ, ९७-९८।

के एक तरफ 'सिक्का मुबारक बादशाह गाजी' और दूसरी ओर 'जर्ब सने जलूस मैमनत मानूस' एव भाड का चिन्ह अङ्कित रहता था। यहाँ १६६ ग्रेन का चांदोडी रुपया भी मेवाड की चाँदकुवरी के नाम पर बनाया गया था। इसका प्रयोग दान-पुण्यादि कार्यों मे होता था। वैसे तो यह सिक्का मेवाड के 'चादोडी' सिक्के के समान ही होता था, केवल उन पर भद्दा ठप्पा होता था और रेखाएं मेवाडी सिक्के की अपेक्षा कुछ चौडी दिखाई देती थी। पृथ्वीसिंह के नाम का, जिसके एक ओर विक्टोरिया का नाम था, यहाँ सिक्का बनाया गया था। इसका वजन भी ११ माशा २½ रत्ती था जिसमें २ माशा मिलावट सम्मिलित थी।

झालावाड राज्य के सिक्के[२६]

वैसे तो झालावाड मे कोटा के सिक्के प्रचलित थे परन्तु फिर यहा १८३७ से १८५७ ई तक 'पुराने मदनशाही' सिक्के चलने लगे। इसके एक तरफ 'सिक्का मुबारक बादशाह गाजी मुहम्मद शाह बहादुर' और दूसरी ओर 'सन् जलूस मैमनत मानूस जर्ब झालावाड' रहता था। इसका वजन ११ माशा चाँदी और दो रत्ती मिलावट रहती थी। एक समय इसकी कीमत १ रु १० आना कलदार मे होती थी। ऐसा भी समय आया जब कलदार की तुलना मे इसके पन्द्रह आने हो गये। 'नए मदनशाही' का प्रचलन १८५७ से १८६१ ई. तक रहा। इसमे मुहम्मद शाह के बजाय 'मलिका मोएज्जमा विक्टोरिया बादशाह इगलिस्तान' रहता था। इस पर 'पच पखडी' और 'फूली' का चिन्ह रहता था। इसके बाद 'हाली रुपये' हाली अठन्नी, चवन्नी और दुअन्नी का प्रचलन हुआ। ताँबे के सिक्को मे 'मदनशाही' पैसा एव 'मदन शाही' टक्का चलते थे। ऐसे २३ से ३४ टक्के एक 'मदनशाही' के बराबर होते थे।

जैसलमेर के सिक्के[२७]

स्थानीय सिक्के के बनने के पहिले जैसलमेर मे चाँदी का 'मुहम्मद शाही' सिक्का चलता था। इसके एक तरफ 'सिक्का मुबारक साहिब किरन सानी मुहम्मद शाह बादशाह ११५२' और दूसरी ओर 'सन् २२ जुलूस मैमनत मानूस' अकित रहता था। इसमे कुछ बिन्दियाँ एव किसी किसी पर नागरी के अक भी रहते थे। १७५६ से महारावल अखयसिंह ने अपनी टकसाल मे 'अखयशाही' मुद्रा को बनवाया। पहिले यह सिक्का विशुद्ध चाँदी का और थोडी मिलावट का होता था। आगे चलकर इसमे मिलावट बढ गई जिसमे लेन देन मे कठिनता का अनुभव होने लगा। ठाकुर केसरीसिंह ने इसको फिर से विशुद्ध बनाने का प्रयत्न किया परन्तु पूरी सफलता न मिल सकी। १८६० मे रानी विक्टोरिया के नाम के रुपये, अठन्नी, चवन्नी और दुअन्नी बने। इन्हे भी 'अखय-

---

२६ वही, पृ ९७–१००।

२७, वेब : दि करेन्सीस, पृ० १०३–१०६; गहलोत : राजपूताने का इतिहास, भा० १, पृ० ६४४।

शाही' कहते थे। इन पर रानी का नाम अंकित करवाया गया। एक समय पुराना 'अखयशाही' सिंध, भावलपुर, मलानी, जालोर और जैसलमेर में खूब प्रचलित था। १८६० ई० में यहाँ सोने की मोहर, आधी, पाव व दो आनी मोहर भी चलाई गई। मोहर का तोल १६७ ग्रेन था।

जैसलमेर में ताम्बे का सिक्का 'डोडिया' कहलाता था जिसे १६६० ई० में प्रथम वार वनाया गया था। इसके उपर मेवाड़ी 'ढींगल' जैसे चिह्न रहते थे। ये इतने छोटे होते थे कि इनका प्रचलन कौड़ियों की भाँति होता था। एक आने के ४० डोडिया आते थे। इसका वजन १८ से २० ग्रेन के लगभग होता था। धीरे-धीरे चाँदी का 'अखयशाही' विलुप्त होता चला गया और उसका स्थान कलदार ने ले लिया।

अलवर राज्य के सिक्के [२८]

अलवर राज्य का टकसाल राजगढ़ में था जहाँ से १७७२ से १८७६ तक स्थानीय सिक्के वनते रहे। इनको 'रावशाही' रुपया कहते थे। १८७७ से राज्य और अंग्रेजी सत्ता के समझौते के अनुसार कलकत्ता टकसाल से यहां के लिए सिक्के वनते रहे और साथ ही साथ नमूने के तौर 'रावशाही' सिक्के राजगढ़ में भी वनते थे। १८७७ ई० के पहिले यहाँ रुपया, अठन्नी और चवन्नी वनती थी, परन्तु इसके वाद रुपया ही वनने लगा न कि उसके छोटे भाग। प्रतापसिंह के समय में १७३ ग्रेन का रुपया वनता था, जिसके एक ओर 'सिक्का मुवारक वादशाह गाजी शाह आलम' और दूसरी ओर 'जर्व राजगढ़ सन जुलूस मैमनत मानूस' अंकित रहता था। इस शैली के १०० रुपये १०१.३५३ कलदार के वरावर होते थे। वनेसिंह के सिक्के पर 'मुहम्मद वहादुर शाह, १२६१' अंकित रहता था। शिवदानसिंह के सिक्के १८५६ से १८७४ तक चलते रहे। इस पर विक्टोरिया का नाम अंकित था तथा कई चिन्ह जैसे झाड़, छत्र, विन्दियाँ आदि भी होते थे। इसी तरह मंगलसिंह के सिक्के में एक तरफ रानी विक्टोरिया का नाम और दूसरी ओर 'महाराज श्री सवाई मंगलसिंह वहादुर, १८६१' अंकित रहता था। इसका तोल १८० ग्रेन था।

यहाँ के ताँवे के सिक्कों को 'रावशाही टक्का' कहते थे जिन पर 'आलम शाह' 'मुहम्मद वहादुर शाह' 'मलका विक्टोरिया' 'शिवदानसिंह' आदि का नाम अंकित रहते थे। ताँवे के सिक्के और 'हाली' अलवर मुद्रा के भाव से वड़ा उतार चढ़ाव रहता था इससे यहाँ ताँवे के सिक्के के वजाय अंग्रेजी पाव आना का सिक्का प्रचलित हो गया और 'हाली' मुद्रा के वजाय कलदार चलने लगा। यहाँ के सिक्कों पर तलवार, भाला, फूल आदि चिन्ह भी पाये जाते हैं।

करौली राज्य के सिक्के [२९]

यहाँ सवसे प्रथम महाराजा मानकपाल ने १७८० ई० में चाँदी और ताँवे के

---

२८. वेव : करैन्सीज, पृ०१०६–११५

२९. वेव : दि करैन्सीज, पृ० ११६–१२२।

सिक्के अपनी टकसाल मे बनवाये। इन सिक्को पर कटार और झाड के चिह्न तथा साल सवत् मय बिन्दुओ के लगे हुए रहते थे। इसके एक ओर 'सिक्का मुबारक शाह आलम गाजी साहिब किरन सानी सन् हिजरी', दूसरी ओर 'जर्ब करौली सने जुलूस मैमनत मानूस' लिखा रहता था। मानकपाल के उत्तराधिकारियो ने इसी शैली के सिक्के बनवाए परन्तु उनमे अपने नाम का अ कन नाम के प्रथम अक्षर 'म' (मदनपाल), (ज) जयसिंह, अ (अर्जनपाल), भ (भँवरपाल) से करवाया। सन् १८५८ के बाद मुगल बादशाहो के नाम के स्थान पर 'मलका मुअजमह फरमान रवाई इगलिस्तान' रखा गया था। ताँबे सिक्को पर भी चाँदी के सिक्के के ठप्पे लगते रहे। इनमे से मानकपाल का ताँबे का सिक्का २८१ ग्रेन का होता था और ३६ ऐसे सिक्के एक रुपये के बराबर होते थे। यहाँ के बने ६८ पैसे या ३४ टक्का का दाम एक रुपये के बराबर होता था। १९०६ से यहाँ अ ग्रेजी सिक्के का चलन हो गया और स्थानीय सिक्को का प्रचलन बन्द हो गया।

भरतपुर राज्य के सिक्के[३०]

भरतपुर राज्य मे दो टकसाल थे डीग और भरतपुर। १७६३ ई० मे सूरजमल ने शाह आलम के नाम के चाँदी के सिक्को का प्रचलन किया। इस पर एक तरफ 'सिक्क मुबारक बादशाह गाजी शाह आलम' और दूसरी ओर 'जर्ब बुर्जी अनवरपुर सन् जुलूस' मय कटार और फूल के अ कित रहता था। इसका तोल १७१.८६ ग्रेन होता था। डीग की टकसाल से महाराजा रणधीरसिंह ने चादी का रुपया, अठन्नी, चवन्नी चलाई। इसके एक ओर 'सिक्का मुबारक साहिब किरन सानी मुहम्मद अकबर शाह' और दूसरी ओर 'जर्ब महेन्द्रपुर सन् जुलूस मैमनत मानूस, सन् ४२ या ४९' लगा रहता था। इसका वजन १७० के लगभग होता था। ऐसे १०० सिक्को के ९१ कलदार होते थे। १८५८ के सिक्के के एक तरफ 'जर्ब भरतपुर बुर्जी-अनवर सवाई जसवन्तसिंह बहादुर जग' और दूसरी तरफ 'जनाब मलिका मुअज्जमह क्वीन विक्टोरिया फरमान रवाई इगलैण्ड सन् १८५८' लिखा रहता था और रानी की आकृति बनी रहती थी। इसका वजन १७१ ग्रेन था। इसके अठन्नी, चवन्नी और दुअन्नी के भाग भी थे।

ताँबे का सिक्का भी १७६३ से आरम्भ हुआ और १८९१ तक प्रचलित रहा। इस पर भी समय-समय पर चाँदी के साँचे के अनुकूल अ कन होता रहा। इसका वजन २७५ से २८० ग्रेन तक देखा गया है।

धौलपुर के सिक्के[३१]

धौलपुर म १८०४ ई से टकसाल आरभ हुई जिससे रुपये और अठन्नियाँ बनाई गई। यहाँ से प्रचलित सिक्के को 'तमचा शाही' कहते हैं क्योकि उस पर

---

३०. वही, पृ० १२५–१२९।

३१. वेब . दि करेन्सीज, पृ. १३३–१३५।

तमंचे का चिन्ह लगाया जाता था। ऐसे रुपये का वजन ११।। माशा होता था और उसकी कीमत कलदार के बराबर होती थी। इसका प्रचलन धौलपुर, ग्वालियर और पटियाले में था। इसके एक ओर 'सिक्का जद वर हफ्त दिखार साया फज्ल अल्लाह हामी दीन मुहम्मद शाह आलम बादशाह सन् १२१८' और दूसरी ओर 'जर्ब गोहाड़ सन् जलूस ४६ मैमनत मानूस' अंकित रहता था। कीर्तिसिंह ने १८०६ ई. में अकबर द्वितीय के सिक्के इस शैली के चलाये। १८१० ई. के सिक्के के एक तरफ 'जुलूस मैमनत जर्ब धौलपुर तमंचा राज गोहाड़' और दूसरी ओर 'सिक्का मुबारक साहिब किरन सानी मुहम्मद अकबर शाह बादशाह गाजी, १२२५' मय छत्र के एवं तमंचे के अंकित रहता था। इसका वजन १७२ ग्रेन था। १८५७ ई. में महाराजा राणा भगवतसिंह ने पुराने साँचे के सिक्के चलाये जिसपर छत्र का चिन्ह था और उस पर सन् १२५२ लगा था।

सिरोही की मुद्राएँ[३२]

सिरोही का स्वतन्त्र रूप का कोई सिक्का नहीं रहा और न यहां कोई टकसाल थी। यहां मेवाड़ का चांदी का 'भीलाड़ी' रुपया और मारवाड़ का ताँबे का 'ढब्बूशाही' चलता था। भीलाड़ी १२० रु. १०० रु० कलदार के बराबर होते थे। यहां की मुद्रा की स्थिति ठीक करने के लिए १९०३-०४ ई. में अंग्रेजी सरकार ने सिरोही राज्य को १५ लाख कलदार रुपयों तक 'भीलाड़ी' से परिवर्तन करने की स्वीकृति दी थी। इस विनिमय से क्रमशः यहां कलदार का प्रचलन बढ़ता गया। १९४७ में यहां का सिक्का कलदार ही था।

शाहपुरा के सिक्के[३३]

शाहपुरा का स्थानीय सिक्का यहां के शासकों द्वारा १७६० में चलाना आरंभ किया जिसे 'ग्यारसंदिया' कहते थे। इसके अतिरिक्त यहां 'चित्तौड़ी' व 'भीलाड़ी' सिक्कों व पैसों का भी प्रचलन था। क्रमशः यहां ऐसे सिक्कों का प्रचलन घटता गया और अंग्रेजी भारत का सिक्का चलने लगा।

———

३२. गहलोत : राजपूताने का इतिहास, भा. २, पृ. १३ (सिरोही)।
३३. गहलोत : राजपूताने का इतिहास, भा १ पृ. ५५२।

३

शिलालेख

प्राचीन खण्डहर एवं मुद्राओ की भाँति राजस्थान के इतिहास की जानकारी के लिए सबसे अधिक विश्वस्त इतिहास बतलाने वाला एक साधन शिलालेख है। जहा कई अन्य साधन मूक अथवा अस्पष्ट हैं वहा इतिहास के निर्माण मे हमे इनसे बडी सहायता मिलती है। इनकी सख्या सहस्रो मे है जिनके बारे मे हमे जानकारी है। परन्तु अब भी सहस्रो की सख्या मे ऐसे अभिलेख भी है जो भूगर्भ या खण्डहरो मे दबे पडे है। ये शिलालेख शिलाओ, प्रस्तर-पट्टो, भवनो या गुहाओ की दीवारो, मन्दिरो के भागो, स्तूपो, स्तभो, मठो, तालाबो, बावलियो तथा खेतो के बीच गढी हुई शिलाओ पर बहुधा मिलते हैं। आने जाने वालो के मार्ग मे होने से या खुली हुई अवस्था मे रहने से इन अभिलेखो के कई अंश नष्ट हो गये है। इनकी भाषा सस्कृत, हिन्दी, राजस्थानी और फारसी तथा उर्दू मे समय के अनुकूल प्रयुक्त हुई है। इनमे गद्य और पद्य दोनो का समावेश दिखाई देता है। दक्षिण-पश्चिमी तथा पूर्व-दक्षिणी राजस्थान मे ये अधिक सख्या मे मिलते हैं, जिसका कारण यह दिखाई देता है कि मुसलमानो के प्रभाव बढ जाने से उत्तर मे इनका प्रयोग कम हो चला था। इन अभिलेखो के विषय विभिन्न और विविध हैं जिनमे राजवर्णन, वशवर्णन प्रमुख हैं। इनमे अधिकाश राजाओ की उपलब्धियो का प्रशसायुक्त वर्णन रहता है और इसीलिए इनको प्रशस्ति भी कहते हैं। उनमे से कई एक मे राजाओ के आश्रित या उनसे सम्बन्धित पुरुष तथा राजवश के क्रम का विस्तृत वर्णन मिलता है। राजाओ सामन्तो, राणियो, मन्त्रियो तथा अनेक धर्म-परायण व्यक्तियो द्वारा बनवाए गये मन्दिरो, मठो, बावलियो आदि मे लगे हुए लेखो मे निर्माण कर्त्ता के वश-क्रम तथा राजवश का वर्णन विस्तार से होता है। कुछ ऐसे भी शिलालेख होते हैं जिनमे राजाज्ञा, विजय, यज्ञ, खेतो की सीमा, वीर पुरुष का चरित्र सती का होना, झगडो के समाधन, पचायत के फैसले आदि घटनाओ के उल्लेख मिलते हैं। कई लेख तो एक प्रकार से स्वत काव्य हैं जिनके द्वारा हमे न केवल ऐतिहासिक घटनाओ का ही बोध होता है वरन् कई अज्ञात किन्तु प्रतिभा सम्पन्न कवियो की काव्यशैली का बोध होता है। उनके द्वारा हम उस युग के बौद्धिक स्तर का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। ऐसे शिलालेख व्यक्ति विशेष की साहित्यिक रुचि के स्मृति चिन्ह हो जाते है। "अजमेर के चौहान राजा विग्रहराज का रचा हुआ—'हरकेलि नाटक', उक्त राजा के राजकवि सोमेश्वर रचित 'ललित विग्रहराज' नाटक और विग्रहराज या किसी दूसरे राजा के समय के

बने हुए चौहानों के ऐतिहासिक काव्य की शिलाओं में से पहली शिला—ये सब अजमेर (ढाई दिन का झोंपड़ा) से प्राप्त हुई है। सेठ लोलाक ने 'उन्नत शिखर पुराण' नामक जैन पुस्तक बीजोल्यां के पास एक चट्टान पर वि० सं. १२२६ में खुदवाई थी, जो अब तक सुरक्षित है। महाराणा कुंभा ने कीर्तिस्तम्भों के विषय की एक पुस्तक शिलाओं पर खुदवाई थी, जिसकी पहली शिला के प्रारंभ का अंश चित्तौड़ में मिला है। महाराणा राजसिंह ने तैलंग भट्ट मधुसूदन के पुत्र रणछोड़ से 'राजप्रशस्ति' नामक २४ सर्ग का महाकाव्य, जिसमें महाराणा राजसिंह तक का मेवाड़ का इतिहास है, तैयार करवाकर अपने बनवाये हुए राजसमुद्र नामक तालाब की पाल पर २५ बड़ी शिलाओं पर खुदवाकर लगवाया था जो अबतक वहां विद्यमान है।[1] राजस्थान की रियासतों के राजपूत राजाओं के या उनके समय के अनेक शिलालेख मिले हैं जो तिथि-क्रम निर्धारित करने तथा सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विषयों पर प्रकाश डालने के लिए बड़े उपयोगी हैं। इसी प्रकार साहित्यिक तथा अन्य सामग्रियों को शुद्ध करने अथवा पूर्ण करने में इनकी महत्वपूर्ण उपयोगिता सिद्ध होती है। कई वीरों तथा सतियों के स्मारक घटनाक्रम को समझने और युद्धों की तिथियों को निर्धारित करने में सहायक प्रमाणित हुए हैं। इसी प्रकार इन अभिलेखों से राजस्थान तथा गुजरात और मुगल सम्राटों के राजनैतिक और सांस्कृतिक सम्बन्ध पर भी प्रचुर प्रकाश पड़ता है। कुछ छोटे अभिलेख भी ऐतिहासिक शृंखला को स्थापित करने में बहुत सहायक हुए हैं। वैसे तो इनमें संस्कृत या बोलचाल की भाषा का विशेष प्रयोग है और लिपि भी नागरी है, तथापि इनका पढ़ा जाना गंभीर अध्ययन और अध्यवसाय का ही परिणाम हो सकता है। इन सभी अभिलेखों का वर्णन करना कठिन और अनावश्यक है, परन्तु यहां हम कतिपय लेखों का उल्लेख करना उपयोगी समझते हैं, जिससे पाठक उनकी उपयोगिता का स्वयं मूल्यांकन कर सकें और समझ सकें कि उनका ऐतिहासिक महत्व में कितना योग है।

(अ) शिलालेख (संस्कृत एवं भाषा)

नगरी का लेख[1] (२००–१५० ई० पू० ?)

यह एक खंड लेख है जो मूल लेख का दाहिना भाग है। यह नगरी से उपलब्ध हुआ था, जहां से उठवाकर डा० ओझा ने इसे उदयपुर संग्रहालय में सुरक्षित किया। इसकी लिपि घोसुंडी के लेख की लिपि से मिलती-जुलती है, जिससे इसे लगभग उसी कालक्रम के आसपास का माना जा सकता है। यदि घोसुंडी के लेख और इस लेख में कोई भिन्नता है तो इस लेख में प्रयुक्त किये गये पत्थर का रंग गहरा मटमैला है। इसमें दो पंक्तियां हैं जिनके भी बहुत कम अक्षर बच रहे हैं। इस स्थिति में

---

१. : ओझा राजपूताने का इतिहास, जि० १, पृ० १४

१. वरदा, १ वर्ष ४ अङ्क ४, पृ० २

पूरे विषय पर, जो इसमे अंकित था, प्रकाश डालना कठिन है। फिर भी यत्र-तत्र कुछ शब्दो से उस समय की स्थिति पर कुछ प्रकाश डालने का प्रयत्न किया जा सकता है। इसमे प्रयुक्त कुछ वाक्य और शब्द बडे महत्त्व के हैं। 'स (र्वे) भूताना दयार्थं' और 'ता' (कारिता) से अनुमान लगाया जा सकता है कि यहा सब जीवो की दया के निमित्त या तो कोई नियम बनाया गया हो अथवा यहा कोई स्थान बनाया गया हो जहा जीवो की रक्षा की सुविधा हो सके। संभवत यह लेख बौद्धो या जैनो से सम्बन्ध रखता हो।

घोसुन्डी-शिलालेख [२] (द्वितीय शताब्दी ईसा पूर्व)

यह लेख कई शिलाखण्डो मे टूटा हुआ है जिनके कुछ टुकडे उपलब्ध हो सके है। इनमे से एक बडा खण्ड उदयपुर सग्रहालय मे सुरक्षित है। प्रारम्भ मे ये लेख घोसुन्डी गाँव से, नगरी के निकट, जो चित्तौड से लगभग सात मील दूर है, प्राप्त हुआ था। लेख मे प्रयुक्त की गई भाषा सस्कृत और लिपि ब्राह्मी है। प्रत्येक अक्षर जो इसमे उत्कीर्ण है लगभग १$\frac{3}{8}$" आकार मे है।

प्रस्तुत लेख की तीन पक्तियो मे संकर्षण और वासुदेव के पूजाग्रह के चारो और पत्थर की चारदिवारी बनाने और गजवश के सर्वतात द्वारा अश्वमेध यज्ञ करने का उल्लेख है। ये सर्वतात पाराशरी का पुत्र था यह भी इसमे अंकित है। इस लेख का महत्त्व द्वितीय शताब्दी ईसा पूर्व मे भागवत् धर्म का प्रचार, सकर्षण तथा वासुदेव की मान्यता और अश्वमेध यज्ञ का प्रचलन आदि से है। इसमे उस समय प्रयुक्त की जाने वाली राजस्थान मे संस्कृत भाषा और ब्राह्मी लिपि भी ध्यान देने योग्य है।

श्री जोगेन्द्रनाथ घोष के विचार से इस लेख मे वर्णित नाम कण्ववशीय ब्राह्मण मालूम होता है, जिसमें गाजायन गोत्र का सूचक और सर्वतात व्यक्ति का, परन्तु जोहन्सन के विचार से यह लेख किसी ग्रीक, शुंग या आन्ध्रवशीय राजा का होना चाहिये। आन्ध्रो मे 'गाजायन' 'सर्वतात' आदि नाम उस वश के शासको मे पाये जाते हैं। जिससे यहां के शासक का आन्ध्रवशीय होना अनुमानित होता है। एक विचार से यह व्यक्ति यूनानी भी हो सकते हैं, क्योंकि पाणिनी के अनुसार यूनानी आक्रमण नगरी तक हुआ था। यूनानी वासुदेव के उपासक भी हुए हैं जिससे इस विचार की पुष्टि होती है। परन्तु अश्वमेध से निकट सम्बन्ध यूनानियो का न होकर आन्ध्रो का अवश्य रहा है। फिर भी किस शासक के सम्बन्ध का यह लेख है और क्या वे कण्ववंशीय या शुंग या आन्ध्रवशी थे, इस विषय पर अभी कोई निश्चित मत नही दिया जा सकता जब तक कि अन्य साधन उपलब्ध नही होते हैं। इन शिलाखण्डो की पक्तियां इस प्रकार है :

पक्ति १ न गाजामनेन पाराशरीपुत्रेण स ...ण सर्वतातेन अश्वमेध

२. ए० रि० रा० म्यू० अजमेर, १९२६-२७, पृ० २, ए० इ० जि० १४, पृ० २५

पंक्ति २. [जि] ना (याजिना) भगवभ्यां (भगवद्भ्यां) संकर्षण वासुदेवाभ्यां सर्वेश्वरा [भ्यां]

पंक्ति ३. भ्यां पूजाशिलाप्राकारो नारायणवाटिका (कारित:)

नांदसा यूप-स्तम्भ लेख[3] (२२५ ई०)

नांदसा भीलवाड़ा से ३६ मील की दूरी पर एक गांव है जहां एक तड़ाग में एक गोल स्तम्भ है जो लगभग १२ फीट ऊँचा और ५½ फीट गोलाई में है। इस पर एक ६ पंक्तियों का लेख ऊपर से नीचे तक और दूसरा ११ पंक्तियों का उसके चारों ओर उत्कीर्ण है। यह वर्ष के अधिकांश भाग में पानी में डूबा रहता है, केवल गर्मियों में तड़ाग के पानी सूखने पर इसे पढ़ा जाता है। फिर भी दोनों लेखों के अंतिम भाग पढ़ने में नहीं आते। अक्षरों का औसतन आकार एक इंच के लगभग है।

इन दोनों लेखों में प्रतिपादित विषय मूलत: एक ही है, गोया उसको अलग-अलग शब्दों द्वारा प्रतिपादित किया गया है। इसका आशय यह है कि शक्ति गुणगुरु नामक व्यक्ति द्वारा यहां षष्ठिरात्र यज्ञ सम्पादन किया गया था और इस घटना को पश्चिमी क्षत्रपों के राज्य-काल में उत्कीर्ण किया गया था। उस समय के क्षत्रपों के राज्य विस्तार तथा उत्तरी भारत में प्रचलित पौराणिक यज्ञों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने के लिए यह लेख बड़े महत्त्व का है। इस लेख का समय चैत्र की पूर्णिमा, कृत संवत् २८२ है। स्तम्भ की स्थापना सोम द्वारा की गई थी। इसमें प्रयुक्त शब्द–सप्त सोम संस्था का अभिप्राय सात-स्तम्भों की यज्ञ के निमित्त स्थापना है। समय सम्बन्धी पंक्ति का कुछ भाग इस प्रकार है—

"कृतयोर्ईयोर्पर्षशतयोर्द्व यशीतयो: चैत्यपूर्णमास्याम्'

वर्नाला यूप-स्तम्भ लेख[4] (२२७ई०)

जयपुर राज्य के अन्तर्गत वर्नाला नामक स्थान पर एक यूप-स्तंभ प्राप्त हुआ था जिसे आमेर संग्रहालय में सुरक्षित कर दिया गया है। चैत्र शुक्ला पूर्णिमा २८४ कृत सवत् है। इसके अनुसार कृत संवत् २८४ में सोहर्न-गोत्रोत्पन्न वर्धन नामक व्यक्ति ने सात यूप-स्तंभों की प्रतिष्ठा का पुण्यार्जन किया। लेख का अंश इस प्रकार है—

'सिद्धं कृतेहि चैत्र शुक्लपक्षस्य पंचदशी सोहर्त्त सगोत्तस्य (राज्ञो) पुत्रस्य (राज्ञो) वर्धनस्य यूपसत्त को प्रण्ण व (द्धं कं भवतु)'

वड़वा स्तंभ-लेख[5] (२३८–३९ ई०)

वड़वा एक छोटा गाँव है जो कोटा-बीना सेक्शन से पाँच मील की दूरी पर है। यहाँ से तीन यूप-स्तम्भ लेख उपलब्ध हुए हैं जिनकी लिपि तीसरी शताब्दी ईसा की है। इनमें त्रिरात्र यज्ञों का उल्लेख है जिनको बलवर्धन, सोमदेव तथा बलसिंह

---

३. ए. इं. भा. ८ पृ. ३६

४. ए० ई० २६, पृ० १२०

५. रा० इ० भा० २३, पृ०४६, भा०२६, पृ०११८।

नामी तीन भाइयो ने सम्पादन किया था। इनका समय २९५ कृत सवत् है। एक दूसरे स्तम्भ लेख मे 'अप्तोयाम' यज्ञ का उल्लेख है जिसे मौखरी धनत्रात ने सम्पादित किया था। इस यज्ञ का समय अतिरात्र था, अर्थात् पूरे एक दिन के उपरान्त दूसरे दिन तक इसे चलाया गया था। ये लेख वैष्णव धर्म तथा यज्ञ महिमा के द्योतक हैं। इसका पाठ इस प्रकार है—

" मौखरे हस्तीपुत्रस्य धीमतः अप्तोम्यम्णिः क्रतो यूपः सहस्रोग व दक्षिणा"

विचपुरिया यूप-स्तभ लेख[6] (२२४ ई०)

यह लेख उणियारा ठिकाने (जयपुर राज्य) के 'विचपुरिया' मदिर के आँगन मे उपलब्ध हुआ था। यह १०फुट ६ इच ऊंचा है। यह नगर प्राचीन मालव प्रान्त के क्षेत्र मे गिना जाता था। इससे यज्ञानुष्ठान का तो बोध होता है, परन्तु यज्ञ विशेष के नाम की हमे जानकारी नही होती। इसका लेख इस प्रकार है—

"स० ३२१ फगुन शुक्लपक्षस्य पञ्चदश अहिशर्म अ (ग्नि) होतुस्य धरकपुत्रस्य यूप (श्चपुण्य) मेधतु"

इसमे धरक का परिचय अग्नि होतृ के रूप मे दिया गया है।

वर्नाला लेख[7] (२७८ई०)

यह लेख कृत सवत् ३३५ ज्येष्ठ शुक्ला पूर्णिमा का है जिसमे गर्गत्रिरात्र यज्ञ का उल्लेख है। इसका सम्पादन एक भट्ट द्वारा किया गया था और उस अवसर पर सम्वत्स ९० गौग्रो का दान किया गया था। लेख दो पक्तियो मे ऊपर से नीचे की ओर है। इसमे धर्म और विष्णु की दुहाई दी गई है। ये यूप स्तम्भ वरनाला (जयपुर) से हवामहल जयपुर लेजा कर सुरक्षित किया गया था। अब यह वहाँ से हटाकर आमेर सग्रहालय मे रख दिया गया है।

इसके अन्त मे विष्णु भगवान की वन्दना की गई है। इस लेख से यह भी प्रतीत होता है कि यज्ञ कर्ता विष्णु को प्रसन्न करने के लिए इस कार्य को करता है और वह बडवा यूप स्तम्भ के यज्ञ कर्ता की भाँति अधिक समृद्ध भी नही है। उसने १००० गौग्रो के स्थान पर ९० गोदान द्वारा ही अपने-आपको संतुष्ट किया। इसका अश इस प्रकार है —

"कृतेहि जय (ज्येष्ठ) शुधस्य पंचदशी त्रिरात्रं ५ यता इष्टा स०वस्त (सवत्सा) एव बागा (गवो) दक्षिण्य: (दक्षिण्याः) (णा) दता (दत्ता) ९० । वष्ट: (विष्णु) प्रियता धर्मो वर्द्ध (ताम्)"

विजयगढ यूप-स्तम्भ लेख[8] (३७१–७२ई०)

यह लेख विजयगढ के दक्षिणी दीवार के निकट है जिसमें राजा विष्णुवर्धन,

---

६. मरुभारती, फरवरी १९५३, भा० १, संख्या २, पृ०३८–९।

७. भारतीय पुरातत्त्व, पृ०१३; कोर्प्स० इन्स० इण्डि० भा० ३, पृ०२५२।

८. ए आर०,ए एस आई, १९१०-११, पृ० ४०, प्लेट १३ (भारतीय पुरातत्त्व १३)

अभिलेख

सांभोली शिलालेख[१४] (६४६ ई०)

इस प्रकाशित शिलालेख को सांभोली गाँव से, जो मेवाड़ के दक्षिण में भोमट तहसील में है, डा० ओझा ने हटाकर अजमेर के पुरातत्त्व-संग्रहालय में सुरक्षित किया था। यह लेख मेवाड़ के गुहिल राजा शीलादित्य के समय का वि० सं० ७०३ (ई० सं० ६४६) का है जो आकार में केवल ६½"×१०½" है। इसमें केवल १२ पंक्तियाँ हैं जिसमें दाहिनी ओर के नीचे वाले कोने के टूट जाने से १०वीं तथा ११वीं पंक्ति के कुछ अक्षर नष्ट हो गये हैं। पंक्ति ८ और ६ के अन्त के दो अक्षर घिस जाने से पढ़ने में नहीं आते। शेष शिलालेख का भाग अच्छी दशा में है। इसमें प्रयुक्त की गई भाषा संस्कृत तथा लिपि कुटिल है। भाषा में यत्र-तत्र अशुद्धियाँ हैं और कहीं-कहीं पाठ अस्पष्ट है।

मेवाड़ के गुहिल-वंश के समय को निश्चित करने तथा उस समय की आर्थिक तथा साहित्यिक स्थिति के जानने के लिए यह लेख बड़े काम का है। इसमें लिखा है कि 'शत्रुओं को जीतने वाला; देव, ब्राह्मण और गुरुजनों को आनन्द देने वाला, और अपने कुलरूपी आकाश का चन्द्रमा राजा शीलादित्य पृथ्वी पर विजयी हो रहा है। उसके समय वटनगर से आये हुए महाजनों के समुदाय ने, जिसका मुखिया जेंतक था, आरण्यक गिरि में लोगों का जीवन रूपी आगर उत्पन्न किया, और महाज (महाजनों के समुदाय) की आज्ञा से जेंतक महत्तर ने अरण्यवासिनी देवी का मन्दिर बनवाया, जो अनेक देशों से आये हुए अठारह वैतालिकों (स्तुति गायकों) से विख्यात, और नित्य आने वाले धन-धान्य सम्पन्न मनुष्यों की भीड़ से भरा हुआ था। उसकी प्रतिष्ठा कर जेंतक महत्तर ने यमदूतों को आते हुए देख 'देववुक' नामक सिद्धस्थान में अग्नि में प्रवेश किया।"[१५] इस शिलालेख में प्रयुक्त शब्द 'विजयी' 'वटनगर', 'आगर', 'आरण्यकगिरि' तथा 'अरण्यवासिनी', 'महत्तर' आदि बड़े महत्त्व के हैं। यदि इनका सांभोली गाँव के संदर्भ में अध्ययन किया जाय तो कई ऐतिहासिक बिन्दुओं पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। इससे स्थानीय भीलों पर शीलादित्य का प्रभाव स्थापित होना, इसके द्वारा जन-समुदाय को सामान्य जीवन व्यतीत करने की सुविधा प्रदान करना, देश-विदेश से व्यापारियों का इस क्षेत्र में बसना, मन्दिरों का निर्माण होना, जीवन के साधनों की वृद्धि होना आदि संकेत मिलते हैं। इससे यह भी संकेत मिलता है कि जावर के निकट के अरण्यगिरि में ताँबे और जस्ते की खानों का काम भी इसी युग से आरम्भ हुआ हो। आज का जावर माता का मन्दिर जो उस समय अरण्यवासिनी के

---

१४. रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, रिपोर्ट, १६०८-६ पृ० ४८; इंडियन एंटिक्विटी, भा० २६ पृ० १८६; नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भा०१, पृ०३११-२४; एपिग्राफिया इंडिका, भा०२०, नं०६, पृ०६७-६६।

१५. ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भा०१. पृ०६८-६६।

मन्दिर के नाम से प्रसिद्ध था गायको और दर्शको की भीड से भरा रहता था, इस बात का प्रमाण है कि शीलादित्य के समय मे यह देश का भाग खनन उद्योग के कारण समृद्ध था। 'महाजन' शब्द के प्रयोग से महाजन समुदाय या सघ का बोध होता है वह सातवी शताब्दी के जनोपयोगी सस्था की व्यवस्था का बोधक है। इस लेख मे जेंतक का अग्नि मे प्रवेश कर मरना या तो उस युग की विशेष परिस्थिति पर अथवा किसी धार्मिक परम्परा पर प्रकाश डालता है। इसके मूल पाठ से प्रथम तथा दो अतिम पक्तियाँ उद्धृत की जाती हैं .

१. श्रो नम । पुनातु दिनक्रम (म्म) रोचिविच्छुरितपाद पद्मपत्रच्छविदुरित-माशुभ्र (च) डिकापादद्वय

११-१२ (वैवस्वत) समवेक्ष (क्ष्य) देवुबुके सिधा (द्वा) यत (ने) ... लन प्रविष्ट ( ) "७००३" कति (क) (कार्तिक) ... ...

अपराजित का शिलालेख[१६] (६६१ई०)

इसका समय वि० स० ७१८ (२ नवम्बर' ई० स० ६६१) मार्गशीर्ष सुदि ५ है। यह लेख नागदे गाँव के निकटवर्ती कुडेश्वर के मन्दिर मे पडा हुआ डा० ओझा को मिला, जिसे वहाँ से हटाकर उन्होने उदयपुर विक्टोरिया हॉल के सग्रहालय मे सुरक्षित किया। इस लेख मे श्लोकबद्ध १२ पक्तियाँ हैं जो १'६½"×१०½" आकार के पत्थर पर उत्कीर्ण हैं। इसमे प्रयुक्त की गई भाषा सस्कृत तथा लिपि कुटिल है।

इस लेख का साराश इस प्रकार है—

"गुहिल वश के तेजस्वी राजा अपराजित ने सब दुष्टों को नष्ट किया और अनेक राजा उसके आगे सिर झुकाते थे। उसने शिव (शिवसिंह) के पुत्र महाराज वराहसिंह को—जिसकी शक्ति को कोई तोड न सका, जिसने [illegible] शत्रुओं को पराजित किया और जिसका उज्ज्वल यश दसो दिशा मे फैला हुआ था—अपना सेनापति बनाया। अरुंधती के समान विनयवाली उस (वराहसिंह) की [illegible] ने [illegible], यौवन और वित्त को क्षणिक मानकर ससार रूपी विषम समुद्र को तैरने के लिए नावरूपी कैटभरिपु (विष्णु) का मन्दिर बनवाया। दामोदर के पौत्र और ब्रह्मचारी के पुत्र दामोदर ने इस प्रशस्ति की रचना की, और अजित के पौत्र तथा वत्स के पुत्र [illegible] ने इसे खोदा।"[१७] इस लेख से गुहिल [illegible] का बोध होता है। इससे यह स्पष्ट है कि अपराजित ने वराहसिंह जैसे [illegible] व्यक्ति को पराजित कर अपने अधीन रखा और फिर उसे अपना सेनापति नियुक्त किया। [illegible] शिलालेख मे अकित है, किन्तु मन्दिर के निर्माण का [illegible]। [illegible]

१६ [illegible]

जा०ए०सो०ब०, १८३७ [illegible]

म्यू०, अजमेर [illegible]

१७ [illegible]

कविता से तथा कवि की वंश परम्परा से प्रतीत होता है कि मेवाड़ में अच्छे विद्वानों को प्रारम्भ से ही राज्याश्रय प्राप्त था। इसकी लिपि इतनी सुन्दर है कि हमें यह मानना होगा कि सातवीं शताब्दी में मेवाड़ में उत्कीर्ण कला बड़ी विकसित थी और यहाँ अच्छे शिल्पी उपलब्ध थे।

इसका एक पद्य इस प्रकार है :

"राजा श्रीगुहिलान्वयामलपयोराशौ स्फुरद्दीधिति
ध्वस्तध्वान्त समूहदुष्टसकलव्यालावलेपान्तकृत्।
श्रीमानित्यपराजित: क्षितिभृतामभ्यर्चितो मूर्धभि-
र्वृत्तस्वच्छतयैव कौस्तुभमणिर्जातो जगत्भूषणं॥"

नगर का शिलालेख[१७] (६८४ ई०)

यह लेख भी गुहिलवंशीय एक शाखा का है जिसमें चाटसू शिलालेख में दिये गये प्रारम्भिक शासकों के नाम दिये गये हैं जो ईशानभट्ट, उपेन्द्रभट्ट, गुहिल तथा धनिक तक के हैं।। इसकी भाषा संस्कृत है और इसका समय वि० सं० ७४१ है। इसमें इनकी वीरता, शत्रुनाश की क्षमता, दानशीलता, गुणसम्पन्नता, कला प्रेम आदि की प्रशंसा की गई है। ऐसा प्रतीत होता है कि ईशानभट्ट से धनिक के काल तक ये शासक शक्तिशाली और प्रभावशाली रहे। इनके पीछे के वंशज, जैसाकि चाटसू लेख से स्पष्ट है, प्रतिहारों के सामन्तरूप रहे। ईशानभट्ट से धनिक तक के शासकों के लिए 'क्षितीन्द्र' 'अग्रेसर प्रभु', 'राजमण्डलगुरु' आदि शब्दों के प्रयोग से इनकी स्वतन्त्र स्थिति का बोध होता है। इसकी एक पंक्ति इस प्रकार है :

"गुणरत्ननिधे स्वच्छात्क्षीरोदादिव चन्द्रमा:
विहतान्तसन्तापात्तत: श्री धनिको भवत्"

मंडोर का शिलालेख[१८] (६८५ ई०)

जोधपुर नगर के निकट मंडोर नामक स्थान के पहाड़ी ढाल में एक बावड़ी है जिसमें आयताकार शिला भाग पर वि० सं० ७४२ का एक शिलालेख उत्कीर्ण है। इस लेख से उक्त बावड़ी का निर्माण काल वि० सं० ७४२ तथा उसके बनवाने वाले चणक के पुत्र माधू ब्राह्मण की सूचना प्राप्त होती है। इस लेख से सातवीं शताब्दी ई० में शिव तथा विष्णु की पूजा पर प्रकाश पड़ता है। प्रस्तुत लेख की ९ पंक्तियां हैं जिसकी प्रारंभ और अन्त की पंक्तियां इस प्रकार हैं—

'ॐ नम: शिवाय....सर्वाम्भसामधिपति........श्रीमत्सुधाधवल हेमविभान वर्ती देव: सदा जयति पाशधर:..रेयं वापी निपानमिव स यशसां चखा न संवत्सर शतेपु सप्तसु द्वाचत्वारिशाधिकेपु यातेषु"

---

१७. भारतकौमुदी, भा० १, पृ० २७३–७६

१८ एडमिनिस्ट्रेटिव रिपोर्ट आर्क्यलॉजिकल डिपार्टमेन्ट, जोधपुर, १९३४, पृ ५।

शकरघट्टा का लेख[१९] (७१३ ई०)

ये लेख शकरघट्टा से प्राप्त हुआ था जो वि स ७७० का है। इसमे १७ पक्तिया हैं जो ९"×१२" के शिला के भाग म उत्कीर्ण है। इसमे प्रयुक्त की गई भाषा सस्कृत है। दाहिनी ओर के भाग के टूट जाने से इसके समझने मे अस्पष्टता हो गई है। इसके प्रारंभ मे शिव की वन्दना की गई है। प्रस्तुत लेख का भाग, जहा से राजा-मानभग का वर्णन मिलता है, बडा उपयोगी है। संभवत यह मानभग वही मानमोरी है जिसके शिलालेख का जिक्र टॉड ने किया है। इस शासक के सम्बन्ध मे इस लेख से महत्त्वपूर्ण सूचना यह मिलती है कि उससे चित्तौड मे गगन चुबी प्रासाद, वापी आदि का निर्माण करवाया। चित्तौड के प्राचीन मन्दिरो मे सूर्य का मन्दिर, जो कला की दृष्टि से बडा सुन्दर है, संभवत राजा मानभग ने बनवाया हो। उस समय के प्रासाद, वापी आदि तो अब नही बचे है। परन्तु उस समय का एक सूर्य मन्दिर अवश्य है जो ८वी शताब्दी का माना जाता है। वैसे तो मानभग और मानमोरी अलग-अलग व्यक्ति भी हो सकते हैं परन्तु एक ही स्थान मे एक ही समय मे दो शासको का होना युक्तिसंगत नही मालूम होता। ऐसी स्थिति मे ये दोनो नाम एक ही व्यक्ति के ही दीख पडते हैं।

मानमोरी का लेख[२०]

यह लेख चित्तौड के पास मानसरोवर झील के तट पर एक स्तभ पर खुदा हुआ, कर्नल टॉड को मिला था। सभवत इंग्लैण्ड ले जाते हुए, भारी होने के कारण, उसे इसे समुद्र में फेंक देना पडा। केवल इसका अनुवाद उसके पास बच रहा जिसको उसने अपनी पुस्तक 'एनाल्स एण्ड एन्टिक्वीटीज' मे प्रकाशित किया। पार्थिव स्थिति मे ये लेख उपलब्ध नही हैं, अतएव हमे उसके द्वारा दिये गये अनुवाद पर आश्रित रहना पडता है। प्रस्तुत लेख मे पहिले समुद्र और तालाब का वर्णन करते हुए अमृत-मथन तथा उसके सम्बन्ध मे कर का उल्लेख किया है। इसके अनन्तर इसमे चार राजाओ का वर्णन मिलता है यथा महेश्वर, भीम, भोज और मान। महेश्वर को शत्रुहन्ता तथा सम्पन्न शासक बतलाया गया है और उसके सन्दर्भ मे त्वस्य (तक्षक) वश की प्रशंसा की है। भीम को अवन्तिपुर का राजा बतलाया है उसने अपने अनेक शत्रुओ को कारागृह मे डाल दिया और उनकी स्त्रियो का फिर भी वह प्रिय बना रहा। उसके बारे मे लिखा गया है कि मानो वह अग्नि से उत्पन्न हुआ हो और उसमे समुद्र के नाविको को शिक्षा देने की क्षमता हो। उसका पुत्र भोज भी बडा पराक्रमी था जिसने युद्ध क्षेत्र मे हस्ती के मस्तक को विदीर्ण किया। उसका पुत्र मान था जो सद्गुण-सम्पन्न, ईमानदार, सच्चरित्र और समृद्ध था। उसने ससार को क्षणभगुर

---

१९ राजस्थान भारती, वर्ष ९ अक २, पृ ३०-३१

२० टॉड एनाल्स एण्ड एन्टिक्वीटीज, भा १, पृ ६२५-६२६, वीर विनोद, भा १, पृ ३७८-३८८।

समझकर अपनी सम्पत्ति के सदुपयोग के लिए मानसरोवर झील का निर्माण करवाया। लेख में मान के योद्धाओं व सर्दारों को भी योग्य और चतुर बतलाया है जो सर्वदा मान की कृपा के आकांक्षी रहते थे। इस प्रशस्ति का लेखक नागभट्ट का पुत्र पुष्य और पंक्तियों का उत्कीर्णक करुग का पौत्र शिवादित्य था।

ये लेख ऐतिहासिक दृष्टि से बड़ा उपयोगी है। इस वंश का इसमें तक्षक वंश का तथा अग्नि वंश से उत्पन्न होने का उल्लेख महत्त्वपूर्ण है। संभवतः इस वंश का सम्बन्ध गोरी वंशीय अथवा औलिकरों से भी रहा हो जिनका प्रभाव मंदसोर, उज्जैन आदि भागों पर था। मान का वसन्तपुर आदि प्रान्तों के शत्रुओं का विजेता उल्लेखित करना भी यह प्रमाणित करता है कि इस वंश के शासकों के राज्य में मध्य भारतीय तथा दक्षिण पश्चिमी राजस्थान के भाग भी रहे हों और उनका अधिकार चित्तौड़ पर भी स्थापित रहा हो। चित्तौड़ के शंकरघट्टा से प्राप्त वि. स. ७७० के लेख में ५वीं पंक्ति में राजा 'मानभंग' का वर्णन आता है जो इस वंश के शासकों का चित्तौड़ पर अधिकार होना प्रमाणित करता है। चित्तौड़ से प्राप्त एक अन्य वि. स. ८११ ई. के लेख से इसी वंश में कुकड़ेश्वर नामक राजा के होने का उल्लेख मिलता है। इस लेख के संदर्भ में यह भी ठीक प्रतीत होता है कि बापा रावल ने मोरियों से, प्रचलित कथा के अनुसार, चित्तौड़ नहीं लिया था। कुकड़ेश्वर का वि. स. ८११ ई. का लेख इस संभावना की कल्पना को समाप्त कर देता है।

वंश-क्रम की गुत्थियों को समझने की उपादेयता के साथ-साथ इस लेख का उस समय की सामाजिक स्थिति समझने में भी बड़ा महत्त्व है। लेखक अमृत मंथन की कथा के सन्दर्भ में राजाओं के द्वारा लिये जाने वाले करों के प्रचलन का उल्लेख करता है। युद्ध में हाथियों का प्रयोग, शत्रुओं को कैद किया जाना तथा उनकी स्त्रियों की देख-भाल की उचित व्यवस्था करना, राजाओं में सामुद्रिक नाविक योग्यता होना आदि विशेषताओं का इसमें उल्लेख है। सामन्त और राजाओं के सम्बन्ध में भी पूर्ण सहयोग और आश्रित स्थिति की इसमें चर्चा की गई है। उस समय के समाज में धार्मिक भावना से सरोवरों का निर्माण करवाना लोकोपकारी कार्यो को प्राधान्यता देना अनुमानित होता है।

कल्याणपुर का लेख [२१]

यह लेख ७-८वीं शताब्दी का है जो प्रारंभ में कल्याणपुर में एक शिवालय में लगा हुआ था। यहां से उसे उदयपुर संग्रहालय में लाया गया जहां संख्या 'म' के अन्तर्गत ४२ नम्बर पर उसे सुरक्षित कर दिया गया है। इस शिलालेख का आकार ११½" × ८½" है जिसमें एक ही संस्कृत का श्लोक है, जिसे पांच पंक्तियों में लिखा गया है। इसको कुटिल-लिपि में लिखा गया था, जो उस समय की प्रचलित लिपि थी।

२१-ज. इ. हि जि. ३५, भा. १, १९५७, पृ ७३-७४

व्यक्त होती है। इस निर्माण कार्य का श्रेय सूत्रधार देद्गा पुत्र पञ्चहरि को दिया गया है। अब इस मन्दिर को पार्वती का मन्दिर कहते हैं। सम्भवतः विष्णु की प्रतिमा का किसी कारण नष्ट हो जाने से पीछे से इसमे पार्वती की मूर्ति स्थापित की गई हो और तभी से उसे पार्वती का मन्दिर माना जाने लगा हो।

इसकी कुछ पंक्तियां नीचे दी जाती हैं—

पक्ति—१-३—ॐ (१) सवत्सर शते ८७२ चैत्रस्य सितपक्षस्य पंचम्यां निवेसिता (निवेशिता) महाराजाधिराज

पक्ति—१६-२०-परमेश्वरस्य पादपूजयित्वा देव गृहं कराप्यं पुन तस्य उपलेपने देद्गा-सुत पचहरि. सूत्रधार

नासून का लेख[२५] (८३० ई०)

इस लेख मे ईशानभट्ट और धनिक का नाम अङ्कित है जिसमे धनिक को मण्डलाधिप कहा गया है। इससे प्रमाणित होता है कि धनिक की एक अपनी स्वतन्त्र स्थिति थी। इसका समय वि. स. ८८७ है।

मण्डोर का शिलालेख[२६] (८३७ ई०)

यह लेख मूलत मडोर के किसी विष्णु मन्दिर मे लगा था। मण्डोर के नष्ट होने पर वह पत्थर के रूप मे जोधपुर नगर के शहरपनाह मे कभी लगा दिया गया। वहाँ से उसे उपलब्ध किया गया। ये लेख मण्डोर के प्रतिहारो की वश परम्परा जानने के लिए बडा उपयोगी है। इसका समय वि स ८९४ चैत्र सुदी ५ है। इस लेख को तथा दूसरे दो घटियाले के लेखो को पढने से प्रतिहारो के सम्बन्ध मे कई नई जानकारी हमे मिलती है। यह प्रशस्ति बाउक ने खुदवाई थी।

घटियाला के शिलालेख[२७] (८६१ ई०)

ये लेख चार लेखो के समुदाय मे घटियाला (जोधपुर से २२ मील उत्तर-पश्चिम) स्थित एक स्तम्भ के दो पार्श्वों पर उत्कीर्ण है। ये स्तम्भ एक जैन मन्दिर के, जिसे माता की साल कहते हैं, निकट है। ये लेख सस्कृत भाषा मे है जिसमे कुछ पद्य और कुछ गद्य का प्रयोग किया गया है। लिपि उत्तर भारतीय शैली की है। प्रथम लेख मे २० पक्तियां हैं जिन्हें २' ३"½×१'×६" भाग मे उत्कीर्ण किया गया है। दूसरा लेख ११ पक्तियों में है जिसको १'.३"×१'×२½ के आकार मे अङ्कित है। तीसरे लेख मे दो पंक्तियां हैं तथा चौथे मे चार। लेखो का समय चैत्र शुक्ला द्वितीया बुधवार, वि स ९१८ है।

दो लेखो को क्रमशः विनायक तथा सिद्धम् से आरम्भ किया गया है। इन लेखो मे कुक्कुक प्रतिहार को न्यायप्रिय, जनहित सम्पादन कर्त्ता, दुष्टो को दण्ड देने

२५. ए. इ भाग २ IX, १९३० पृ० २१

२६. ज रा. ए सो १८९४, पृ. ४–९

२७ रा ए. सो., १८९५, पृ. ५१६, प्रो रि. आ. स. रि. इं, वेस्टर्न सर्कल १९०७, ए इं. भा. ९, पृ. २७७–२७९, गोपीनाथ शर्मा, बिबलियोग्राफी, पृ. ३

राज्य था। यह प्रशस्ति वि० सं० ८७० (८१३ ई.) की थी, जैसा डॉ. ओझा ने इसके अंकों को पढ़ा। इस प्रशस्ति में उल्लिखित है कि "गुहिल के वंश में भर्तृभट्ट हुआ। उसका पुत्र ईशानभट्ट और उसका उपेन्द्रभट्ट था। उस उपेन्द्रभट्ट से गुहिल, गुहिल से धनिक और उससे आउक हुआ। आउक का पुत्र कृष्णराज और उसका पुत्र अनेक युद्धों में विजय पाने वाला शंकरगण था, जिसने भट नामक राजा को जीतकर गौड़ के राजा की पृथ्वी को अपने स्वामी के अधीन बनाया। उसकी शिवभक्त राणी यज्जा से हर्षराज का जन्म हुआ, जिसने उत्तर के राजाओं को जीतकर उनके उत्तम घोडे भोज को भेंट किये। उसकी राणी लिल्ला से गुहिल दूसरा पैदा हुआ। उस स्वामीभक्त गुहिल ने गौड़ के राजा को जीता, पूर्व के राजाओं से कर लिया और प्रमार (परमार) वल्लभराज की पुत्री रज्झा से विवाह किया। उसका पुत्र भट्ट हुआ, जिसने दक्षिण के राजाओं को जीतकर वीरुक की पुत्री पुराशा (आशापुरा) से विवाह किया। भट्ट का पुत्र बालादित्य (बालार्क, बालभानु) था, जो चाहमान शिवराज की पुत्री रट्टवा का पति था। उससे तीन पुत्र वल्लभराज, विग्रहराज और देवराज हुए। रट्टवा के मरने पर उसके कल्याण के निमित्त बालादित्य ने मुरारि (विष्णु) का मंदिर बनवाया। छित्ता के पुत्र करणिक (कायस्थ ?) भानु ने उक्त प्रशस्ति की रचना की और सूत्रधार रजुक के बेटे भाइल ने उसे खोदा।"

इस लेख से ऐसा मालूम होता है कि चाटसू वंश के गुहिल बड़े पराक्रमी थे और वे प्रतिहार वंशीय शासकों के सामन्त थे। इस वंश में मेवाड़ के गुहिलों की भाँति शिवभक्ति और विष्णुभक्ति की प्राधान्यता दिखाई देती है।

बुचकला शिलालेख[२४] (८१५ ई०)

इस लेख की खोज ब्रह्मभट्ट नानूराम ने बिलाड़ा (जिला जोधपुर) के निकट बुचकला के पार्वती के मन्दिर वाले सभामण्डप से की थी। लेख में २० पंक्तियां हैं और वे २'.४½" × ११¼" आकार के शिला भाग में उत्तर-भारती लिपि में उत्कीर्ण हैं। यह लेख वत्सराज के पुत्र नागभट्ट प्रतिहार के समय का है। इसमें चैत्र मास के शुक्लपक्ष की पंचमी, वि. सं. ८७२ (८१५ ई०) का समय अङ्कित है। इसमें भाषा संस्कृत प्रयुक्त की गई है और गद्य में है।

इस प्रशस्ति में प्रतिहार वंशीय सामन्त और कुछ उस वंश के व्यक्तियों के नाम मिलते हैं जिससे हम उस समय के शासकों और सामन्तों के सम्बन्ध और स्तर का अनुमान लगा सकते हैं। उदाहरणार्थ नागभट्ट के सामन्त युवक की पत्नी जाबाली ने, जो जज्जक की पुत्री थी, यहाँ सम्भवतः देवालय में मूर्ति स्थापित की। इसमें परमेश्वर शब्द के प्रयुक्त होने से शिव की मूर्ति की स्थापना का अनुमान लगाया जा सकता है, परन्तु देवालय की अन्य मूर्तियों के देखने से इसमें विष्णु की मूर्ति की स्थापना की जाना प्रमाणित होता है। इस कार्य से प्रतिहारों की धर्मनिष्ठा

---

२४. ए. इ. जि. ९, पृ. १९८–२००

व्यक्त होती है। इस निर्माण कार्य का श्रेय सूत्रधार देद्दमा पुत्र पञ्चहरि का दिया गया है। अब इस मन्दिर को पार्वती का मन्दिर कहते हैं। सम्भवत. विष्णु की प्रतिमा या किसी कारण नष्ट हो जाने से पीछे से इसमे पार्वती की मूर्ति स्थापित की गई हो और तभी से उसे पार्वती का मन्दिर माना जाने लगा हो।

इसकी कुछ पंक्तिया नीचे दी जाती हैं—

पक्ति—१-३—ॐ (१) सवत्सर शते ८७२ चैत्रस्य सितपक्षस्य पचम्यां निवेशिना (निवेशिना) महाराजाधिराज

पक्ति—१६-२०–परमेश्वरस्य पादपूजयित्वा देव गृहे कराप्य पुन तस्य उपलेरने देद्दम-सुत पचहरि सूत्रधार

नासून का लेख[25] (८३० ई०)

इस लेख मे ईशानभट्ट और धनिक का नाम अङ्कित है [illegible] मण्डलाधिप कहा गया है। इससे प्रमाणित होता है कि धनिक की एक [illegible] स्थिति थी। इसका समय वि. स. ८८७ है।

मण्डोर का शिलालेख[26] (८३७ ई०)

यह लेख मूलत मडोर के किसी विष्णु मन्दिर में लगा था। [illegible] होने पर वह पत्थर के रूप मे जोधपुर नगर के शहरपनाह में [illegible] वहाँ से उसे उपलब्ध किया गया। ये लेख मण्डोर के प्रतिहारों [illegible] जानने के लिए बडा उपयोगी है। इसका समय वि स ८९४ [illegible] इस लेख को तथा दूसरे दो घटियाले के लेखो को पढने से प्रतिहारों [illegible] नई जानकारी हमे मिलती है। यह प्रशस्ति बाउक न [illegible]।

घटियाला के शिलालेख[27] (८६१ ई०)

ये लेख चार लेखो के समुदाय मे घटियाला [illegible] पश्चिम) स्थित एक स्तम्भ के दो पार्श्वों पर उत्कीर्ण है। [illegible] के, जिसे माता की साल कहते हैं, निकट है। ये लेख [illegible] कुछ पद्य और कुछ गद्य का प्रयोग किया गया है। [illegible] है। प्रथम लेख मे २० पक्तियां हैं जिन्हें [illegible] किया गया है। दूसरा लेख ११ पक्तियों मे है [illegible] आकार मे अङ्कित है। तीसरे लेख में दो पंक्तियां हैं [illegible] समय चैत्र शुक्ला द्वितीया बुधवार, वि स ९१८ है।

दो लेखो को क्रमशः विनायक [illegible] लेखो मे कुक्कुक प्रतिहार को न्यायप्रिय, [illegible]

---

२५ ए इ भाग २ IX, [illegible]

२६. ज रा ए सो १८९४, [illegible]

२७ रा ए सो, १८९५, [illegible] १९०७, ए इ. भा. ९ पृ [illegible]

वाला, दीनों का रक्षक, वीर तथा साहसी शासक व्यक्त किया गया है। इसमें इसकी लोकप्रियता का प्रभावक्षेत्र गुजरात, वल्ल, लाट, माड, शिव. मलानी, पचभद्रा आदि तक विस्तारित बतलाया गया है जिससे उसके राजनीतिक वैभव का पता चलता है। अन्तिम लेख में उसके गुणों में सज्जनों की संगति, विनीति स्त्रियों का साथ, पुत्र स्नेह, गुरुभक्ति, कृतज्ञता, संगीत तथा पुष्पों से प्रेम सम्मिलित किये गये हैं। इन गुणों के उल्लेख में अतिशयोक्ति हो सकती है, परन्तु इनसे उसका एक सम्पन्न तथा सद्चरित्र शासक होना प्रतीत होता है। वह सुबोध भी प्रमाणित होता है क्योंकि प्रथम लेख का लेखक कुक्कुक बताया गया है। अलबत्ता इससे यह अवश्य प्रमाणित होता है कि वह लोकप्रिय शासक था, क्योंकि शासक के सभी गुणों की स्थिति उसमें कल्पित की गई है।

एक लेख के चतुर्थ श्लोक से विदित होता है कि कुक्कुक ने दो और स्तम्भों की स्थापना की थी—एक घटियाला में और दूसरा मण्डोर में। दूसरे शिलालेख में एक बड़ी महत्त्व की ऐतिहासिक बात दी गई है। वह यह है कि रोहिंसकूप (घटियाला) आभीरों के उपद्रव के कारण अच्छे नागरिकों के लिए रहने के योग्य स्थान नहीं था जिसे उसने भय रहित बनाकर आबाद किया। इसमें बाजारों की व्यवस्था की गई और तीनों वर्णों के रहने के मकान, सड़कों आदि का निर्माण करवाया गया। इस प्रकार की शांति स्थापित होने से ये नगर भले आदमियों के रहने के योग्य स्थान बन गये। ये सूचना इतिहास की दृष्टि से बड़े महत्त्व की है। ऐसा मालूम होता है कि कुक्कुक ने आभीरों को परास्त कर मारवाड़ में शांति स्थापित कर नागरिक जीवन की सभी आवश्यकताओं की पूर्ति की जिससे दूर-दूर से व्यापारी वर्ग आकर बस गए और ये भाग जन-जीवन तथा व्यापार के लिए उपयोगी बन गया। तीनों वर्णों के लिए उसने उद्योग और धन्धों की व्यवस्था पैदा करदी।

इस लेख में 'मग' जाति के ब्राह्मणों का भी विशेप उल्लेख किया गया है जो वर्ण के विभाजन की प्रवृत्ति का द्योतक है। यह जाति मारवाड़ में शाकद्वीपीय ब्राह्मण के नाम से भी जाने गए हैं जो ओसवालों के आश्रित रहकर जीवन निर्वाह करते हैं। जैन मन्दिरों में सेवा पूजा के कार्य करने से इन्हें सेवक भी सम्बोधित किया जाता है। यदि इन लेखों को जोधपुर के प्रतिहारों के अन्य लेखों के संयोग से पढ़ा जाय तो मारवाड़ में प्रतिहारों के विस्तार और शासन पर अच्छा प्रकाश पड़ सकता है। स्वतन्त्र रूप से भी इन लेखों का नवमीं शताब्दी के प्रतिहारों की राजनीतिक व्यवस्था, नागरिक जीवन तथा उनके द्वारा स्थापित लोकोपकारी साधनों की स्थापना का अच्छा परिज्ञान हो जाता है।

इन लेखों का लेखक मग तथा उत्कीर्णक सुवर्णकार कृष्णेश्वर तथा स्तम्भों का बनाने वाला एक सूत्रधार था जिसका नाम लुप्त हो गया है।

इन लेखों की कुछ पंक्तियाँ यहाँ उद्धृत की जाती हैं—

पंक्ति ११-१४—येन प्राप्ता महाख्याति स्त्रवण्यां वल्लमाडयोः।

आर्येषु गुर्जरत्राया लाट देशे च पर्व्वते ॥ तेन
मड्डोदरे स्तम्भास्तथा रोहिन्सके कृतः
पक्ति दूसरे लेख की ६–८—श्रीमत्ववकस्य पुत्रेण सत्प्रतिहार जातिना ।
ववकुकेन स्थितिदत्वा स्थापितोत्र महाजन ॥
पक्ति तीसरे लेख की २—प्रययुत्तम्भितस्तम्भो यशस्तम्भ इवोन्नत ॥
पक्ति चौथे लेख की ३–४—न्यायमार्गो गुरोर्भक्ति पुत्र स्नेह कृतज्ञता ।
प्रियावाग्नागरो वेप ववकुकस्य प्रियाणि षट् ॥

घटियाले के दो लेख [२८] (८६१ ई)

जोधपुर से २० मील उत्तर मे घटियाला गाव है, जहा से वि. स. ६१८ चैत्र सुदी २ के दो लेख उपलब्ध हुए । इनमे से एक लेख महाराष्ट्री भाषा का श्लोक बद्ध और दूसरा उसी का आशय रूप सस्कृत मे है । इन से पाया जाता है 'हरिश्चन्द्र' नाम ब्राह्मण, जिसको रोहिल्लद्धि भी कहते थे, वेद तथा शास्त्रो का अच्छा ज्ञाता था । उसके दो स्त्रिया थी—एक ब्राह्मण वश से दूसरी क्षत्रिय कुल से । ब्राह्मणी के पुत्र ब्राह्मण प्रतिहार और क्षत्रिय रानी के मद्यपान करने वाले (क्षत्रिय) कहलाये । हरिश्चन्द्र का समय इसमे उपलब्ध नही है, परन्तु बाउक के समय का अकण जो इसमे सवत् ८६४ दिया है उससे औसत २० वर्ष मानने से हरिश्चन्द्र का समय वि० स० ६५४ (५६७ ई०) होता है । उपर्युक्त शिलालेख से मडोर के प्रतिहारो की नामावली तथा उनको उपलब्धियो पर अच्छा प्रकाश पडता है । इस वश का प्रमुख हरिश्चन्द्र हुआ । उसके चार पुत्र-भोगभट, कक्क, रज्जिल और दह ने मिलकर मडोर दुर्ग का ऊँचा प्राकार बनवाया । हरिश्चन्द्र के उत्तराधिकारी क्रमश रज्जिल, नरभट, तथा नागभट थे । नागभट ने मेडना को अपनी राजधानी बनाया । इसके पुत्र तात ने राज्य छोड कर अपने भाई भोज को दे दिया और स्वय माडव्य के आश्रम म रहकर अपना जीवन बिताता रहा । भोज के बाद यशोवर्द्धन और उसके बाद चंदुक प्रतिहारो की गद्दी पर बैठे । चदुक के पुत्र शीलुक ने अपने राज्य का विस्तार त्रवणी और वल्लदेश की सीमा तक बढाया और वल्लदेश के राजा भट्टिक को परास्त कर उसका छत्र छीना । उसके उत्तराधिकारी भोट ने गगा मे मुक्ति प्राप्त की और उसके पुत्र भिल्लादित्य ने राज्य छोड कर हरिद्वार जाकर अपना देह छोडा । भिल्लादित्य का पुत्र कक्क बडा प्रतापी और विद्वान था । उसने मुगेर के गोडो को परास्त किया । वह रघुवशी प्रतिहार वत्सराज का सामत था । उसके पुत्र बाउक ने नदावल्ल को परास्त किया और शत्रु सैन्य का सहार किया । जब उसका भाई कुक्कुक शासक बना तो उसने अपने सच्चरित्र से मरु, माड, बल्ल, तमणी (त्रवणी), अज्ज (आर्य) एव गुर्जरत्रा के लोगो का अनुराग प्राप्त किया । उसने वड

---

२८ ज रा ए सो, १८६४, पृ ६–८, ए इ जि ६, पृ २८० ओझा, राजपूताने का इतिहास, पृ, १६६ १७१ ।

वाला, दीनों का रक्षक, वीर तथा साहसी शासक व्यक्त किया गया है। इसमें इसकी लोकप्रियता का प्रभावक्षेत्र गुजरात, वल्ल, लाट, माड, शिव. मलानी, पचभद्रा आदि तक विस्तारित वतलाया गया है जिससे उसके राजनीतिक वैभव का पता चलता है। अन्तिम लेख में उसके गुणों में सज्जनों की संगति, विनीति स्त्रियों का साथ, पुत्र स्नेह, गुरुभक्ति, कृतज्ञता, संगीत तथा पुष्पों से प्रेम सम्मिलित किये गये हैं। इन गुणों के उल्लेख में अतिशयोक्ति हो सकती है, परन्तु इनसे उसका एक सम्पन्न तथा सद्चरित्र शासक होना प्रतीत होता है। वह सुवोध भी प्रमाणित होता है क्योंकि प्रथम लेख का लेखक कुक्कुक वताया गया है। अलवत्ता इससे यह अवश्य प्रमाणित होता है कि वह लोकप्रिय शासक था, क्योंकि शासक के सभी गुणों की स्थिति उसमें कल्पित की गई है।

एक लेख के चतुर्थ श्लोक से विदित होता है कि कुक्कुक ने दो और स्तम्भों की स्थापना की थी—एक घटियाला में और दूसरा मण्डोर में। दूसरे शिलालेख में एक वड़ी महत्त्व की ऐतिहासिक वात दी गई है। वह यह है कि रोहिंसकूप (घटियाला) आभीरों के उपद्रव के कारण अच्छे नागरिकों के लिए रहने के योग्य स्थान नहीं था जिसे उसने भय रहित वनाकर आवाद किया। इसमें वाजारों की व्यवस्था की गई और तीनों वर्णों के रहने के मकान, सड़कों आदि का निर्माण करवाया गया। इस प्रकार की शांति स्थापित होने से ये नगर भले आदमियों के रहने के योग्य स्थान वन गये। ये सूचना इतिहास की दृष्टि से वड़े महत्त्व की है। ऐसा मालूम होता है कि कुक्कुक ने आभीरों को परास्त कर मारवाड़ में शांति स्थापित कर नागरिक जीवन की सभी आवश्यकताओं की पूर्ति की जिससे दूर-दूर से व्यापारी वर्ग आकर वस गए और ये भाग जन-जीवन तथा व्यापार के लिए उपयोगी वन गया। तीनों वर्णों के लिए उसने उद्योग और धन्धों की व्यवस्था पैदा करदी।

इस लेख में 'मग' जाति के ब्राह्मणों का भी विशेष उल्लेख किया गया है जो वर्ण के विभाजन की प्रवृत्ति का द्योतक है। यह जाति ---वाड में शाकद्वीपीय ब्राह्मण के नाम से भी जाने गए हैं जो ओसवालों के आ[illegible] निर्वाह करते हैं। जैन मन्दिरों में सेवा पूजा के कार्य करने से [illegible] सम्बोधित किया जाता है। यदि इन लेखों को जोधपुर के प्रतिह[illegible] के संयोग से पढ़ा जाय तो मारवाड़ में प्रतिहारों के विस्तार [illegible] प्रकाश पड़ सकता है। स्वतन्त्र रूप से भी इन लेखों का नव[illegible] हा[illegible] की राजनीतिक व्यवस्था, नागरिक जीवन तथा उनके द्वारा [illegible] साधनों की स्थापना का अच्छा परिज्ञान हो जाता है।

इन लेखों का लेखक मग तथा उत्कीर्णक सुवर्ण[illegible] स्तम्भों का वनाने वाला एक सूत्रधार था जिसका नाम लुप्त हो ग[illegible]

इन लेखों की कुछ पंक्तियाँ यहाँ उद्धृत की जाती [illegible]

पंक्ति ११-१४—येन प्राप्ता महाख्याति स्त्रवण्यां वल्ल

पीपल आदि वृक्षो की निकटता के आधार पर खेतो की सज्ञा इसी प्रकार उपलब्ध होती है। ऐसे अनुदानो मे साक्षी रूप मे राज्य परिवार, अधिकारीवर्ग या ग्राम के प्रमुखो को रखा जाता था।

इसका गद्य भाग इस प्रकार है —

"सवत् ६६६ श्रावण सुदि १ समस्तराजावलिपूर्वमग्रे (र्घ)ह
महाराजाधिराज श्री भर्तृभट्ट श्री खोमाणसुत. स्वमातृपित्रो-
रात्मनश्च धर्म्माभिवृद्धये घोण्टावर्षायिन्द्रराजादित्यदेवाय
पलासकूपिकाग्रामे बब्बूलिको स्रा (ना) म कछ (च्छ) ...."

आहड के आदिवराह मन्दिर का लेख[31] (६४४?)

प्रस्तुत लेख प्रारम्भ मे आहड के आदिवराह मन्दिर में लगा होगा, जो पीछे से गगोद्भव मे एक ताक मे लगाया गया था। इसे यहाँ से हटाकर महाराणा भूपाल कालेज के सग्रहालय-कक्ष मे अब सुरक्षित कर दिया गया है। सस्कृत भाषा मे १४ पक्तियो का यह लेख मेवाड के शासक भर्तृभट्ट द्वितीय के समय का है। यह खण्डित अवस्था मे होने से कई स्थलो तथा सवत् के सम्बन्ध मे पढा नही जाता। यह १०वी शती की 'ब्राह्मी लिपि' मे बडी सुन्दरता एव कुशलता से १५"×१०" के पाषाण पर उत्कीर्ण किया गया है जो उस समय की उत्कृष्ट शिल्पकला का साक्षी है। इसमे आदिवराह की वन्दना है तथा यह उल्लिखित है कि आहड मे आदिवराह के मन्दिर का निर्माण किसी आदिवराह नामक व्यक्ति ने किया। इसमे आदिवराह, जनार्दन, विष्णु, कैटभरिपु आदि शब्दो के प्रयोग इस भाग मे विष्णु भगवान की मूर्ति की अर्चना का प्राचुर्य प्रमाणित करते हैं। इसी प्रकार 'पचरात्रविधि' के उल्लेख द्वारा आहड मे वैष्णव विचार धारा के प्रभाव का बोध होता है। इसमे वर्णित 'आधार' शब्द मे आहड स्थान का बोध होता है जहाँ आदिवराह के मन्दिर की सम्भावना थी। प्रशस्तिकार वैसे तो मन्दिर का वर्णन न देकर आदिवराह की मूर्ति की स्थापना का उल्लेख करता है परन्तु इससे मन्दिर की स्थिति भी अनुमानित की जा सकती है। यहाँ 'गगोद्भव' का भी उल्लेख आता है जो अद्यावधि तीर्थ स्थान के रूप मे मान्यता प्राप्त है। इस लेख से आहड का एक समृद्ध तथा धर्म स्थान के रूप मे ख्यातिमान नगर होना प्रमाणित होता है।

शिलालेख के अन्तिम भाग मे केवल ज्येष्ठ मास के शुक्ल पक्ष की पचमी आदि शब्द पढे जाते हैं और सवत् के अक जाते रहे हैं। डा० ओझा ने इस लेख को वि० स० १००० (९४३ई०) माना है। परन्तु सवत् १००० ज्येष्ठ मास के शुक्ल पक्ष की पचमी को मगलवार व पुष्य नक्षत्र जैसा इसमे अकित है, न थे। अत काल-गणना

---

३१ ए. रि. ए म्यू. अजमेर, १९१३–१४, पृ०२; ओझा, उदयपुर राज्य, भा १ पृ १२१

शोध पत्रिका, सि–दि, १९५६, पृ ५४–५७।

के अनुसार इस लेख का समय ६६८ अथवा १००१ होना चाहिये। इन वर्षों में दिन व नक्षत्र का मेल बैठ जाता है। यदि हम संवत् १००१ स्वीकार करते हैं तो लेख का समय ३० अप्रेल सन् ९४४ ईसवी होता है। ऐसी स्थिति में भर्तृभट्ट द्वितीय का देहान्त काल संवत् १००१ के उपरान्त तथा १००८ से पूर्व निर्धारित होता है, जबकि उसके पुत्र अल्लट को १००८ व १०१० में आहड़ का शासक मानते हैं।
इसकी प्रथम व अन्तिम पंक्ति इस प्रकार है: —

पंक्ति १ ....चित्तचारिणे। नमः समस्ताभरसारपूर्त्तये।
जनार्दनायादिव...........

पंक्ति १४ ....(स) हस्ते कुजस्य पंचम्यां। आदिवरा (हः)
पुष्ये प्रतिष्ठितो ज्येष्ठसित पक्षे। सं... ....

प्रतापगढ़ शिलालेख[३२] (६४६ ई०)

यह शिलालेख संवत् १००३ (सन्९४६) का है, जो प्रारम्भ में प्रतापगढ़ नगर में चेनराम अग्रवाल की वावड़ी के निकट एक चबूतरे पर लगा हुआ था, जिसे डॉ० ओझा ने वहाँ से हटाकर अजमेर संग्रहालय में सुरक्षित किया। यह लेख अच्छी अवस्था में है जिसमें ३५ पंक्तियाँ २'·६" × २'·२½" आकार के पत्थर पर उत्कीर्ण हैं। कुछ ही अक्षरों को छोड़कर सभी अक्षर ठीक रूप से पढ़े जा सकते हैं। कुछ पंक्तियाँ को छोड़कर अन्य सभी पंक्तियों में संस्कृत गद्य काम में लिया गया है और उसमें दसवीं शताब्दी की नागरी लिपि प्रयुक्त है। कुछ पक्तियों में देवस्तुति के लिए पद्यों का भी प्रयोग किया गया है। सबसे बड़ी विशेषता यह है कि लेख की संस्कृत भाषा के साथ कुछ प्रचलित देशी शब्दों का प्रयोग भी किया गया है। इस सम्बन्ध में अरहट, कोशवाह, (एक चमड़े के चरस से सींची जाने वाली भूमि), चौसर (फूल की माला), पालिका (पूला), पली (तेल का नाप), धाणा (धाणी) आदि शब्द विशेष उल्लेखनीय हैं।

प्रस्तुत लेख चार भागों में विभाजित है जिनमें कई अनुदानों के देने का उल्लेख है जो घोटार्सी के हरिरीश्वर के मठ के साथ लगे हुए अनेक मन्दिरों के लिए दिये गये थे। इस लेख में सूर्य, दुर्गा, शिव आदि से सम्बन्धित स्तुतियों के श्लोक उस समय की धार्मिक निष्ठा पर प्रकाश डालते हैं। महेन्द्रदेव द्वारा दिये गये अनुदान में उसके प्रतिहार वंश के शासकों की नामावली भी दी है जिनमें नागभट्ट, कुकुस्त, रामभद्र, भोज, महेन्द्रपाल आदि प्रमुख हैं। कुछ ऐसे भी इसमें नाम दिये हैं जो संदिग्ध हैं और जिनको अन्य साधनों से प्रमाणित नहीं किया जा सकता। फिर भी इसमें दी गई सूची से ८वीं शताब्दी से १०वीं शताब्दी के कन्नौज के प्रतिहार शासकों के वंशवृक्ष के क्रम में शुद्धि की जा सकती है।

---

३२. ए. रि. रा. म्यू., अजमेर, १६१४; ए. इं., जि. १४ पृ. १८२–८४; जी. एन. शर्मा, ए बिबलियोग्राफी, पृ. ४.

दूसरे अनुदान मे चहमान शासक गोविन्द राज, दुर्लभराज और इन्द्रराज की उपलब्धियो का वर्णन है। इसमे महादेव नामक प्रान्तीय अधिकारी और कोक्कट नामी सेनापति का भी उल्लेख है, जो महेन्द्र द्वितीय के अधीन थे। इनके द्वारा उज्जैनी मे महाकाल की अर्चना करने के उपरान्त संक्रान्ति पर गाँव भेंट करने का उल्लेख है। लेखमे मडपिका तथा सभी निकटवर्ती ग्रामीण व्यवस्थाओ को अनुदान सम्बन्धी आदेशो को पालन करने का आदेश दिया गया है जो उस समय की स्थानीय सस्थाओ और राजकीय प्रशासन के सम्बन्ध पर प्रकाश डालता है।

तीसरे व चौथे भाग के अनुदानो से उस समय खेतो की सीमा तथा गाँवो की सीमा निर्धारित करने और उनके वर्गीकरण करने की प्रथा पर प्रकाश पडता है। बबूल के वृक्ष के पास खेत होने से उसे बबूलिका कहते थे तथा एक चरस से सिंचाई की जाने वाली भूमि को कोशवाह् कहा जाता था। इन अनुदानो मे दस मन के लिए माणी तथा नाप के पात्र को पल और पलिका की सज्ञा दी गई है।

यह शिलालेख १०वी शताब्दी के धार्मिक जीवन, गाँवो की सीमा, जनजीवन, शासन व्यवस्था, सहयोगी जीवन, अनुदान, कर-व्यवस्था और आर्थिक व्यवस्था पर अच्छा प्रकाश डालता है। इसमे दिये गये अनेक नामो से कई व्यक्तियो के वश, पद तथा उनकी उपलब्धियो का भी पता चलता है। इसमे सामन्त-प्रथा की व्यवस्था सम्बन्धी भी सकेत मिलते है।

इसमे दी गई प्रथम व अन्तिम पंक्तियो को यहाँ उद्धृत किया जाता है.—

पक्ति १ भवतु भव (ता भानो) र्भूतये भानवः सदा ॥

पंक्ति ३५ आच्छेत्ता वानुयन्ताः च तान्येव नरक (वसेत्) ॥

(स) त्पसुत सिद्धपेन इय प्रशस्ती उत्कीर्णमिति ॥

सवत् १००३ ॥

सिमडोनी का शिलालेख [33] (९४८ ई०)

प्रतिहार देवपाल के समय का एक वि० सं० १००५ का शिलालेख प्राप्त हुआ है जिसमे उसके विरुद परमभट्टारक, महाराजाधिराज और परमेश्वर दिये हैं। उसको क्षितिपालदेव (महीपाल) का पादानुध्यात (उत्तराधिकारी) कहा है। यदि देवपाल महीपाल का पुत्र था तो इस लेख से पता चलता है कि उसके अल्पवयस्क होने मे उसका चचा विनायकपाल उसका राज्य दबा बैठा हो और महेन्द्रपाल (दूसरे) के पीछे वह राज्य का स्वामी बना हो।

सारणेश्वर (साडनाथ) प्रशस्ति[34] (९५३ ई.)

यह प्रशस्ति वि स. १०१० (ई स ९५३) की लगभग ४'.५''×६' चौडे

---

३३. ए० ई० जि०१, पृ० १७७।

३४ भावनगर इन्स्क्रिप्शन्स, भा २, पृ. ६७-६८, प्लेट संख्या ३४, वीरविनोद

भूरे रंग के पत्थर पर खुदी हुई है और उदयपुर के श्मशान के सारणेश्वर नामक शिवालय के सभामण्डप के पश्चिमी द्वार के छबने पर लगी हुई है, जिसको सभामण्डप के भीतरी भाग की तरफ से पढ़ सकते हैं। उदयपुर से डेढ़ मील दूर पूर्व स्थित आहड़ गाँव के किसी वराह मन्दिर में यह प्रशस्ति प्रारंभ में लगी होगी। उक्त वराह मन्दिर के गिर जाने से इस प्रशस्ति को वहाँ से हटाकर वर्तमान सारणेश्वर के मन्दिर के निर्माण के समय में सभामण्डप के छबने के काम में ले ली गई हो। यह पुरातत्त्वज्ञों के लिए संतोष की बात है कि यह प्रशस्ति किसी तरह सुरक्षित रह गई और उसका महत्त्व स्थिर रह गया।

इस प्रशस्ति में केवल छः पंक्तियाँ हैं; परन्तु यह प्रशस्ति आद्योपान्त है। इस काल की आहड़ से मिलने वाली प्रशस्तियों में यही प्रशस्ति ऐसी है जो सुरक्षित रही। इसमें भाषा संस्कृत और लिपि नागरी है, जिसकी बनावट मध्यकालीन युग की लिपि के रूप में है। ग्यारहवीं शताब्दी के मेवाड़ के इतिहास के लिए तो यह प्रशस्ति उपयोगी है ही, पर राजस्थान के इतिहास में भी यह प्रशस्ति अपना स्वतन्त्र स्थान रखती है, क्योंकि इसमें तत्समयक शासन तथा कर व्यवस्था का अच्छा वर्णन है। गुहिलवंशी मेवाड़ के राजा अल्लट का इस प्रशस्ति से समय स्थिर होकर उसकी माता महालक्ष्मी तथा पुत्र नरवाहन के नाम स्पष्ट हो जाते हैं। इसमें मुख्य-मुख्य कर्मचारियों के नाम उनके पद सहित उल्लिखित किये गये हैं। उक्त लेख से पाया जाता है कि अल्लट का आमात्य (मुख्यमन्त्री) मंगट, सांधिविग्रहिक (संधि और युद्ध का मन्त्री) दुर्लभराज, अक्षपटलिक (आय-व्यय का अधिकारी) मयूर और समुद्र, बंदिपति (मुख्य भाट) नाग और भिषगाधिराज (मुख्य वैद्य) रुद्रादित्य था। इन नामों के अतिरिक्त उस वराह के मन्दिर से सम्बन्धित गोष्टिकों की बड़ी नामावली दी है जिसमें वणिकदेवराज, श्रीधर, हूण तथा कुशराज के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

मंदिर के निर्वाह के लिए उधर से गुजरने वाले हाथी पर एक द्रम (द्रम एक चाँदी का सिक्का था, जिसका मूल्य चार से छः आने के करीब होता था), घोड़े पर दो रूपक (चाँदी का सिक्का जिसका वजन लगभग ३ रत्ती होता था), सींगवाले जानवरों पर एक द्रमा का चालीसवाँ अंश, लाटे (फसल का हिस्सा) पर एक तुला (लगभग पाँच सेर) और हट्ट (हटवाड़े) से एक आढक (अन्न का नाप लगभग साढ़े तीन सेर का सूचक) अन्न, शुक्ल पक्ष की एकादशी के दिन हलवाई की प्रति दुकान से एक घड़िया दूध, जुआरी से एक पेटक (एक दाव की जीत का भाग), प्रत्येक घानी से एक पल (लगभग चार तोला) तेल, प्रति रंधनी (भोज) एक रूपक और मालियों से प्रतिदिन एक माला लिये जाने की व्यवस्था राजा ने की थी। इसी तरह वहाँ रहने वाले अनेक व्यापारी जो कर्णाटक, मध्य प्रदेश, लाट (गुजरात और आसपास का भाग)

भा. १, पृ. ३८०, ओझा : उदयपुर राज्य का इतिहास भाग १, पृ. १२२-१२४, जी. एन. शर्मा : ए बिबलिओग्राफी पृ. ४।

ग्रौर टक्क (पंजाब का एक भाग) से ग्राकर यहाँ बस गए थे उन्होने भी मन्दिर को अपनी ग्रोर से दान दिया था। इससे स्पष्ट है कि ग्राहड़ उस समय एक सम्पन्न नगर था जहा देश-विदेश से ग्राकर लोग व्यापार करते थे ग्रौर नगर की स्थिति भी व्यापारिक मार्ग पर थी। इसी स्थिति के कारण कर की भी व्यवस्था की गई थी। यहाँ के मन्त्रिमण्डल के गठन से भी ग्राहड़ का उस समय की राजधानी होना प्रमाणित होता है। ग्रथवा राजधानी यदि नागदा भी रही हो तो ग्रल्लट ग्राहड़ में तीर्थस्थल तथा प्रधान नगर होने से वहाँ रहा करता हो। इस मन्दिर का निर्माण उत्तम सूत्रधार ग्रग्रट ने किया ग्रौर इसमे वराह मूर्ति की स्थापना वैशाख शुक्ला सप्तमी वि. सं. १०१०, तदनुसार २३ ग्रप्रेल ९५३ ई. मे हुई। प्रशस्ति के लिपिकार कायस्थ पाल ग्रौर वेलक थे।

इस प्रशस्ति की प्रथम तथा ग्रतिम पक्ति के पद्यांश इस प्रकार हैं—

१. ॐ पांतु पद्मागस्त सगचचन्द्रोमांचवीचयः। श्यामाः कलिंद तनया पूरा इव हरेर्भुजा ॥

६. लेखितारौच कायस्थौ पालवेल्लक सज्ञकौ ॥

ग्रोसिया का लेख,[३५] (९५६ ई०)

ये लेख २२ संस्कृत पद्यो मे है जिसके जगह-जगह ग्रक्षर खण्डित हो गए हैं। इसमे मानसिह भूमि का स्वामी वत्सराज को रिपुग्रो का दमन करने वाला कहा गया है। वत्सराज के पुर मे ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य ग्रौर शूद्रो मे समाज विभाजित था। उसके भवन हाथियो से शोभायमान थे ग्रौर विद्वान ग्रध्ययन ग्रौर स्तुति में लगे रहते थे। इस प्रशस्ति से वत्सराज के समय की समृद्ध स्थिति का पता चलता है। ये लेख १०१३ फाल्गुन शुक्ला तृतीया का है जिसे सूत्रधार पदाजा द्वारा उत्कीर्ण किया गया उल्लिखित है। इसके मूलपाठ का कुछ ग्रश इस प्रकार है—

"श्री मानसिह प्रभुरिह भुवि·······येक वीर स्त्रैलोक्येय प्रगट महिमा राम नामासयेन चक्रे शाक दृढतर भुरो निर्दयालिगनेपु स्व प्रेयस्यादशमुख वधोत्पादित स्वास्थ्य वृति. ॥५॥"

"तद्वंशे सर्वश्री वशीकृत रिपु श्री वत्सराजो भवत्कीर्तिर्यस्य तुषार हार विमला ज्योत्स्नातिरस्कारिणी·······॥७॥"

'क्वचिन्·······रयुद्धयोविकम धीयते साधवः
क्वचित्पटुपटीयसो प्रकटयन्ति धर्म्मस्थितिम्
क्वचिन्तु भगवत्स्तुति परिपठयन्ति यस्यागिरे.·······॥१२॥"

जगत् का लेख[३६] (९६० ई०)

राजस्थानान्तर्गत उदयपुर जिले मे जगत् नामक गाँव मे एक 'ग्रम्बिका' माता

---

३५. नाहर, जैन लेख, भा. १, सं. ७८८।

३६. मरु भारती, ग्रप्रेल १९५७, पृ. ५६।

का मन्दिर है। सभामण्डप के एक स्तम्भ पर वि. सं. १०१७ वैशाख वदी १ का एक लघु लेख है। इस लेख द्वारा यह स्पष्ट हो जाता है कि यह मन्दिर ईसा की १०वीं शती के उत्तरार्द्ध में विद्यमान था। कला की दृष्टि से भी इस अनुमान की पुष्टि होती है।

राजोरगढ़ का लेख[३७] (६६० ई०)

राजोरगढ़ (अलवर जिला) के वि. सं. १०१६ माघ सुदी १३ के लेख से पाया जाता है कि ११वीं शताब्दी में राज्यपुर (राजोगढ़) पर प्रतिहार गोत्र का गुर्जर महाराजाधिराज सावट का पुत्र महाराजाधिराज परमेश्वर मथनदेव राज्य करता था और वह महीपाल का सामंत था। उसी लेख से वहाँ गुर्जर जाति के किसान होने की भी सूचना प्राप्त होती है।

चित्तौड़ का लेख[३८] (६७१ ई०)

यह लेख प्रारम्भ में चित्तौड़ में प्राप्त हुआ था, परन्तु अब यह वहां उपलब्ध नहीं है। भाग्यवश इसकी एक प्रतिलिपि अहमदाबाद में भारतीय मन्दिर में संग्रहीत है। लेख श्लोकबद्ध है और जो ७८ की संख्या में हैं। स्तुतिभाग के अनन्तर इसमें भोज और उसके उत्तराधिकारियों की उपलब्धियों का वर्णन मिलता है जो उनके व्यक्तिगत गुण और शौर्य पर प्रकाश डालता है। श्लोक में २१–२८ तक इसी वंश के नरवर्मा का वर्णन आता है जिसके समय की यह प्रशस्ति है। इससे नरवर्मा का अधिकार चित्तौड़ पर रहना सिद्ध होता है। प्रशस्ति के अनुसार इसी के समय में चित्तौड़ में महावीर जिनालय का निर्माण तथा प्रतिष्ठा हुई। इस प्रशस्ति का महत्त्वपूर्ण भाग वह है जहां महावीरप्रसाद के निर्माण में योगदान करने वाले कई घर्कट तथा खण्डेलवाल जाति के श्रेष्ठियों का नामोल्लेखन किया गया है। साधारण, वीरक, रासल, धन्धक, मानदेव, मानदेव, पध आदि प्रतिष्ठित श्रेष्ठियों के नाम उल्लेखनीय हैं। ये लोग राजकार्य तथा व्यापार-वाणिज्य में निपुण थे और उनका राजनीतिक सामाजिक तथा धार्मिक कार्यों में हाथ रहता था। आगे चलकर ७३वें श्लोक में नरवर्मा द्वारा भी प्रसाद के लिए दो पारुत्थ मुद्रा देने का उल्लेख मिलता है जिससे उस समय के शासकों की सहिष्णुतापूर्ण नीति का बोध होता है। इस प्रशस्ति के ७५वें श्लोक में देवालय में स्त्रियों के प्रवेश को निषिद्ध बतलाया है जो उस समय की सामाजिक व्यवस्था पर प्रकाश डालता है। निषेधात्मक नियम से हमें संभावित दुराचार की प्रवृत्ति और धार्मिक स्तर के पतन की ओर संकेत मिलता है। इस शिलालेख से परमार शासकों की उपलब्धियाँ, उनका चित्तौड़ पर अधिकार, चित्तौड़ की समृद्धि, उस समय के प्रतिष्ठि व्यक्तियों के नाम तथा सामाजिक व्यवस्था पर अच्छा प्रकाश पड़ता है।

---

३७. ए. इं., जि. ३, पृ. २६६।
३८. सोमानी–चित्तौड़

नाथ प्रशस्ति-एकलिंगजी[३६] (९७१ ई०)

यह एकलिंगजी के मन्दिर से कुछ ऊँचे स्थान पर लकुलीश के मन्दिर मे लगा हुआ वि. सं. १०२८ (ई स. ९७१) का शिलालेख है जिसे नाथ प्रशस्ति भी कहते हैं। नरवाहन के समय का यह एक महत्त्वपूर्ण लेख है। उक्त मन्दिर मे ऊपर से बहने वाले बरसाती पानी से इस प्रशस्ति की कई पंक्तियाँ विगड गई हैं और उसमे कई जगह दरारें आ गई हैं। इतना होने हुए भी इसका बहुत कुछ अश पढा जा सकता है। प्रशस्ति का आकार २.११"×१८" है और उसमे १८ पंक्तियाँ हैं। इसकी भाषा सस्कृत है जो पद्यो मे लिखी गई है और इसमे देवनागरी लिपि का प्रयोग किया गया है।

यह प्रशस्ति मेवाड के राजनीतिक तथा सांस्कृतिक इतिहास के लिए बडे काम की है। तीसरे और चौथे श्लोक में नागदा नगर का वर्णन है। पाँचवें से आठवें श्लोको मे यहां के राजाओं के गुणो और शौर्य का वर्णन है जो बापा, गुहिल तथा नरवाहन है। आगे चलकर स्त्री के आभूषणो का वर्णन मिलता है जो उस समय के जनजीवन को समझने मे बडा सहायक हो सकता है। १३वें से १७वे श्लोक मे ऐसे योगियो का वर्णन है जो भस्म लगाते हैं, वल्कल वस्त्र तथा जटाजूट धारण करते हैं। पाशुपत योग साधना करने वाले कुशिक योगियो तथा उस सम्प्रदाय के अन्य साधुओ का भी हमे परिचय मिलता है जो एकलिंगजी की पूजा करने वाले तथा उक्त मन्दिर के निर्माता कहे गये हैं। १७वें श्लोक मे स्याद्वाद (जैन) तथा सौगत (बौद्ध) विचारको को वादविवाद मे परास्त करने वाले वेदाङ्ग मुनि की चर्चा है। इस प्रशस्ति का रचयिता भी इन्ही वेदाङ्ग मुनि के शिष्य आम्र कवि थे। इसमे अन्य व्यक्तियो के भी नाम हैं जो मन्दिर के निर्माणक थे या उससे सम्बन्धित थे, जैसे श्रीमार्तण्ड, लैलुक, श्री सधोराशि, श्री विनिश्चित राशि आदि।

इस प्रशस्ति की प्रथम व अन्तिम पंक्ति के पद्याश इस प्रकार हैं—

पंक्ति १—ॐ नमो लकुलीशाय ।। प्रथम तीर्थ ··· ··· ···श्वरम् किंतात·······स्व हस्ते विसक।

पंक्ति १८–··· ······· प्रापमाले प्रसिद्धिम् ।। श्री सुपूजितरासिकारापक प्रणमति। श्री मार्कण्ड श्रीमातृपुर सधोरासि श्रीविनिश्चितरासि । लैलुक नोहल। एव कारपक·· ·············।

३६–बंब. ए सो ज, जि २२, पृ. १६६–६७, भावनगर इन्स्क्रि, भा. २, पृ ६९–७२

नागरी प्र प भा. १, पृ २५६–५६

वीर विनोद, भा १, पृ. १२५–१२६।

हर्षनाथ के मन्दिर की प्रशस्ति[४०] (९७३ ई०)

यह प्रशस्ति शेखावाटी के प्रसिद्ध हर्षनाथ के मन्दिर की वि. सं. १०३० आसाढ़ सुदी १५ की है। इसमें ४८ पद्य संस्कृत भाषा में हैं। उक्त मन्दिर का निर्माण अल्लट द्वारा किया गया था। यह प्रशस्ति साँभर के चौहान राजा विग्रहराज के समय की है। इससे चौहानों के वंशक्रम तथा उनकी उपलब्धियों पर प्रकाश पड़ता है। इस वंश के शासकों के नाम इस प्रकार है—युवक, चन्द्रराज, युवक द्वि, चन्दन, वाक्पतिराज, सिंहराज और विग्रहराज। इसमें वागड़ के लिए वार्गट शब्द का प्रयोग किया गया है। इसमें विग्रहराज के पिता सिंहराज के सम्बन्ध में लिखा है कि उसने सेनापति की हैसियत से उद्धत तोमर (तंवर) नायक सलवण को मारा या परास्त किया। युद्ध में उसने अनेक राजाओं को कैद किया और उन्हें तब तक नहीं छोड़ा जब तक पृथ्वी के चक्रवर्ती, रघुवंशी राजा स्वयं वहां न आये। सिंहराज की सेनापति की स्थिति तथा रघुवंशी राजा के आने तक शत्रुओं को नहीं छोड़ना उसका किसी का सामन्त होना व्यक्त करता है। उस समय रघुवंशी शक्तिशाली शासक कन्नौज का राजा प्रतिहार देवपाल था। सिंहराज इसी देवपाल का सामन्त हो सकता है। इस सम्बन्ध का इसमें श्लोक इस प्रकार है—

"........।.... तोमरनायकं सलवणं सैन्याधिपत्योद्धतं युद्धे येन नरेश्वराः प्रतिदिशं निर्न्ना (र्ण्णा) शिता जिष्णुना कारावेश्मनि भूरयश्च विवृतास्तावद्धि यावद्गृहे तन्मुक्त्यर्थमुपागतो रघुकुले भूचक्रवर्ती स्वयम् ॥

आहड़ का देवकुलिका का लेख[४१] (९७७ ई.)

इस लेख का संवत् वाला अंश टूट गया है, परन्तु इसमें मेवाड़ के राजा अल्लट, नरवाहन और शक्तिकुमार के नाम होने से यह शक्तिकुमार के समय का प्रतीत होता है। इस लेख का सबसे बड़ा उपयोग यह है कि इससे इन तीनों शासकों के समय के अक्षपटलाधीशों का वर्णन मिलता है। ऐसा प्रतीत होता है कि शक्ति कुमार के अक्षपटलाधीश के द्वारा बनवाये गये किसी मन्दिर का यह लेख हो। अब यह लेख का खण्ड आहड़ के एक जैन मन्दिर की देवकुलिका के छबने में तोड़फोड़ कर लगा दिया गया है और थोड़ा सा भाग जो बच रहा है जिससे उपर्युक्त सूचनाएँ मिलती हैं। अल्लट के सम्बन्ध में इसमें उल्लिखित है कि उसने अपनी भयानक गदा से अपने प्रबल शत्रु देवपाल को युद्ध में मारा। सम्भव है कि देवपाल कन्नौज का शासक था जिसने अपने राज्य में मेवाड़ सम्मिलित करने का प्रयत्न किया हो और चढ़ाई के अवसर पर वह मारा गया हो। इस लेख में अल्लट के अक्षपटलाधीश का नाम मयूर दिया है। मेवाड़ के प्राचीन शासन सम्बन्धी सूत्रों को तथा सैनिक प्रतिभा को सम-

---

४०. ए. ई. जि. २, १२१–२२, ओझा, राजपूताने का इतिहास, पृ. १७३, डा. जी. एन. शर्मा–बिलियोग्राफी, पृ. ४।

४१. ओझा, उदयपुर, जि. १, पृ. १२४–१३।

भने मे यह लेख बडे काम का है ।

आहड का शक्तिकुमार का लेख[४२] (९७७ ई०)

वि स १०३४ वैशाख सुदी १ के आहड के लेख मे शक्ति कुमार को प्रभु शक्ति, मन्त्रशक्ति और उत्साह शक्ति मे सम्पन्न कहा है । यह लेख टॉड को मिला था । सम्भवत. वह उसे इगलैण्ड ले गया । इसमे यह भी उल्लिखित है कि शक्तिकुमार का निवास स्थान आहड था जो सम्पत्ति का घर तथा विपुल वैभव वाले वैश्यो से सुशोभित था । इस लेख से शक्तिकुमार की राजनीतिक प्रभुता तथा आहड की आर्थिक सम्पन्नता का बोध होता है । इस लेख मे अल्लट की माता महालक्ष्मी का राठौड वश की होना तथा अल्लट की राणी हरियदेवी का हूण राजा की पुत्री होना और उस राणी का हर्षपुर गाँव बसाना अङ्कित है । इस लेख मे गुहदत्त से शक्ति कुमार तक पूरी वशावली दी है जो मेवाड के प्राचीन इतिहास के लिए बडे काम की है । इस लेख मे वर्णित शक्तिकुमार की राजनीतिक प्रभुता आहड के एक देवकलिका वाले शिलालेख से भी प्रमाणित होती है । एक अन्य लेख द्वारा हमे यह सूचना मिलती है कि राजा नरवाहन के अक्षपटलिक श्रीपति के दो पुत्र मत्तट और गुदल थे । ये दोनो भाई शक्तिकुमार की दोनो भुजाओ के समान थे । व सब राजकार्य मे अपने स्वामी को सहायता पहुँचाते थे तथा राजधानी के भूषण थे । यह राजधानी एक प्रकार से सैनिक छावनी थी इसलिए प्रशस्तिकार ने इसके लिए 'कटक' शब्द का प्रयोग किया है । ये दोनो बन्धु इस कटक के भूषण बतलाये गए हैं, जिससे उनकी सैनिक उपयोगिता का भी बोध होता है । एक अन्य जैन मन्दिर के सीढी के लगे हुए अपूर्ण लेख से मत्तट का शक्तिकुमार का अक्षपटलाधिपति होना भी सूचित होता है । उसने राजा की आज्ञा से एक सूर्य मन्दिर के लिए प्रतिवर्ष १४ द्रम देने की व्यवस्था की थी । इस सीढी वाले लेख से उस समय की प्रचलित सूर्यपूजा और द्रम का बोध होता है । यह अपूर्ण लेख उदयपुर सङ्ग्रहालय म सुरक्षित है ।

यदि हम ये तीनो लेखो को साथ-साथ पढते हैं तो शक्ति कुमार की उप-लब्धियो पर अच्छा प्रकाश पडता है ।

इसकी कुछ पक्तियाँ इस प्रकार है—

"राष्ट्रकूट कुलोद्भूता [illegible] प्रभूतस्या भवनस्था [illegible] श्रीमदल्लट"

वागड का लेख[४३] (९९४ ई)

राजपूताना म्यूजियम में [illegible] एक जैन मूर्ति पर, जो वि [illegible] की है, खुदे हुए लेख मे [illegible] 'वागड' [illegible] किया गया है । प्रचलित [illegible] है । इसकी [illegible]

४२-इ ए भा, ३ पृ १२१, [illegible]

४३-ओझा, [illegible], पृ [illegible] ।

प्रकार है—

"जयति श्री वागटसंघ:"

हस्तिकुण्डी शिला लेख[४४] (९९६ ई.)

यह लेख माउन्ट आबू जाने वाले उदयपुर सिरोही मार्ग पर एक द्वार पर केप्टेन बर्स्ट को मिला था। इसके बारे में बतलाया जाता है कि प्रारंभ में यह लेख बीजापुर (बाली तहसील) से दो मील दूर एक जैन मन्दिर में लगा हुआ था। यहां से पहिले तो उसे बीजापुर की जैन धर्मशाला में लगाया गया और पीछे उसे वहाँ से हटा कर अजमेर संग्रहालय में सुरक्षित कर दिया।

ये लेख वैसे दो भागों में विभक्त है, प्रथम भाग में ३२ पंक्तियों को श्लोकबद्ध २.'८३ × १.'४" आकार के पाषाण खण्ड पर उत्कीर्ण कर दिया गया है। इसमें प्रयुक्त भाषा संस्कृत है और इसकी लिपि हर्षनाथ के लेख जैसी है। प्रशस्ति के रचयिता सूर्याचार्य हैं जिन्होंने उसे इतवार माघ शुक्ला तृयोदशी पुष्य नक्षत्र वि. स. १०५३ (२४-१९९७) इसको लिखा था।

इस लेख से हमें कई उपयोगी राजनीतिक सूचनाएँ मिलती हैं। प्रथम तो इसमें हमें हस्ति कुण्डी चौहान शाखा के प्रमुख शासक हरिवर्मा, उसकी पत्नी रचि तथा विदग्ध, मम्मट और धवल की उपलब्धियों का परिज्ञान होता है। द्वितीय इसमें धवल के सम्बन्ध में लिखा गया है कि उसने मूलराज चालुक्य की सेनाओं तथा महेन्द्र और धरणीवराह को शत्रुओं के विरूद्ध आश्रय दिया। वास्तव में ये उपलब्धियाँ धवल और उसके वंश के राजनीतिक महत्त्व को बढ़ाती हैं। विदग्ध के सम्बन्ध में प्रशस्तिकार बतलाता है कि उसने अपने गुरु वासुदेव की प्रेरणा से हस्तिकुण्ड में एक जैन देवालय का निर्माण करवाया। उसकी धर्मनिष्ठा की सबसे महत्त्वपूर्ण घटना संसार से विरक्त करना तथा अपने पुत्र बाला प्रसाद को राज्य भार सौंप देना था। बाला प्रसाद ने भी अपनी प्रतिष्ठा हस्तिकुण्डी को राजधानी बनाकर प्राप्त की और वंश परम्परा को उचित रूप से निभाया। देवालव के सन्दर्भ में गोष्ठी का भी यहां उल्लेख आता है जो उसके प्रबन्ध को देखती थी।

दूसरे भाग के लेख में २१ श्लोक हैं, जिनमें इस वंश के राजाओं की उपलब्धिओं को दुहराया गया है तथा मन्दिर के लिए दिये गये अनुदानों को अंकित किया गया है। प्रशस्ति में दिए गए अनुदानों के सम्बन्ध में राज्य द्वारा उस समय लिए जाने वाले अनेक करों का जो क्रय-विक्रय या व्यवसाय पर लिए जाते थे, उल्लेख बड़े महत्त्व का है। इसके द्वारा हम उस समय की आर्थिक व्यवस्था को भली प्रकार समझ सकते हैं। उदाहरणार्थ उस समय २० बोझों पर. गाड़ी के तथा ऊँट के भार पर तथा ऊँट की बिक्री पर एक रुपया लिया जाता था। जुआरियों, पान वेचने

---

४४ ए. ई. जि १० पृ. १७-२०, भावनगर इ., जि. ३, ६८-६९, नाहर, लेख संग्रह, भा. १, सं. ८९८, पृ २३३ २३८

चहमान वंश की प्रशस्ति देकर वाक्पतिराज, सिंहराज और दुर्लभराज की उपलब्धियों का वर्णन है।

प्रशस्ति के दूसरे भाग में दधिचि वंश के मेघनाद, उसकी पत्नी मासटा, वेरीसिंह, दुन्दा (पत्नी) तथा चच के उल्लेख हैं। इसी चच्च के सम्बन्ध में भवानी के मन्दिर बनाने का वर्णन है। इस प्रशस्ति का लेखक गोड कायस्थ महादेव था जिसका पिता कल्या स्वयं कवि था। लेख का समय रविवार वैशाख सुदी अक्षय तृतीय संवत् १०५६ दिया गया है।

लेख की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

पंक्ति ३ "सा यस्या :—प्रसादात्सतां सा सर्व्वार्थं विभूतिका भगवती कात्यायनी पातुवः"

पंक्ति २१ "गोड कायस्थवंशेभूच्छ्री कल्योनाम सत्कविः। सूनुस्तस्य महादेव प्रशस्तिं................"

आहड़ का लेख अम्बाप्रसाद के समय का[४६]

इस लेख को डॉ. ओझा ने उदयपुर के महलों की पायगा (अस्तबल) के ऊपर के मकान में रखा हुआ पाया था। इसमें शक्तिकुमार का उत्तराधिकारी अंबाप्रसाद दिया गया है और उसकी राणी को चौलुक्य (सोलंकी) वंश के किसी राजा की पुत्री बतलाया है। लेख के दाहिनी ओर का लगभग आधा भाग नष्ट हो गया है जिससे आगे का वर्णन तथा उस राजा का नाम नहीं मालूम होता। इस प्रशस्ति से एक बहुत महत्त्वपूर्ण सूचना यह मिलती है कि गुहिल और चालुक्यों का उस समय मैत्री सम्बन्ध था। इसकी एक पंक्ति का भाग इस प्रकार है—

"तस्मादंबाप्रसाद...........चोलुक्यवंश...........देवी तस्य जाता तनूजा"

हस्तिमाता के मन्दिर की सीढ़ियों में लगा हुआ लेख[४७] (शुचिवर्मा के काल का)

यह लेख प्रारंभ में किसी आहड़ के मन्दिर में लगा हुआ था, ऐसा प्रतीत होता है। जब हस्तिमाता का मन्दिर बना तो किसी ने इस लेख का जितना अंश सीढ़ियों के बनाने के लिए आवश्यक था लेलिया और सीढ़ी बनादी गई। डॉ. ओझा ने इसको वहाँ से निकलवा कर उदयपुर संग्रहालय में सुरक्षित किया। इस लेख में शुचिवर्मा को शक्तिकुमार का पुत्र कहा है। इससे सिद्ध है कि वह अम्बाप्रसाद का छोटा भाई था। आहड़ के एक दूसरे लेख से शक्तिकुमार का उत्तराधिकारी अम्बा-प्रसाद होना सिद्ध है। प्रशस्तिकार ने शुचिवर्मा की बड़ी प्रशंसा करते हुए लिखा है

---

४६ ओझा, उदयपुर, भा. १, पृ. १३४।

४७ भावनगर प्राचीन-शोधसंग्रह, पृ. २२-२४; वीरविनोद, भा. १, पृ. ३८१; ओझा, उदयपुर, भा. १, पृ. १३८।

कि वह समुद्र के समान मर्यादा पालन करने वाला, कर्ण के सदृश दानी और शिव के समान शत्रुओ का सहार करने वाला था। इस प्रशसात्मक वर्णन से शुचिवर्मा द्वारा मेवाड मे फिर से अपनी शक्ति सस्थापित करना प्रमाणित होता है। जयानक के वर्णन से हम जानते हैं कि वाक्पतिराज द्वितीय ने अम्बाप्रसाद की हत्या करदी थी। सभवतः इसके मरने के बाद शुचिवर्मा को शत्रुओ को नाश करने के द्वारा पुनः अपनी शक्ति स्थापना करने मे सफलता मिली हो। उसने मर्यादा पालन तथा उदार नीति से भी लोकप्रियता प्राप्त की हो, जैसाकि प्रशस्तिकार उसके सम्बन्ध मे लिखता है।

इस लेख मे आगे चलकर मन्दिर बनाने वाले या अन्य वश का वर्णन है जिसमे सिद्धराज का नाम हमे मिलता है जिसने अपने बधुवर्ग से उपयुक्त शेष धन को अर्पित किया या निर्माण कार्य मे लगाया। उसने अपन पिता के नाम से श्रीराहिलेश्वर का मन्दिर बनाया। इसमे हमे चालुक्य कुल की सोडुक की पुत्री का किसी की पत्नी होने का तथा उसके गुणो की प्रशसा का वर्णन मिलता है। उपलब्ध अतिम पंक्ति मे किसी को राजाओ के द्वारा सेवित भी कहा गया है। लेख सस्कृत पद्यो मे है।

इसकी कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं :

"प्रख्यात सोडुकोस्तिस्म चौलुक्यकुलसभव
तत्सुतासीत्प्रियायस्य महिमामहिमास्पदम्"
"ये नादावनुराजिणा प्रतिदिन संसेवितो मित्रवत्"
"राजकार्येषु सामार्थ्यं वीक्ष्यचाद्भुत"

नागदा का लेख[४८] (१०२६ ई.)

यह लेख वि. स १०८३ का एकलिंगजी के पास नागदा गाँव का है। प्रस्तुत लेख में किसी सूर्यवशी राजा द्वारा, जिसका नाम नष्ट हो गया है, विष्णु मन्दिर बनाने का वर्णन है। लेख का प्रारंभ 'ॐनमों पुरूषोत्तमाय' से किया गया है जिससे प्रमाणित होता है कि विष्णु मन्दिर सम्बन्धी लेख का प्रयोजन है। लेख मे कुल १६ पक्तियाँ हैं।

जैत्रसिह का लेख[४९] (१०२६ ई.)

यह लेख भी एकलिंगजी मे है जो बडा सूक्ष्म है। प्रस्तुत लेख का महत्त्व यह है कि इसके द्वारा जैत्रसिह के समय के प्रारम्भिक शासन-व्यवस्था के काल को निर्धारित करने मे हमे बडी सहायता मिलती है।

वसन्तगढ (सिरोही) की लाहण बावडी की प्रशस्ति.[५०] (१०४२ई०)

यह प्रशस्ति लाहण बावडी, जो वसन्तगढ (सिरोही) मे है, के निर्माण काल

---

४८ एक प्राचीन प्रतिलिपि के आधार पर।

४९. एक प्रतिलिपि के आधार पर।

५०. वीरविनोद, द्वि० भा० प्रकरण ११, शेषसग्रह, न० ८, १३१ पृ० ११९९-१२००।

की है । इसमें उत्पलराज, आरण्यराज, कृष्णराज महीपाल आदि राजाओं के शौर्य का वर्णन है । इसमें लाहिणी नामक रानी का वर्णन है जिसके पुण्यार्थ इस बावड़ी का निर्माण कराया गया था । प्रस्तुत प्रशस्ति में वटपुर नामक नगर के निर्माण का उल्लेख है जो तालाब घर, राजप्रासाद, प्राकार, दुर्ग आदि से युक्त था । इसमें ब्राह्मण तथा वैश्य अपने धर्माचरण करते थे और वह पुराणपाठी ब्राह्मण, गणिका तथा सैनिकों की बस्ती से सुशोभित था । प्रशस्ति का लेखक हरि का पुत्र मातृशर्मा था और उसे शिवपाल ने उत्कीर्ण किया था । प्रशस्ति श्लोकबद्ध है ।

इसका कुछ अंश यहाँ उद्धृत है:—

"तद्वदाख्ये नगरे वनेऽस्मिन् बहुप्रासादान् कृतवान् वसिष्ठः ।
प्राकार वप्रोपवनैस्तडागैः प्रासाद वेश्मैः सुधनैः सदुर्गैः" ।।
"अतिमन्त्रोक्ष्म शोम्यं पारगव क्रमाकुलं
वेदार्णवं द्विजासम्मग् यत्र तीर्णाप्यगर्विता:"

पाणाहेड़ा का लेख[५१] (१०५९ई०)

पाणाहेड़ा में जो बाँसवाड़े के अन्तर्गत है, वि० सं० १११६ का मंडलीश्वर के शिवालय की ताक में लगा हुआ एक लेख है जिसके कई टुकड़े हो गये हैं । इसका एक तिहाई अंश जाता रहा है । परन्तु जो भी बचा हुआ अंश है वह मालवा एवं वागड़ के परमारों के इतिहास के लिए बड़े महत्व का है । उक्त लेख में मालवा के परमारों की वंशावली तथा उनकी कुछ उपलब्धियों का वर्णन है । जिन राजाओं की इसमें वंशावली है उनमें मुंज, सिंधुराज, भोज आदि प्रमुख हैं । इन राजाओं के वर्णन के साथ इसमें वागड़ के परमारों की वंशावली धनिक से लेकर मंडलीक तक, दी गई है। इस मंदिर के बनवाने वाले मंडलीक के सम्बन्ध में प्रस्तुत लेख में लिखा है कि उसने बड़े बलवान सेनापति कान्ह को पकड़कर हाथी और घोड़ों सहित जयसिंह के सुपुर्द किया । इससे दो बातें स्पष्ट होती हैं— एक तो यह कि इस समय तक (वि० सं० १११६) जयसिंह विद्यमान था; दूसरा यह कि वागड़ का मंडलीक जयसिंह का आश्रित सामन्त था । कान्ह किस राजा का सेनापति था इस सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता, परन्तु यह तो स्पष्ट है कि वह परमारों का शत्रु था । इस लेख में पाणाहेड़ा का नाम पांशुलाखेटक दिया है । नगर, ग्राम आदि की इकाई की भाँति 'खेटक' भी एक इकाई थी जो गाँवों के साथ लगी रहती थी । एक बड़े गाँव के साथ कई खेटकों अर्थात् 'खेडों' की बस्ती रहती थी । यह लेख श्लोकबद्ध है जिसके ३८वें श्लोक की पंक्ति का अंश इस प्रकार है:—

'भक्त्या कार्यत मंदिरं स्मररिपोस्तत् पांशुलाखेटके'

---

५१. ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ०१७ ।

अर्थूणा (बाँसवाड़ा) के शिव मन्दिर की प्रशस्ति[५२] (१०७९ ई०)

यह शिलालेख सवत् ११३६ फाल्गुन शुक्ला ७ शुक्रवार का मंडलेश्वर अर्थूणा के विशाल शिवालय मे लगाया गया था। इस मन्दिर का निर्माण चामुण्डराज ने अपने पिता मंडलीक के निमित्त करवाया था। इस प्रशस्ति मे ८७ श्लोक हैं जिसमे बागड के परमारो का अच्छा वर्णन मिलता है। इससे स्पष्ट है कि बागड के परमार मालवे के परमारवशी राजा वाक्पतिराज के दूसरे पुत्र डवर्रसिंह के वशज थे और उनके अधिकार मे बागड तथा छप्पन का प्रदेश था। उसके पीछे बागड के शासक धनिक और कक्देव हुए। कंकदेव ने मालवे के परमार राजा श्रीहर्ष के कर्णाटक के राठोड राजा खोट्टिकदेव पर चढाई की। इस समय कंकदेव ने श्रीहर्ष की सहायता की और वह इस युद्ध मे काम आया। प्रस्तुत शिलालेख से कंकदेव के सम्बन्ध मे दो महत्त्वपूर्ण बातो पर प्रकाश पडता है। एक तो ककदेव सभवत श्रीहर्ष का सामान्त था और दूसरा उस समय प्रतिष्ठित व्यक्ति हाथी पर बैठ कर लडते थे। कंकदेव ने चंडप और उसके सत्यराज नामक पुत्र हुआ जिसकी आज्ञा को सामत समुदाय शिरोधार्य करता था। उसके योग्य मत्रियो के वर्णन से उस समय की शासन व्यवस्था पर अच्छा प्रकाश पडता है। युद्ध के लिए धनुर्विधा तथा खड्ग प्रयोग का ज्ञान राज-परिवार के लिए आवश्यक माना जाता था जैसाकि इस शिलालेख मे उल्लिखित है। यहाँ के स्थापित मन्दिर की व्यवस्था के वर्णन से उस समय की व्यापारिक स्थिति, तौल, नाप आदि पर अच्छा प्रकाश पडता है। उस समय की प्रमुख व्यापारिक वस्तुओ मे गुड, मजिष्ट, कपास, सूत, नारियल, सुपारी, बर्तन, तेल, जव आदि थे। इनके बेचने की व्यवस्था मंडियो मे होती थी और व्यापारियो का मण्डल रहता था जो क्रय-विक्रय की देख-रेख रखता था। इन वस्तुओ के प्रति बोझा या नाप के हिसाब से धार्मिक संस्थाओ को अनुदान दिया जाता था जिससे मन्दिर की सेवा-पूजा का प्रबन्ध किया जाता था। गुड, कपास, सून, जव, मजिष्ट, नारियल आदि की गणना 'भरक' से होती थी सुपारी का माप सहस्त्र की गणना से होता था। द्रव्य पदार्थ जिनमे तेल मुख्य था घाणो के नाप से आँकते थे। अन्न का नाप 'पाइली' से होता था। उस समय की प्रचलित मुद्राओं मे रुपक, द्रम, विशोपक मुख्य थे। इस प्रशस्ति की रचना विजय ने की थी और उसे असनराज कायस्थ ने लिखा था तथा गदाक नामक सूत्रधार ने खोदा था। प्रशस्ति मे रचियता के तथा लेखक के वशक्रम को देकर प्रशस्तिकार ने उस प्रान्त की विधोन्नति पर अच्छा प्रकाश डाला है।

अर्थूणा का लेख[५३] (१०८०ई०)

अर्थूणा गाँव के बाहर जो बाँसवाडा मे है, एक प्राचीन मडलीक नामक शिवालय है। इस मन्दिर को यहाँ के परमार राजा मंडलीक के पुत्र चामुंडराज ने अपने

५२. वीरविनोद भा० २, प्रकरण ११, शेप संग्रह ६, पृ० ११६१–६६।

५३. ओझा, बाँसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० ३४।

पिता की स्मृति में वि० सं० ११३६ फाल्गुन शुक्ला शुक्रवार को बनवाया था। इस मन्दिर के एक ताक में एक बड़ी प्रशस्ति लगी है, जो कविता और इस प्रान्त के परमार शासकों की उपलब्धियों की दृष्टि से बड़े महत्त्व की है। लेख की भाषा श्लोकबद्ध है। इसका कुछ अंश इस प्रकार है:—

"रुचिरमिद मुदारं कारितं धर्म्मधाम्ना
त्रिदशगृहमिह श्रीमंडलेशस्य तेन"

झालरापाटन का लेख,[५४] (१०८६ ई०)

यह लेख सर्वसुखिया कोठी, झालरापाटन में सुरक्षित है। इसका आकार ८"×६½" है। जिसमें १० पंक्तियों में संस्कृत गद्य है। इसका समय वि० ११४३ वैशाख शुक्ला १०वीं है। इसमें वर्णित है कि उदयादित्य के राज्यकाल में जनक नाम के एक तेली पटेल ने मन्दिर का और वापी का निर्माण करवाया। इसमें उदयादित्य का सम्बन्ध भोज परमार का बतलाया गया है जो बड़े महत्त्व का है। पं० हरसुख ने प्रशस्ति को उत्कीर्ण किया। इसमें वर्णित है कि जनक पटेल ने चार पल दीपक के लिए तेल और एक मोदक प्रति वर्ष देने का संकल्प किया। इसकी पंक्तियाँ इस प्रकार हैं:—

१. अएं नमः शिवाय ।। संवत् ११४३ वैशाख श्रु (सु) दि. १० अ
२. घेह श्रीमदुदयादित्यदेव कल्याण विजयराज्ये। तै
३. लिकान्वए (ये) पट्टकिल [पट्टिकिल] चाहिल सुतपट्टकिलजन्न [के]
४. न शेभोः प्रासाद मिदं कारितं। तथा चिरिहिल्लतलेचा
५. डाघोषकूपिकावु वासकयोः अन्तराले वापी च।
६. उत्कीर्णेयं पडित हर्षुकेनेति ।। जानासत्कभा
७. ता वाइणि: प्रणमति ।। श्री लोजिगस्वामिदेवस्सकेरिं
८. तैलकान्वयपट्टकिल चाहिलसुलपट्टकिल जनकेन ।।
श्री सेंधवदेव पर
९. वनिमित्यं दीपतैल्य चतुप (प्प) लमेकं मुदकं कीत्या तथा वरिषं प्रतिस (ं)
विज्ञा
१०. ७ तं ।।छ।। मंगलं महा श्री ।।६

दूबकुण्ड का लेख[५५] (१०८८ ई.)

यह लेख १८६६ ई. केप्टिन मेलविले द्वारा जाना गया जो दूबकुण्ड में है। यह स्थान घने जंगल में ग्वालियर से दक्षिण-पश्चिम में ७६ मील की दूरी पर है।

---

५४. जर्नल रॉयल एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल, कलकत्ता, न्यू सीरीज, भा० १०. नं० ६, १९१४ ई० पृ० २४१–२४३; रेऊ: ग्लोरीज ऑफ मारवाड़, पृ० २२३–२२५।

५५. एपिग्राफिआ इण्डिका, भा-१८, पृ-२३२–२३९।

प्रस्तुत लेख मे ६१ पक्तियाँ हैं और प्रथम पक्ति के कुछ भाग एव ५६ से ६१ पक्तियो को छोड इसमे श्लोक हैं। इसकी भाषा सस्कृत है। इसमे चन्दोमा नगर (दूबकुण्ड) का वर्णन है। यह लेख कच्छपघाट विक्रमसिंह के समय का है। इसमे वि स ११४५ दिया गया है। यह लेख एक जैन मन्दिर की स्थापना के उपलक्ष्य मे जैन मुनि विजयकीर्ति द्वारा लिखा गया है। उदयराज ने उसे लिखा, शिल्पी तिलहन ने उसे उत्कीर्ण किया। इस मन्दिर के लिए विशोपक कर प्रत्येक गोणी अनाज पर विक्रमसिंह द्वारा लगाया गया था। इसमे दिये गये पाँच राजा, युवराजदेव, अर्जुनदेव, अभिमन्यु, विजयपाल और विक्रमसिंह हैं।

उक्त लेख के प्रारभिक भाग मे स्तुति भाग है और पक्ति १०–३२ तक विक्रमसिंह और उसके पूर्वजो की उपलब्धियो का वर्णन है। ३२ से ५१वी पक्ति मे मन्दिर की स्थापना और उससे सम्बन्धित मुनियो का वर्णन है। अन्तिम पक्तियो मे प्रशस्तिकार, लेखक, समय आदि का परिचय है। इस लेख का ऐतिहासिक महत्त्व है क्योकि उसी युग मे डबकुण्ड की कच्छपघट शाखा के शासको के साथ इसी वश के अन्य शासक भी आस पास के क्षेत्रो मे राज्य करते थे और उनका सम्बन्ध कन्नौज के शासको के साथ था। सबसे बडा महत्त्व इस लेख का यह है कि हमे देखना है कि क्या इनका आमेर के कछवाओ के साथ कोई सम्बन्ध था? इसकी प्रारभ की एव अन्तिम पक्तियाँ इस प्रकार हैं—

पक्ति १ 'ॐ नमो वीतरागाय। आ—र्द्री–ट–टना (द्यत्पा)
दयोटलुठ न्यदारस्यगमदगुन्ज विभनिष्ठुरसाराविणम्'

पक्ति ६१ 'शिलाकूट रत्तीलूहणस्तासदक्षणाम् ।। सवत् ११४५ भाद्रपद सुदि ३ सोमदिन ।। मगल महाश्री "

सादडी व नाडोल के अभिलेख [४६] (१०६० ई)

सादडी का लेख जागेश्वर के मन्दिर के एक स्तभ पर उत्कीर्ण है जिसमे ११ पक्तियाँ है जो ८$\frac{3}{8}$"×६$\frac{3}{8}$" के पत्थर के भाग पर सस्कृत गद्य मे उत्कीर्ण हैं। ये लेख अपनी अच्छी अवस्था मे है जिसको समुचित रूप से पढा जा सकता है। लेख मे नागरी लिपि का प्रयोग हुआ है।

दूसरा नाडोल का लेख सोमेश्वर के मन्दिर के एक स्तभ पर ८$\frac{1}{2}$"×६$\frac{1}{2}$" स्थान को घेर कर उत्कीर्ण किया गया है। इसमे १३ पक्तियाँ नागरी लिपि मे हैं और भाषा सस्कृत। इसकी अवस्था भी अच्छी है जिससे पढने मे कोई असुविधा नही होती।

दोनो लेखो का समय वैशाख शुक्ला २, बुधवार, वि स. ११४७ (१०६० ई) है और महाराज श्री जोजलदेव के समय का है।

दोनो लेखो मे प्राय एक ही विषय तथा अभिप्राय है जो आज्ञा के रूप मे

---

४६ ए इ जि. ६, पृ. ६२ व १५८।

महाराज जोजलदेव ने लक्ष्मणस्वामि आदि देवताओं के यात्रा उत्सव के सम्बन्ध में प्रसारित की थी। ये यात्रा विभिन्न देवताओं के उत्सव के उपलक्ष्य में हुआ करती थीं और इनमें राजकीय सहयोग होता था। इस आज्ञा में यह भी उल्लिखित है कि सभी यात्राओं के उत्सवों में राज्यकर्मचारियों को सुन्दर वस्त्रों व आभूषणों से सुसज्जित होकर सम्मिलित होना होगा, बिना इस विचार के कि वे किसी अन्य देवताओं को मानते हों और अमुक अवसर की यात्रा के देवतायों का उनकी निष्ठा से कोई सम्बन्ध न हो। यह आज्ञा का भाग बड़े महत्त्व का है, क्योंकि इस आज्ञा से जोजलदेव की सहिष्णुतापूर्ण नीति का बोध होता है। जब यात्राओं के उत्सव होते थे तो साथ में नृत्यकारों, संगीतकारों, शृंगारियों को भी उपस्थित होने के आदेश थे। इस लेख के द्वारा महाराजा ने अपने वंशजों को भी इस परम्परा का परिपालन करने का आदेश दिया था। आगे चलकर अभिलेखकार ने इस परम्परा का साधु, वृद्ध, विद्वान् आदि से भी समर्थित करने के लिए वर्णन किया है और लिखा है कि इसका जो भी उल्लंघन करे उनको उस समय का शासक रोके। परम्परा को भंग करने वाले के लिए प्रायश्चित्त के रुपये का उल्लेख किया गया है।

वास्तव में इस समय की धर्मसहिष्णु नीति, उत्सवों में गायन, नृत्य की परिपाटी तथा धार्मिक कार्यों में सभी के सहयोग तथा अनुशासन सम्बन्धी निर्देश पर प्रकाश डालने वाले ये लेख बड़े महत्त्व के हैं।

इन लेखों की कुछ पंक्तियाँ यहाँ उद्धृत की जाती हैं—

पंक्ति १–३— ॐ संवत् ११४७ वैशाख सुदि २ बुधवासरे महाराज श्री जोजलदेवेन श्री लक्ष्मणस्वामि प्रभृति समस्त देवानां यात्राकाल व्यवहारे वेश्याः"

पंक्ति १२–१३— 'यस्य राजाज्ञेन अनेन सर्वदेवेषु यात्रेव कारापयिष्यति तस्य गर्दभो- उपरे'

सेवाड़ी का अभिलेख[१७] (१०६० ई०)

प्रस्तुत लेख सेवाड़ी गाँव के महावीरजी के मन्दिर का है। लेख में केवल तीन पंक्तियाँ हैं जिन्हें ३'.६" × २'.३" के पत्थर को घेर कर उत्कीर्ण किया गया है। लेख की भाषा संस्कृत और लिपि नागरी प्रयुक्त की गई है। इसमें लेख गद्य में है :

लेख की तिथि चैत्र शुक्ला १, संवत् ११६७ है। इसमें अश्वराज चौहान को महाराजाधिराज तथा कटुकराज को युवराज सम्बोधित किया गया है। मन्दिर के अनुदान के सम्बन्ध में पद्राडा, मेद्रचा, छेछड़िया तथा मद्दड़ी ग्रामों से प्रत्येक रहट से एक हारक (एक डलिया का नाप) जव प्रदान किये जाने का उल्लेख है। इस विधि को तोड़ना गौ, स्त्री और ब्राह्मण की हिंसा के तुल्य पाप बतलाया गया है। इस दान

१७. नाहर, जैन लेख, भा. १, पृ. २२३।

की वैधानिक व्यवस्था महासाणिय उधलराक के द्वारा की जाना प्रतीत होता है।

इस अभिलेख मे दिये गये महासाणिय' शब्द बडे महत्त्व का है। वैसे तो साहणिय अस्तबल का अधिकारी माना जाता है, परन्तु उसका काम राजकीय आज्ञाओ और अनुदानो को वैधानिक व्यवस्था देना भी था जैसा इस लेख से स्पष्ट है। ये पदाधिकारी वर्तमान समय तक भी राजस्थान के कई राज्यो मे अनुदानो के सम्बन्धी लेखा रखने और उसको वैधानिक मान्यता देने के काम को करते रहे हैं। इसमे उपयुक्त 'हारक' शब्द भी डलिया के लिए प्रयुक्त हुआ है। आज भी बांस के बने डलिया को दक्षिण-पश्चिमी राजस्थान मे हूणल्लो' कहते हैं। इसी तरह दान के साथ युवराज का नाम जोडा जाना बडे महत्त्व का है, क्योंकि उस युग की शासन प्रणाली मे युवराज का भी एक स्वतन्त्र अस्तित्व माना जाता था।

इसका मूलपाठ इस प्रकार है—

"सं ११६७ चे सु ६ महाराजाधिराज श्री अश्वराज राज्ये श्री कटुक राज युवराज्ये समीपाठीय चैत्ये श्री धर्म्मनाथ देवस्य नित्य पूज्यार्थं महासाहणिय पुअवि-पौत्रेण उत्तिम राजपुत्रेण उप्पल राईन मा गढ आवल। वि. सलखण जोगादि कुटुंब सम। प्रद्राडा ग्रामो तथा मेद्रचा ग्रामे तथा छेछडिया मद्दवडी ग्रामे।। अरहट अरहट प्रतिदत्त जवहारक"

चित्तौड का लेख[५८] (१२वी सदी)

यह चित्तौड से प्राप्त एक खण्डित लेख है जिसमे खुमाण वंश के राजा जैत्रसिंह के नाम का उल्लेख है तथा चित्तौड के प्राग्वाट यशोनाग के वश का वर्णन है। इसमे चाहमान, परमार तथा गुर्जरो द्वारा पूजित आचार्य शुभचन्द्र का भी इसमे वर्णन दिया गया है। इस लेख की रचना सस्कृत मे शुभकीर्ति ने जैन मन्दिर के निर्माण के समय की। इसको सोढाक ने नागरीलिपि मे उत्कीर्ण किया।

अर्थूणा (बांसवाडा) के जैन मन्दिर की प्रशस्ति[५९] (११०९ ई०)

प्रस्तुत प्रशस्ति मे ३० तथा आगे के ८ श्लोक तथा कुछ खण्डित पंक्तियाँ है। इसमे वागड के परमार शासको का वर्णन है जिनमे मंडलीक और चामुण्डराज का वर्णन है तथा उसके पुत्र विजयराज का वर्णन है। इसमे विजयराज का संधि विग्रहिक वालम जाति के वामन कायस्थ का वर्णन मिलता है। इसमे दिए गए तलपाटक नगर का वर्णन है जो १२वी शताब्दी की नगर योजना पर प्रकाश डालता है। इस प्रशस्ति से नागर जाति मे विद्या प्रचार का बोध होता है और प्रमाणित होता है कि उस समय गाँवों के शासन मे ग्रामणी प्रमुख होता था और उसका समाज मे

---

५८. रि. इ ए. १९६२-६३, क्र ८३६,
जैन शिलालेख सग्रह, क्र ११३, पृ ५२।

५९. वीरविनोद, द्वि भा, प्रकरण ११, शेष सग्रह स. ७, पृ. ११९७-९८।
ओझा, बांसवाडा, पृ ३५।

११७४ ग्रापाढ शुक्ला पंचमी सोमवार का समय ग्रंकित है। इसका महत्त्व इस दृष्टि से अधिक है कि इस लेख से हमे जालोर शाखा के परमारो की सूचना मिलती है। इसमे वाक्पतिराजा का उल्लेख है जो इस शाखा का प्रवर्तक था और उसका ग्राबू के परमार धरणीवराह से सम्बन्ध था। इसमे परमारो की उत्पत्ति वशिष्ठ के यज्ञ से होना ग्रंकित है। इसमे वाक्पति के वशक्रम मे चदन, देवराज, ग्रपराजित, विज्जल, धारावर्ष और वीसल के नाम दिये गये हैं। वीसल की रानी मेलरदेवी के सम्बन्ध मे ग्रंकित है कि उसने सिन्धु राजेश्वर के मन्दिर के लिए सुवर्ण कलश ग्रर्पित किया। इसमे वीसल को ग्रपने मडलीको को धर्म दर्शक बताया गया है।

इसकी कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

प० ६ "पुत्रोभूदपराजितस्य विजयी श्री विज्जलो भूपति."

पं० ६–१२ "धारावर्षस्य पुत्रोयं जातो वीसल भूपतिः
येन भूमडलीकानां धर्मभार्ग्गोत्र दर्शितः"
राज्ञी मेलरेदेव्या (वी) तु पत्नी वीसल भूपते"
सौवर्ण कलस मूर्द्ध नि सिंधुराजेश्वरेत्र (कृ) त।
[स]वत् ११७४ ग्रापाढ़ सुदि ५ भौमो"

नाडलाई के महावीर के मन्दिर का लेख[62], (११३० ई.)

इस लेख मे महावीर के लिए मोरकरा गाँव से धाणक तेल से चौहान पत्तरा के पुत्र विसरा ने कलश के नाप का तेल ग्रनुदान मे दिया। इसकी साक्षी प्रमुख व्यक्तियो ने दी। उक्त लेख से 'धाणक' 'कलस' ग्रादि से नाप का बोध होता है एवं उस समय की स्थानीय सस्थाग्रो का ऐसे कार्यों मे सहयोग होना प्रमाणित होता है। इसमे कई स्थानीय शब्दो को सकृत रूप मे वदला गया है जो उस समय की भाषा पर प्रकाश डालते हैं।

इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

"सवत् ११८७ फाल्गुन सुदि १४ गुरुवार श्रीपडेर काम्वय दे श्री चैत्य देव श्री महावीर दत्तः। मोरकरा ग्रामे धाणक तैल वल मध्यात् चतुर्थ भाग चाहुवाण पत्तरा सुत विसराकेना कलसो दत्त। ए० वात्स्ल्यसमेत। साक्षिय भण्डो नाग सिज। उतिवरा वोढ्रा पोसरि। लष्मणु।"

नाडलाई का लेख[63](११३२ई०)

यह लेख नाडलाई के ग्रादिनाथ के मन्दिर के सभामण्डप के स्तम्भो पर खुदा हुग्रा है। इसकी ६ पक्तियाँ १'.५½ × ४½" पाषाण के भाग पर उत्कीर्ण है। लेख मे सस्कृत भाषा तथा नागरीलिपि प्रयुक्त की गई है। लेख माघ शुक्ला ५ सवत् ११८६ का चहमान वंशीय महाराजाधिराज रायपाल देव के समय का है। ग्रागे की पक्तियो

६२. नाहर जैन लेख, भा० १, संख्या ८४२, पृ० २१२।

६३. नाहर, जैन लेख, भा० १, संख्या ८४३, पृ० २१३।

में रायपाल देव के दो पुत्रों रुद्रपाल व अमृतपाल तथा उसकी महारानी मानलदेवी का नामोल्लेखन है। इसमें राजकुमारों द्वारा दिये गये दान का विवरण है जिसमें प्रति घाणी से नाडलाई के बाहर के जैन सन्तों को दो पलिका तेल दिये जाने की व्यवस्था है। इसके साक्षी में ग्राम प्रमुख नागशिव, रा० त्तिमटा, वि० सिरिया तथा वणिक पोसरी व लक्ष्मण के नाम गिनाये गये है। अन्त में दान की अवहेलना करने वाले के लिए हजार गाय तथा सो ब्रह्महत्या का पाप बतलाया गया है।

लेख छोटा होते हुए भी उस समय तेल के नाप का 'पलिका' के प्रचलन पर तथा व्यवसाय पर लगाये जाने कर पर प्रकाश डालता है। इस लेख में ग्राम प्रमुख तथा उसके सहयोगी विविध जाति तथा व्यवसायों के उल्लिखित कर ग्राम समिति के गठन का संकेत कर दिया गया है और बतलाया गया है कि गाँव से सम्बन्धित साधारण से साधारण व्यवस्था के लिए ग्राम समिति की अनुमति कितनी महत्त्वपूर्ण थी। ब्रह्महत्या तथा गोहत्या का पाप कितना भंयकर माना जाता था जिसको लेकर समाज में एक नैतिक आचरण की व्यवस्था बनाई जाती थी, यह भी इस लेख से निर्धारित होता है।

इस लेख की कुछ पंक्तियाँ उद्धत की जाती हैं:—

"संवत् ११८९ माघ सुदि पंचम्या श्री चाहमानान्वय श्री महाराजधिराज रायपालदेव तस्य पुत्रो रुद्रपाल अमृतपालौ। ताम्या माताश्री राज्ञी मानल देवी तथा नडुल डागिकायां। सतां पराजतीनां राजकुल पल मध्यात् पलिका द्वयं। घाणकं प्रति धर्माय प्रदत्त भं नागसिव प्रमुख समरत ग्रामणिक। रा० तिवरा वि० सिरिया वणिक पोसरि। लक्ष्मण एते सारियं कृत्वादत्तं"।

इंगनीड़ा का शिलालेख[६४] (११३३ई०)

यह शिलालेख वि० सं० ११९० (११३३ ई०) का प्रतिहार कालीन है जो संस्कृत पद्यों में १५ पंक्तियों में उत्कीर्ण है। इसमें पृथ्वीपाल, तिहुणपाल तथा विजयपाल का उल्लेख किया गया है। इनके महाराजाधिराज, परमेश्वर तथा परमभट्टारक के विरुद्ध इस बात के प्रमाण हैं कि प्रतिहारों की शक्ति कन्नौज से क्षीण होने पर भी इन्हें इन उपाधियों से विभूपित किया जाता था। इससे स्पष्ट है कि इस वंश का प्रभाव १२ वीं शताब्दी तक राजस्थान और मध्य भारतीय भागों में किसी न किसी रूप से बना रहा। इसमे आपाढ़ शुक्ला एकादशी के अवसर पर श्री गोहडेश्वर महादेव के मन्दिर के लिए आगासिया गाँव को भेंट करने का उल्लेख है। इसमें गाँव से वसूल किये जाने वाले कर जो हिरण्य, भाग और भोग के रूप में लिए जाते थे उनके समेत देने का वर्णन है। इसमें राज्य के द्वारा दिये जाने वाले अनुदानों के सम्बन्ध में गाँव के 'समस्त महाजन के समक्ष सूचना दिये जाने की प्रथा की ओर भी संकेत किया है। इस संस्था मे स्थानीय सभी जातियों के शिष्टमण्डल के प्रमुख सम्मिलित होते थे।

---

६४. इ० एन्टी०, भा० ६, पृ० ५५–५६।

इस लेख से यह भी प्रतीत होता है कि उन दिनो सभी जातियो की बस्तियाँ अपने-अपने मुहल्लो मे रहती थीं—जैसे ब्राह्मणो के रहने के भाग को ब्रह्मपुरी कहा जाता था। इस अनुदान की मान्यता के लिए जनपद और भावी भूपालो से भी सम्मान किय जाने की अपेक्षा की गई है। इसका लेखक कायस्थ कल्हण था और उत्कीर्णक सूत्रधार साजण था। इस लेख म कायस्थ तथा सूत्रधार परिवारो के अन्य व्यक्तियो के नाम भी दिये हैं जिससे इन कार्यों का उन्ही परिवारो मे वश परम्परा से होते रहने का बोध होता है। यह लेख बारहवी शताब्दी की राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था पर अच्छा प्रकाश डालता है। इस शिलालेख मे नगर-योजना, उसम रहने वाले शिष्ट समुदाय तथा उसका राज्य से सम्बन्ध तथा अनुदान देने के सम्बन्ध मे आचरित सभी परम्पराओ का अच्छा ब्यौरा मिलता है। इस लेख मे भू-स्वामित्व का अधिकार शासको म निहित प्रतिपादित किया गया है। लेख मे यत्र-तत्र भाषा की अशुद्धियाँ हैं।

इस लेख के प्रथम व अतिम पद्याशो को नीचे दिया जाता है,—

पक्ति १. "ॐ नम. सिवाय' सवत्सर शतेष्व का दशसु नवत्यधिकेषु आषाड सुक्ल पक्षैकादश्या सवत् ११९० आषाड सुदि ११ अद्येह इगणपदे

पक्ति १५ कुरा आन्यप सूत्रधार महावलस्य सूनुना हरसेण सुत साजणेन लेखित ।।

नाडलाई का लेख[६५] (११३८ ई०)

यह लेख नाडलाई के नेमिनाथ जी के मन्दिर के एक स्तम्भ पर ९$\frac{1}{2}$"×१'×११$\frac{3}{4}$" पाषाण के दायरे मे उत्कीर्ण है। लेख मे २६ सस्कृत की गद्य पक्तियाँ है और उसका समय आश्विन कृष्णा १५, मगलवार सवत् ११९५ है। यह लेख रायपाल चौहान के काल का है। इस लेख म गुहिल वशीय उद्धरण के पुत्र ठक्कुर राजदेव द्वारा नेमिनाथ की पूजा के निमित्त नाडलाई म आने-जाने वाले लदे हुए वृषभो पर लिए जाने वाले कर का दशमांश प्रदान किया गया है। इस लेख पर सही राजदेव न की और उस पर ज्योतिषी दूदा के पुत्र गूगि, पाला, पृथा, माँगु, देपसा, रापसा आदि व्यक्तियो न साक्षी की।

यह लेख बडे महत्त्व का है, क्योंकि इसम चौहानो के अधीन गुहिल वशीय व्यक्ति का सामन्त होना तथा उसका शासन म योग दना उल्लिखित है। इसके अतिरिक्त एक अधिकारी की हैसियत से राजदेव ठक्कुर ने कर का दशमाश पूजा निमित्त अर्पित किया। परम्परा के अनुसार इस पर स्थानीय समिति के सदस्यो ने, जो विविध जाति के थ, इस आज्ञा को अपनी साक्षी द्वारा वैध बनाया। नाडलाई उस युग मे व्यापार का केन्द्र था जैसाकि आने-जाने वाले वृषभों पर कर से सिद्ध है। सामान को लाने व लेजाने के लिए उस युग मे बैलो को काम म लिया जाता

---

६५ नाहर-जैन लेख, भा १, पृ २१७।

था। इस लेख की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार है :

पंक्ति ६-१४—"श्री नेमिनाथ देवस्य दीपधूपनैवे (द्य) पुष्प पूजार्थे गुहिलान्वयः राज. उद्धरणसूनुना भोक्तारि ठ. राजदेवेन स्वपुण्यार्थे स्वीयादान-मध्यात् मार्गे गच्छतनामागतानां वृषभानां शेके (पु) यदा भाव्यं भवति तन्मध्यात् वि (श) तिभो भार्गेः चंद्रार्क यावत् देवस्य प्रदत्तः"

नाडोल लेख [६६] (११४१ ई.)

प्रस्तुत लेख नाडोल के सोमेश्वर के मन्दिर का है जिसमें ३६ पंक्तियाँ है, जो ६"×२' ३" के पाषाण खण्ड के भाग पर उत्कीर्ण हैं। इसमें भाषा गद्यमय संस्कृत तथा लिपि नागरी प्रयुक्त हुई है। इसका समय श्रावण वदी ८ रविवार, संवत् ११६८ अंकित है। इसमें महाराजाधिराज श्री रायपालदेव का नामोल्लेखन है।

ये लेख स्थानीय शासन-व्यवस्था के इतिहास के अध्ययन के लिए बड़े महत्त्व का है। इसके द्वारा बड़े नगरों तथा गांवों के विभाजन का पता चलता है और यह भी स्पष्ट होता है कि गांव के प्रत्येक भाग से प्रतिनिधियों की एक समिति होती थी और उसके द्वारा गांव के अनुशासित जीवन की व्यवस्था होती थी। इस प्रकार की समिति का प्रमुख भी होता था। इस समिति का जो निर्णय होता था उसकी स्वीकृति नगर या गांव के निवासियों द्वारा की जाती थी। एक अर्थ में १२वीं शताब्दी में ग्रामीण व्यवस्था मे पूर्ण लोकतन्त्र स्थापित था।

इस प्रकार की व्यवस्था का उल्लेख हम धालोप गांव के सम्बन्ध में पाते हैं, जहाँ गांव को ८ ब्राह्मणों के वाडों में बांटा गया था और प्रत्येक वाडे से २ ब्राह्मण प्रतिनिधि होते थे। उदाहरणार्थ भेरीवाड़ के वाडे से विरिगु और प्रभाकर, डीपावाडा से आसदेज तथा महड्ड, दुंअणावास से देउ और धहडि आदि। इन्होंने देवाइच को, जो पीपलवाडा का प्रतिनिधि था, अपना मध्यक बनाया और धोलक ग्राम की ओर से सभी के हस्ताक्षर वाला एक पत्र प्रस्तुत किया। इस पत्रक में यह निर्णय दर्ज किया गया था कि यदि भाट, भट्टपुत्र, दौवारिक, कार्पटिक वणिज्यारक (बनजारा) आदि का माल असबाव कोई लूटले तो चोरी का पता लगाने का उत्तरदायित्व गाँव के पंचों का होगा। इसमें उन्हें धन, शस्त्र और चौकीदारी की सहायता राज्य देगा। इसमें यह भी उल्लेख है कि यदि कोई ब्राह्मण मुखिया चोरी का पता लगाने में सहयोग देना अस्वीकार करेगा तो वह बुरी मौत मरेगा।

इस सामूहिक निर्णय पर वहां के अनेक मन्दिरों के भट्टारकों तथा समस्त महाजनों के प्रतिनिधियों ने तथा अन्य नगरों के प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने साक्षी दी और कायस्थ ठकुर पेथड ने इस लेख को गांव-निवासियो की इच्छा से लिखा।

इस लेख से चोरी, डकैती का पता लगाने का उत्तरदायित्व ग्राम प्रमुखों का होना सिद्ध है। राज्य भी इस सम्बन्ध मे उदासीन नही था जैसाकि इसमें शस्त्र,

---

६६–एक प्राचीन प्रतिलिपि के आधार पर

धन और चौकीदारी का भार रायपाल पर होना अंकित है। इसमे भाट, भट्टपुत्र, बनजारे आदि का उल्लेख है वह भी बडे महत्त्व का है। भाट उस युग मे सामान को एक स्थान से दूसरे स्थान पर अपने घोडो मे लादकर ले जाया करते थे तथा घोडो का भी व्यापार करते थे। बनजारे अपने बैलो पर एक स्थान से दूसरे स्थान वस्तुओ का आदान प्रदान करते थे। इन जातियो के व्यापार म सहयोग देने के लिए चोरी आदि होने की सभावना रोकने का गाँव समिति द्वारा इस प्रकार प्रबन्ध करना उस युग की विशेषता थी। सम्पूर्ण गाँव तथा निकटवर्ती गाँव या नगर के प्रतिनिधि ऐसे निर्णय को मान्यता देते थे और उस कार्य मे अपना हाथ बँटाते थे। यह एक विशेषता की बात थी। लेख मे वाड, वाडो, पाडि, पेटी चौकडो आदि बोलचाल के शब्दो का सस्कृत रूप मे इस लेख मे प्रस्तुत कर लेखक ने स्थानीय भाषा की लोकप्रियता भी प्रमाणित की है।

मूलपाठ से यहाँ हम कुछ पक्तियो के भाग उद्धृत करते हैं—

पक्ति ६-१४ " समस्तलोको मध्यकदेवाइचसहित स्वहस्ताक्षरपत्र
प्रयच्छति यथा" मार्गे गच्छमान भाट पुत्र
दौवारिक कायटिक वणिज्जारकादि समस्त लोकस्य
च सत्कगतमपहृत च देशाचारेण चौकडिका
प्रराद्देणास्मभि निमिनीय "

पक्ति ३५-३७ " देवधरादिसमस्तमहाजन तथा कटकवालश्रे
जसधवलादि समस्त महाजन (स्वश्रय)
श्रीधालोपीयलोकस्य समतेन लिखित "

चरलू का लेख[६७] (११४३ ई)

छापर से १४ मील की दूरी पर चरलू नामक ऐतिहासिक स्थान है। यहाँ मोहिलो का स्मारक देवलियाँ हैं जिनमे वि स १२०० के लेख से विष्णुदत्त देवसरा, आहड और अम्बराक के नाम ज्ञात होत है। देवली के लेख से पता चलता है कि आहड और अम्बराक नागपुर (नागोर) की लडाई मे मारे गये थे। इस लेख तथा अन्य देवलियो के लेख स सिद्ध होता है कि वि स की १३वी शताब्दी के पूर्व इस प्रदेश पर मोहिलो का अधिकार था और चरलू उनकी पहली राजधानी थी।

बाली का लेख[६८] (११४३ ई०)

प्रस्तुत लेख बाली के बोलामाता के मन्दिर के सभा मण्डप के एक स्तम्भ पर ७' × २'.२½" आकार के पाषाण खण्ड के भाग पर उत्कीर्ण है। यह ६ पक्तियो वाला लेख नागरी लिपि म है और इसम सस्कृत भाषा प्रयुक्त की गई है। केवल एक पद्य को छोड़कर इसमे गद्य का प्रयोग किया गया है। यह लेख महाराजा

---

६७ ओझा बीकानेर राज्य का इतिहास, भा १, पृ ६१।

६८ एक प्रतिलिपि के आधार पर।

धिराज जयसिंह देव के काल का है और उसमें संवत् १२०० दिया गया है। इसका लेखक कुलचन्द्र था।

इसमें अश्वक का उल्लेख है जो जयसिंह का सामन्त था। लेख में देवी की पूजा निमित्त ४ द्रम दिए जाने का उल्लेख है तथा और भी व्यक्तियों से और रहटों से द्रमों को दिलाए जाने का वर्णन है। इसमें घोड़े के विक्रय पर १ द्रम तथा थामिल ग्राम में रहने वाले संघपति चोहड के पुत्र गलपल्या से २ द्रम तथा कई अरहटों से एक-एक द्रम दिलाये जाने की व्यवस्था है। इसमें मण्डी में एक धरण पर एक द्रम देने का उल्लेख है। इससे उस समय लिए जाने वाले कर पर प्रकाश पड़ता है।

प्रस्तुत लेख की कुछ पंक्तियों के भाग इस प्रकार हैं—

पंक्ति १–४—"श्री जयसिंहदेव कल्याण विजयराज्येपादपद्मोपजीवि महाराजा श्री आश्वके"

"तथा घोड़ा विक्रए द्रां १ तथा थामिल ग्रामवासाव्य संघपति चोहडि पुत्र गलपल्यादिवाइ प्रति प्रदत्तं द्रां २ पू. मोहण सुत वाल्हण गारवाटं प्रति द्रां १ सीतकभरिया वोहडामहिमा प्रभृति अरहट प्रति प्रदत्तं द्रां १"

नाडलाई लेख[६६] (११४३ ई)

प्रस्तुत लेख नाडलाई के आदिनाथ मन्दिर का है जिसमें ६ पंक्तियाँ हैं जो १'×६"×४½" पाषाण भाग पर नागरी लिपि में उत्कीर्ण हैं। इसमें भाषा संस्कृत प्रयुक्त की गई है जो गद्य में है। इसका समय जेष्ठ शुक्ला ५ गुरो, संवत् १२०० है।

लेख उस समय का है जबकि महाराजाधिराज श्रीरायपाल यहाँ रथयात्रा के उत्सव में आये। राउल राजदेव ने उस समय अपनी माता के तथा धर्म निमित्त १ विंशोपक व दो पल्लिका तेल प्रदान किया तथा इस शासन की परम्परा को तोड़ने वाले के लिए स्त्री हत्या और भ्रूण हत्या के पाप का भागी बनाया। इस दान की घोषणा महाजन गाँव वाले लोगों और जनपद के समक्ष की गई।

इस लेख से दान देने की वैधता महाजन, ग्रामीण जनता और जनपद की समक्षता में निहित है जो महत्त्वपूर्ण है। लेख में प्रचलित मुद्रा (विंसोपक) तथा पाइला, पर्ल, और पल्लिका के नाम का उल्लेख है। ये नाप पश्चिम-दक्षिणी राजस्थान में वर्तमान काल तक प्रचलित थे। इस लेख से रायपाल की धर्मसहिष्णु नीति पर तथा कर-व्यवस्था पर प्रकाश पड़ता है। इसकी कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

पंक्तियाँ १–४ श्री महाराजाधिराज श्रीरायपाल देव राज्ये...... हास........ समए रथयात्रायां आगतेन रा. राजदेवेन आत्म पाइला मध्यात् विंसोपको दत्तः ।। आत्मीयधाणक तेल प (ल) मध्यात् माता

---

६६. नाहर, जैन लेख संग्रह, भा. १, सं. ८४४, पृ. २१३।

निमित्त पलिकाद्वय प्ली २ दत्त (त्त)। महाजन। ग्रामीण। जनपदसमक्षाय। धर्माय निमित्त विसोपको १ पलिकाद्वय दत्त'

नाडलाई का लेख ७० (११४५ ई)

प्रस्तुत लेख नाडलाई के आदिनाथ के मन्दिर मे था जो महाराजाधिराज रायपाल देव के काल का सवत् १२०२ आश्विन कृष्णा ५ शुक्र का है। इसमे १'८¾"×४½' पाषाण के भाग मे नागरीलिपि मे ५ पक्तियाँ उत्कीर्ण है। इसमे भाषा सस्कृत गद्य प्रयुक्त की गई हैं उस समय नाडलाई का ठाकुर रावत राजदेव था जिसने महावीर चैत्य के साधुओ के दान की व्यवस्था की। इसी प्रकार अभिनवपुरी के बदर्या (बारदवाले) तथा समस्त वनजारो पर प्रति २० पाइल भार वाले वृषभ पर २ रुपया तथा धर्म के निमित्त गाडे के भार पर १ रुपया लेना निर्धारित किया इसके पालन न करने वाला सहस्त्र गौ हत्या और सौ ब्रह्म हत्या के पाप का भागी घोषित किया गया।

इस लेख मे कई ऐसे शब्द जो स्थानीय भाषा से सस्कृत मे प्रयुक्त किये गये हैं जैसे देसी, किराडर (किराणा) गाड (गाडी) व लगमान (लाग), बदर्या (बारद) आदि।

इसकी कुछ पक्तियाँ यहा उल्लिखित की जाती हैं

पक्ति २ ५ 'श्रीनद्रूलडागिकाया रा राजदेव ठकुरेण प्रव (र्त) मानेन श्रीमहावीर चैत्ये साधुतपोधननि (ष्ठार्थे) श्री अभिनवपुरीय बदर्या अगेषु समस्तवणजारकेषु देसी मिलित्वा वृ (प) भरित जतु पाइला लगमाने ततुबीस प्रति रुग्रा २ किराडजग्रा गाउ प्रति रु० १ वणजार कै (ध) र्माय प्रदत्त'

चित्तौड का कुमारपाल का शिलालेख ७१ (११५० ई० ?)

प्रस्तुत लेख कुमारपाल सोलकी के समय का चित्तौड के समिधेश्वर के मदिर मे लगा हुआ है। इसमें २८ पक्तियाँ है। इनके बीच १७वी से २४वी पक्ति के मध्य एक यन्त्र भी उत्कीर्ण है। सवप्रथम इसमें शिव, शर्व मृड, समिद्धेश्वर तथा सरस्वती की बन्दना की गई है और तत्पश्चात् कवियो की रचना तथा चालुक्य वश का यशोगान किया गया है। इसके अनन्तर मूलराज और सिद्धराज का वर्णन आता है। कुमारपाल के वर्णन में इसमें शाकभरी विजय का उल्लेख आता है। प्रशस्ति स ऐसा प्रतीत होता है कि चौहानो को परास्त करने के बाद कुमारपाल शालिपुरा गाँव मे चित्तौड जाता है। यहा प्रशस्तिकार चित्तौड के राजप्रासादो, भील, वापिका तथा

---

७० नाहर, लेख सग्रह भा १ स ८४६, पृ २१४।

७१ ए इ भा २, इ ए भा २ पृ ४२१, जैन लेख सग्रह, भा ३, पृ ८२८४।

शिलालेख की ये पंक्तियां उस समय की सामन्त प्रथा पर तथा मेवाड़ के शासकों का भीलों से युद्ध होने की स्थिति तथा उनके अधिवासन पर प्रभूत प्रकाश डालती हैं। वैरीसिंह के उत्तराधिकारी विजयसिंह के सम्बन्ध में वर्णित है कि उसकी राणी श्यामल देवी मालवे के परमार राजा उदयादित्य की पुत्री थी। उससे अल्हणदेवी नामक कन्या उत्पन्न हुई, जिसका विवाह चेदि देश के कलचुरि (हैहय) वंशी राजा गयकर्णदेव से हुआ। अल्हणदेवी से नरसिंहदेव और जयसिंहदेव नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए, जो अपने पिता के पीछे चेदि के क्रमशः राजा हुए। इस लेख से मेवाड़ का मालवा तथा चेदि राज्यों से सम्बन्ध प्रमाणित होता है जो उस समय के राजनीतिक गठबन्धन पर अच्छा प्रकाश डालता है।

इस लेख की कुछ पंक्तियां इस प्रकार हैं :

"अस्ति प्रसिद्धमिह गोभिलपुत्र गोत्र-
न्माजनिष्ट नृपतिः किल हंसपाल।
शौर्यं बलजित निरगलि सैन्य संघ-
नश्रीकृतनिखिल द्विपुच क्यानः ॥१७॥"
"तस्या भवत्तनुभवः प्रणमत्समस्त
सामन्तशेखर शिरोमणिरञ्जितांह्रिः ॥१८॥"
"तस्माद जायत समस्तजनाभि वन्द्य
सौन्दर्यशौर्यभरभङ्गुरिताहित श्रीः।
पृथ्वीपतिविजयसिंह इति प्रवृद्ध
मानः सदा जगति यस्य यशः सुधांशुः ॥२०॥"

थकराडा लेख[७५] (११५५ ई०

इस लेख की खोज ... शंकर हीराचंद जी ओझा
पुर के दौरे के समय की थी ... आर० आर० हलधर
प्रस्तुत लेख में १० पंक्तियां ... भाग में नागरी
है और इसमें संस्कृत भाषा का ... । कहीं-कहीं भा
भी रह गई है। यह लेख भा ... संवत् १२१
जुलाई, ११५५ ई० का है त...
है। यह वही प्रतिहार सूर्यपाल
जो मध्यभारत तथा राजस्थान

इस लेख में महाराज पु...
एक हल भूमि के दान देने का उल्...
के सामन्त रहे हों और समय मिल
तथा इस समय के आस-पास के कई

७५. ए० रि० रा० म्यू०

का वशक्रम इस प्रकार है —

पृथ्वीपालदेव या भतृभट्ट
|
त्रिभुवनपालदेव
|
विजयपालदेव (स० ११६०)
|
सूर्यपालदेव (स० १२१२)
|
अनगपालदेव

इस अनुदान के साथ एक छोटी तलाई के पास के खेतो के दान की भी पुष्टि की गई है। इस लेख को प० श्रीधर के पुत्र मइध ने लिखा था। इसमे प्रयुक्त 'समस्त राजावलि विराजित' तथा 'तत्पादपधोजीविनी महाराजपुत्र' से उस समय के आश्रित राजाओ की स्थिति पर प्रकाश पडता है। इस लेख म खेत को तडाग के निकट होने की सज्ञा दी गई है जो उस समय की भूमि सज्ञा की प्रणाली का द्योतक है।

इस लेख की कुछ पक्तियो के भाग इस प्रकार हैं —

पक्ति २–३ "समस्त राजावली विराजित भर्तृपट्टाभिधाना श्री पृथ्वीपालदेव"

पक्ति ८ "उदकपूर्वहलमेकस्य भूमि प्रदत्ता"

घाणेराव का लेख[७६] (११५६ ई०)

इस लेख से बारहवी शताब्दी के राजस्थान की स्थिति को समझने मे बडी सहायता मिलती है। किस तरह उस समय के शासक अपने राज्य मे दण्डनायक जैसे पदाधिकारी रखते थे और सामत किस प्रकार भुक्ति कहलाते थे और उनके भाग को 'वाट' कहा जाता था। इस लेख से स्थानीय नागरिको का भी अनुदानादिक कार्यों मे हाथ रहता था, ऐसा इससे प्रमाणित होता था।

इस लेख का मूल भाग इस प्रकार है

"सवत् १२१३ भा० सु० ४ मगल दिने श्री दडनायक वैजल्यदेव राज्ये श्री वसगत्तीय राउल महणसिह भुक्ति वसहउवाट मध्यात् श्री महावीरदेव वर्ष प्रति द्राम ४ खाज सूणो दत्ता सेठ रायपाल सुतराव राजभन महाजन रक्षपाल निसाणि यस्सदिवहि"

मडोर की प्रशस्ति[७७] (११५६ ई०)

मडोर से प्राप्त एक लेख रक्तपाषाण शिला पर उत्कीर्ण है जिसका आकार २६इच × १७ इच है। इसका समय सवत् १२१३ ज्येष्ठ सु० १ रविवार है। इससे

---

७६ नाहर, जैन लेख, भा० १, पृ० २१८–१६।

७७ एडमिनि वि० १६३२, पृ० ७।

साण्डेराव पाषाण लेख [८१] (११६४ ई.)

प्रस्तुत लेख साण्डेराव के महावीर के मन्दिर का है जिसमें केवल ४ पंक्तियाँ ३.'११" × ३½" के पाषाण भाग पर नागरीलिपि में उत्कीर्ण है। इसमें संस्कृत गद्य का प्रयोग किया गया है। इसका समय कल्हणदेव के शासन काल का है जिसमें माघ कृष्णा २ शुक, संवत् १२२१ की तिथि अंकित है।

इसमें उल्लिखित है कि श्री कल्हणदेव की माता ने महावीरदेव के चैत्र वदि १३ को होने वाले कल्याणिक उत्सव के निमित्त राजकीय भोग से एक हाएल ज्वार प्रदान की। इसके अतिरिक्त राष्ट्रकूट पात, केल्हण व उनके भतीजों—उत्तमसिंह, सद्रग, काल्हण, आहड़, आसल, अणतिग आदि ने इसी निमित्त तलारक की आय से १ द्रम दान दिया। इसी उत्सव के लिए रथकार धनपाल, सूरपाल, जीपाल, सिगड़ा, अभियपाल, जिसहड, दोल्हण आदि ने भी ज्वार का एक हाएल अर्पित किया।

इस प्रशस्ति में भोग (भूमि से राज्य का भाग अन्न के रूप में, हाएल भण्डारक के अनुसार एक दिन के हल चलाने से बोया जाने वाला नाज का अनुपात), तलाराभव्य (नगर कोतवाल की आय) आदि शब्दों का प्रयोग भूमि सम्बन्धी परिज्ञान के लिए बड़े महत्त्व के हैं। एक हल से उत्तर-मध्यकालीन युग में ५० बीघा भूमि का बोध होता था। 'हाएल' यदि हल का रूपान्तर है तो ५० बीघा से पैदा होने वाला अन्न या आय दिया जाना मान्य है। यदि 'हाएल' हल के अतिरिक्त दूसर शब्द है तो भण्डारकर द्वारा इसका अर्थ एक दिन में जोती जाने वाली भूमि लेना उपयुक्त होगा। इस प्रशस्ति से उन दिनों सभी धर्मो के प्रति, विविध जाति के लोगों का सहिष्णुतापूर्ण व्यवहार दिखाई देता है तथा राज्य के द्वारा लगाये गये विविध करों और भूमि की नाप का अनुमान होता है।

इसकी कुछ पंक्तियों के अंशों को यहाँ उद्धृत किया जाता है:

पंक्ति १—३ "राजकीय भोग मध्यात् युगंधर्याः हाएल एकः प्रदत्तः तलाराभाव्यथस गटसत्कात् अस्मिन्नेव कल्याणके द्र. १ प्रदत्तः"

अजाहरी का शिलालेख [८२] (११६६ ई.)

यह लेख अजाहरी का है जिसका समय वि. स. १२२३ फाल्गुण सुदी १३ रविवार का है। इससे रणसिंह परमार के सम्बन्ध में आबू के शासक होने की सूचना मिलती है। आबू क्षेत्र के कुछ शिलालेख जो ब्राह्मणवाड तथा अचलेश्वर मन्दिर के हैं उनसे यह प्रमाणित होता है कि वहां गुहिलोतों का राज्य था। इससे रणसिंह के सम्बन्ध में भी इसी वंश का होने की भ्रान्ति हो सकती है। परन्तु प्रस्तुत लेख को यदि रोहिड़ा के दानपत्र के संदर्भ में पढ़ा जाय तो यह स्पष्ट हो जाता है कि रणसिंह परमार इस समय आबू का शासक था। इसमें 'द्रम' का तथा 'पंचकुल' शब्दों का

---

८१. एक प्रतिलिपि के आधार पर।

८२. शोध-पत्रिका, वर्ष २२, अंक ३, पृ. ७।

प्रयोग किया गया है जो उस समय की प्रचलित मुद्रा तथा शासन व्यवस्था पर प्रकाश डालते हैं। इसका कुछ अश इस प्रकार है

"ॐसवत् १२२३ फाल्गुण सुदि १३ रवौ अद्येह चादा पल्या महामण्डलेश्वर। श्री रणसीदेव नियुक्त मह श्री जैसल प्रभृति वादिकागणे मंह जगदेव प्रभृति पचकुल ······ ····· पादुकागण पचकुले न खीच सत्क अष्टौ द्रभा गृह्य ते"

इ द्रगढ का लेख[८२] 'अ' (१६८३ ई)

इन्द्रगढ कस्बे के निकट काकीजी की बावडी की ताक से वि स १७४० माघ बुधवार का एक लेख प्राप्त हुआ है। लेखाकार २२×१२ इंच तथा अक्षराकार ०७×०१ वर्ग इच है। इसमे कुल २२ पक्तियां है। इसकी भाषा प्राय सस्कृत है। लेख मे इन्द्रगढ के चौहान राजा सिरदारसिह, जो इन्द्रसिह का पौत्र है, के राज्य काल मे उक्त तिथि पर खण्डेलवाल वाघाराम के शुभ विवाहोत्सव के पर्व पर महारानी आली द्वारा उक्त बावडी का निर्माण वर्णित है। इसम इन्द्रसिह को इन्द्रगढाधिपति की सज्ञा दी गई है। इसका लेखक गुजराती नटल नमण अकित है। सभवत नटल नमण 'नटवर' 'रमण' के द्योतक हैं। इसमे साक्षी का नाम भी दिया गया है।

इसका कुछ अश नीचे उद्धृत है।

"इन्द्रगढाधिपति महाराजाधिराज श्री राजसिहजी तत्सुत महाराजाधिराज महाराव श्री सिरदारसिहजी तस्य महाराज्ञी मायावती महाराणीजी आलीजी तत्कृत वाप्या"

मेनाल के दुर्ग के महल के उत्तरी द्वार के स्तम्भ का लेख [८३] (११६६ ई)

यह वि सं १२२६ का लेख सस्कृत भाषा तथा नागरी लिपि मे है, जो मेनाल-दुर्ग के उत्तरी द्वार के स्तभ पर उत्कीर्ण है। इससे चौहानवशी राजा पृथ्वीराज द्वितीय की कुछ विशेषताओ के सम्बन्ध मे सूचना मिलती है। इसमे इसे अपने समय का सत्यनिष्ठ, मृदुभाषी, सुन्दर, धर्मपरायण, कल्याणमय, धर्मज्ञ तथा विचारशील शासक बतलाया गया है। इसमे मेनाल मे एक मठ स्थापना का भी उल्लेख है। प्रस्तुत प्रशस्ति से पृथ्वीराज द्वितीय के राज्य मे मेनाल का होना प्रमाणित होता है।

इसकी एक पक्ति इस प्रकार है

"तस्मैं धर्मवरिष्ठस्य पृथ्वीराजस्य धीमत पुण्यैर्कुर्वति वैंराज्य निष्पन्त मठमुत्तम"

---

८२ अ' वरदा, जुलाई १६७१, पृ ५३, ५४, ६१।

८३ वीर विनोद, भा० १, पृ० ३८६।

बिजोलिया का लेख[८४] (११७० ई०)

यह लेख बिजोलिया के पार्श्वनाथ मन्दिर की उत्तरी दीवार के पास एक चट्टान पर उत्कीर्ण है। इसमें ९३ संस्कृत पद्यों का प्रयोग किया गया है और इसका समय वि. सं. १२२६ फाल्गुन कृष्णा तृतीया, तदनुसार फरवरी ५, सन् ११७० है। ये लेख मूलतः दिगंबर लेख है, जिसको दिगंबर जैन श्रावक लोलाक ने पार्श्वनाथ के मन्दिर और कुण्ड के निर्माण की स्मृति में लगाया था। इसमें साँभर और अजमेर के चौहान वंश की सूची तथा उनकी उपलब्धियों की अच्छी जानकारी मिलती है। इन शासकों को वत्सगोत्र के ब्राह्मण कहा गया है। इस वंशावली में जयराज, विग्रहराज, चन्द्रराज, गोपेन्द्रराज, दुर्लभराज, गोविन्दराज, चन्द्रराज, गुवक, चन्द्रराज, वाक्पतिराज, विन्ध्यराज, विग्रहराज, गोविन्द, सिंह, दुर्लभराज, पृथ्वीराज, अजयराज, अर्णोराज आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। इनके द्वारा दिये गये हेम पर्वतदान, ग्रामदान तथा स्वर्णादि दान का भी वर्णन इससे उपलब्ध होता है। इसमें दिये गये कई प्राचीन नामों से उस समय के कई स्थानों की जानकारी हमें मिलती है, जैसे जाबालिपुर (जालौर), नड्डुल (नाडोल) शाकंभरी (साँभर), दिल्लिका (दिल्ली), श्रीमाल (भीनमाल), मंडलकर (मांडलगढ़), विंध्यवल्ली (बिजोलिया), नागहृद (नागदा) आदि। इसमें बिजोलिया के आस-पास के पठारी भाग को उत्तमाद्री कहा है जिसे आज भी ऊपरमाल कहा जाता है। यह मेवाड़ का पूर्वी भाग उस समय बड़ा उपजाऊ, धन-धान्य से परिपूर्ण तथा व्यापार का केन्द्र था, जैसाकि प्रशस्तिकार लिखता है। इसमें बहने वाली कुटिला नदी के आस-पास कई शैव तथा जैन तीर्थ-स्थानों की भी सूचना इस लेख के द्वारा हमें मिलती है। प्रशस्तिकार ने अनुप्रास के प्रयोग से षट्गुणों और पंच आचार, ज्ञान आदि के वर्णन द्वारा उस समय के नैतिक स्तर पर भी अच्छा प्रकाश डाला है। उस समय की आबादी के स्तर को बतलाते हुए ग्राम, पल्लि, पुर, पत्तन, देश का वर्गीकरण इसमें हमें उपलब्ध होता है। वंशक्रम में सामंत, भुक्ति आदि शब्द के संकेत से सामाजिक व्यवस्था पर भी अच्छा प्रकाश पड़ता है।

प्रशस्ति का प्रधान प्रयोग जैन धर्म के सम्बन्ध में होते हुए भी इसमें उत्तमाद्रि के अन्य तीर्थ-स्थलों का वर्णन भी मिलता है जिनमें घटेश्वर, कुमारेश्वर, सौभाग्येश्वर, दक्षिणेश्वर, मार्कण्डेश्वर, सत्योवरेश्वर, कुटिलेश, कर्करेश, कपिलेश्वर, महाकाल, सिद्धेश्वर, जातेश्वर, कोटीश्वर आदि मुख्य हैं। इस भाग की वनस्पति के वर्णन से यहाँ की आर्थिक सम्पन्नता का भी बोध होता है। उस समय दी जाने वाली भूमि अनुदान को 'डोहली' की संज्ञा दी जाती थी और भूमि को क्षेत्रों में बाँटा जाता था। इसी तरह ग्राम समूह की बड़ी इकाई के लिए 'प्रतिगण' का प्रयोग किया जाता था। गाँवों तथा प्रतिगणों के अधिकारियों को महत्तम तथा पारिग्रही आदि नामों

---

८४. ए. इ. भा. २६, पृ. ६०–१००।
गोपीनाथ शर्मा : बिबलियोग्राफी, पृ. ५।

से जाना जाता था।

इस प्रशस्ति का रचयिता गुणभद्र था और इसको कायस्थ केशव ने लिखा तथा इसे नानिग के पुत्र गोविन्द ने उत्कीर्ण किया। इस जैन मन्दिर का निर्माणक माहणक था, जो हरसिग तथा प्राह्लण सूत्रधार के वंशक्रम मे था। वास्तव मे बारहवी शताब्दी के जन-जीवन, धार्मिक व्यवस्था तथा भौगोलिक और राजनीतिक स्थिति को जानने के लिए यह लेख बडे महत्त्व का है। इसकी कुछ अन्तिम पंक्तियाँ इस प्रकार हैं :-

"खंडुवराग्रामवास्तव्यगौड सोनिगवासुदेवाभ्यां दत्तडोहलिका भ्रातरी प्रतिगण केरायताग्रामीयमहतमलीवडियोपलिभ्या दत्तक्षेत्र डोहलिका १ वडोयाग्राम वास्तव्यपारिग्रही आल्हणेन दत्तक्षेत्र डोहलिका १ लघुविकोली ग्रामसप्रहिलपुत्र रा. शाहरू महत्तम माहवाभ्या दत्तक्षेत्र डोहलिका १"

नारलाई लेख[८५] (११७१ ई०)

नारलाई लेख महावीर के मन्दिर का है जो केवल तीन पंक्तियो मे नागरी लिपि मे सस्कृत, प्राकृत तथा डिंगल की मिली-जुली भाषा मे उत्कीर्ण है। इसमे मार्ग शीर्ष शुक्ला १३ सं० १२२८ का समय अंकित है जबकि कुमारपालदेव का इस भाग मे शासन था। उसी के शासन के अन्तर्गत, जैसाकि प्रशस्ति से प्रमाणित होता है नाडोल मे केल्हण, वोरिपद्यक मे राणा लक्ष्मण और सोनाणा ग्राम मे ठाकुर अणसीह उसके सामन्त थे। इसी समय भिवडेश्वर देव के मन्दिर के मडप का निर्माण सूत्रधार महडुआ व उसकी पत्नी जसदेवि के पुत्र पाहिणी ने करवाया। इस कार्य मे पत्थर व ईंटो के निर्माण मे ३३० द्रमो का व्यय हुआ। इस धार्मिक कार्य मे महिदरा व इदरा ने निर्माण कार्य मे सहयोग दिया।

वैसे तो यह लेख छोटा है पर उस युग की सामन्त प्रथा को तथा शिल्पकार्य मे आर्थिक व्यय को जानने के लिए बडे महत्त्व का है। इसमे अठावीस, लखमण, राजे, इटका, लागे आदि शब्दो का प्रयोग स्थानीय प्रभाव के द्योतक हैं। इसकी कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं :

पंक्ति १–३. "ओ सवत् १२ अठावीसा वरषे मागसिर सुदि १३ सोमे श्री भिवडेश्वर देवस्य। श्री कुंवरपालदेवविजयराज्ये। श्री नाडुलयपुरात श्री केल्हणराजे वोरिपद्य के राणा लखमण राजे स्वस्ति सोनाण ग्रामे ठा० अणसी हुस्य। स्वस्ति सूत्र. महड्ड अ भार्या जसदेवि सुत पाहिणी, मडप : कर्तव्या पाषाणइटकाया घटित चहूटापने द्र ३३० लागे। धर्मसखाइत सूत्र महिदरा तथा इंदरा को घटित कार्य........कापाडीय।"

---

८५. एक प्रतिलिपि के आधार पर।

जगत् का स्तंभ लेख[86] (११७२ ई०)

जयसमुद्र के निकट, उदयपुर जिले में, जगत् गाँव के देवी मन्दिर के स्तम्भ पर एक वि० सं० १२२८ फाल्गुन सुदि ७ (ई० ११७२ ता० ३ फरवरी) का एक लेख है जो ऐतिहासिक महत्व का है। इससे प्रमाणित होता है कि ११७२ ई० में सामन्तसिंह का अधिकार छप्पन के भाग में विद्यमान था। इसमें उल्लिखित है कि उसने देवी के लिए सुवर्णमय कलश भेंट किया। इस सम्बन्धी पंक्तियाँ इस प्रकार हैं :

"संवत् १२२८ वरिसे (वर्षे) फ (फा) ल्गुन सुदि ७ गुरौ श्री अंबिकादेवी (व्यै) महाराज श्री सामंतसिंह (ह) देवेन सुवर्ण (र्ण) मयकलशं प्रदत्त (म्) ...... ।"

नाडोल का लेख[87] (११७६ ई०)

इस लेख में कल्हण के राज्य में नाणक भोक्ता राजपुत्र लषण आदि परिवार द्वारा प्रत्येक रहट से पैदावार का कुछ भाग शांतिनाथ की यात्रा निमित्त अनुदान दिया, ये ग्राम के पंचकुल समक्ष दिया गया। इससे पंचकुल जैसी संस्था की विशेषता का भी परिचय मिलता है। इसका मूल इस प्रकार है :

"संवत् १२३३ ज्येष्ठ वदि १३ गुरौ अद्येह श्री नड्डूल महाराजाधिराज श्री केल्हण देवराज्ये वर्तमाने श्री कीर्तिपाल देवपुत्रे सिनाणकं भोक्ता राजपुत्र लाषण पाल्ह राजपुत्र अभयपाल राज्ञी श्री महिबल देवि सहितैः श्री शांतिनाथ देव यात्रा निमित्तं भटिया उवधरघट अरहटि मध्यात् गूजर तुहार १ जव ग्राम पंच कुल समक्षि एतद् दानं कृतं पुण्याय।"

लालराई (बाली के निकट) के शांतिनाथ के मन्दिर का लेख[88] (११७६ ई.)

इसमें आस-पास के गाँवों की खाड़ी से (भंडार) जव तथा अरहट से पैदावार का गूजरी यात्रा निमित्त देने का उल्लेख है। यह लेख स्थानीय भाषा के शब्दों को जैसे 'तुहार' (त्यौहार) संस्कृत में प्रयोग किया गया है जिससे स्थानीय भाषा के विकास पर प्रकाश पड़ता है। यहाँ राजपूत के लिए राजपुत्र शब्द का प्रयोग किया गया है। इसका मूल पाठ इस प्रकार है :

"सम्वत् १२३३ वैशाख सुदि ३ सनाणक भोक्ता राजपुत्र लाखणपाल राजपुत्र अभयपाल तन्मित्र राज्ये वर्तमाने चा. भीवडा पडि देहवसी सू. आसधर समस्त सीर सहितैं खाडी जव मध्यात् जवा से ४ गूजरी जात्रा निमित्तं श्री शान्तिनाथ देवस्य दत्ता तथा भटिया उग्र अरहटे आसधर सीरोदय समस्त सीरण जवा हरीधु १ गूजरतू-या आहि वील्हस्य पुण्यार्थं"

---

८६ ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ. ३५।

८७. नाहर, जैन लेख, भा. १, संख्या ८६२, पृ. २३१।

८८. नाहर, लेख संग्रह, भा. १, संख्या ८६१, पृ० २३१।

लालराई लेख[८९] (११७६) ई.)

वाली से दक्षिण–पूर्व स्थित लालराई के एक जैन मन्दिर का यह लेख १८ पंक्तियों का है जिसको १०½" × २½" के आकार के पत्थर के भाग मे उत्कीर्ण किया गया है। १० से १८ पंक्तियों के प्रारम्भिक भाग के अक्षर प्राय नष्ट हो गये हैं। लेख मे सस्कृत भाषा तथा नागरी लिपि का प्रयोग हुआ है। इसका समय ज्येष्ठ कृष्णा १३ गुरुवार सवत् १२३३ है जब नाडोल पर महाराजाधिराज केल्हणदेव का शासन था। उसके राजपुत्र लखणपाल व राजपुत्र अभयपाल सिनाणव के भोक्ता (जागीरदार) थे। उन्होने तथा रानी श्री महिदेवी ने ग्राम पचो के समक्ष श्री शातिनाथ-देव के रथयात्रा के उत्सव निमित्त भादियात्र व ग्राम के उरहारि रहट से गुजराती नाप के एक हारक यव प्रदान किए। इसकी साक्षी भी प्रमुख व्यक्तियो ने दी जिनके नाम लेख मे नष्ट हो गये है।

इस लेख से उस समय की जागीर व्यवस्था तथा तारक और हारक नाप विशेष तथा उरहारी खेत विशेष के उल्लेख मिलते हैं जो उस समय के प्रयुक्त नाप के बोधक हैं। इसमे पचकुल की प्रधानता भी अ कित है।

पक्ति ३–१० "श्री कीर्तिपालदेवपुत्रै सिनाणव भोक्ता राजपुत्र लापणपाल राजपुत्र अभयपाल राज्ञी श्री महिलदेवि सहितैं श्री शातिनाथदेवयात्रानिमित्त मडिभाउ व (अ) रघट उरहारि मध्यात् गूजर (तृ) हार (क) १ जवा ग्राम पचकुल समक्षि एतत् .... दान कृत पुण्याय साक्षि"

किराडू का लेख[९०], (११७८ ई)

यह लेख एक किराडू के शिव मदिर मे लगा हुआ है जिसमे १६ पक्तियो को १७½ × ६½ की लम्बाई चौडाई मे खोदा गया है। प्रथम तथा अतिम तीन श्लोको को छोडकर लेख सस्कृत में है। इसमे ५वी से १४वी तथा १६वी पक्ति का अधिकाँश भाग नष्ट है। इसमें 'स' के स्थान मे 'श' और 'श' के स्थान मे 'स' का प्रयोग किया गया है। इसका समय वि० स० १२३५, कार्तिक शुक्ला १३ गुरुवार है (२६ अक्तूबर ११७८ ई०)। यह किराडू के महाराजपुत्र मदनब्रह्मदेव चौहान (शाकभरी) के समय का है जो भीमदेव द्वितीय का सामन्त था। इस समय तेजपाल शासन का काम करता था। इसमे वर्णित है कि तेजपाल की स्त्री ने जब तुरक्को के द्वारा मन्दिर की मूर्ति को तोडा हुआ पाया तो उसने उक्त तिथि को नई मूर्ति की स्थापना कराई और मदनब्रह्मदेव द्वारा मन्दिर की पूजा के लिए दो विशोपक एवं दीपक के लिए तेल की व्यवस्था की।

इसका कुछ अश इस प्रकार है

---

८९ नाहर लेख संग्रह, भा १।

९० इण्डियन एन्टीक्वेरी, भा ४२, १९३३, पृ० ४२, प्रोग्रेसरिपोर्ट, वेस्टर्न-सर्कल, १९०६–०७, पृ० ४२, रेऊ, ग्लोरीज ऑफ मारवाड, २१५–१६।

पंक्ति ३–५. "श्रीमद्भीमदेव कल्याण विजयराज्ये तत्प्रभुप्रसादावाप्त
श्री किरोट कूपे रविरिवसप्रताप: हिम[कर]रुचिर
कराभिराम: मेरुरिव सुवर्णश्रियामनोरभो·········
शाकंभरी भूपाल····महाराजपुत्र श्रीमदनब्रह्मदेवराज्ये",

पंक्ति ६–७. सर्वाधिकार सकलव्यापारचिंताउ (भ) रस (श) कट
धुराधौरेयकल्प महं श्री तेजपालदेव सुपत्नीव
····राजहंसीमिव···········देवभवा

पंक्ति १०–१४. मूर्तिरासीत् सातुरुकै (ष्कै) भंग्ना तांच निरीक्ष्य
तस्मिन्न्य (न्न) पि·······कारयित्वाऽस्मिन् दिने
प्रतिष्ठिता ॥·······दत्तमिदं विंशोपकद्वयं
तथा दीपार्थं च दत्तं तैल·····················"

ओसिया के सच्चिका माता के मन्दिर की प्रशस्ति[६१] (११७९ ई०)

इस लेख में केल्हण को महाराज तथा कीर्तिपाल को माडव्यपुर का अधिपति तथा धारावर्ष को विषयी उल्लिखित किया है जिससे मारवाड़ की राजनीतिक स्थिति एवं शासन व्यवस्था पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। इसमें देवी के मन्दिर की गोष्ठी का भी उल्लेख है। जिसके समक्ष भोजक के कार्यों का निर्धारण है एवं पारिश्रमिक के रूप में उसे सच्चिका देवी के कोष्टागार से प्रतिदिन दो अंजली मूंग और २५० ग्रेन (कर्ष) देने की व्यवस्था का उल्लेख है। इसमें नौकरी का समय तक भोजक की आयु १२ वर्ष से ऊपर आंकी है।

इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

"सं० १२३६ कार्तिक सुदि १ बुधवारे अद्येह श्री केल्हणदेव महाराज राज्ये तत्पुत्र श्री कुंवरसिंहे सिंहविक्रमे श्री माडव्यपुराधिपति·······दभिक्रान्विय कीर्तिपाल राज्य वाहके तद्भुक्तौ श्री उपकेशीय श्री सच्चिकादेवी देव गृहे श्री राजसेवक गुहिलं ग्रोक्रय विषजी धारावर्षेण श्री सच्चिकादेवि भक्ति परेण श्री सच्चिका देवि गोष्ठि कान् भाणित्वा तत्समक्ष तइयं व्यवस्था लिखापिता। यथा। श्री सच्चिकादेवि द्वारं भोजकैः प्रहरमेकं यावदुद्धाट्य द्वारस्थितम् स्थातव्यं। भोजक पुरुष: प्रमाणं द्वादश वर्षीयोत्पर:। तथा गोष्ठिकै: श्री सच्चिका देवि कोष्ठागारात् मुग मा ।०॥ घृत वर्ष १ भोजकेभ्यो दिने प्रति दातव्य:"

मा = मान = दो अंजली। कर्ष = २५० ग्रेन।

सांडेराव (देसूरी के निकट) के पार्श्वनाथ के मन्दिर का लेख[६२] (११७९ ई०)

इस लेख में जाल्हणदेवी ने, जो कल्हणदेव की रानी थी, अपना घर पार्श्वनाथ को भेंट किया। इस मकान में रहने का भा ४ एला प्रति वर्ष देने का इसमें उल्लेख

---

६१. नाहर, जैन लेख, भा० १, संख्या ८०४, पृ० १९८।

६२. नाहर, जैन लेख, भा० १, पृ० २२९।

है। इस लेख से उस समय की राज्य की सहिष्णुतापूर्ण नीति का बोध होता है।
इसका मूल पाठ इस प्रकार है:

'वि० स० १२३६ कार्तिक वदि २ बुधे श्री कल्हणदेव कल्याण विजय राज्ये राज्ञी श्री जाल्हणदेवि पार्श्वनाथ परम श्रेयार्थं निज गृह प्रदत्तः राल्हाश सत्क-मुनुपै वसद्भिः वर्षप्रति द्रा एला ४ प्रदेया"

बोरेश्वर का लेख[९३] (११७९ ई०)

यह लेख डूगरपुर जिले के सोलज गाँव से लगभग डेढ मील दूर माही नदी के तट पर बोरेश्वर महादेव के मन्दिर की दीवार पर लगा हुआ है जिसका समय वि० स० १२३६ है। इस शिलालेख से इस समय तक सामन्तसिंह, जिससे मेवाड राज्य छूट गया था, जीवित था और उसका अधिकार ११७९ ई० के पूर्व बागड पर स्थापित हो गया था प्रमाणित होता है।

ऊस्तरा की देवली का लेख[९४] (११८१ ई०)

जोधपुर जिले के ऊस्तरा नामक कस्बे मे एक वीर स्मारक वि० सं० १२३७ चैत्र वदि ६ (ई०स० ११८१ ता० ९ मार्च) का है जिससे प्रतीत होता है कि गोहिल-वंशीय राणा निहुणपाल के साथ उसकी राणियाँ सती हुई।

ओसिया के महावीर का लेख[९५], (११८८ ई०)

इस लेख मे यशोधरा भार्या द्वारा रथशाला के निमित्त अपना घर भेट किया।

इसका मूल पाठ इस प्रकार है

'सवत् १२४५ फाल्गुन सुदि ५ अद्येह श्री महावीर रथशाला निमित्त पाल्हिया धीयदेव चन्द्र वधू यशोधर भार्या सम्पूर्ण श्राविकया आत्म श्रेयार्थ आत्मीय स्वजन वर्गा समन्तेन स्वगृह दत्त"

ऊस्तरा के स्मारक का लेख[९६] (११९२ ई०)

जोधपुर जिले के ऊस्तरा नामक कस्बे मे एक वीर स्तम्भ पर वि० सं० १२४८ ज्येष्ठ वदि ६ (ई० स० ११९२ ता० ४ मई) का लेख है जिसमे गुहलोत्र (गहलोत) वंशी राणा मोटीस्वरा के साथ उसकी मोहिल राणी राजी के सती होने का उल्लेख है। मोहिल चौहानो की एक शाखा है, जिसका पहले नागौर और बीकानेर राज्य के कुछ भाग पर अधिकार था।

---

९३ ओझा, डूगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० ३५।

९४ ओझा, जोधपुर राज्य का इतिहास, भा० १, पृ० ३०।

९५ नाहर, जैन लेख, भा० १, सख्या ८०६ पृ० १९८।

९६. ओझा, जोधपुर राज्य का इतिहास, भा० १, पृ० ३०।

बड़ा दीवड़ा गाँव का लेख[९७] (११९६ ई०)

डूंगरपुर राज्य के बड़ा दीवड़ा नामक गाँव के शिव मन्दिर की मूर्ति के आसन पर वि० सं० १२५३ का लेख इस आशय का है कि महाराज सीहडदेव (दूसरे) के राज्य काल में वटपद्रक (दीवड़ा) गाँव में श्री सिद्धसोमेश्वरदेव के मन्दिर में महंतम पुन्हा के पुत्र वैजा ने मूर्ति स्थापित कराई। इससे यह ज्ञात होता है कि उक्त संवत् तक सीहडदेव का वागड़ पर अधिकार था।

आबू के परमार राजा धारावर्षदेव के समय का लेख[९८] (१२०८ ई०)

प्रस्तुत प्रशस्ति में १४ श्लोक हैं और अन्त के भाग की कुछ पंक्तियाँ गद्य में हैं। इसमें विक्रमराशि, ज्येष्ठकराशि, योगेश्वर राशि, मौनिराशि, केदारराशि आदि मठाधीशों का वर्णन है। इसमें निर्वाण मार्ग, चण्डी पूजा तथा महेश की महिमा का वर्णन है जो उस समय की धार्मिक प्रवृत्तियाँ थीं। प्रशस्ति की रचना संवत् १२६५ वैशाख सु० १५ सोमवार को सर्वदेव के द्वारा की गई थी और इसे सूत्रधार पाल्हण ने उत्कीर्ण किया था। इसमें परमार धारावर्ष को चन्द्रवती नाथ कहा गया है तथा पंचकुल की स्थिति का उल्लेख है। इसमें प्रह्लादन देव को कुमार गुरु तथा युवराज कहा गया है। प्रस्तुत प्रशस्ति से शासन व्यवस्था में श्रीकरण, महामुद्रामात्य, पंचकुल तथा युवराज की मान्यता का बोध होता है। इससे यह भी स्पष्ट है कि युवराज के लिए शास्त्र तथा कला का ज्ञान होना अच्छा समझा जाता था।

इसकी कुछ अन्त की पंक्तियाँ इस प्रकार हैं:

"चौलुक्योद्धरण परमभट्टारक महाराजाधिराज श्रीमद्भीमदेव प्रवर्द्धमान विजयराज्ये श्रीकरणे महामुद्रामात्यमहंवा पूनपूति समस्तपंचकुले परिपंथयति चन्द्रावतीनाथ मांडलिकासुर शंभु श्रीधारावर्षदेवे एकातपत्रवाहकत्वेनभुवं पालयति षट्दर्शन अवलंबन स्तंभसकल कलाकोविद कुमार गुरु श्री प्रह्लादनदेवे यौवराज्ये सति इत्येवंकाले केदारराशिनेदं कीर्तनं सूत्रपाल्हणकेन उत्कीर्णम्।"

जालोर का लेख[९९] (१२११ ई०)

यह लेख जालोर की मस्जिद में प्राप्त हुआ। सम्भवतः मन्दिरों की तोड़-फोड़ की सामग्री को आक्रमणकारियों द्वारा मस्जिद के निर्माण में लगाते समय इसका भी उपयोग उसी रूप में कर दिया गया हो। इस लेख में केवल ६ पंक्तियाँ हैं जो २'.८"×४३" दायरे में उत्कीर्ण हैं। इसमें संस्कृत गद्य तथा नागरी लिपि का प्रयोग हुआ है।

इस लेख के द्वारा हमें अलग अलग समय—वि० १२२१, १२४२, १२५६, १२६८ में काञ्चनगिरि पर स्थित विहार और जैन मन्दिर के निर्माण का और

---

९७. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० ५१।

९८. एक प्रतिलिपि के आधार पर।

९९. एक प्रतिलिपि के आधार पर।

मिलता है। जैसे चालुक्य राजा कुमारपाल द्वारा यहाँ एक बिहार का निर्माण देवाचार्य की अध्यक्षता मे १२२१ मे हुआ। इसके पश्चात् १२४२ मे चहमान वशीय समरसिंह देव की आज्ञा से भण्डारी यशोवीर ने इसका पुनर्निमाण करवाया। १२५६ मे यहाँ ध्वजोरोपण, तोरण आदि की प्रतिष्ठा हुई और फिर १२६८ मे दीपोत्सव पर पूर्णदेव सूरी के शिष्य रामचन्द्राचार्य ने स्वर्णकलश की प्रतिष्ठा की। उस समय की धार्मिक सहिष्णु नीति पर इस लेख से प्रकाश पडता है।

इसकी कुछ पक्तियाँ यहा हम उद्धृत करते हैं

पक्ति १. "ॐ" सवत् १२२१ श्री जावालिपूरीय काचन (गि) रि गढस्योपरि प्रभु श्री हेमसूरि प्रबोधित गुर्जर धराधीश्वर परमार्हत चौलक्य।"

पक्ति ६. "चद्राचार्य सुवर्णमय कलसारोपण प्रतिष्ठा कृता ।। सु (शु) भ भवतु ।।"

एकलिंगजी मे एक स्मारक-शिला[१००] (१२१३)

यह लेख एकलिंगजी के मन्दिर के चौक में नदी के निकट वाली एक स्मारक शिला पर उत्कीर्ण है जिसमें जैत्रसिंह को महाराजाधिराज कहा है और उसका समय सवत् १२७० दिया हुआ है।

इस प्रकार उत्कीर्ण पक्ति का भाग इस प्रकार है

"सवत् १२७० वर्षे महाराजाधिराज श्री जैत्रसिंह देवेषु...... .. "

जगत् का लेख[१०१] (१२२१ ई.)

यह लेख सामन्तसिंह के वशधर सीहडदेव का वि स. १२७७ का है। लेख से प्रमाणित होता है कि उन दिनो जगत् वागड राज्य के अन्तर्गत था। इस से तेरहवी शताब्दी के प्रथम चरण मे मेवाड और वागड की सीमा निर्धारित करने में बडी सहायता मिलती है। इससे यह भी प्रमाणित होता है कि उसका राणा विल्हण सांधिविग्रहिक था जिसने रणोजा गाँव देवी के मन्दिर को अर्पित किया था। इसका अक्षान्तर इस प्रकार है—

"सवत् १२७७ वरिषे (वर्षे) चैत्र सुदि १४ सोमदिने विशाप (खा) नक्षत्रे ... श्री अबिकादेवी (व्यै) महाराऊ (रावल) श्री सीहडदेव राज्ये महासा (सांधिविग्रहिक) वेल्हणकराण (राणकेन) रजणोजा ग्राम.......... "।

नादेसमा गाँव का लेख[१०२] (१२२२ ई)

यह शिलालेख मेवाड के नादेसमा गाँव के चारभुजा के मन्दिर के निकट टूटे

---

१०० एक प्रतिलिपि के आधार पर।

१०१. ओझा, बासवाडा राज्य का इतिहास, पृ. ३८-३९, ओझा, डूगरपुर राज्य का इतिहास, पृ ५५।

१०२. भावनगर प्राचीन शोध सग्रह, पृ. ४७ टिप्पण; भावनगर इन्स्क्रिप्शस, पृ ९३ टिप्पण; ओझा, उदयपुर राज्य, भा० १, पृ. १६६,

"य श्रीलुनयकुमारपाल पनतिप्रत्यथिताभागतं ।
मत्वा सत्वरमेप मालवपति वल्लालमालब्धवान् ॥३५॥"
"तेन भातृयुगेन या प्रतिपुर ग्रामाध्वशैलस्थलं ।
वापीकूपनिपान काननसरः प्रासाद सत्रादिका: ॥
धर्मस्थान परंपरा न च तराचक्रेथ जीर्णोद्धृता ।
तत्संख्यापिनवुध्यते यदि परं तद्वेदिनी मेदिनी ॥६६॥"

वैजवा माता का लेख[१०५] (१२३४ ई०)

भैंकरोड़ गाँव के पास वैजवा (विध्यवासिनी) माता के मंदिर का एक लेख वि. सं. १२९१ का है । इसका आशय यह है कि वागड़ के वटपद्रक (वड़ौदा) के महाराजाधिराज श्री सीहडदेव का महा–प्रधान वीहड़ था । उस समय उक्त देवी के भोपा मेल्हण के पुत्र वैजाक ने उस मन्दिर का पुनरुद्धार करवाया । इसमें प्रयुक्त महाप्रधान तथा भोपा शब्द का प्रयोग विशेप महत्त्व के हैं । इसका अक्षांतर इस प्रकार है :

"संवत् १२९१ वर्पे पौप शुदि ३ रवौ ॥ वागड़ वटपद्र के महाराजाविराज श्री सीहड़देव (वो) विजयोदयी । सर्व्वमुद्रा·······महाप्रधान·······वीहड़ । विंभलपुरे निवसितादेव्या: भोपा महिलण सुत····· वयजाकेन देव्या: प्रासादो·······नवकारापित:"

नगर का लेख[१०६] (१२३५ ई०)

यह लेख नगर (मारवाड़) के एक महादेव के मन्दिर के दोनों तरफ स्त्रीमूर्तियों की चरण चौकी पर है । इसमें ९८२ वि. में मन्दिर के अतिवृप्टि के कारण नष्ट हो जाने का उल्लेख है जो वड़े महत्त्व का है । पुन: इसमें वस्तुपाल द्वारा यहाँ नई मूर्ति का स्थापित होना वि. १२९२ में वर्णित है । लेख में संस्कृत भाषा में पाँच पंक्तियां उत्कीर्ण हैं । इसका कुछ अंश इस प्रकार है :

"संवत् १२९२ वर्पे आपाढ़ सुदि ७ रवौ नारद मुनि विनिवेशिते श्री नगर महास्थाने सं. ९८२ वर्पे अतिवर्पाकाल वशादतिपुराणतया च आकस्मिक श्री जयादित्य देवीयं महाप्रसाद विनष्टायां·······वस्तुपालेन स्वभार्या महं श्री स—पुण्यार्थ मिहै व श्री जयानित्य देवपत्न्या राजदेव्या मूर्तिरिमकारिता"

वटपद्रक का लेख[१०७] (१२३५ ई०)

यह लेख डूंगरपुर राज्य के वटपद्रक अर्थात् वड़ौदा से प्राप्त हुआ है जो सामंतसिंह के वंशधर सीहड़देव के समय का है । इसका समय वि. सं. १२९१ है । इससे ज्ञात होता है कि भीमदेव (भोला भीम) के समय में ही सामंतसिंह के वंशधरों ने वि. सं. १२७७ (१२२१ ई.) से पूर्व सोलंकियों का वागड़ से अधिकार समाप्त कर

---

१०५. ओझा, डू. रा. इ. पृ० ५६ ।
१०६. नाहर, जैन लेख भा० २, सं० १७१३, पृ० १६६ ।
१०७. ओझा, बाँसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० ३९ ।

दिया था।

जगत् का लेख [१०८] (१२४६ ई०)

मेवाड के जगत् नामक गांव के अम्बिका के मन्दिर का है जो वि० स १३०६ फाल्गुन सुदि ६ रविवार का है। यह लेख वागड शाखा के नरेशो के वश-वृक्ष के लिए बडे काम का है। इससे सामन्तसिह के जयन्तसिह, सीहड तथा विजयसिह—यह क्रम निर्धारित होता है। प्रस्तुत लेख मे मेवाडी भाषा का प्रभाव भी स्पष्ट है जिससे एतद्कालीन साहित्यिक गतिविधि पर कुछ प्रकाश पडता है।

लेख इस प्रकार है :

'ॐ सवत् १३०६ वर्षे फागुण सुदि ३ रवि दिने रेवती नक्षत्रे मीनस्थिते चंद्रे देवी अबिका सुवन डड प्रतिठित। गुहिल वसे रा० जयतसीह। पुत्र सीडह पौत्र विजयसघ देवेन। कारापितं वृद्धक विजय सीहन"

खमणोर का शिलास्तभ लेख [१०९] (१२५० ई०)

खमणोर ग्राम के अन्दर चारभुजा के मन्दिर के प्राङ्गण में एक शिलास्तभ है जिसमे १६ पक्तियो का एक लघुलेख सस्कृत भाषा मे उत्कीर्ण है। इसका समय सवत् १३०७ वैशाख शुक्ला तृतीया है। इसमे अ कित है कि 'सतावलि' नामक ग्राम मे महाराजकुमार पृथ्वीसिंह का डेरा था। उस समय अपने माता व पिता के कल्याण हेतु खामणपुर की माण्डवीय से सोमेश्वरदेव की पूजा के लिए उसने १२८ द्रम्मो का दान दिया। पृथ्वीमल्ल व पृथ्वीपाल सीसोदवशज पूर्णपाल का पुत्र था। इस लेख द्वारा महाराजकुमार पृथ्वीसिह के शासन सम्बन्धी सूचना प्राप्त होती है और प्रतीत होता है कि खमणोर की मण्डपिका अर्थ व्यवस्था की एक इकाई थी जिससे महाराज श्री पृथ्वीसिह ने अनुदान की व्यवस्था की थी।

यह लेख इस प्रकार है·

"ॐ सवत् १३०७ वर्षे सतावलि (या) मावासित श्री कटके महाराजकुमार श्री प्रिथिम्वसीह देवेन पिता मात्रा श्रेयार्थ वैशाख सुदि ३ अक्षयतृतीया पर्वे देव श्री सोमेश्वर पूजा नैवेद्य (स्या) र्थे खामणपुर माण्डव्या अा''''यार्थ द्र १२८ दत्त"

झाडोल गाव के शिव मन्दिर का लेख [११०] (१२५१ ई०)

उदयपुर जिले की जयसमुद्र झील के निकट झाडोल गाँव के विजयनाथ के शिवमदिर मे सवत् १३०८ कार्तिक शुक्ला १५ सोमवार का एक लेख सस्कृत मे है जिससे दो महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ उपलब्ध होती है—एक तो यह गाँव 'वागडमडल' के अन्तर्गत था और उस मडल मे जयसिघदेव का राज्य था।

---

१०८. मरु-भारती, अप्रेल, १९५७ पृ० ५७।

१०९ शोधपत्रिका, आषाढ स० २०१३, पृ० ५०–५२।

११० ओझा, डूगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० २।

घाघसा का शिलालेख[११४] (१२६५ ई०)

घाघसा गांव चित्तौड़ के निकट है। इस गांव में एक वावड़ी है, जिसमें वि० सं० १३२२ कार्तिक शुक्ला १ रविवार का महारावल तेजसिंह के समय का लेख लगा हुआ था, जिसे डा० ओझा ने वहां से हटाकर उदयपुर संग्रहालय में सुरक्षित किया है। इसमें २८ पंक्तियां और ३३ श्लोक हैं। प्रशस्तिकार चैत्रगच्छ के आचार्य रत्नप्रभसूरि थे जिन्होंने चीरवे की प्रशस्ति की भी रचना की थी। कलिसिंह नामी व्यक्ति इसका शिल्पि था।

प्रस्तुत प्रशस्ति में मंगलाचरण के पश्चात् मेवाड़ के शासक पद्मसिंह, जैत्रसिंह और समरसिंह का वर्णन प्रस्तुत किया गया है। जैत्रसिंह की उपलब्धियों में उसके द्वारा मालवा तथा गुजरात के तुरुष्कों और शाकंभरी के शासकों के परास्त करने का वर्णन है। तेजसिंह के वर्णन के उपरान्त रचयिता ने डीडू वंश के महाजन जातीय गाल्हू, माल्हू. केशव, वलभद्र, रत्न सोढल आदि का उल्लेख किया है। इसी वंश के रत्न ने उक्त वावड़ी का निर्माण करवाया और चित्तौड़ के कुम्भेश्वर मन्दिर में शिवलिंग की स्थापना की। यह मन्दिर इस नाम से अब प्रसिद्ध नहीं है। सम्भवतः मध्यकालीन आक्रमणों के दौरान वह नष्ट हो चुका हो।

जालोर में महावीर के मन्दिर का लेख[११५] (१२६६ ई०)

इस लेख में भी मठपति गोष्ठिक के समक्ष महावीर जी के निमित्त अनुदान दिया गया है। महावीर के मन्दिर के एक विभाग को भांडागार या भंडार कहते थे। इसमें द्रमों के व्याज से मासिक पूजा की व्यवस्था का भी उल्लेख है। 'द्रमशतार्द्ध' एवं 'द्रम' तथा 'द्रमार्ध' को मुद्रा को विभिन्न इकाइयों के लिए प्रयुक्त किया गया है। इसमें द्रोण एवं माणक तोल के लिए प्रयुक्त किये गये है।

इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

> "संवत् १३२३ वर्षे माघ सुदि ५ वुधे महाराज चाचिग देव कल्याण विजय राज्ये धमेश्मर सूरी जिन युगल पूजा निमित्तं मठपति गोष्ठिक समक्षं श्री महावीर देव भांडागारे द्रमाणां शतार्द्धं प्रदत्तं। तद् व्याजो द्रमवेन द्रम्मार्द्धेन नेचकं मासं प्रति करणीयं आदानादे तस्माद्भाग द्वयं महंतः कृतं गुरुणा। शेष तृतीय भागो विधावन मात्मनों विहित। गोधूभ मुद्ग यव लवण रालक देस्तु मेय जातस्य। द्रोणय प्रति माणकमेव यत्र सर्वेण दातव्यम्।

चित्तौड़ का लेख[११६] (१२६६ई०)

यह लेख चित्तौड़ से प्राप्त हुआ है जो तेजसिंह के समय का है। इसमें वि०

---

११४. ओझा, उदयपुर राज्य, भा० १, पृ० २७०;
वरदा वर्ष ५, अंक ३।

११५. नाहर, जैन लेख, भा० १, नं० ९०३, पृ० २३८।

११६. एक प्रतिलिपि के आधार पर।

सं० १३२३ ज्येष्ठ शुक्ला ३० तिथि अंकित है। इस लेख मे सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इसके द्वारा हमे तेजसिंह के महामात्य समुद्धर की सूचना मिलती है। अन्य साधनो से प्रमाणित है कि वि० स० १३०६ मे मेवाड मे तल्हण मुख्य आमात्य था और वि० स० १३१६ मे रामेश्वर मन्त्री के पद पर काम कर रहा था। यह लेख मेवाड के मन्त्री और आमात्यो की परम्परा जानने मे एक कडी है।

गभीरी नदी के पुल का लेख[११७] (१२६७ ई०)

चित्तौड के निकट वाली गभीरी नदी का पुल ऐसा मालूम होता है कि, चित्तौड के आस पास के कई भवनो और मन्दिरो के अवशेषो से, जो तुर्की आक्रमण के कारण नष्ट हो गये थे, खिज्र खा ने बनवाया था। इसी अवशेष के अन्तर्गत एक शिलालेख का टुकडा गभीरी नदी के पुल के नवें कोठे में लगा हुआ है। लेख का जो भाग बच गया है उससे हमे यह सूचना मिलती है कि चैत्रगच्छ के आचार्य रत्नप्रभसूरि के उपदेश से श्री तेजसिंह के प्रधान—राजपुत्र कागा के पुत्र ने किसी भवन विशेष का निर्माण करवाया। यह लेख कुछ बातो के लिए महत्त्वपूर्ण है। एक तो तेजसिंह के प्रधान कागा के पुत्र की हमे जानकारी होती है जो राजपूत था और दूसरा उस समय सहिष्णुतापूर्ण धर्म सम्बन्धी नीति थी जिससे जैनाचार्य का प्रभाव राजपूत जाति के प्रधान पर था।

इसका कुछ अश इस प्रकार है :

"रत्नप्रभसूरिणामादेशात् राजभगवन्नारायणमहाराज श्री तेजसिंह देवकल्याण विजयि राजा विजयमान प्रधानराज राजपुत्र कागा पुत्र"

भीनमाल का लेख[११८] (१२७१ ई०)

यह लेख मगलवार, आश्विन कृष्णा १, वि० स० १३२८ (१२७१ ई०) का भीनमाल के आहुडेश्वर मदिर मे लगा हुआ था। इसकी छाप सरदार सग्रहालय, जोधपुर मे उपलब्ध है। इसम सस्कृत गद्य म ८ पक्तियाँ हैं जिसम वर्णित है कि महाराजकुमार चाचिगदेव ने अपने श्रेय के लिए आहुडेश्वर के भोग, पूजा नैवेद्य के लिए कुछ अनुदान दिया। अनुदान के सम्बन्धी पक्ति ६, ७ व ८ के कई अक्षर नष्ट हो गये हैं जिसमे क्या अनुदान था और उसको किस रूप मे दिया गया था यह कहना कठिन है। इस लेख मे एक महत्त्वपूर्ण उल्लेख पचकुल के सम्बन्ध म है जिसमे महाराजा के द्वारा नियुक्त गजसीह आदि इस पचकुल के सदस्य थे जिनकी समक्षता ऐसे अवसरो मे होना आवश्यक था। ऐसी स्थिति मे ही, अनुमानित होता है कि, ऐसे अनुदानो का वैध

११७ बगा० ए० सो० ज०, जि०, ५५, भाग १, पृ० ४६-४७।
ओझा, उदयपुर राज्य, भा० १, पृ० ३७०।

११८. ए० रि० सरदार म्यूजियम तथा सुमेर पब्लिक लाइब्रेरी, जोधपुर, ३० सितम्बर १६२२, पृ० ५,
ज० बिहार रि० सो०, जि० ३६, भा० ४, १६५४।

बनवाये गये शिव और देवी के मन्दिरो का जीर्णोद्धार करवाया और शिव तथा देवी के नैवेद्यार्थ कालेला सरोवर के पीछे की गोचर भूमि मे से दो खेत भेट किये । इस वर्णन मे तलारक्षो के कार्यों पर प्रकाश पडता है जो नगर के अच्छे व्यक्तियो की रक्षा और दुष्टो को दण्ड देते थे । उनका कार्य मध्यकालीन कोटवालो के समकक्ष था। ये लोग सैनिक सेवाए भी करते थे । तलारक्ष योगराज का ज्येष्ठ पुत्र पमराज नागदा नगर नष्ट होने के समय भूताला के युद्ध मे काम आया । इसी तरह योगराज के चौथे पुत्र क्षेम का जो चित्तौड का तलारक्ष था, पुत्र मदन अर्थूणा मे परमारो से वीरता-पूर्वक से लडा । इसी वश के महेन्द्र का पुत्र बालाक कोटडा लेने मे त्रिभुन के साथ लडी गई लडाई मे काम आया और उसकी स्त्री भोली उसके साथ सती हुई ।

ये लेख चीरवा गाँव की स्थिति तथा बसी हुई दशा पर भी अच्छा प्रकाश डालता है । उस समय पर्वतीय भागो के गाँव कैसे बसते थे, वे किस प्रकार वृक्षावलियो और घाटियो से घिरे रहते थे तथा उनमे तालाबो और खेतो की क्या स्थिति रहती थी और उनमे मन्दिर किस प्रकार गाँव के जीवन के अग होते थे आदि विषयो का इसके द्वारा अच्छा बोध होता है । इसमे दिये गये तलाई और गोचर भूमि तथा खेतो से उस समय की आर्थिक दशा का पता चलता है । इसमे मेवाड के निकटवर्ती भागो का, जो मालवा, गुजरत्रा, मरू तथा जागल देश थे, राजनीतिक वर्णन मिलता है ।

उक्त लेख मे एकलिगजी के अधिष्ठाता पाशुपत योगियो के अग्रणी शिवराशि का भी वर्णन मिलता है, जिससे उस मन्दिर की व्यवस्था पर प्रकाश पडता है । लेख मे यत्र तत्र उस समय की धार्मिक स्थिति की भी हमे सूचना मिलती है । इसी के साथ कुछ चैत्रगच्छ के आचार्यों का भी वर्णन मिलता है जो उस समय के शिक्षा स्तर पर अच्छा प्रकाश डालता है । ऐसे आचार्यो मे भद्रेश्वरसूरि, देवभद्रसूरि, सिद्धसेनसूरि, जिनेश्वरसूरि, विजयसिंहसूरि और भुवनसिंहसूरि प्रमुख हैं । ये अपने धर्म तथा विद्या के क्षेत्र मे लब्धप्रतिष्ठ आचार्य थे । भुवनसिंहसूरि के शिष्य रत्नप्रभसूरि ने चित्तौड मे रहते हुए चीरवा शिलालेख की रचना की और उनके मुख्य शिष्य पार्श्वचन्द्र ने, जो बडे विद्वान् थे, उसको सुन्दर लिपि मे लिखा । पद्मसिंह के पुत्र केलिसिंह ने उसे खोदा और शिल्पी देल्हण ने उसे दीवार मे लगाने आदि कार्य का सम्पादन किया।

इस लेख का, १३वी सदी की राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक स्थिति के अध्ययन मे बडा उपयोग है ।

इसकी कुछ पक्तियो के भाग इस प्रकार हैं—

पक्ति ९–१० "श्रीपद्मसिंह भूपालयोगराजस्त लारता ।
नागहृदपुरे प्रापपौर प्रीति प्रदायक' ।।१२।।"

पक्ति १५ "क्षेमस्तु निर्म्मित क्षेमाश्चित्रकूटे तलारता ।
राज्ञ श्री जैत्रसिंहस्य प्रसादादापदुत्तमात् ।।२२।।"

पक्ति ३१ "वयराक. पाताको मुंडो भुवणोथ तेज सामतो ।
अरियापुत्रमदन सिंहदमभिधं पालनीयमिदमखिल ।।४१।।"

१०वें श्लोक मे वापा का वर्णन आता है जिसमे उसका हारीत द्वारा सुवर्ण कटक तथा राज्य प्राप्त करने का उल्लेख तथा बापा द्वारा यज्ञस्तंभ का स्थापित करना महत्त्वपूर्ण है। आगे चलकर प्रशस्तिकार ने गुहिल को बापा का पुत्र बतलाने की भारी भूल की है। इसमे गुहिल के बाद शील, काल भोज, मम्मट, सिंह, महायक, खुम्माण, अल्लट, शक्तिकुमार, अम्बाप्रसाद, शुचिवर्मा और नरवर्मा नामक मेवाड के शासको की उपलब्धियो पर प्रकाश डाला गया है। मम्मट द्वारा मालवा के राजा को हराया जाना, शक्तिकुमार का अर्जुन और कर्ण होना, अम्बाप्रसाद का अगस्त की भाँति होना और उसका बृहस्पति तथा वामदेव का अवतार होना आदि विशेषताए कई राजनीतिक घटनाओ को समझने म सहायक सिद्ध होती हैं। यहा से लेखक वश वर्णन को दूसरी शिला मे दिये जाने का उल्लेख करता है।

प्रस्तुत प्रशस्ति मे रचयिता तुलनात्मक वर्णन द्वारा हमे कई विषयो की सूचना देता है जो अन्यत्र उपलब्ध नहीं हैं। लेखक रानियो के शृंगार उनके चदन के उपटन के वर्णन के साथ तुलनात्मक रूप से शबरियों के बेल, पत्ते गुजा आदि आभूषणो की स्वाभाविकता के साथ हमे वनवासियो के जीवन से परिचित कराता है। इसमे दिये गये युद्ध के अवसरो के उल्लेख उस समय की प्रचलित दास प्रथा तथा अस्पृश्यता की ओर सकेत करते हैं। इससे युद्ध के अवसर के नैतिक आचरणो का भी हमे बोध होता है। वैदिक यज्ञो तथा विद्वानो की उपाधियो के प्रचलन की भी जानकारी इस लेख से होती है। मेवाड की राजनीतिक, सामाजिक तथा धार्मिक स्थिति के अध्ययन के लिए इस शिला का महत्त्वपूर्ण उपयोग है। इसमे दिये गये वृक्षों के नाम, खेर, पलाश, आम, चपा केसर, अगूर आदि उस समय की वनस्पति के अध्ययन के लिए बडे उपयोगी हैं।

इसके कुछ पद्याश इस प्रकार है

"य कु ठितारिकरवाल कुठारधारस्त ब्रूमहे गुहिलवशमपार शास"

"पत्रं पत्रावलीना समजनि रचनाधातुभि पादरागोधूलिभि कदराणा विपदमलयजालेपलक्ष्मीरुदारा। गु जाभिर्हारवल्लीयदरिमृगदशाइरण्येविभूषा सौदर्यं-नैव नष्ट शबर सहचरी निर्विशेष गताना।"

चित्तौड का लेख[१२२] (१२७७ ई०)

ये लेख चित्तौड मे वणवीर के द्वारा बनवाई गई 'नवलख भडार' वाली दीवार मे लग रहे हैं। सम्भवत अलाउद्दीन तथा बहादुरशाह के आक्रमण के समय वहाँ जो मन्दिर व भवन गिराये गये थे उनके अवशेषो का प्रयोग वणवीर ने उक्त दीवार को बनवाने मे किया था। इस प्रकार के अनुमान की पुष्टि कई दीवार मे लगे हुए मन्दिरो के विभिन्न भाग, मूर्ति खण्ड आदि करते हैं। इन लेखो मे वर्णित है कि रत्नसिंह श्रावक द्वारा निर्मित शातिनाथ क चैत्य मे समधा के पुत्र महणसिंह की

---

१२२ एक प्रतिलिपि के आधार पर।

भार्या साहिणी की पुत्री कुमारिला श्राविका ने पितामह पूना और मातामह ढाडा के श्रेयार्थ देव कुलिकाएं बनवाईं। वैसे तो ये सूचना राजनीतिक दृष्टि से इतनी महत्त्व की नहीं है, परन्तु उस युग के कौटुम्बिक जीवन के स्तर को समझने के लिए बड़ी उपयोगी है। कुमारिला श्राविका पितामह और मातामह के प्रति श्रद्धा के कारण धार्मिक कार्य का सम्पादन करती है और उनके श्रेय की कामना करती है। साथ ही अपने निकटवर्ती सम्बन्धियों का उल्लेख भी अपने पुण्य कार्य के साथ करती है। इससे स्पष्ट है कि उस युग में कोई भी धार्मिक या सामाजिक कार्य बिना कुटुम्बियों की उपस्थिति या संस्मरण द्वारा नहीं सम्पादित होते थे। संयुक्त कुटुम्ब प्रणाली का यह एक उज्वल पक्ष माना जाना चाहिये जो इस शिलालेख से स्पष्ट है।

चित्तौड़ का शिलालेख[123] (१२७८ ई०)

प्रस्तुत लेख वि. सं. १३३५ वैशाख सुदि ५ गुरुवार का है, जो सम्भवतः *श्याम पार्श्वनाथ के मन्दिर के द्वार के छबने का था जो मन्दिर के नष्ट हो जाने से चित्तौड़ के* पुराने महलों के चौक में गड़ा हुआ प्राप्त हुआ। इसे यहाँ से उठाकर डॉ. ओझा ने उदयपुर संग्रहालय में सुरक्षित कर दिया। लेख में ९ पंक्तियां हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से यह लेख बड़े महत्त्व का है। इससे हमें सूचना मिलती है कि भर्तृप्ररीय गच्छ के जैनाचार्य के उपदेश के फलस्वरूप राजा तेजसिंह की राणी जयतल्लदेवी ने चित्तौड़ में एक श्याम पार्श्वनाथ का मन्दिर बनवाया। इसमें यह भी उल्लेखित है कि इसी मन्दिर के पिछले भाग में उसी गच्छ के आचार्य प्रद्युम्नसूरि को महारावल समरसिंह ने मठ के लिए भूमिदान दिया। इसमें यह भी वर्णित है कि इस मन्दिर के लिए चित्तौड़ की तलहटी, आहाड़, खोहर और सज्जनपुर की मंडपिकाओं से कई एक द्रम, घी, तेल आदि वस्तुओं के मिलने की व्यवस्था की गई। यह लेख वि. सं १३३५ वैशाख शुक्ल पंचमी गुरुवार का है। इस लेख का महत्त्व इसलिए भी बढ़ जाता है कि इसमें राजपरिवार तथा राजा के द्वारा जैन मन्दिर के निर्माण और मठ तथा मन्दिर के लिए अनुदान देना उस समय कि सहिष्णुतापूर्ण नीति का फल था। अन्यथा उस समय राजपरिवार के व्यक्ति शैव मतावलम्बी होते थे। इसके अतिरिक्त इस लेख से उस समय की मंडपिकाओं का पता चलता है और यह प्रमाणित होता है कि जिनसे कुछ कर का भाग उस युग में धर्मार्थ उपयोग में लाया जाता था।

इसमें मंडपिकाओं से दान की व्यवस्था इस प्रकार है—

१. चित्तौड़ की मंडपिका से
   उधरा द्रम २४ (यह एक प्रकार की प्रचलित मुद्रा थी), ४ कर्प घी और ६ कर्ष तेल (उत्तरायन के समय)
२. आघाट की मंडपिका से········द्रम ३६
३. खोहर की मंडपिका से········द्रम ३२

---

१२३. ओझा, उदयपुर राज्य, भा० १, पृ० १७५–१७६।

४ सज्जनपुर की मडपिका से क्रम ३४

जो भूमिदान सम्बन्धी उल्लेख इस प्रशस्ति मे मिलता है उस भूमि की सीमाएं भी इसम अकित कर दी गई हैं। इसमे पूर्व और दक्षिण मे साढल और सोमनाथ के मकान और पश्चिम मे चतुर्विशति जिनालय का पडोस अकित किया गया है। आगे चलकर कुछ साक्षियो के नाम भी दर्ज किये गये हैं जिनमे श्री एकलिंग जी के मन्दिर के मठाधीश शिवराशि प्रमुख हैं। लेख की एक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि चित्तौड के कई अन्य शिलालेखो मे मेवाड के शासको को ब्राह्मण सज्ञा दी गई है, परन्तु प्रस्तुत लेख मे इन्हे क्षत्रिय कहा गया है। इसी तरह अन्य साक्षियो मे गौड जाति के व्यास रत्न के पुत्र ज्योति तथा साढल, और ब्राह्मण देल्हण के पुत्र साढा उसके पुत्र द्वारभट्ट खीमट और उसके भाई भीमा आदि थे।

शिवराशि सम्बन्धी वर्णन इस प्रकार है—

पक्ति ८ 'एकलिंगशिव सवनतत्पर श्री हारीत राशिवश सभूत महेश्वरराशि-तच्छिष्यशिवराशि"

बुरडा का रूपादेवी का शिलालेख[१२४] (१२८३ ई०)

यह शिलालेख बुद्धपद्र (बुटडा) गाँव की एक बावडी मे लगा हुआ था जहाँ से उसे जोधपुर के दरबार हॉल म ले जाकर सुरक्षित किया गया था। प्रस्तुत लेख सस्कृत पद्यों मे १६ पक्तियो मे है और १' ५" × १' × ४½" आकार के प्रस्तर खण्ड पर उत्कीर्ण है। प्रारम्भ के श्लोक मे कृष्ण की स्तुति की गई है और फिर समरसिंह, उदयसिंह तथा उसकी पुत्री रूपादेवी और उसके पति तेजसिंह का वर्णन किया गया है। १८वीं और १६वी पक्ति मे वि. स १३४० सोमवार ज्येष्ठ कृष्णा सप्तमी को रूपादेवी द्वारा बनवाई गई बावडी की प्रतिष्ठा का उल्लेख है। ये घटना महाराजकुल सामन्तसिह देव के समय मे तथा जयशाह आदि के 'पचोपो' के समय मे होना वर्णित है। वैसे तो इस लेख का कोई विशेष ऐतिहासिक महत्त्व नही है सिवाय इसके कि इसम कुछ आबू के निकटवर्ती प्रदेशो के सामन्तो का वश क्रम दिया हुआ है। परन्तु इस लेख की विशेषता यह है कि राजाओ की भाँति उस युग मे सामन्त परिवार की स्त्रियाँ भी जनहित सम्पादन के लिए बावडियाँ बनवाती थी और उसको एक सामाजिक तथा धार्मिक महत्त्व दिया जाता था। साथ ही इस लेख मे जयशाह आदि व्यक्तियो का 'पचप' होने का उल्लेख, जिन्हे की शासक नियुक्त करता था, बडे महत्त्व का है। इसमे दिये हुए सामन्तो के नाम आबू से प्राप्त कई शिलाखण्डो से प्रतिपादित हो जात हैं।

इसकी कुछ पत्तियाँ इस प्रकार हैं—

पक्ति १०–११ रूपादेवी स्वकुलतिलकाकारिणी पुत्रिकस्य लक्ष्मीदेव्या उदरसरसि प्रोल्लसदराजहसी"।

---

१२४ ए इ जि ४, पृ० ३१२–३१३।

पंक्ति १६. "तन्नियुक्त श्री जाषादिपञ्चप प्रतिपत्तादेवं काले वर्तमाने देव्या श्री रूपादेव्या वापिकायाम् प्रतिष्ठिता"

अचलेश्वर लेख[१२५] (१२८५ ई०)

यह लेख अचलेश्वर (आबू) के मन्दिर के पास वाले मठ के एक चौपाल के दीवार में लगाया गया था। इसका आकार २'.११" × २'.११" तथा इसमें पंक्तियाँ ४७ हैं। इसमें प्रयुक्त की गई पद्यमई भाषा संस्कृत है। इसका समय वि. सं. १३४२ माघ शुक्ला १ दिया गया है। इसमें बापा से लेकर समरसिंह के काल की वंशावलि दी है। समरसिंह के सम्बन्ध में इसमें लिखा गया है कि उसने यहाँ सुवर्ण ध्वजाधारी मठ का निर्माण कराया और वह यहाँ रहने वाले भावशंकर महात्मा का शिष्य था। प्रस्तुत लेख में मेवाड़ का बड़ा रोचक वर्णन है। मेदपाट के सम्बन्ध में प्रशस्तिकार लिखता है कि बापा के द्वारा यहाँ दुर्जनों का संहार हुआ और उनकी चर्बी से यहाँ की भूमि गीली हो जाने से इसे मेदपाट कहा गया। यह वर्णन अतिशयोक्तिपूर्ण है परन्तु इससे हमें बापा का शौर्य और उसकी प्रारम्भिक विजय का बोध होता है। मेवाड़ की रम्य छटा के सम्बन्ध में लेखक उसके सामने स्वर्ग को भी घटिया बतलाता है। नागदा नगर के सम्बन्ध में हारीत ऋषि का वर्णन आता है जिन्होंने यहाँ घोर तपस्या की थी। इन्हीं की अनुकम्पा से बापा को राज्य प्राप्त और क्षत्रित्व की प्राप्ति हुई। इसी प्रकार आबू को भी एक तपस्या का स्थान बताकर यहाँ के सौन्दर्य और वन की सम्पत्ति का वर्णन प्रशस्तिकार देता है जो बड़ा रोचक है। इस प्रशस्ति का रचयिता प्रियपटु का पुत्र वेद शर्मा नागर था। इसका लेखक शुभचन्द्र और उत्कीर्णकर्त्ता कर्मसिंह सूत्रधार था। इस प्रशस्ति का महत्त्व सन्तों के प्रसाद से राज्य प्राप्ति, बापा का शौर्य, मेवाड़ और आबू की भौगोलिक स्थिति तथा समृद्धि और उस समय की सम्पन्नता तथा विद्वत्ता आदि की जानकारी से बहुत बढ़ गया है। उस समय योग, आराधना आदि के प्रचलन पर भी यह प्रशस्ति प्रभूत प्रकाश डालती है। इससे चित्तौड़ निवासी वेद शर्मा नागर ब्राह्मण के पाण्डित्य का भी हमे परिज्ञान होता है। यह वही वेद शर्मा है जिसने प्रसिद्ध समाधीश्वर और चक्रस्वामी के मन्दिर समूह की प्रशस्ति बनाई थी। इससे स्पष्ट है कि १३वीं शताब्दी में चित्तौड़ विद्या के विकास का बड़ा भारी केन्द्र था। आबू के मठाधिपति भावाग्नि और उनके शिष्य भावशंकर की भक्ति और निष्ठा का भी इसमें अच्छा वर्णन है। शुभचन्द्र इसका लेखक था और सूत्रधार कर्मसिंह उसका खोदने वाला। इसमें ६२ श्लोक हैं।

इसके कुछ पद्यांश इस प्रकार हैं—

हारीतात्किल बप्पकोऽध्रिवलय व्याजेन लेभे महः
क्षात्रं धातृनिभाद्वितीर्य मुनये ब्राह्मं स्वसेवाच्छलात्

१२५. भावनगर इन्स., ५, पृ० ८३-८७;
गोपीनाथ शर्मा—बिबलियोग्राफी, नं. ३०, पृ० ६।

एतेऽद्यापि महीभुज क्षितितले तद्वंश संभूतय:
शोभते सुतरामुपात्तवपुषः क्षात्राहि धर्मा इव ।।११।।"
"फल कुसुमसमृद्धिसर्वकालं वहतः"
"लिखिता शुभचन्द्रेण प्रशस्तिरियमुज्वला
उत्कीर्णा कर्मसिहेन सूत्रधारेण धीमता ।।६२।।"

रत्नपुर के जैन मन्दिर का लेख[126] (१२८६ ई०)

इस लेख मे महणदेवी द्वारा द्रमो का दान एवं उनके ब्याज से जैनोत्सव मनाने का उल्लेख है।

इसका कुछ भाग इस प्रकार है—

"स. १३४३ वर्षे माह सुदि १० शनौ रत्नपुररे.........महणदेव्या आत्म श्रेयसे पार्श्वनाथ देव भाण्डागारे क्षिप्त विसलप्रिय द्रम्म १० तथा स. १३४६ माह सुदि १२ पूर्णिमाया कल्याणिक पंचक निमित्तं क्षिप्त द्र १० उभय द्रः ३० अभीषा द्रम्माणां व्याजे शतं मास प्रति द्र १० विंशति द्रम्मा पूम्बाणा व्याजेन नवकं करणीय दश द्रम्माणा व्याजेन कल्याणिकानि करणीयानि शुभ भवतु"

पटनारायण का लेख[127] (१२८७ ई०)

सिरोही के गिरवर नामक गाँव के निकट पटनारायण के मन्दिर का यह लेख है। इसमे सस्कृत पद्य और गद्य का प्रयोग किया गया है जिसकी पंक्तियाँ ३९ हैं। इसमे श्लोको की संख्या एक से पैंतीसवी पक्ति तक ४६ हैं और आगे अन्त तक गद्य हैं। लेख का आशय यह है कि वशिष्ठ ने मन्त्र बल से आबू के अग्नि कुण्ड से धूम्रराज परमार को उत्पन्न किया। इसी कुल मे धारावर्ष हुआ जो एक तीर से तीन भैसो को वेध देता था। धारावर्ष के लड़के सोमसिंह का लडका कृष्णराज था। कृष्णराज के पुत्र प्रतापसिंह ने जैत्रसिंह (मेवाड़ ?) को परास्त कर चन्द्रावती पर अधिकार कर लिया। प्रतापसिंह के मन्त्री देलहण ने सवत् १३४४ मे प्रतापनारायण के मन्दिर को पुन. बनवाया। इस लेख मे कई स्थानीय शब्दो को सस्कृत मे प्रयुक्त किया गया है जो बडे महत्त्व के हैं। जैसे 'देवडा' एक चौहानो की शाखा के लिए, 'दोनकरी' 'डोली' के लिए, 'ढीवडू' कुँए के लिए, 'अरहट' रेंठ के लिए, आदि 'चोलापिका' चौरा की आय, 'विसार' निर्यात कर के लिए आदि।

इसमे आबू की प्रशंसा, परमारो के वश, मालवा के शासक वीसल, प्रशस्तिकार गगदेव की विद्वत्ता, खेतो की उपज, अनाज का तोल, प्रति हल नाज की पैदावार, द्रम का प्रचलन, भूमि कर, निर्यात कर आदि पर काफी प्रकाश पड़ता है। इससे प्रतीत होता है कि चन्द्रावती उस समय व्यापारिक केन्द्र था। इसमे आस-पास के

१२६. नाहर, जैन लेख, भा. २, सख्या १७०६, पृ. १६३।
१२७. एक प्रतिलिपि के आधार पर।

गाँवों से मन्दिर की सेवा-पूजा की व्यवस्था करने का अच्छा वर्णन है। जिसकी कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं :

पंक्ति ३५–३९. "देवस्य नैवेद्यहेतोर्दत्ताय पदव्यक्तिर्यथा ।। महाराकुलसो (शो) भित पुत्र देवड़ामेलाकेन छनारे ग्रामे दोणकारी क्षेत्र १ उभयं दत्तं ।। पीमाउलीग्रामे वीहलरा वीरपालेन ढीवडउ १ दत्तं आउलिग्रामे। ग्रामेयकं अरहट्टं प्रति ८ ठीकडा ठीक आ प्रति से २ दत्तं ।। कल्हण-वाड ग्रामे हलं प्रति से: १ गोहिल उत्रनुडियल (ले) न प्रतिग्रामपाद्रं दत्त द्र. १० तथा मडाउली ग्रामे रा. गांगू कर्मसीहाभ्यां द्वादष्श एकादशीपु चोलायिका आय पदं दत्तं। चन्द्रावती मंपपिकायां विसार अंकतोऽपि ।। सं. १३४४ ज्येष्ठ सुदि ५ शुक्रे जीर्णोद्धार प्रतिष्ठा।"

चित्तौड़ का लेख[१२८] (१२८७ ई०)

प्रस्तुत लेख चित्तौड़ से ले जाकर उदयपुर के संग्रहालय में सुरक्षित कर दिया गया है। इसमें ८ पंक्तियाँ हैं जिनमें चित्रांगमोरी की उपलब्धियों, स्थानीय अधिकारी 'तलार' के कार्यो, कायस्थ सांग की उपलब्धियों तथा पंचकुल आदि के सम्बन्ध में संकेत मिलते हैं।

चित्तौड़ का शिलालेख[१२९] (१२८७ ई०)

प्रस्तुत सुरह लेख चित्तौड़ के किसी मन्दिर के स्तंभ पर उत्कीर्ण था, जो सम्भवतः वैद्यनाथ के मन्दिर का हो सकता है। स्तंभ लेख के ऊपरी भाग में शिव-लिंग भी बना हुआ है जो इस अनुमान की पुष्टि करता है। अब यह लेख उदयपुर संग्रहालय में सुरक्षित अवस्था में है। इस लेख में वि. सं. १३४४ (१२८७ ई.), वैशाख शुक्ला ३ के समय चित्रांग तड़ाग के ऊपर के, जिसे चित्रांग मोरी का तालाब कहते हैं, वैद्यनाथ के मन्दिर के लिए कुछ द्रम देने तथा कायस्थ सांग के पुत्र बीजड के द्वारा कुछ स्थान बनवाये जाने का उल्लेख है। सम्भवतः बीजड समरसिंह के समय का कोई विशेष अधिकारी था।

इसकी कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं :

"श्री चित्रकूट समस्तमहाराजकुल श्री समरसिंह देवकल्याण विजयराज्ये एवं काले चित्रांगतडागमध्ये श्री वैद्यनाथ कृते............।"

हट्टुंडी में महावीर के मन्दिर का लेख[१३०] (१२८८ ई०)

इसमें नड्डुल मंडल के अन्तर्गत हट्टुंडी का होना उल्लिखित है जहाँ राज्य की

---

१२८. वरदा वर्ष ९, अंक १।

१२९. ओझा, उदयपुर, भा० १, पृ० १७७।
इ. ए., १९६१–६२, क्र. १७२७;

१३०. नाहर, जैन लेख, भा० १, संख्या ८९७, पृ० २३३।

ग्रोर से करणसिंह की नियुक्ति का तथा महावीर के मन्दिर के लिए हेमाक द्वारा २४ द्रमो का देने का वर्णन है। इसका मूल पाठ इस प्रकार है।

"सवत् १३४५ वर्षे प्रथम भादवा वदि ६ शुक्रे दिने अद्येह श्री नड्डूल मडले महाराजकुल श्री सपतसिंह देवराज्येत्र तन्नियुक्त श्री करणे महं हाथीउडी ग्रामे श्री महावीरदेव नैवेद्यार्थं वर्ष प्रति २४ द्रमा प्रदत्ता।"

उंस्तरा के स्मारक दो लेख [131] (१२८८ ई०)

यहा के दो स्मारक लेख जो वि० स० १३४४ वैशाख वदि ११ (ई० सं० १२८८ ता० २६ मार्च) के हैं; गहलोत वशी मागल्य (मागलियो) शाखा के राव सीहा और उसके पुत्र टीडा के साथ उनकी राणियो के सती होने का उल्लेख करते हैं।

बड़ौदे के तालाव के पास के शिवालय का लेख [132] (१२९३ ई)

यह लेख बडोदा के तालाब के पास के एक विशाल शिवालय मे पत्थर की कुंडी पर उत्कीर्ण है। उससे ज्ञात होता है कि वि० स० १३४९ वैशाख सुदि ३ शनिवार के दिन महाराजकुल श्री वीरसिंह देव के विजय राज्य काल मे उक्त कुंडी बनाई गई। उस महारावल का 'महाप्रधान' वामण (वावण) था।

मूल लेख का अक्षातर इस प्रकार है:

"स० १३४९ वर्षे वैशाख शुदि ३ शनौ महाराजकुल श्री वीरसिंह देव कल्याण विजयराज्ये महाप्रधान पच श्री वामण प्रतिपत्तौ......."

जूना के आदिनाथ मन्दिर का लेख [133] (१२९५ ई०)

इस लेख मे जूना (बाडमेर इलाका) का व्यापारिक केन्द्र होना स्पष्ट है जहा से ऊंट, घोड़े, बैल आदि माल लेकर गुजरते थे। इन पर मंदिर की व्यवस्था के लिए सभी महाजनो ने लाग (कर) देना स्वीकार कर लिया था। तेरहवीं शताब्दी की व्यापार-व्यवस्था, मार्ग और मुद्रा, कर आदि की जानकारी के लिए यह लेख बडे उपयोग का है। इसमे प्रयुक्त शब्द सार्थ, पाइला, भीमप्रिय, विंशोपक, लाग आदि बडे महत्त्व के हैं। इसका मूलपाठ इस प्रकार है—

"सवत् १३५२ वैशाख सुदि ४ श्री बाहड मेरौ महाराज कुल श्री सामतसिंह देव कल्याण विजयराज्ये तन्नियुक्त श्री करणे मं० चीरासेल वेलाउल भा० मिगल प्रभृतयो धर्माक्षराणि प्रयच्छन्ति यथा। श्री आदिनाथ मध्ये सतिष्ठमान श्री विघ्न मर्दन क्षेत्रपाल श्री चाउडराज देवयो: उभयमार्गीय समायात सार्थ उष्ट्र १० वृष २० उभयादीप उर्द्ध सार्थ प्रति द्वयोर्द्वयो: पाइला। पक्षे भीमप्रिय दशविशोपक अर्द्धार्द्धेन ग्रहीत्वा। असो लागो महाजनेन मानित:।"

---

१३१. ओझा–जोधपुर राज्य का इतिहास, भा० १, पृ. ३०।

१३२. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० ६१।

१३३. नाहर, जैन लेख, भा० १, न० ९१८, पृ० २४४।

हटुंडी के महावीर के मन्दिर का लेख[१३४] (१२६८ ई०)

इस लेख में 'पंचकुल', मंडपिका' एवं द्रमादि का महावीर के अनुदान के सन्दर्भ में उल्लेख है । इस लेख का मूल पाठ इस प्रकार है :

"सं. १३३५ वर्षे श्रावण वदि १ सोमे अद्येह समीपाही । मंडपिकायां भा पाहट उभांवा देवसिंह प्रभृति पंचकुलेन श्री महावीरदेवस्य नेचाप्रचयं १ वर्ष स्थिति कृतं द्र २४ । द्रमाः वर्ष वर्षप्रति सर्वं मंडपिका पंचकुलेन दातव्याः ।

दरीबा माता के मन्दिर का स्तम्भ लेख[१३५] (१२६६ ई.)

दरीवा कांकरोली स्टेशन से ८ मील की दूरी पर एक गांव है । यहां एक मातृकाओं का मन्दिर है । इस मन्दिर के एक स्तम्भ पर एक लेख उत्कीर्ण है जिसका आशय यह है कि वि. सं. १३५६ ज्येष्ठ कृष्णा १० को श्री समरसिंह के मेवाड़ पर शासन करने के समय में तथा उसके महामात्य श्री निम्वा के काल में करणा और सोहड़ा ने उक्त मन्दिर को १६ द्रम भेंट किए । इस लेख से यह सूचना मिलती है कि मेवाड़ के मुख्यमन्त्री महामात्य कहलाते थे और समरसिंह के समय का महामात्य निम्वा था ।

लेख की पंक्तियां इस प्रकार हैं :

"संवत् १३५६ वर्षे जे (ज्ये) ष्ठ वदि १० शनावद्येह श्री मेदपाट भू मंडले समस्त राजावली समलंकृत महाराजकुल श्री समरसिंहदेव कल्याण विजयराज्ये......"

सांभर का लेख[१३६]

(१२वीं शताब्दी ई. का अंतिम चरण अथवा
१३वीं शताब्दी ई. का प्रथम चरण)

यह लेख शाह का कुवा नामक कुवे (सांभर) में लगा हुआ था जहां से १९२६ ई. में इसे जोधपुर संग्रहालय में लाकर सुरक्षित कर दिया गया । यह दो कृष्ण शिलाओं में १६"×१४$\frac{3}{4}$" के घेरे में उत्कीर्ण है । इसमें २८ श्लोकबद्ध पंक्तियां हैं, जिनमें से कुछ नष्ट हो गई हैं । इसका समय अज्ञात है परन्तु जयसिंह के सन्दर्भ से अनुमानित किया जाता है कि यह १२वीं शताब्दी ई. के अंतिम चरण अथवा १३वीं शताब्दी ई० के प्रथम चरण की हो । इस लेख से सोलंकी मूलराज द्वारा अन्हिलवाड़ा राज्य के संस्थापना का पता चलता है जिससे मूलराज का समय वि. ९९८ (९४१ ई.) तक चला जाता है । लेख में प्रारम्भ में सरस्वती तथा अन्य देवताओं की स्तुति की गई है और उसके पश्चात् तीन पद्यों में चालुक्य वंश की प्रशंसा की गई है । इसके ८वें पद्य से ११वें पद्य तक मूलदेव, चामुण्डराज, वल्लभ-राज, दुर्लभराज, भीमदेव, कर्णदेव एवं जयसिंह का परिचय मिलता है । इसके बाद

---

१३४. नाहर, जैन लेख, भा० १, संख्या ८९४, पृ० २३२ ।

१३५. ओझा, उदयपुर का राज्य, भा० १, पृ० १७७ ।

१३६. एक प्रतिलिपि के आधार पर ।

कोई विशेष सूचना नही मिलती सिवाय इसके कि जयसिंह दानी, पुण्यात्मा, विष्णु भक्त ग्रादि था। इसके सन्दर्भ म शाकम्भरी, डूगरसीह, नगराजपुत्र ग्रादि नामो का उल्लेख मिलता है। इसका कुछ ग्रश इस प्रकार है

"वसुनन्दनिधौवर्षे (६६८) व्यतीत विक्रमार्कत
मूलदेव नरेशस्तु (चूडाम) णि रभूद्भुवि ॥६॥
चौलक्य नामनि प्रसन्न सुकृती लोक कृपादे कृत्यकारक
नरागुर्णे विष्णवे रतोनित्य दानीसत्पात्रपोषक ॥१४॥

चित्तौड का लेख[१३७] (१३०० ई०)

यह चित्तौड का एक खण्डित लेख है, जिसमे २५ से २६ श्लोक हैं। इसमे नागरी लिपि प्रयुक्त की गई है। यह लेख वि स १३५७ का है। इसमे धर्मचन्द्र तथा उनकी गुरु परम्परा का तथा एक मानस्तम्भ की स्थापना का वर्णन दिया गया है। प्रस्तुत प्रशस्ति मे उस समय की जैनाचार्यों की परम्परा का तथा शिक्षा के स्तर का हमे बोध होता है। इसमे वर्णित है कि कुन्दकुन्द ग्राचार्य की परम्परा मे केशवचन्द्र, देवचन्द्र, ग्रभयकीर्ति, वसन्तकीर्ति, विशालकीर्ति, शुभकीर्ति ग्रौर धर्मचन्द्र थे। केशवचन्द्र के सम्बन्ध मे इसम उल्लेख है कि वे तीनो विधाग्रो मे विशारद थे तथा इनके एक सौ एक शिष्य थे। इसकी प्रथम पक्ति मे पुण्यसिह का भी नाम मिलता है।

चित्तौड के जैन कीर्तिस्तम्भ के तीन लेख[१३८] (१३वी सदी)

इन तीनो लेखो का सम्बन्ध चित्तौड के जैन कीर्तिस्तम्भ से है, क्योकि तीनो मे स्तम्भ के स्थापनकर्त्ता साह जीजा तथा उनके वश का विवरण उपलब्ध होता है। वैसे तो इनमे कही समय ग्रकित नही मिलता, परन्तु चित्तौड की स १३५७ की एक प्रशस्ति म, जिसका वर्णन ऊपर दिया गया है, जिस गुरु परम्परा का वर्णन मिलता है उसी का वर्णन प्रथम प्रशस्ति मे मिलता है। इससे स्पष्ट है कि ये प्रशस्तिया भी १३वी शताब्दी की हैं। प्रथम लेख मे ४५ श्लोक हैं। इसके प्रारम्भ मे दीनाक तथा उनकी पत्नी वाच्छी के पुत्रनाय द्वारा एक मन्दिर के निर्माण का वर्णन है। नाय की पत्नी नागश्री ग्रौर उसका पुत्र जीजू थे। इनके सम्बन्ध मे उल्लिखित है कि इन्होंने चित्तौड मे चन्द्रप्रभ मन्दिर ग्रौर खोहर नगर मे भी एक मन्दिर बनवाया। इनके पुत्र पूर्णसिह ने ग्रपने धन का उपयोग दान के द्वारा किया। इनके गुरु विशालकीर्ति के शिष्य शुभकीर्ति के शिष्य धर्मचन्द्र थे। महाराणा हम्मीर ने इनका खूब सम्मान

---

१३७ ए रि इ ए, १९५६-५७, पृ० ५१, बी० १०८, (Annual Report, Indian Epigraphy) जैन शिलालेख सग्रह, पृ० ६३-६४।

१३८ रि इ ए, १९५४ ५५ क ४९१,
ग्रनेकान्त वर्ष २२ प्रथम ग्रक मे श्री सोमानी का लेख,
जैन शिलालेख सग्रह, पृ० ६४-७०।

किया था। इनके द्वारा मानस्तम्भ की स्थापना की गई थी। चित्तौड़ के वर्णन में वहां वृक्षावली के कारण शीतल वायु का उल्लेख वहां की जलवायु पर अच्छा प्रकाश डालता है। इस वर्णन में 'तलहटि' का वर्णन भी चित्तौड़ दुर्ग के नीचे वाले भाग में आबादी का द्योतक है।

दूसरे लेख का मुख्य भाग स्याद्वाद के सम्बन्ध में है। इस लेख का अन्तिम पंक्ति में वघेरवाल जाति के सानाय के पुत्र जीजाक द्वारा स्तम्भ निर्माण का उल्लेख है। तीसरे लेख के प्रारम्भ के भाग में निर्वाण भक्ति का विवेचन दिया गया है और अन्तिम भाग में जीजा के युक्त संघ की मंगलकामना की गई है।

नीचे तीनों लेखों की कुछ पंक्तियां दी जाती हैं :

(अ) "यश्चंद्रप्रभमुच्चकूटघटनं श्रीचित्रकूटे नटत्
कोत्रत्पल्लव तालवीजनमरुप्रध्वस्तसुर्यश्रिमे"

(ब) "बघेरवालजातीय सा: नाय सुत् जीजाकेन
स्तम्भ कारापितः ।।शुभं भवतु ।।

(स) तेन सुवानंतजिने (श्वरा)णां मुनिगणानां च
(निर्वाण)स्थानानि निवृत्यै (वा) पांतु संघं जीजान्वितं सदा ।।

इन तीनों लेखों को यदि हम चित्तौड़ के वि. सं. १३५७ के लेख के साथ पढ़ते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि चित्तौड़ का जैन-कीर्तिस्तम्भ १३वीं सदी में जीजाक के द्वारा बनाया गया था। वैसे यह मान्यता चली आई है कि जीजाक ने इसे ११वीं सदी में बनाया। इस लेख का महत्त्व जीजाक के १३वीं सदी में होने से अधिक बढ़ जाता है। इसके द्वारा जैन-कीर्तिस्तम्भ का निर्माणकाल भी १३वीं सदी में स्थापित होता है। यदि हम इस स्तम्भ की शिल्पकला को देखते हैं तो उसकी साम्यता ११वीं सदी के स्थापत्य से न होकर १३वीं सदी के स्थापत्य से होती है। वैसे तो इन शिलालेखों का पारस्परिक एक ही क्रम में सम्बन्ध स्थापित करना तो कठिन है, परन्तु तीनों में जीजाक का उल्लेख होना उनकी समकालीनता पर प्रकाश डालता है।

जैन दिगम्बर कीर्तिस्तम्भ सम्बन्धित खण्डित लेख[१३९]

ये लेख दो खण्डों में मिले हैं जिनके द्वारा जैन कीर्तिस्तम्भ के सम्बन्ध में कुछ अपूर्ण सूचना मिलती है। इनमें किसी में तिथियां नहीं हैं। प्रथम खण्ड में कैलाश शैल शिखर स्थित देवता की तथा अरिष्टनेमि की स्तुतियां हैं और पावापुरि का वर्णन है। इसमें कुल १२ श्लोक हैं। इसके अंत के भाग से 'संघजीजान्वित सहा' का पाठ मिलता है। दूसरे खण्ड में भी जीजा का रोचक वर्णन प्राप्त होता है। इसमें अंकित है कि 'बघंरवाल जातीय सा. नाय सुत जीजाकेन स्तंभः कारापित'

१३९. वरदा वर्ष ६, अंक १।

समरसिंह के काल का खण्डित लेख[140]

यह एक लघु लेख गोमुख के पास उपलब्ध हुआ था जो पूर्णरूप से खण्डित है। इसमें समय सम्बन्धी दो अंक १३ " ' रह गए हैं। इसमें समरसिंह के समय कुछ मूर्तियों की स्थापना का उल्लेख है। इसके द्वारा हमें एक बड़े महत्त्व की सूचना मिलती है कि समरसिंह का मंत्री कर्मसिंह था।

चित्तौड़ का एक अन्य लेख[141]

यह लेख चित्तौड़ के जैन स्तंभ के पास किसी मन्दिर में लग रहा था, जहां से सम्भवतः किसी तरह वह हटाया गया हो। अब उसकी ३–४ शिलाओं में से एक शिला ही उपलब्ध है जिसे गोसाईं जी के चबूतरे पर लगा दिया गया है। इस शिला में २१ से ४५ श्लोक हैं। श्लोक ४४ में हम्मीर का और श्लोक ४५ में पुण्यसिंह द्वारा मानस्तंभ की प्रतिष्ठा का वर्णन है। अन्य कई श्लोकों में श्रेष्ठि पुण्यसिंह का विस्तार से वर्णन है। प्रस्तुत लेख से हम पूर्व मध्यकालीन युग के चित्तौड़ में विद्या की प्रगति का अध्ययन कर सकते हैं। उस काल में जैन साधु विशालकीर्ति, शुभकीर्ति आदि साहित्य और दर्शन के प्रकाण्ड विद्वान् थे, जैसाकि इस लेख से स्पष्ट है, इस लेख से हमें तिथि, संवत् आदि सूचना उपलब्ध नहीं होती।

चित्तौड़ का लेख[142] (१३०१ ई०)

यह लेख भी चित्तौड़ से प्राप्त हुआ था जिसे उदयपुर संग्रहालय में सुरक्षित कर दिया गया है। लेख का विषय १८" × १६" में उत्कीर्णित है। इसका दाहिनी भाग का कुछ अंश खण्डित है और अक्षर इतने घिस गये हैं कि स्पष्ट रूप से पढ़े नहीं जाते। प्रस्तुत लेख में महारावल समरसिंह के उल्लेख के अतिरिक्त उसके प्रतिहार वंशी महारावत पाता के पुत्र धारसिंह द्वारा समिद्धेश्वर में कुछ निर्माण करने का वर्णन है। इसका मूल भाग का कुछ अंश इस प्रकार है–

"धारसिंहेन श्री भोजस्वामी देव जगत्या प्रशस्ति पट्टिका कारापिता"

वधीणा के शान्तिनाथ के मन्दिर का लेख[143] (१३०२ ई०)

सिरोही के वधीणा ग्राम में शान्तिनाथ का मन्दिर है उसके निमित्त सोलंकियों ने सामूहिक रूप से ग्राम व खेत और कुए के हिसाब से मंदिर के निमित्त कुछ अनुदान की व्यवस्था की। इसमें सेई शब्द सेर के तोल के लिए तथा ढीवडा कुए के लिए और अरहट रहट के लिए प्रयुक्त किये गये हैं। लेख का मूल इस प्रकार है :

"संवत् १३५६ वर्षे वैशाख शुदि १० शनि दिने' ' ' लद्देशे वाघसीण ग्रामे

---

१४०. एक प्रतिलिपि के आधार पर।

१४१. एक प्रतिलिपि के आधार पर।

१४२ ओझा, उदयपुर, भा० १, पृ० १७८।

१४३ नाहर, जैन लेख, भा० १, नं० ९५९, पृ० २६७, गोपीनाथ शर्मा, बिबलियोग्राफी, नं० ३३ पृ० ६।

महाराज श्री सामंतसिंह देव कल्याण विजयराज्ये वर्तमाने सोलं—पा भट पु. रजर सोलंगागदेव पु अंगद मंडलिक सोल सीमाल पु कुंताधारा सो. माला पु. मोहन त्रिभुवण पट्टा सोहरपाल सो. धूमण पट वायत वणिग् सीहा सर्व सोलंकी समुदायेन वाघसीण ग्रामीय अरहट अरहट प्रति गोधूम सं. ४ ढीवडा प्रति गोधूम सेई २ तथा धूलिया ग्रामे सो. नयणसिंह पु जयतमाल सो. मंडलिक अरहट प्रति गोधूम सेई ४ ढीवडा प्रति गोधूम सेई २ सेतिका २ श्री शांतिनाथ देवस्य यात्रा महोत्सव निमित्तं दत्ता। एतत् आदानं सोलंकी समुदायः दातव्यं पालनीयंच। आचंद्रार्क। यस्य यस्य यदा भूमि तस्य तस्य तदा फलं। मंगलं भवतु।

चित्तौड़ का शिलालेख,[१४४] (१३०२ ई०)

यह शिलालेख चित्तौड़ के रामपोल दरवाजे के पास डॉ. ओझा को प्राप्त हुआ, जिसे उन्होंने उदयपुर संग्रहालय में सुरक्षित किया। यह लेख समरसिंह के समय का है जिसमें माघ शुक्ला १० वि. सं. १३५८ (१३०२ ई.) अंकित है। लेख में कुल मिलाकर १८"×१६" का भाग घेरे हुए है। यह लेख अच्छी दशा में नहीं है। दाहिनी ओर का कुछ अंश टूट जाने से थोड़े से अक्षर भी इस के टूट गये हैं। जो उत्कीर्णित भाग बचा है उसका आशय यह है कि महाराजाधिराज श्री समरसिंह के राज्यकाल में प्रतिहार वंशी महारावत राज्य श्री······ राज पाता के बेटे राज. (राजपुत्र) धारसिंह ने श्री भोज के बनवाये हुए मन्दिर में प्रशस्ति पट्टिका सहित ······ अपने श्रेय के लिए बनवाया। इस लेख में उल्लिखित प्रतिहार राजपूतों का समरसिंह के समय में सामन्त होना तथा भोज के बनवाये हुए मन्दिर में (समिधेश्वर मन्दिर) किसी भाग को उसके द्वारा बनवाना सिद्ध होता है। इसकी भाषा संस्कृत है। इसका गद्यांश इस प्रकार है:

"ओं ।। संवत् १३५८ वर्षे माघ शुदि १० दशम्यां ······ " महाराजाधिराज श्री समरसिंह देव (क) ल्याण विजयराज्ये तत्पादोपि (प) जीविनि दे·······र्म्मा······· समस्तराज्य धुरां धारय······ प्रतिहारवंशे महारावत राज श्री···· ····राशाखीय राज० पातासुतराज० धारसिंहेन भोजस्वामिदेव जगत्यां····केलिर्निम्मित प्रशस्ति-पट्टिका सहिता ······ श्रेय से कारापिता"

गंभीरी नदी के पुल का शिलालेख[१४५] (१२७३–१३०२ ?)

जैसाकि इसी प्रकार के नवमें कोठे के शिलालेख से स्पष्ट है, यह लेख भी गंभीरी नदी के पुल बनाते समय मन्दिरों के अवशेषों के साथ १०वें कोठे में खिज्र खाँ द्वारा लगवा दिया गया हो। इसमें संवत् वाला अंश तो जाता रहा है, परन्तु यह स्पष्ट है कि ये लेख समरसिंह के काल का है। इसमें उल्लिखित है कि रावल समरसिंह

---

१४४. ओझा, उदयपुर राज्य, भा० १, पृ० १७८।

१४५. बं. ए. सो. ज., जिल्द ५५, भा० १, पृ० ४७
ओझा, उदयपुर राज्य, जि. १ पृ० १७८।

ने अपनी माता जयतल्लदेवी के श्रेय के लिए श्रीभर्तृपुरीय गच्छ के आचार्यों की पोषध शाला के निमित्त कुछ भूमि दी। अपनी माता के बनवाये हुए मन्दिर के लिए उसने कुछ हाट की तथा बाग की भूमि भी दान के रूप मे दी। इसी प्रकार चित्तौड की तलहटी एव सज्जनपुर की मडपिकाओ से कुछ द्रम अनुदान के रूप मे दिये जाने की आज्ञा दी। इस लेख से कर-व्यवस्था, प्रमुख मडपिकाओ के स्थान और उस समय की उदार धार्मिक स्थिति पर प्रकाश पडता है।

दरीबे का शिलालेख[146] (१३०२ ई०)

यह लेख काकरोली स्टेशन से कुछ दूर दरीबा गाँव के मातृकाओ के मन्दिर के एक स्तभ पर उत्कीर्ण है। महारावल रत्नसिंह के समय का यह सभवत अबतक एक ही लेख उपलब्ध हुआ है जिससे उसकी ऐतिहासिकता पर सन्देह की कोई गुंजाइश नही रह जाती। इसमे मेवाड को एक मडल की सज्ञा दी है तथा रत्नसिंह को समस्त राजाओ से अलकृत कहा है। इसमे रत्नसिंह के काल का मह श्री महणसिंह मुद्रा व्यापार सम्बन्धी मन्त्री होना अकित है। उस समय की शासन व्यवस्था पर प्रकाश डालने मे यह लेख बडा सहायक है। इसमे स्पष्ट उल्लिखित है कि ऐसे अधिकारियो की नियुक्ति स्वय राजा करते थे। लेख का मूल इस प्रकार है :

"संवत् १३५९ वर्षे माघ सुदि ५ बुध दिने अद्येह श्रीमेदपाटमडले समस्त राजावलिसमलं कृत महाराजकुल श्री रत्नसिंहदेवकल्याण विजयराज्ये तन्नियुक्त मह. श्री महणसीह समस्त मुद्रा व्यापारा-परिपथयति··· ··· ·· "

अचलेश्वर प्रशस्ति[147]

यह प्रशस्ति बहुत बडी है। इसके ऊपर के भाग के बहुत से अक्षर खण्डित हैं एव संवत् का भाग जमीन मे हो, ऐसा अनुमान होता है। इसका वीर विनोद मे परमारो के वश सम्बन्धी भाग ही मुद्रित हुआ है। इसमे अग्नि कुड से पुरुष के उत्पन्न होने का उल्लेख है तथा यह वर्णित है कि परमारो का मूल पुरुष धूमराज था। इसी वंश मे रामदेव का वर्णन है जो बडा सुन्दर था। उसके पुत्र धवल के सम्बन्ध मे लिखा गया है कि उसने कुमारपाल के शत्रु मालवे के राजा बल्लाल को मारा था। उसके पुत्र धारावर्ष के लिए कोकण के राजा को मारने का उल्लेख है। धारावर्ष के छोटे भाई प्रहलादन की वीरता तथा सोमसिंह के पराक्रम का भी इसमे वर्णन है। प्रस्तुत मुद्रित भाग से १० से २० श्लोक उपलब्ध होत हैं।

इसका कुछ अश इस प्रकार है—

"हुत्राय मैत्रावरुणस्य जुहृत श्रवडोग्नि कु डात्पुरुष पुरो भवत्"

"तस्य प्रल्हादनो नाम वामनस्ये वयूभुव ॥
अनुजन्मा भवपेन दक्षा श्री रणजन्मना ॥

---

१४६ ओझा, उदयपुर राज्य, भा० १, पृ० १९१-१९२।

१४७ वीर विनोद भा० २, प्रकरण ११, शेष सग्रह , ५।

बमासा गाँव का लेख[१४८] (१३०२ ई०)

वागड़ के अन्तर्गत बमासा गाँव का वि. सं. १३५९ आषाढ़ सुदि १५ (ई. सं. १३०२ ता. ११ जून) का यह लेख वागड़ वटपद्रक के महाराजकुल श्री वीरसिंह देव के ज्योतिषी महाप के पुत्र वाधादित्य को उक्त महारावल द्वारा मंगहडक (मूंगेड़) गाँव देने की सूचना देता है। इससे बड़ौदे की सम्पन्न अवस्था तथा वीरसिंह देव की धर्म-परायणता, वैभव, दानशीलता व उदारता का बोध होता है।

इसका मूल इस प्रकार है—

"संवत् १३५९ वर्षे आपाढ़ सुदि १५ वागडपद्र के महाराजकुल श्री वीरसिंहदेव कल्याण विजयराज्ये....महामो [ढ] ज्योतिषी महावसुत ज्योतिवाधादित्यस्य (न्याय) मंगहड ग्रामं उदकेन प्रदत्तं ॥"

वरवासा गाँव का लेख[१४९] (१३०२ ई०)

इस लेख में वरवासा गाँव को वि. सं. १३५९ में महाराजकुल श्री वीरसिंह देव द्वारा उसके पुरोहित श्री शंकर को देने का उल्लेख है। इसका मूल इस प्रकार है—

"संवत् १३५९ वर्षे महाराजकुल श्री वीरसिंहदेव (वेन) पुरो. श्री शंकराय वसवासाग्रामं प्रदत्तं।"

वरवासा गाँव का लेख[१५०] (१३०२ ई०)

डूंगरपुर जिले के वरवासा गाँव के संवत् १३५९ आषाढ़ सुदि १५ के लेख से उस प्रदेश में जिसे 'वागड' कहते थे श्री वीरसिंहदेव का शासन था।

अचलेश्वर शिवालय की दूसरी प्रशस्ति[१५१] (१३२० ई०)

यह प्रशस्ति भी बहुत खण्डित है। इसमें ३६ श्लोक हैं और अन्त की कुछ पंक्तियाँ गद्य में है। इसमें अचलेश्वर के मन्दिर के जीर्णोद्धार का तथा उसकी पूजा के निमित्त हेठुंडी गाँव के देने का उल्लेख है। इसमें चन्द्रावती, अर्बुद शाकम्भरी अपरान्त आदि देशों का वर्णन है जो उस युग की भौगोलिक स्थिति पर प्रकाश डालता है। इसमें सोमवंश के माणिक्य, लक्ष्मण, सिंधुराज, असराज, कीर्तिपाल, समरसिंह, लूणवर्मा आदि शासकों की उपलब्धियों का अच्छा वर्णन मिलता है। प्रशस्ति का समय संवत् १३७७ वैसाख शुक्ल ८ सोमवार है। इसकी अन्तिम पंक्तियां इस प्रकार हैं:-

संवत् १३७७ वर्षे वैशाख सुदि ८ सोमे........*संवत्सरेऽध्येय* चंद्रावती प्रतिबद्ध बहुण सभावासित महाराजकुल श्री लुंठागरे चंद्रावती प्रभृति देशेषु तथा यावतीपुर प्रतिबद्ध द्विराजकुलाधिप........संतोशित त्रिशुक्ले श्री करणादियागारे महं. देवसिंह

---

१४८. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० ६२।

१४९. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० ६२।

१५०. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० ३।

१५१. वीर विनोद, द्वि. भा., प्रकरण ११, पृ० १२११-१३।

प्रतिबद्ध देवकुल प्रतिपद्यें श्री अर्बुदाचले देव श्री अचलेश्वर महामण्डप जीर्णोद्धारो महाराज श्री लुंठापेन कारित."

आबू के वशिष्ठ के मन्दिर की प्रशस्ति[१५२] (१३३७ ई०)

यह प्रशस्ति आबू के वशिष्ठ के मन्दिर मे लगी हुई है जिसका समय संवत् १३९४ वैशाख सुदि १० गुरुवार है। इसमे चार श्लोक तथा अन्त की कुछ पंक्तियाँ संस्कृत गद्य मे हैं। इसमे वशिष्ठ आश्रम और मुनि के प्रभाव का वर्णन है। इस मन्दिर के लिए दिए गए गाँवो के अनुदानो का वर्णन है जिनको चौहान तेजसिंह, देवडा श्री तिहुणा, कान्हडदेव तथा चौहान सामन्तसिंह ने दिये थे। ये गाँव मांवटु, ज्यातुलि, तेजलपुर, सीहलुण, वीरवाडा, तुहुलि, छापुलि और किरणथलु थे। यहाँ कान्हडदेव के अधिकार क्षेत्र को राष्ट्र की सज्ञा दी है जो ठीक नही। चौहान वश को भी यहा जाति की सज्ञा दी गई है।

इसकी अन्तिम पत्तियो का कुछ अंश इस प्रकार है :

"देवडा श्री तिहुणाकेन स्वहस्तेन सीहलु ग्राम दत्त तथा राजश्री कान्हडदेवेन स्वहस्तेन वीरवाडा ग्राम दत्त तथा चहुमान जातीय श्री सामन्तसिंहेन तुहुलि छापुलि किरणथलुग्रामत्रय दत्त"

करेडा का लेख[१५३] (१३३८ ई०)

यह लेख करेडा का है। इसमे मालदेव के पुत्र वणवीर और उसके सिलहदार महमद मुहडसीह चऊंड के पुत्र के देवलोक का जिक्र है। इस लेख से खिलजियो के चित्तौड तथा आसपास के क्षेत्र पर अधिकार रहने के समय को निर्धारित किया जाता है। इसका मूलपाठ इस प्रकार है—

"संवत् १३९५ वर्षे पौष सु ५ रवौ श्री चित्रकूट स्थाने महाराजाधिराज पृथ्वीचन्द्र·······श्री मालदेव पुत्र श्री वणवीर सत्क सिलहदार महमदेव मुहडसिंह चऊडरा सत्क पुत्र ··· ···दिव गतं तस्य सत्क गोमट्ट कारापित"

गोगूदा का लेख[१५४] (१३६७ ई०)

यह लेख गोगूदा के शीतला माता के मन्दिर के छवने पर खुदा हुआ है जो वि. स. १४२३ आपाढ कृष्णा १३ भौमवार का है। इसमे राणा षेतपालदे (खेता) के राज्यकाल मे ठ सातल के सुत ठ डाला ने मन्दिर का जीर्णोद्धार कराया और उसमे विष्णु की मूर्ति की प्रतिष्ठा की। यह सस्कृत भाषा मे है और देवनागरी में उत्कीर्ण है। इस लेख का अक्षरान्तर इस प्रकार है—

"स्वस्ति श्री राणा षे (खे) त पालदे राज्ये सवत् १४२३ वर्षे आपाढ वदि

---

१५२. वीर विनोद, भा० २, प्रकरण ११, शेष संग्रह सं. १५, पृ० १२१३।

१५३. नाहर, जैन लेख, भा० २, स. १९५५, पृ० २४२।

१५४. एक प्रतिलिपि के आधार पर।

१३ भौमे अश्विनी नक्षत्रे शोभन योगे ठ. सातल सुत ठ. डाला जीर्णोद्धार प्रासादं विष्णुमूर्ति प्रतिष्ठितं"

ऋषभदेव का लेख[१५५] (१३७४ ई०)

यह लेख प्रसिद्ध ऋषभदेव के मंदिर के खेला मंडप की दीवार में लगा हुआ है, जिसका समय वि० सं० १४३ वैशाख सुदि ३ बुधवार है। इसका आशय यह है कि दिगंवर सम्प्रदाय के काष्टासंघ के भट्टारक श्री धर्मकीर्ति के उपदेश से शाह बीजा के बेटे हरदान ने इस जिनालय का जीर्णोद्धार करवाया। यह लेख मंदिर के विभिन्न भागों के निर्माण करने को निर्धारित करने में बड़ा सहायक होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि पहिले गर्भगृह, खेला मंडप आदि बने और पीछे इस मन्दिर की देव कलिकाओं का निर्माण हुआ, जैसाकि अन्य लेखों से स्पष्ट है। मंदिर के निर्माण में काष्टासंघ के भट्टारकों और दिगंवरी श्रावकों की प्राधान्यता रही हो ऐसा भी कई लेखों से प्रमाणित होता है।

माचेड़ी की बावली का लेख[१५६] (१३८२ ई०)

माचेड़ी (अलवर जिला) की बावली वाले वि० सं० १४३९ के शिलालेख में 'बड़गूजर' शब्द का प्रयोग पहले पहल प्रयुक्त हुआ। उस लेख से पाया जाता है कि उक्त संवत् में वैशाख सुदि ६ को सुल्तान फीरोजशाह तुगलक के शासनकाल में माचेड़ी पर बड़गूजर वंश के राजा आसलदेव के पुत्र महाराजाधिराज गोगदेव का राज्य था। इस बावड़ी का निर्माण खंडेलवाल महाजन कुटुंब ने बनवाई थी।

डेसा गांव की बावड़ी का लेख[१५७] (१३९६ ई०)

डूंगरपुर राज्य के डेसां गांव की बावड़ी का वि० सं० १४५३ कार्तिक वदि ७ सोमवार (ई० स० १३९६ ता० २३ अक्तूबर) का यहले ख राजपूताना म्यूजियम अजमेर में सुरक्षित है। उसमें अंकित है कि गुहिलोत वंशी राजा भचुंड के पौत्र और डूंगरसिंह के पुत्र रावल कर्मसिंह की भार्या माणकदे ने उक्त समय में इस वापी का निर्माण कराया। इस लेख से डूंगरपुर के तीन शासकों—भचुंड, डूंगरसिंह और कर्मसिंह की उत्तरोत्तर वंश स्थिति का पता लगता है और यह भी प्रतीत होता है कि कर्मसिंह की भार्या माणकदे थी जो धार्मिक तथा लोकहित कार्यों में रुचि लेती थी। मूल लेख का अक्षान्तर इस प्रकार है—

"स्वस्ति श्री नृपविक्रमसमयातीत संवत् १४५३ वर्षे शाके १३१८ प्रवर्तमाने कार्तिकमासे कृष्णपक्षे सप्तम्यां तिथौ सोमवासरे रोहिणी नक्षत्रे ग (गु) हिल (लो) त-वंशोद्भवभूपचंड सुत डूंगरसिंह त (स्त) तसुतराउल कर्मसिंह भार्या बाई श्री माणिकदे तथा इयं वापी कारापिता।"

---

१५५. ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भा० १, पृ० ४१–४२।

१५६. रा. म्यू. अजमेर ई० सं० १९१८–१९ की रिपोर्ट, पृ० २ लेख सं० ८।

१५७. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० ६३

देव सोमनाथ का लेख[१४८]

इसके समय का भाग तथा अन्य कुछ अक्षर अस्पष्ट हैं। परन्तु इसका आशय यह है कि वागड का शासक सोमनाथ का भक्त था। इस मन्दिर को सम्भवत गुजरात के सुलतान अहमदशाह ने तोडा था। इस मन्दिर का जीर्णोद्धार सोमनाथ ने करवाया। इससे गुजरात की चढाई और सोमनाथ की शिव भक्ति पर अच्छा प्रकाश पडता है।

ऊपरगांव (डूगरपुर) की प्रशस्ति[१४९] (१४०४ ई०)

यह प्रशस्ति राजस्थान के दक्षिण भाग पश्चिमीय वागड के डूगरपुर से लगभग सात आठ मील दूर ऊपरगांव नामक ग्राम के दिगम्बर जैन आम्नाय के श्रेयासनाथ (लौकिक मे सरियण जी) के मन्दिर मे लगी हुई है। प्रशस्ति मे समय सवत् १४६१ वैशाख सुदि ५ शुक्रवार दिया है, जो उक्त मन्दिर की प्रतिष्ठा का बोधक है। प्रशस्ति लगभग सुरक्षित अवस्था मे है। इसके अक्षरो की लिपि सुन्दर है और इसकी अधिकाश भाषा पद्यमय सस्कृत है। इसमे कुल छत्तीस पक्तियाँ है। मगलाचरण और चौबीस तीर्थंकरो की स्तुति करने के पीछे आठवी पक्ति से राजवश का वर्णन है, जिनका वागड मे प्रभुत्व रहा। यह राजवश का वर्णन पक्ति उन्नीसवी मे जाकर समाप्त होता है। इसके बाद दिगम्बर आम्नाय के काष्टासघ और नदीतटगच्छ के आचार्यों की परम्परा का उल्लेख हो कर मन्दिर निर्माणकर्त्ता नरसिहपुरा जाति के प्रह्लाद के (जो डूगरपुर रावल प्रतापसिह का मन्त्री था) पूर्वजो और भाईयो के नाम दिये हैं। पक्ति ३१ से चार पक्तियाँ पद्य मे दी गई हैं, जिनम सवत्, मास, पक्ष, तिथि और वार देते हुए डूगरपुर के रावल प्रतापसिह के समय प्रह्लाद का रत्नकीर्ति गुरु के उपदेश से श्रेयासनाथ का मन्दिर बनाकर वहाँ पर ५२ प्रतिमाए स्थापित करने आदि का उल्लेख है।

राजस्थान के इतिहास के लिए यह प्रशस्ति बडे महत्व की है। इससे स्पष्ट *होता है कि डूगरपुर के आहाडा गुहिलोतो की शाखा के राजा मेवाड के प्रसिद्ध* गुहिलवशी राजा बापा, खुम्माण, भैरड, वैरिसिह, पद्मसिह और जैत्रसिह के पुत्र सीहडदेव के वशधर हैं। सिहडदेव का पुत्र जैसल (जयसिह) और देदू (देवपाल) हुए। कुभलगढ की प्रशस्ति मे भी जैत्रसिह का वागड विजय करना प्रमाणित होता है। डा ओझा सामतसिह को डूगरपुर राज्य का सस्थापक मानते हैं जो जैत्रसिह का चचजाद भाई था। इससे सम्भव है कि सोलकी भीमदेव ने राज्य छीन लिया जिसे जैत्रसिह ने फिर से जीतकर अपने पुत्र सीहड को दिया।

प्रशस्ति मे प्रह्लाद के सम्बन्धियो और उनकी स्त्रियो आदि की नामावलि उस समय की सयुक्त कुटुम्ब प्रणाली तथा धर्मकार्यों मे सामूहिकता की द्योतक है।

---

१४८ ओझा, डूगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० ६७।

१४९ एक प्रतिलिपि के आधार पर।

प्रशस्ति का मूल भाग पंक्ति ३४ में समाप्त हो जाता है। अंतिम ३५वीं और ३६वीं पंक्तियां अस्पष्ट हैं, वे इस मन्दिर के निमित्त दान की हुई भूमि आदि का उल्लेख करती हैं, जो पीछे से खुदी हुई होना लिपि से स्पष्ट है।

इसकी कुछ पंक्तियां इस प्रकार हैं:

पंक्ति २९. "प्रहलादनामाप्रवरप्रधानो यो मन्दिरं कारयतिस्म जैनं"

पंक्ति ३१–३२. "राउल श्री प्रतापसिंह विजयराज्ये ऊपरगांम नाम्नि ग्रामे
श्री काष्टासंघे नदी तट गच्छे श्री रत्नकीर्ति
उपदेशात् नारसिंह ज्ञातीय खरनहर गोत्रे"

पार्श्वनाथ मन्दिर प्रशस्ति, जैसलमेर[160] (१४१६ ई०)

यह प्रशस्ति संस्कृत गद्य में है तथा यत्र-तत्र कुछ श्लोक भी इसमें दिये गये हैं। प्रस्तुत प्रशस्ति जैसलमेर के पार्श्वनाथ के मन्दिर में श्रेष्ठिवना जयसिंह नरसिंह द्वारा प्रासाद और बिंब प्रतिष्ठा के समय लगाई गई। इसका समय वि० सं० १४७३ चैत्र शुक्ला १५ है। प्रस्तुत प्रशस्ति में उकेशवंशीय रांका श्रेष्ठि परिवार के व्यक्तियों द्वारा समय-समय पर किये गये धार्मिक कार्यों का वर्णन है। जैसे इस परिवार के व्यक्तियों ने वि. सं. १४१५, १४२७, १४३६, १४४९ में सकुटुम्ब तीर्थयात्राएं सम्पादन कीं। इस परिवार को उपदेश देने वाले आचार्यों का भी इसमें नामोल्लेख है जिनमें श्री जिनोदयसूरि, श्री जिनराजसूरि, श्री जिनदत्तसूरि और श्री जिनवर्द्धनसूरि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। इस प्रशस्ति से संयुक्त परिवार प्रणाली तथा धार्मिक कार्यों में कौटुम्बिक सहयोग का बोध होता था। यह रांका परिवार जैसलमेर का बड़ा समृद्ध परिवार था जैसाकि अन्य ग्रन्थ प्रशस्तियों से भी स्पष्ट है। इसमें वि. सं. १४७३ में लक्ष्मणराज का जैसलमेर में राज्य होना उल्लिखित है।

इसके कुछ अंश को नीचे दिया जाता है—

पंक्ति १–२ जगदभिमतफलवितरण विधिना निरवधि गुणेन यशसा च।
यः पूरितविश्वासः सकोपि भगवान् जिनो जयति ॥१॥"

पंक्ति २१–२३ "अथ श्री जेसलमेरौ श्री लक्ष्मणराज्ये विजयिनि सं० १४७३ वर्षे चैत्र सुदि १५ दिने तैः श्री जिनवर्द्धनसूरिभिः प्रागुक्ता न्वमास्ते श्रेष्ठिवना जयसिंह नरसिंह नामाः समुदायकारित प्रसाद प्रतिष्ठा सह जिनबिंब प्रतिष्ठा कृत"

कोटसोलंकी का लेख[161] (१४१८ ई०)

प्रस्तुत लेख देसूरि गाँव के समीप स्थित कोटसोलंकियों के एक जीर्ण मन्दिर में

---

१६० भाण्डारकर रिपोर्ट, १९०४–०५ तथा १९०५–०६, सं. ४८, पृ० ६३;
गा. ओ. सि. नं० २१, एपेन्डिक्स, नं० २;
जैन ले. संग्रह, नं० २११३।

१६१. मरु-भारती, अंक अप्रैल १९६७, पृ० १।

लगा हुआ है। इसका समय वि. सं. १४७५ आषाढ सुदि ३ है। इस लेख का सबसे बड़ा महत्त्व यह है कि इससे प्रमाणित होता है कि गोडवाड क्षेत्र को महाराणा लाखा ने जीता था। दूसरी महत्त्वपूर्ण बात इस लेख से सिद्ध होती है कि महाराणा लाखा वि. सं. १४७५ तक जीवित था। इस लेख के मिलजाने से ख्यातो मे दी गई लाखा की निधन-तिथि वि. सं १४५४ असत्य प्रमाणित होती है।

इस लेख मे १० पक्तियाँ हैं जिसमे प्रधान ठाकुर श्री माडण, आसलपुर दुर्ग और साह कडुआ, पु जगसीह, पुत्र खेडा, पुत्र सुहड तथा इनकी भार्याओ का नाम अंकित है। साथ ही इसमे पार्श्वनाथ के चैत्य के मंडप के जीर्णोद्धार का वर्णन है। इसमे समस्त सघ ही साक्षी का उल्लेख भी महत्त्वपूर्ण है।

लेख का मूल इस प्रकार है—

"स्वस्ति श्री सवत् १४७५ वर्षे आषाढ सुदि ३ सोमे राणा श्री लाषा विजयराज्ये प्रधानठाकुर श्री माडण व्यापारे श्री आसलपुर दुर्गे श्री पार्श्वनाथ चैत्ये। उपकेशवशी [ ] लिगा गोत्रे साह कडुआ भार्या कमलादे पु. जगसीह वाउरा लूलु केल्हा जगसीह भार्या ऋजालहणदे पुत्र खेढा भार्या जयती पुत्र सुहड सल्लू सहितेन आत्मपुण्य श्रेयसे बालणामडपजीर्णोद्धार: कारापित शुभं भवतु। समस्त सघ माडणठाकुर साक्षिक."

जावर की प्रशस्ति[१६२] (१४२१ ई०)

यह प्रशस्ति जावर गाँव (मेवाड) के पार्श्वनाथ के मंदिर के छबने मे उत्कीर्ण है। इसका समय वि० स० १४७८ पौष शुक्ला ५ है। इसमे वर्णित है कि मोकल के समय मे प्राग्वाट सा नाना ने, उसकी भार्या फनी और उसका पुत्र सा रतन तथा भार्या लाषू के पुत्र सहित शत्रुंजय गिरि, आबू, जीरापल्ली, चित्रकूट आदि तीर्थों की यात्रा की। इसी तरह सघ मुख्य सा. धणपाल ने भी पुत्र और पुत्रवधुओ के साथ शान्तिनाथ का मन्दिर बनवाया। इनमे स्त्रियो के नाम उस समय दिये जाने वाले नामो के ढग पर प्रकाश डालते हैं, जैसे—हासू, देजू, पूनी, पूरी, मरगद, चमकू आदि। इस नामावली से उस समय की सयुक्त परिवार प्रणाली का बोध होता है जिसमे कुटुम्ब का प्रमुख एक व्यक्ति होता है और उसके लडके, लडकियाँ, पुत्रवधुएँ उसके कुटुम्ब के सदस्य होते हैं। ऐसे धार्मिक कार्यों मे सम्पूर्ण कुटुम्ब का होना आवश्यक समझा जाता था। सयुक्त कुटुम्ब मे 'धाइत्रि' का भी अपना स्थान रहता था, जैसाकि इस लेख से स्पष्ट है।

इन नामो के अतिरिक्त इसमे जैनाचार्यों के नाम भी अंकित है—देवसुन्दर सूरि, दिननायक, सोमसुन्दरसूरि, मुनि सुन्दर, श्री जयचन्द्रसूरि, श्री भुवनसुन्दरसूरि, श्री जिनसुन्दरसूरि, श्री जिनकीर्तिसूरि, श्री विशालराजसूरि, श्री रत्नशेखरसूरि, श्री उदयनन्दसूरि, श्री लक्ष्मीसागरसूरि, श्री सूरसुन्दरगणि, श्री सोमदेवगणि

१६२. ओझा, उदयपुर, भा० १, पृ० २७९।

आदि। इन आचार्यों में श्री सत्यशेखरगणि महोपाध्याय तथा श्री सोमदेवगणि पंडित की उपाधि से विभूषित थे। ये सभी आचार्य अनेक विषयों के ज्ञाता थे। इस प्रशस्ति के अन्त में इनकी शिष्य परंपरा उत्तरोत्तर बढ़ती रहे और उनका सतत उदय होता रहे ऐसी कामना की गई है। प्रस्तुत प्रशस्ति से उस समय के शिक्षाविदों और शिक्षा की स्थिति पर अच्छा प्रकाश पड़ता है।

इसकी प्रारम्भ और अन्त की पंक्तियों का अक्षरान्तर इस प्रकार है—

"संवत् १४७८ वर्षे पोष सुद ५ राजाधिराज श्री मोकलदेव विजयराज्ये प्राग्वाट सा. नाना भा. फनी सुत सा. रतन भा. लाषू पुत्रेण........"

"पं० सोमदेवगणि प्रमुखं प्रतिदिन्नधिकाधिकोदयमान शिष्यवर्गो चिरं विजयतां"

टाकरडा गाँव के शिवालय का लेख[१६३] (१४२७ ई०)

यह लेख डूंगरपुर जिले के ठाकरडा गाँव के सिद्धेश्वर महादेव के मन्दिर का है, जिसका समय वि० सं० १४८३ चैत्र सुदि ५ (ई० स० १४२७ ता० ३ मार्च) है। इसमें गुहिल के वंशधर खुंमाणवंशी प्रतापसिंह के पुत्र गोपीनाथ के राज्य-काल में उक्त मन्दिर का निर्माण मेघ नामक बडनगरा जाति के नागर ब्राह्मण द्वारा कराया जाना उल्लिखित है।

समाधीश्वर लेख[१६४] (१४२८ ई०)

मूल लेख चित्तौड़ के समाधीश्वर के मन्दिर के सभामण्डप की पूर्वीय दीवार में संगमूसा पत्थर पर ५३ पंक्तियों में उत्कीर्ण है। इसमें कुल ७५ श्लोक हैं। इसका समय वि० सं० १४८५ माघ शुक्ला तृतीया है। प्रथम से चतुर्थ श्लोकों में गणपति, पार्वती, अच्युत, राधा और रुक्मणी की स्तुति की है। आगे गुहिलवंश की धर्मसंस्थापन तथा कार्यक्षमता की प्रशंसा है। जहाँ हम्मीर का वर्णन है उसकी तुलना अच्युत, कामदेव, ब्रह्मा, शंकर तथा कर्ण से की है। उसके द्वारा हजार गौओं के दान देने का भी उल्लेख इसमें मिलता है। क्षेत्रसिंह के समय की समृद्धि का वर्णन उसके द्वारा स्थापित शान्ति से है, जो अलाउद्दीन के आक्रमण के कारण भंग हो गई थी। लाखा को भी इसमें एक वीर योद्धा के रूप में उपस्थित किया गया है। मोकल की विजयों में चीन, कश्मीर को सम्मिलित कर ऐतिहासिक तथ्यों को नष्ट किया गया है, परन्तु इसमें दिये गये नागौर के सुलतान को परास्त करने का वर्णन तथ्यपूर्ण है। मोकल के द्वारा चित्तौड़ में प्रासादों के निर्माण, सुवर्ण तुलादान तथा द्वारिकाधीश के मन्दिर का बनाना रोचक रूप से प्रस्तुत किया गया है। इसमें दिये गये मेदपाट तथा चित्तौड़ की प्राकृतिक स्थिति, झरने, तड़ाग आदि का वर्णन

---

१६३. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० ६७।

१६४. भाव. इं. नं. ६, पृ० ९६–१०८;
ए. इ. भा० २, पृ० ४०८–४१०;
गोपीनाथ शर्मा—बिबलियोग्राफी, नं. ३५, पृ० ७।

वास्तविकता लिए हुए है और वह लेखक का इस भाग से परिचित होना बतलाता है। महाराणा लाखा द्वारा झोटिंग भट्ट को प्रश्रय देने वाली बात उस समय की विद्योन्नति का सूचक है। इसका समय वि० सं० १४८५ माघ कृष्णा ३ है।

प्रस्तुत प्रशस्ति का रचयिता विष्णुभट्ट का पुत्र एकनाथ था जो दशपुर (दशोरा) जाति का था। मन्दिर का जीर्णोद्धार सूत्रधार बीजल के वंशज तथामना के पुत्र वीसल ने अपने अनेक सहयोगियो की सहायता से करवाया। वीसल शिल्प विद्या मे बडा निपुण था और राणा का कृपापात्र भी था। वीसल ही इसका उत्कीर्णक था।

इसके कुछ श्लोक के पद इस प्रकार हैं—

"पीरोजं कीर्तिवल्ली कुसुममुरमतिर्योकरोत्संगरस्थः ॥५१॥"

"प्रासाद रचितोपचारमकरोद्भूमीपतिर्मोक्लः ॥६१॥"

शृङ्गी ऋषि शिलालेख[१६५] (१४२८ ई०)

प्रस्तुत लेख एकलिंगजी से अनुमान ६ मील दक्षिण-पूर्व मे शृङ्गी ऋषि नामक स्थान मे तिबारे मे लगा हुआ है। इसका समय वि. स १४८५ श्रावण शुक्ला ५ का है। इस लेख मे समानान्तर दो दरारें हो गई हैं और इसके तीन टुकडे हो गये हैं। फिर भी यह १'.१०"×१'.३" के श्याम पत्थर पर ३१½ पंक्तियो मे उत्कीर्ण है और यथा स्थान लगा हुआ है। इसमे सस्कृत भाषा उपयोग मे लाई गई है और सम्पूर्ण लेख ३० श्लोको मे है। इसकी रचना कविराज वाणीविलास योगीश्वर ने की और सूत्रधार हादा के पुत्र फना ने इसे खोदा।

यह लेख मोकल के समय का है जिसने अपने धार्मिक गुरु की आज्ञा से अपनी पत्नी गौराम्बिका की मुक्ति के लिए शृङ्गी ऋषि के पवित्र स्थान पर एक कुंड को बनवाया और उसकी प्रतिष्ठा की। लेख के प्रारम्भ मे विद्यादेवी की प्रार्थना की गई है और फिर हम्मीर, क्षेत्रसिंह, लक्षमिह और मोक्ल की उपलब्धियो का वर्णन किया गया है। हम्मीर के बारे मे इसमे उल्लिखित है कि उसने झालावाड के स्वामी को परास्त किया, ईडर के शासक को मारा, पालनपुर को भस्म किया तथा भीलो को परास्त कर भोमट और वागड के भागो पर अधिकार स्थापित किया। उसके पुत्र क्षेत्रसिंह ने अमीशाह (मालवा के प्रान्त पति) को परास्त किया और इसके फलस्वरूप घनराशि तथा कई घोडे उसके हाथ पडे। उसने माडलगढ को भी नष्ट किया। उसके पुत्र लाखा ने त्रिस्थली से—काशी, प्रयाग और गया—हिन्दुओ से लिए जाने वाले कर को हटवाया और गया मे मन्दिर बनवाये। लाखा के पुत्र मोकल के सम्बन्ध मे भी लेख मे उल्लेख किया गया है कि उसने फीरोज खाँ (नागौर) तथा अहमद (गुजरात) से दो युद्ध लडे और उन्हे परास्त किया।

---

१६५. ए रि. रा म्यू. अजमेर, १९२४-२५;
ए. इं, जि. २८, पृ० २३०-२४१;
गोपीनाथ शर्मा—बिबलियोग्राफी, स० ३४, पृ० ६-७।

इन राजनीतिक सूचना के अतिरिक्त मोकल के सम्बन्ध में हमें यह भी सूचना इस लेख से मिलती है कि उसने श्री एकलिंगजी के मन्दिर के चारों ओर प्राचीर तथा तीन द्वार बनवाये और जीवन में २५ बार उसने सोना, चांदी और बहुमूल्य पदार्थों का तुलादान किया और उसे ब्राह्मणों को बाँट दिया। इनमें से एक तुलादान पुष्करराज में भी किया गया था, जो तीर्थयात्रा का बहुत बड़ा केन्द्र है। इसमें भीलों का गुहा में रहने का उल्लेख इनकी सामाजिक स्थिति पर प्रकाश डालता है।

इस लेख की कुछ पंक्तियां यहाँ उद्धृत की जाती हैं—

पंक्ति ४–५. "चेलाख्यं पुरमग्रहीदरिगणान्मिल्लान्गुहगिहकान्जित्वा तानखिलान्निहत्य च बलाख्यातासिना संगरे"

पंक्ति १७. सत्कपाटविलसद्वारत्रयालंकृतः कैलासंनुविहायशंभुरकरो घात्राधिवासे मतिम्"

पंक्ति २०. "विद्वद्वृद [विभूषि] तः समकरोद्वापी प्रतिष्ठामिह"

पदराड़ा का लेख[166] (१४३३ ई०)

यह पदराड़ा का लेख कुंभाकालीन सबसे प्रथम लेख के रूप में प्रकाश में आया है। मोकल के एक अप्रकाशित लेख से, जो साहित्य संस्थान उदयपुर में संग्रहीत है, प्रमाणित होता है कि वि० सं० १४८७ ज्येष्ठ सु० ५ में मोकल मेवाड़ का शासक था। निजामुद्दीन व फरिश्ता के अनुसार भी वि० सं० १४८९ में मोकल जीवित था। ऐसी दशा में इस लेख का यह महत्त्व है कि कुंभा ने राज्य प्राप्ति के बाद विद्रोहियों को दबाया न कि रणमल ने, जैसाकि जोधपुर की ख्यातों में वर्णित है। इसमें पदराड़ा का नाम 'पाटकेपद्र' से सम्बोधित किया है। अंतिम पंक्ति के अक्षर जाते रहे है, परन्तु अन्तिम शब्द 'व इसरा' से लेख के उत्कीर्णकर्ता का बोध होता है। लेख में कुल ८ पंक्तियां हैं और इसमें भाषा संस्कृत गद्य है।

इसकी कुछ पंक्तियां इस प्रकार है :

"संवत् १४९० वर्षे तथा शाके १३५६ प्रवर्तमाने वसंतऋतौ वेशाषमासे कृ (कृ)ष्ण पक्षे सोम उत्तराफाल्गुननक्षत्रे एवमादि महाराणा कुंभकर्ण विजय राज्ये"

देलवाड़ा का ऋषभदेवजी के मंदिर का लेख[167] (१४३४ ई०)

इस लेख में 'मांडवी' पर लगाये जाने वाली लागों का जिकर है और अन्य कर मापा, पट्टसूत्रीय आदि करों का उल्लेख है। ऐसे भागों को ग्रामों में सम्मिलित किया गया है। इसमें संघ के एवं सेलहथ के महत्त्व को भी बतलाया गया है। पंद्रहवीं शताब्दी की स्थानीय भाषा को समझने के लिए ऐसे लेख से हमें बड़ी सहायता मिलती है।

इसका मूल पाठ इस प्रकार है :

---

१६६. एक प्रतिलिपि के आधार पर।

१६७. नाहर, लेख संग्रह, भा० २, सं० २००६, पृ० २५५–५६।

"संवत् १४६१ वर्षे कार्तिक सुदि १ सोमे राणा श्री कुंभकर्ण विजय राज्ये उपकेश ज्ञाति साह साहणा सारगेना माडवी उरपरे लागू कीधु। सेलहथि साजणि कीधू। श्रंके टका चउद १४ जको माडवी लेस्यइ सु देस्यई। चिहुजणे वइसी ए रीति कीधी। श्री धर्मचितामणि पूजा निमित्ति। सा रणमल मह डूंगर से हाला साह साडा साह चांप वइसी विडु रीति कीधी। एक वोरा लोपवा को न लहई। टंक ५ दे उलवाडानी माडवी ऊपरी टंका ४ देउलवाडाना मापा ऊपरि टंका १ देलवाड़ा नी पटसूत्रीय ऊपरी। एवं करिई टंका १४ श्री धर्म चितामणि पूजा निमित्त सा सारंग समस्त संघि लागु की घउ। शुभं भवतु। ए ग्रासु जिको लोपई तहेरहि राणा हमीर राणा पेता राणा लापा रा मोकल राणा कुंभकर्णनी श्राणछइ। श्री संघनी श्राण"

देलवाडा का लेख[१६८] (१४३४ ई०)

प्रस्तुत लेख मे १८ पंक्तिया हैं जिसमे कुछ प्रारंभिक भाग को छोडकर मूल भाग स्थानीय प्रचलित भाषा मे है। इस लेख से हमे पन्द्रहवी शताब्दी की राजनीतिक, आर्थिक तथा धार्मिक अवस्था की जानकारी होती है। इसमे सहणपाल और सारंग के द्वारा जो मोकल और कुंभा के समय के विशिष्ट अधिकारी थे, अपने अधीनस्थ मंडपिकाओ से कर वे कुछ अंश को धर्मचिन्तामणि की पूजा के निमित्त दिलाये जाने की व्यवस्था का उल्लेख है। इसमे जहाँ मंडपिका से धर्मचिन्तामणि की पूजा के लिए १४ टंका दिलाया जाना अंकित है वहाँ सहणपाल के साथ जो मुख्यमन्त्री था, सेलहथ (स्थानीय अधिकारी) तथा अन्य पंचो का भी उल्लेख है। इससे यह स्पष्ट है कि मंडपिका के प्रबन्धको मे मन्त्री, सेलहथ तथा अन्य प्रतिष्ठित व्यक्ति होते थे। इन १४ टंको का ब्यौरा भी इस प्रकार मिलता है। देलवाड़ा की मंडपिका से ५ टंका, देलवाडे के मापा (एक प्रकार का टेक्स) से ४ टंका, देलवाडा के मणहेडावटा पर (मण के बोझ पर लिया जाने वाला कर) २ टंका, देलवाडा के खारीवटा पर (नमक के कर पर) २ टंका और देलवाडा के पटसूत्रीय पर (कपडा तथा सूत) पर १ टंका लेने की व्यवस्था थी। इस लेख से हमे कई स्थानीय करो की जानकारी होती है और ऐसा प्रतीत होता है कि देलवाड़ा उन दिनो अच्छा व्यापार का केन्द्र था। यह लेख वि. सं १४६१ कार्तिक शुक्ला २ सोमवार का है।

"इसकी कुछ पंक्तियो का अंश इस प्रकार है—

पंक्ति ९–११ साह सहणा साह सारंगेन मांडवीउपरिलागु कीधु
सेलहथि साजणि कीधु अंके टंका चउद १४
जको माडवीलेस्यइमु देस्यई। चिहुजणे वइसी
ए रीति कीधी'

---

१६८. जैन लेख संग्रह, भा० २, संख्या २००६, पृ० २५५–२५६।

नागदा के लेख[169]अ (१४३४ ई०)

ये तीन लेख नागदा के जैन मन्दिर के हैं जो वि. सं. १४९१ के माघ वदि ५ व माघ शुक्ला ५ बुधवार के हैं। इनमें श्रेष्ठि रामदेव के परिवार, उसकी भार्या, पुत्र और पौत्रों के नाम मिलते हैं। इनका महत्त्व श्रेष्ठि परिवार की धर्मनिष्ठा जानने, बहु-विवाह तथा संयुक्त कुटुम्ब प्रणाली की जानकारी के लिए है। इनके द्वारा हमें यह भी विदित होता है कि धार्मिक उत्सवों के अवसर पर संपूर्ण कुटुम्ब का साथ होना सामाजिक व्यवस्था का अंग था और ऐसे कार्य सभी के सामूहिक श्रेय के लिए किये जाते थे। इन लेखों से कई जैन आचार्यों के नाम भी हमें उपलब्ध होते हैं जिनके उपदेश के फलस्वरूप ऐसे कार्य किये जाते थे। ऐसे आचार्यों में जिनवर्द्धनसूरि, जिनचन्द्रसूरि, जिनसागरसूरि आदि मुख्य थे। ये आचार्य उस युग के अच्छे विद्वान् होते थे और उनका समाज पर बड़ा प्रभाव होता था।

देलवाड़ा का लेख [169]ब (१४३६ ई०)

ये लेख संवत् १४९३ वैशाख कृष्णा ५ का है जिसमें वर्णित है कि पंडित लक्ष्मणसिंह ने, जो देलवाड़ा का निवासी था, पार्श्वनाथ स्वामी के जिनालय में दो कायोत्सर्ग पार्श्वनाथ की प्रतिमाएं प्रतिष्ठित करवाईं। प्रस्तुत लेख में इस प्राग्वाटवंश का क्रम बतलाया गया है। इसमें अंकित है कि श्रे. झांझा की धर्मपत्नी लक्ष्मीबाई के देवपाल नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। देवपाल की स्त्री देवलदेवी से श्रे. कुरपाल, श्रीपति, नरदेव, धीणा और पंडित लक्ष्मणसिंह उत्पन्न हुए। लक्ष्मणसिंह काछोलीवाल-गच्छीय आचार्य भद्रेश्वरसूरि, श्रीरत्नप्रभसूरि के पट्टालंकार सर्वानंदसूरि का श्रावक था। इस प्रशस्ति में लक्ष्मणसिंह को पंडित की संज्ञा दी है जो शिक्षा का प्रचार वैश्यों में होने का बोधक है। ये परिवार देलवाड़ा का प्रतिष्ठित परिवार था और उसका सदस्य झांझा वहाँ के मंदिर का गोष्ठिक था। उस समय लोक संस्थाओं को गोष्ठिक व्यवस्था द्वारा सञ्चालित किया जाता था।

देलवाड़ा का लेख[170] (१४३७ ई०)

ये लेख हासा ने, जो देलवाड़ा का रहने वाला पिछोलिया जाति का था, कायोत्सर्ग प्रतिमा की प्रतिष्ठा के अवसर पर पट्टिका पर उत्कीर्ण कराया। इसका समय १४९४ वि. फाल्गुन कृष्णा ५ है। लेख में देवपाल के वंशक्रम का वर्णन मिलता है जो कुटुम्ब प्रणाली के अध्ययन के लिए तथा श्रेष्ठियों के वंश-क्रम के अध्ययन के लिए बड़ा उपयोगी है। इसके अनुसार देवपाल के सुहडनाम का पुत्र था और उसकी स्त्री सुहड़ादेवी थी। इसके एक पुत्र करणसिंह था और उसकी पत्नी चनूदेवी थी। इसके सात पुत्र हुए जो धावा, हेमा, धर्मा, कर्मा, हीरा, काला और हीसा नाम से

---

१६९. अ एक प्रतिलिपि के आधार पर।

१६९. ब एक प्रतिलिपि के आधार पर।

१७०. एक प्रतिलिपि के आधार पर।

विख्यात थे। इसी हीसा ने उक्त प्रशस्ति और प्रतिष्ठा कार्य करवाया।

देलवाडा का लेख[१७१] (१४३७ ई०)

यह लेख भी वि. १४९४ का है जिसमे वीसल परिवार का वर्णन मिलता है। वीसल का पिता वत्सराज था। वीसल के सम्बन्ध मे इसमे लिखा है कि उसने क्रियारत्न समुच्चय की १० प्रतियाँ लिखाई थी। उन दिनों जब मुद्रण की कोई व्यवस्था न थी तो समृद्ध लोग पुस्तकें लिखवाते थे और उनका वितरण करवाते थे। इस प्रकार शिक्षा और धर्म का प्रचार होता रहता था। वीसल को एक धर्मधुरीण, सुवर्णमुकट तथा सघनायक, विवेकी तथा समृद्ध व्यक्ति के रूप मे अन्यत्र भी वर्णित किया गया है।

नागदा का लेख[१७२] (१४३७ ई०)

यह लेख नागदा गाँव की अद्भुत जी की मूर्ति पर ८ पक्तियो मे उत्कीर्ण है। इसका समय सवत् १४९४ माघ शुक्ला ११ गुरुवार है और इसकी भाषा संस्कृत गद्य है। इसमें श्रेष्ठि रामदेव परिवार का वर्णन है जो महाराणा खेता के समय से बडा प्रसिद्ध रहा था। इस लेख मे रामदेव के पूर्वज लक्ष्मीधर से वशावली उपलब्ध होती है। इस लेख से रामदेव मन्त्री की दो स्त्रियाँ—मेलादे और माल्हणदे के नाम मिलते हैं। इसी तरह इसमे उसके पुत्र सारग के हीमादे और लषमादे नामक दो भार्याओं का उल्लेख मिलता है। इस लेख से सिद्ध है कि उस समय बहु-विवाह एक प्रचलित-सा रिवाज-सा था और सयुक्त कुटुम्ब प्रणाली थी। धार्मिक कार्यों मे सम्पूर्ण कुटुम्ब का सहयोग रहता था। इसके अतिरिक्त इसमे सारंग द्वारा श्री शातिनाथ के बिंब की सस्थापना करवाने का उल्लेख है। इसमे सूत्रधार मदन के पुत्र धरणा द्वारा मूर्ति बनाना वर्णित है। यह लेख एक समृद्ध परिवार की जानकारी के लिए तथा उस समय की प्रचलित प्रणालियो के अध्ययन के लिए बडे महत्त्व का है।

इसकी कुछ पक्तियो का अंश उद्धृत है—

पक्ति ४–५ "लक्ष्मीधर सुत सा लाषू तत्पुत्र साधु श्री रामदेव तद्भार्या
प्रथमामेलादे द्वितीया माल्हणदे।"

पक्ति ५–६ 'लषमादे प्रमुख परिवार सहितेन सा. सारगेन निजभुजो
पार्जितलक्ष्मीसफलीकरणार्थं 'श्री शांतिजिनवरबिंबं
सपरिकरं कारित'

चित्तौड का शिलालेख[१७३] (१४३८ ई०)

इस लेख का एक खण्ड सातबीसदेवरी के अधिकारी के पास देखा गया था, जिसकी लम्बाई चौडाई २"×१२" के लगभग है और जो काले पत्थर पर उत्कीर्ण

---

१७१. एक प्रतिलिपि के आधार पर।

१७२. एक प्रतिलिपि के आधार पर।

१७३ वरदा, वर्ष ११, अक २।

में ३'.३"×१'×१" के स्थान में उत्कीर्ण है, जिसमें नागरी लिपि तथा संस्कृत भाषा का गद्य प्रयुक्त किया गया है। इसका समय वि. सं. १४९६ है तथा इसमें ४७ पंक्तियाँ हैं। इस प्रशस्ति का एक ऐतिहासिक महत्त्व है। इसके द्वारा हमें मेवाड़ के राजवंश का, धरणा श्रेष्ठि वंश का तथा उसके शिल्पी का परिचय मिलता है। ऐसा प्रतीत होता है कि इसमें मेवाड़ के राजपरिवार के वंशक्रम को बड़ी छानबीन के साथ लिखने का सफल प्रयत्न किया गया है। इतना होते हुए भी प्रशस्तिकार ने गुहिल को बापा का पुत्र लिख दिया है। सम्भवतः यह भूल वेद शर्मा द्वारा की गई चित्तौड़ की तथा आबू की वि० सं० १३३१ की प्रशस्ति से उद्धृत की है। ऐसा लगता है कि इस प्रशस्ति के रचयिता ने वि० सं० १०२८ का नरवाहन का शिलालेख न देखा हो। यदि ये सूचना उसे होती तो यह भूल न होने पाती। परन्तु इस प्रशस्ति से एक स्पष्टीकरण अवश्य होता है कि इसमें बापा और कालभोज को पृथक्-पृथक् व्यक्ति बतलाया है जिससे इन दोनों को एक ही नाम मानने का जो डॉ० ओझा का सुझाव है उसमें शंका की संभावना हो जाती है।

इसी तरह वंशावली के वर्णन में बापा से लेकर कुम्भा के नामोल्लेखन महेन्द्र, नागादित्य, अपराजित, महेन्द्र द्वितीय, खुम्माण प्रथम, मत्तट, मुम्माण द्वितीय, भृर्तृभट्ट द्वितीय, अम्बाप्रसाद, शुचिवर्मा के नाम छोड़ दिये हैं। इसके अतिरिक्त शीशोदे की शाखा के वंशज भुवनसिंह का उल्लेख करते हुए भीमसिंह को टाल दिया है, जिसकी उपलब्धि अपने आप में महत्त्व की है।

जहाँ कुम्भा का वर्णन इसमें दिया गया है वहाँ उसके विरुदों और विजयों का अच्छा वर्णन है। ये विजयें बूंदी, गागरोण, सारंगपुर, नागौर, चाटसू, अजमेर, मंडोर, मांडलगढ़, खाटू आदि हैं। इस अर्थ में यह प्रशस्ति चित्तौड़ और कुंभलगढ़ की राजकीय प्रशस्ति की पोषक हो जाती है। इसमें महाराणा कुम्भा को विजेता के अतिरिक्त एक सफल शासक के रूप में प्रस्तुत किया गया है जो अपने वंश परम्परा के अनुकूल धर्माचरण, न्यायपरायणता तथा प्रजापालन में निपुण था।

इस प्रशस्ति से श्रेष्ठि धरणा के पूर्वज और उसके पुत्रों का भी हमें पता चलता है। धरणा प्रथम सिरोही जाकर मेवाड़ में आ बसा, ये घटना मेवाड़ में सुख शांति होने का प्रमाण है। इसी अवस्था से प्रभावित होकर उसने अपने द्रव्य का उपयोग चतुर्मुख प्रसाद के निर्माण में किया। इसमें मांगण, कुरपाल, रत्ना, धरणा और उसके पुत्र जाखा और जावड़ इस वंश की परम्परा में उल्लिखित हैं।

इस मन्दिर की प्रतिष्ठा के सम्बन्ध में आचार्यों का नाम— जैसे श्रीजगच्चन्द्रसूरि श्री देवेन्द्रसूरि, श्री सोमसुन्दरसूरि उल्लिखित है। इसका निर्माता सूत्रधार देपाक या दीपा था यह भी सूचना प्रशस्ति के अन्त में दी गई है।

ए. रि. आ. आ. स. इ., १९०७-०८, पृ० २१४-१५;
गोपीनाथ शर्मा—बिबलियोग्राफी, नं० ३९, पृ० ७।

इसके कुछ पक्तियो के अश इस प्रकार हैं—

पक्ति १७-२० "कुल करननपचाननस्य । विपमतमरभगसारगपुर
नागरणनराणा का ऽजयमेरुमडोरमड लकरबूंदि
खाटूचाटसूजानादिनानामहादुर्गं लीलामरत्र ग्रहण
प्रमाणितजित काशित्वाभिमानस्य"

चारभुजा का लेख[१७६] (१४४४ ई०)

मेवाड राज्य के चारभुजा कस्बे के प्रसिद्ध चारभुजा के मन्दिर मे वि० सं० १५०१ (१४४४ ई०) का एक शिलालेख लगा हुआ है । इससे ज्ञात होता है कि यह मन्दिर पहले से बना हुआ था जिसका जीर्णोद्धार खरवड जाति के रावत या राव महीपाल, उसके पुत्र लक्ष्मण, उसकी स्त्री क्षीमिणी तथा उसके पुत्र झाझा, इन चारो ने मिलकर करवाया । उक्त लेख मे इस कस्बे का नाम बदरी लिखा है । सम्भवत पहिले इस स्थान का नाम बदरी रहा हो, क्योंकि चार भुजा को भी बदरीनाथ का रूप मानते हैं ।

हारीतराशि का लेख[१७७] (१४४५ई०)

यह लेख हारीतराशि की मूर्ति के नीचे खुदा हुआ है जिसका समय वि० स० १५०२ श्रावण शुक्ला पंचमी गुरुवार का है । लेख मे वर्णित है कि लकुलीश मतावलम्बी साधु वेदगर्भराशि ने हारीतराशि की मूर्ति को विंध्यवासिनी के मन्दिर म स्थापित करवाया । इसमे कुल पाँच पक्तियाँ है जो सस्कृत गद्य मे हैं ।

चित्तौड के शिल्पकारो के सम्बन्धित[१७८] लेख (१४४२-१४५८ ई०)

चित्तौड मे मन्दिर और राजप्रासादो का काम अलाउद्दीन के आक्रमण के उपरान्त पुन. आरभ किये जाने का बीडा महाराणा कुभा ने उठाया । इसीलिए कई मन्दिरो तथा महलो के आसपास प्रस्तर खण्डो पर सहस्त्रो शिल्पियो के नाम उत्कीर्ण किये हुए मिलते हैं । इन नामो मे उस शिल्पकार परिवार के सदस्यो के नाम मुख्य हैं जिसने कीर्तिस्तभ, कुभा के महलो के कुछ भाग तथा आसपास के कुछ मन्दिरो का निर्माण कार्य का नेतृत्व किया था । ये ही परिवार, चित्तौड के भाग के निर्माण सम्बन्धी कार्यो की देखरेख भी रखता था । वि. १४९९ फाल्गुन शुक्ला ५ के लेख म सूत्रधार जइता और उसके पुत्र नापा, पुजा के नाम मिलते है जो समाधीश्वर को वन्दना करते हैं । इसी प्रकार वि स १५०७ के एक लघु लेख मे जइता का नाम अकित है । इसी तरह वि स १५१० के दो लेखो मे सूत्रधार पामा तथा जइता के पुत्र नापा के नाम मिलते हैं । एक अन्य वि स १५१५ के लेख में जइता के पिता

---

१७६ ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भा० १, पृ० ३६ ।

१७७ एक प्रतिलिपि के आधार पर ।

१७८ एक प्रतिलिपि के आधार पर ।

लाषा का नाम उपलब्ध होता है। वि. सं. १४९५ के महावीर जैन प्रशस्ति में सूत्रधार नारद को लाषा का पुत्र कहा गया है। इस प्रकार खण्ड में मिलनेवाली सूचना से हमें कुंभा के एक विशिष्ट सूत्रधार परिवार का परिचय मिलता है जिसमें लाषा के दो पुत्र जइता तथा नारद प्रतीत होते हैं और जइता के पुत्र नापा, पुंजा आदि हैं। लाषा के लिए 'सकलवास्तुशास्त्रविशारद' अंकित करना प्रमाणित करता है कि यह परिवार वास्तुशास्त्र का अच्छा वेत्ता था और उसी के आधार पर इस परिवार के सदस्यों ने कुंभाकालीन निर्माण कार्य (चित्तौड़ के इलाके में) बड़ी निपुणता से किया।

वेला का लेख[१७९] (१४४८ ई०)

चित्तौड़ के शृंगार चँवरी के स्तंभ पर एक लघु लेख उत्कीर्ण है जिसमें वर्णित है कि भंडारी वेला ने, जो महाराणा कुंभा का एक विशिष्ट अधिकारी था, इस मन्दिर का निर्माण करवाया। इसमें लाखा, मोकल तथा कुंभा के नाम उल्लिखित हैं और वेला के पिता साह कोला का कोषाध्यक्ष के रूप में होने का वर्णन है। लेख में मन्दिर की प्रतिष्ठा करने वाले जिनसागरसूरि के शिष्य जिन सुन्दरसूरि तथा अन्य साधुओं के नाम भी अंकित हैं। मन्दिर की कला देखने से प्रतीत होता है कि यह मन्दिर वेला के पहिले बना हुआ था, उसने संभवतः इसकी मरम्मत करवाई और मुस्लिम आक्रमणों से नष्टभ्रष्ट हो जाने के कारण उसकी पुनः प्रतिष्ठा करवाई। इसका समय १५०५ विक्रमी है और इसमें प्रयुक्त की गई भाषा संस्कृत गद्य है। मूल लेख के कुछ अंश को यहाँ उद्धृत किया जाता है :

"संवत् १५०५ वर्षे राणा श्री लाषापुत्र राणा श्री मोकल नन्दन राणा श्री कुंभकर्ण कोश व्यापारिणा साह कोल्हा पुत्र रत्न भंडारी श्री वेलाकेन...............'

आबू का सुरह लेख[१८०] (१४४९ ई०)

प्रस्तुत लेख सुरह के रूप में आबू में है जिसका समय वि० सं० १५०६ आषाढ़ शुक्ला २ है। इसको महाराणा कुम्भा के समय अचलगढ़ के मन्दिर की सरस्वती देवी के सान्निध्य में लिखा ग[illegible] की लिपि उस समय की ग्रन्थ लिपि से ज्यादा मेल खाती है जिससे अ[illegible] है कि इस[illegible] नी ग्रन्थों के लिपिकार ने लिखा हो। इससे उस [illegible] करों [illegible] पड़ता है। इसमें वर्णित है कि देलवाड़ [illegible]
मंड[illegible] दाण, बलावी, रखवाली, [illegible]
जो [illegible] मया किया हुए थे
व्य[illegible] [illegible] गई और
ह[illegible] [illegible] किया ग[illegible]

[illegible] पर

पर

एक-एक 'फदिया' तथा मन्दुगाणी ? चार विशिष्ट भण्डारी वसूल करेगा। लेख को आबू मे बोली जाने वाली स्थानीय भाषा मे लिखा गया था, जिसका कुछ अंश इस प्रकार है—

"श्री नेमिनाथ तथा बीजो श्राव्य वे देहरे राण मुंडिक वलानी रपवाली गाडा पोठ्याराणि मह डूगर भोजा जोग्य मया उधारी जिको ज्यात्रि श्रावि तिहिरू सर्वमुकावु ज्यात्रा समधि आचन्द्राक लगि पायक इको कोई माँगवा न लहि राणि श्री कुंभकर्ण म. डूगरभोजा ऊपरि मया उधारी यात्रा मुगति कीधी।"

वीलिया गाँव की बावडी का लेख[१५१] (१४४६ ई०)

यह लेख डूंगरपुर जिले के बीलिया गाँव की एक बावडी का है, जिसका समय वि० स० १५०५ चैत्र सुदि १३ (ई० स० १४४६ तारीख ६ अप्रैल) है। इसका आशय यह है कि इस बावडी का निर्माण रावल गजपाल की राणी लीलाई ने करवाया था और उसका जीर्णोद्धार रावल सोमदास की राणी सुरत्राणदे ने करवा कर इस प्रशस्ति को लगवाया। इससे राज्य परिवार की स्त्रियो का लोकोपकारी कार्यों मे रुचि लेना प्रकट होता है।

राणकपुर के कुछ लघु लेख[१५२] (१४५० ई०)

ये लेख राणकपुर के प्रासाद और देव कुलिकाओ पर उत्कीर्ण हैं जिनकी भाषा सस्कृत गद्य है। इनका समय वि० स० १५०७ है। इनके द्वारा हमे कई श्रावको के सम्पूर्ण परिवार के व्यक्तियो के नामो का बोध होता है। ऐसे परिवारो मे केल्हा का परिवार, सीधवी भीमा का परिवार आदि हैं। इन लेखो से धार्मिक कार्यों को सामुहिक रूप से किसी के श्रेय के निमित्त सम्पादित किया जाना व्यक्त होता है। इनमे से एक लेख मे भीमा की तीन स्त्रियों के नाम—भामिणी, नानलदेवी तथा पउमादेवी उल्लिखित हैं जो बहु विवाह प्रथा पर प्रकाश डालते हैं।

नाडोल का लेख[१५३] (१४५१ ई०)

नाडोल के वि० स० १५०८ के लेख मे जगसी परिवार का वर्णन मिलता है जिसने कई चतुर्विंशति जिन प्रतिमाओ को बनवाया और उनकी प्रतिष्ठा देवकुल-पाटक के रत्नशेखर से करवाई। इसी अवसर पर अन्य स्थानो मे भेजे जाने के लिए भी प्रतिमाए प्रतिष्ठित करवाई गई थी। इस लेख मे दिये गये स्थानो के नाम से राजस्थान के तथा निकटवर्ती प्रमुख जैन यात्रा के स्थानो का हमे बोध होता है। वे स्थान ये थे—चाँपानेर, चित्रकूट, जाउरनगर, कायद्राह, नागहृद, ओसियाँ, नागोर, कुंभपुर, देलवाडा, श्रीकुण्ड आदि।

---

१५१ ओझा, डूगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० ६६।

१५२ एक प्रतिलिपि के आधार पर।

१५३. एक प्रतिलिपि के आधार पर।

चित्तौड़ के कुछ लघु लेख[१८४] (१५वीं शताब्दी)

ये कुछ लेख कीर्तिस्तंभ पर या यत्र-तत्र उत्कीर्ण हैं जो वि० सं० १४९५, १४९९, १५०७, १५१०, १५१५ आदि के हैं। इनमें सूत्रधार लाषा और उसके पुत्र जइता, नारद तथा जइता के पुत्र नापा, पुंजा, भोमा, चोथा आदि के नाम हैं जो कुम्भा के समय के प्रमुख शिल्पी थे। इन्हीं के द्वारा कीर्तिस्तंभ, कुम्भ स्वामी का मन्दिर, कुछ राजप्रासाद तथा रामपोल आदि का निर्माण हुआ या उनका जीर्णोद्धार कराया गया। एक वि० सं० १५१५ वाले लेख में लाषा सूत्रधार को 'सकल वास्तुशास्त्र विशारद' की संज्ञा दी है जिससे स्पष्ट है कि ये शिल्पी परिवार वास्तुशास्त्र का अच्छा ज्ञाता था। यही कारण है कि कुम्भा का काल शिल्प-कला के विचार से एक समृद्ध काल था।

आसोड़ा गाँव का लेख[१८५] (१४५४ ई०)

यह लेख आसोड़ा गाँव, जिला बाँसवाड़ा का है। इसका समय वि. सं १५१० माघ सुदि ११ (ई० स० १४५४ ता. १० जनवरी) है। इससे सूचना मिलती है कि महारावल गंगपालदेव की जब अस्थियाँ प्रयाग में प्रवेश की गईं उस अवसर पर ब्राह्मण शोभा को आसोड़ गाँव में १ हलवाह भूमि दान दी गई। इससे अन्त्येष्टि क्रिया, अस्थि प्रवेश और उस समय किये जाने वाले भूमिदान तथा हलवाह भूमि के नाप पर प्रकाश प्रड़ता है।

गोमुख का लेख[१८६] (१४५७ ई० ?)

प्रस्तुत लेख चित्तौड़ के गोमुख कुण्ड का है जिसमें संवत् का प्रथम अंक '१' जाता रहा है। इसमें कई पंक्तियाँ भी नष्ट हो चुकी हैं। लेख के कुछ भाग जो पढ़े जाते हैं उनसे यह सूचना मिलती है कि भतृगच्छ के आदिनाथ के मन्दिर में दक्षिणाभिमुख में पादुका लगाई गईं। इस लेख में 'भतृपुर महादुर्गे' 'गुहिल पुत्र बिहार' आदि वाक्यों के प्रयोग से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि यह लेख भटेवर के दुर्ग में किसी बिहार में लगा हो। भटेवर से सम्भवत: टूटी-फूटी सामग्री किसी समय चित्तौड़ दुर्ग की दुरुस्ती के समय लाई गई हो, जिसमें ये लेख खण्डित हो गया हो या खण्डित अवस्था में हो।

माचेडी की बावली का दूसरा शिलालेख[१८७] (१४५८ ई०)

इसी माचेडी की बावली के दूसरे शिलालेख से प्रमाणित होता है कि उस भाग में बडगूजर वंशी रजपालदेव का राज्य था। यह रजपालदेव रामसिंह का पुत्र था और रामसिंह गोगदेव का पुत्र अथवा पौत्र अनुमानित किया जाता है।

---

१८४. सोमानी, चित्तौड़।

१८५. ओझा, डूंगरपुर का इतिहास, पृ० ६९।

१८६. एक प्रतिलिपि के आधार पर।

१८७. रा. म्यू. अजमेर रिपोर्ट १९१८-१९, पृ० ३, लेख संख्या ११.।

अचलगढ का लेख[१८८] (१४५८ ई०)

इसमें हमे उस समय के आबू क्षेत्र के सूत्रधारो के नाम मिलते हैं। लेख का मूल भाग इस प्रकार है—

"१५१५ अब्बुदगिरौ देवडा श्री रावधर सायर डूंगरसिंह विजयराज्ये राजमान्य मडन भार्या भोली भार्या हांसी १०८ मन प्रमाण जिनबिंब कारित विज्ञान सूत्रधार देवाकस्य। मेवाड ज्ञातीय सूत्रधार मिहीपा देवा हला पदा हापा नाला दाना कला सहित

कोडमदे-सर का लेख[१८९] (१४५९ ई०)

यह लेख कोडमदे-सर (जोधपुर) नामी तालाब के तट पर, स्थापित कीर्ति-स्तभ पर अंकित है। इस तालाब के तट पर, जो उसके द्वारा बनवाया गया था, कोडमदे रणमल्ल के मारे जाने की सूचना मिलने पर सती हुई। वह बीकूंपुर और पुगल के स्वामी भाटी केल्हण की कन्या थी।

इस लेख का अक्षरान्तर इस प्रकार है—

"सवत् १५१६ [वर्षे] सा [शा] के १३८ [१]
प्रवर्तमाने [ने] [महा] मागल्य
भाद्रवा सु [दि] [६] सोमदिनो
हस्त नि [न] [क्षत्रे] सुक [ल] [शुक्ल] जो
[यो] गे
[कौ] लव [करणे]
राठ [४] [म] हाधिराम श्री
रा [य श्री] जोधा
राय श्री रिणमल सु [त] त [डा]
उ [ग] पत्रिस्टा [प्रतिष्ठा] कार [रि] ता।
माता श्री कोडमदे [नि] मिति [त्त] की
रति [त्ति] स्तभ [ ] था [पि] ता [स्थापित]

कोडमदेसर का लेख[१९०] (१४५९ ई०)

बीकानेर से १५ मील पश्चिम मे कोडमदेसर नामक गाव के एक स्तभ पर वि० स० १५१६ भाद्रपद शुक्ला सोमवार का लेख है जिससे प्रमाणित होता है कि राव रिणमल के पुत्र राव जोधा ने यहा एक तालाब खुदवाया और अपनी माता

---

१८८ नाहर, जैन लेख, भा० २, स० २०२५, पृष्ठ २५६।

१८९ जर्नल बगाल एशियाटिक सोसाइटी, भा० १३, १९१७, पृ० २१७–२१८।

१९० जर्नल बगाल एशियाटिक सोसाइटी, भा० १३, ई० स० १९१७, पृ० २१७–२१८,

ओझा, बीकानेर राज्य काइतिहास, भा० १, पृ० ५१।

कुम्भलगढ़ की प्रशस्ति[१९२] (१४६० ई०)

यह प्रशस्ति कुंभलगढ़ से लाकर उदयपुर संग्रहालय में सुरक्षित है। इसका समय वि० सं० १५१७, मार्गशीर्ष कृष्णा पंचमी सोमवार दिया हुआ है। इसमें प्रयुक्त की गई लिपि देवनागरी और भाषा संस्कृत है। इसमें कुल ६४ श्लोक हैं। कुंभलगढ़ की पाँचों शिलाओं से यह विभिन्न है क्योंकि इसमें उस प्रसिद्ध प्रशस्ति के कई श्लोक उद्धृत किये गये हैं और कई पंक्तियों में कुटिलर वर्णन, मेदपाट वर्णन तथा चित्तौड़ वर्णन दिया गया है जिससे हमें उस समय की मेवाड़ की भौगोलिक, सामाजिक, धार्मिक और साँस्कृतिक स्थिति का पता चलता है। इस प्रशस्ति से ऐसा अनुमान होता है है कि उस समय मेवाड़, चित्तौड़ और एकलिंगजी के आसपास के भाग शासकीय विचार से अलग-अलग घटक थे।

कुम्भलगढ़ का शिलालेख[१९३] (१४६० ई०)

यह शिलालेख पाँच शिलाओं पर उत्कीर्ण था जिसमें से पहली, तीसरी और चौथी शिलाएँ उपलब्ध हैं। दूसरी शिला का एक छोटा-सा टुकड़ा मिला है और पाँचवीं शिला अप्राप्य है। मूलतः ये शिलाएं कुम्भलगढ़ के कुम्भश्याम मन्दिर में, जिसे अब माभादेव का मन्दिर कहते हैं, लगी हुई थीं। इनको यहाँ से (सिवाय पांचवीं शिला के) हटाकर उदयपुर संग्रहालय में सुरक्षित कर दी गई है। पहली और तीसरी शिला के नाप से अनुमान लगाया जाता है कि ये शिलाएँ लगभग ३' फीट से अधिक लंबी और चौड़ी थीं। पहली शिला ३'.१०" × ३'.७" तथा तीसरी शिला ३'.१" × ३' × ६" के आकार में हैं। इन शिलाओं के कई अक्षर जगह-जगह नष्ट हो गये हैं, फिर भी इसके गद्यांश तथा पद्यांश से विषय की जानकारी आसानी से हो जाती है। इनमें प्रयुक्त की गई भाषा संस्कृत तथा लिपि नागरी है। इस सम्पूर्ण शिलालेख में वर्णन शैली को काम में लिया गया है, जैसे त्रिकूट वर्णन, मेटपाट वर्णन, राज वर्णन आदि।

पहली शिला में ६८ श्लोक हैं जिनमें उस युग के भौगोलिक वर्णन, जन-जीवन, तीर्थस्थान आदि विषयों पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। एकलिंगजी के मन्दिर तथा कुटिला नदी के वर्णन में बड़ी स्वाभाविकता है। इसके साथ इन्द्रतीर्थ वर्णन, कामधेनु, तक्षक, धारेश्वर आदि के वर्णन भी बड़े रोचक हैं। चित्तौड़ के वर्णन में

---

१९२. एक प्रतिलिपि के आधार पर।

१९३. ए० रि० ए० म्यू० अ०, १९२५–२६;
ए० इ० भा० २४, संख्या ४४, पृ० ३१४–२८;
प्रोसीडिंग, इ. हि. कां, १९५१;
ज० वि० रि० सो०, मार्च १९५५
वीर विनोद, भा० १, पृ० ४११–१६;
गोपीनाथ शर्मा—बिबलियोग्राफी, नं० ४३, पृ०८

प्राकृतिक स्थिति तथा समाधिश्वर कुम्भश्याम, महालक्ष्मी के मन्दिरो का वर्णन बडा रोचक है। प्रशस्तिकार ने ५८ से ६८ श्लोको में आनुसगिक ढग से मेवाड के नगरो नदियों, पहाडों, भीलो, बागो तथा जनसमुदाय का वर्णन किया है जो १५वी शताब्दी के जनजीवन को समझने मे बडा सहायक है।

दूसरी शिला के केवल छ पक्तियो के कुछ वाक्य ही अवशेष रहे हैं। सम्पूर्ण शिला के सभी श्लोक मैंने एक प्रशस्ति सग्रह की प्राचीन पाण्डुलिपि से खोज निकाले हैं। इस दूसरी पट्टिका मे ६९ से १११ तक श्लोक दिए गए थे। इसमे चित्राग ताल, चित्तौड दुर्ग तथा चित्तौड का वैष्णव तीर्थरूप होने का वर्णन मिलता है। चित्तौड के बाजारो, मन्दिरो तथा राजप्रासाद के वर्णन से कुम्भा के समय की समृद्धि पर अच्छा प्रकाश पडता है। इसके अन्तिम छ श्लोको मे जो हमे वश वर्णन मिलता है उससे रावल शाखा तथा राणा शाखा की विभिन्नता को समझने मे हमे बडी सहायता मिलती है। प्रशस्तिकार ने यहाँ बापा को स्पष्ट रूप से विप्रवशीय कहा है जो बडे महत्त्व का है।

तीसरी शिला मे वश वर्णन चलता रहता है जिसमे बापा को फिर विप्र कहा गया है जिसने हारीत की अनुकपा से मेवाड राज्य प्राप्त किया। यहा प्रशस्तिकार ने बापा को वश प्रवर्तक माना है और गुहिल को उसका पुत्र लिखा है जो भ्रमात्मक है। इसमे गुहा के पुत्र लाटविनाद का नाम दिया है जो अन्यत्र नही मिलता। इसके बाद खुमाण की विजयो तथा उसके तुलादान का वर्णन आता है। इसके पश्चात् इसमे दिया गया राज वर्णन एकलिंग महात्म्य के राज वर्णन से मिलता जुलता है। वैरिसिंह के सम्बन्ध मे यह उल्लिखित है कि उसने आहड के चारो ओर परकोट तथा चार गोपुर बनवाए। इसमे कीतु के साथ सामतसिंह के सघर्ष का भी वर्णन मिलता है। इसके बाद इसमे वर्णित है कि रत्नसिंह की चित्तौड रक्षा के निमित्त मृत्यु हो जाने पर खुमाण के वशज लक्ष्मणसिंह ने दुर्ग रक्षा करते हुए अपने प्राणों की आहुति दी और उस अवसर पर उसके सात पुत्र दुर्ग रक्षा मे काम आये।

इस प्रशस्ति से उस समय के मेवाड के चार विभागो का पता चलता है जो चित्तौड, आघाट, मेवाड और वागड थे। इसमे दी गई कुछ सामाजिक सस्थाओ के उल्लेख जैसे दास प्रथा, आश्रम व्यवस्था, वैदिक यज्ञ, तपस्या, धर्मशाला तथा पाठन व्यवस्था बडे रोचक हैं।

चतुर्थ प्रशस्ति मे हम्मीर के वर्णन मे उसके जैलवाट जीतने का वर्णन है, और उसे विषमघाटी पचानन कहा गया है। लाखा के वर्णन मे उसके धार्मिक और विजय कार्यो का तथा तुलादान का अच्छा वर्णन है। मोकल के वर्णन के साथ सपादलक्ष जीतने तथा फीरोज को हराने का उल्लेख मिलता है। क्षेत्रसिंह द्वारा भी यवन शासक को कैद करने और अलीशाह को परास्त करने का उल्लेख है। इस प्रशस्ति मे विशेष रूप से कुम्भा का वर्णन तथा उसकी विजयो का सविस्तार उल्लेख है। उसके द्वारा की गई विजयो मे योगिनीपुर, मडोवर, यज्ञपुर, हमीरपुर, वर्धमान

अचलगढ़ की आदिनाथ की मूर्ति[१९८] (१४७३ ई०)

आबू के अचलगढ़ पर आदिनाथ की पीतल की मूर्ति के वि० सं० १५२९ वैशाख वदि ४ शुक्रवार (ई० स० १४७३ ता० १६ अप्रेल) के लेख से डूंगरपुर में उक्त मूर्ति के बनाये जाने का उल्लेख है। इससे प्रमाणित होता है कि डूंगरपुर के सूत्रधार न केवल पत्थर की मूर्तियों के निर्माण कार्य में कुशल थे वरन् वे पीतल की मूर्तियों के बनाने में भी निपुण थे।

रामपोल द्वार का लेख[१९९] (१४७४ ई०)

यह लेख डूंगरपुर के रामपोल दरवाजे पर लगा हुआ है, जिसका समय वि० स० १५३० चैत्र वदि ६ (ई० सं० १४७४ ता० ७ अप्रेल) है। इससे ज्ञात होता है कि जब मांडू का सुलतान गयासुद्दीन चित्तौड़ जाते हुए डूंगरपुर की ओर से गुजरा तो उसने डूंगरपुर को नष्ट किया। इस समय वीलिया भील का पुत्र रातकाला अपने स्वामी के बिना बुलाये ही नगर रक्षा के लिए आ पहुँचा और वहाँ आकर उसने अपने कुल धर्म का पालन करते हुए वीरव्रत में प्राणों की आहूति दे डाली। ऐसा प्रतीत होता है कि तबतक भील डूंगरपुर के रावल के पूर्ण अधिकार में आचुके थे और रावल के सहयोगी बन चुके थे। इस लेख से उस समय की वागड भाषा पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। इस लेख से स्पष्ट है कि उस समय के वीर युद्ध में मरकर सायुज्य मुक्ति पाने में विश्वास करते थे और वे सूर्यमंडल को भेद पर स्वर्ग को सिधारते थे। युद्ध के प्रति ये भावना धार्मिक श्रद्धा का द्योतक है उस समय युद्ध एक धार्मिक कर्तव्य था।

इसका मूल लेख इस प्रकार है—

"संवत् १५३० वर्षे शाके १३९६ प्रवर्तमाने चैत्रमासे कृष्ण पक्षे षष्ठयां तिथौ गुरुदिने वीलीआ मालासुत रातकालइ मंडपाचलपति सुरत्राण ग्यासदीन आदि...... डूंगरपुर भाज तई स्वामि न इछंति आपणउं कुलभार्ग्ग अनुपालनां वीरेव्रतेण प्राण छांडी सूर्यमंडल भेदी सायोज्य मुक्ति पामि।"

'चीतली' गाँव का लेख[२००] (१४७९ ई०)

डूंगरपुर राज्य के अन्तर्गत चीतली गाँव से एक शिलालेख उपलब्ध हुआ है जो महारावल सोमदास के समय का है। इमका सकय वि. सं १५३६ आषाढ़ शुक्ला १ है। इससे पाया जाता है कि उक्त महारावल का कुंवर गंगदास जो बांसवाड़ा में रहता था उसने चीतली गाँव से ४ हल की भूमि भट्ट सोमदत्त को प्रयाग में दान की थी। प्रस्तुत लेख से भूमि का नाप हल से आंका जाना तथा विद्वानों के प्रति राज्य की श्रद्धा होना आदि सिद्ध हैं। इसके अतिरिक्त इससे उस समय प्रयुक्त की गई संस्कृत

---

१९८. ओझा डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० ७१।

१९९. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० ६६।

२००. ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० २, १३।

भाषा के साथ स्थानीय भाषा का समावेश का भी अनुमान किया जा सकता है। इस लेख की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार है—

'……………स्वस्ति संवत् १५३६ आषाढ सुदि १ पूर्वं महाराजाधिराज श्री सोमदासविजयराज्ये अद्येह श्री बासवाला ग्रामात् युवराज श्री गंगदास एतैः भट्ट सोमदत्त एतेभ्यः चीतलीग्रामे भूमिहल ४ चारि उदकधारया शासनपत्रप्रसादीकृत ए भूमि प्रयागि संकल्पकरी…………।"

चीतरी गाँव के दो लेख[२०१] (१४७९ ई०)

बासवाड़े के चीतरी गाँव के वि० स० १५३६ आषाढ सुदि १ (ई० स०१४७६ ता. २० जून) के दो लेखो से प्रमाणित है कि श्री सोमदास के राजत्वकाल मे युवराज श्री गगदास ने भट्ट सोमदत्त के लिए चीतरी गाँव मे चार हल भूमि का दान प्रयाग मे संकल्प किया। मूल लेख इस प्रकार है—

"……………स्वस्ति संवत् १५३६ आषाढ सुदि १ पूर्वं महाराजाधिराज श्री सोमदासविजयराज्ये अद्येह श्री बासवाला ग्रामात् युवराज श्री गगदास एतैं भट्ट सोमदत्त एतेभ्य. चीतली ग्रामो भूमि हल ४ च्यारि उदकधारया शासन पत्र प्रसादीकृत ए भूमि प्रयागि सकल्पकरी……………"

चित्तौड का लेख[२०२] (१४८१ ई०)

प्रस्तुत लेख रामपोल के सामने वाले सभागृह के ऊपरी भाग मे उत्कीर्ण है। इसमे १४ पत्तियाँ हैं। इसका समय वि० सं० १५३८ पोष सुदि ७ है। इस लेख से खरतरगच्छ परम्परा के साधुओ की नामावली का बोध होता है और हमे यह जानकारी मिलती है कि तेरहवी तथा चौदहवीं शताब्दी मे चित्तौड खरतरगच्छीय साधुओ का केन्द्र रहा था। इसमे शातिनाथ के मन्दिर और जयकीर्ति का उल्लेख मिलता है। जयकीर्ति की उपाधि महोपाध्याय दिया हुआ है जिससे उस समय दी जाने वाली उपाधियो का बोध होता है।

पलाणा का लेख[२०३] (१४८२ ई०)

बीकानेर से १४ मील दक्षिण मे पलाणा गाँव है जहाँ एक स्मारक लेख वि. सं० १५३६ का है। इससे प्रमाणित है कि बीका के सहयोगी चाचा रिणमल के पुत्र मांडण की मृत्यु यहा हुई थी।

मोकल का लेख[२०४]

प्रस्तुत लेख चित्तौड से लेजाकर उदयपुर संग्रहालय मे सुरक्षित किया गया

---

२०१. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० ७१।
२०२. एक प्रतिलिपि के आधार पर।
२०३. ओझा, बीकानेर राज्य का इतिहास, भा० १, पृ० ५३।
२०४. एक प्रतिलिपि के आधार पर।

था। ये लेख प्रारंभिक लेख का केवल एक खण्डमात्र है जिसका बाँयी तरफ का भाग टूटा हुआ है और इसमें प्रस्तुत किये गये कई श्लोक तथा उसके भाग नष्ट हो गये हैं। इसमें संभवत: ७० के लगभग श्लोक रहे होंगे। इस स्थिति में अभी इस लेख की केवल ३६ पंक्तियाँ अवशेष हैं। लेख समाधीश्वर के स्तुति से आरंभ होता है और किसी शासक का वर्णन देता है जिसको 'गुहिलवंश सर्वस्व' कहा गया है। इसमें हम्मीर को पृथ्वी का बड़ा विजेता तथा लाखा को हाड़ाओं से संघर्षकर्ता बतलाया है। आगे चलकर इसमें मोकल का वर्णन ६१वें श्लोक में आता है। इससे यह भी अनुमान लगाया जा सकता है कि यदि इसमें ७० के लगभग श्लोक हों, जैसा डॉ० ओझा लिखते हैं, तो इस लेख में कुंभा का वर्णन हो सकता है। इस स्थिति में इसे मोकल के काल का लेख न मानकर कुंभा के समय का भी माना जा सकता है। इस लेख के प्रारंभ में मेवाड़ के कई प्राचीन तीर्थो का वर्णन उल्लिखित है, जिससे हमें उस राज्य की धार्मिक अवस्था का परिचय होता है।

गोमुख का लेख[२०५] (१४८६ ई०)

प्रस्तुत लेख चित्तौड़ में गोमुख के पास स्थित जैन मन्दिर के एक पत्थर पर उत्कीर्ण है। लेख का काल वि० सं० १५४३ मार्गशीर्ष कृष्णा १३ का है। इस पर कीर्तिधर अर्हत्मूर्ति, सुकोशल ऋषिमूर्ति आदि मुनियों की मूर्तियां बनी हैं। प्राकृत गाथाओं में सुकोशल ऋषि की स्तुति भी इसमें अंकित है। इसमें यह भी उल्लिखित है कि सुकोशल ऋषि की प्रतिमा महाराणा रायमल के राज्य में स्थापित की गई थी और इसकी प्रतिष्ठा खरतरगच्छीय जिनसमुद्रसूरि ने की थी।

एकलिंग जी के मन्दिर की दक्षिणद्वार प्रशस्ति[२०६] (१४८८ ई०)

यह प्रशस्ति श्री एकलिंग जी के मन्दिर के दक्षिण द्वार के ताक में उस समय लगाई गई थी, जबकि महाराणा राममल ने उस मन्दिर का जीर्णोद्धार करवाया था। उक्त प्रशस्ति का समय वि० सं० १५४५ चैत्र शुक्ला १०मीं गुरुवार है (२३ मार्च, १४८८ ई०)। इसमें प्रयुक्त की गई भाषा संस्कृत तथा लिपि नागरी है। इसमें कुल १०१ श्लोक हैं। प्रशस्तिकार ने प्रारंभ के कुछ श्लोकों में गणेश, शिव, रुद्र, पशुपति, हर तथा पार्वती की स्तुति की है। तदनन्तर इसमें मेदपाट तथा चित्रकूट की विशेषताओं का वर्णन दिया है। यहां की समृद्धि के वर्णन के साथ लेखक ने यहां की जनता की सम्पन्नता, सदाचार, दानशीलता और पात्रों के दान के सम्बन्ध में लिखा है जिससे हमें उस समय की जनता के नैतिक स्तर और शासकों की न्यायपरायणता का बोध होता है। आगे चलकर नागदे के वर्णन के साथ लेखक बापा को द्विज कहकर उसका हारीत द्वारा राज्य अधिकार प्राप्ति की ओर संकेत करता है। तत्पश्चात्

---

२०५. ए० रि० रा० म्यू० अजमेर, १९२९।

२०६. भावनगर इन्स०, नं० ९, पृ० ११७–१३३
गोपीनाथ शर्मा—बिबलियोग्राफी, पृ० ९

बापा का सन्यास लेने का वर्णन दिया गया है फिर हम्मीर के द्वारा सिंहलिपुर का, क्षेत्रसिंह के द्वारा पन्वडपुर का, लक्ष्मणसिंह द्वारा चीरुवर (चीरवा) का, मोकल द्वारा बंधनवाल (वाधनवाडा) तथा रामागाँव और कुंभा द्वारा नागहृद, कठडावन, मलकखेट और भीमाण का, और रायमल द्वारा नौवापुर का श्री एकलिंग जी के पूजार्थ समर्पण करने का वर्णन है। इन अनुदानो से उक्त शासको की शिवभक्ति तथा उदारता का हमे बोध होता है। चूंकि श्री एकलिंग जी इन महाराणाओ के इष्टदेव थे, अतएव इन्होने समय-समय पर अनुदानो के द्वारा इस मदिर की पूजा और वैभव की व्यवस्था की थी। इसी तरह क्षेत्रसिंह ने यज्ञो के द्वारा अपनी धार्मिक प्रवृत्ति का परिचय दिया था।

इस प्रशस्ति से ऐसा मालूम होता है कि महाराणा लाखा के पास धन–सचय बहुत हो गया था, जिससे इसने एक लाख सुवर्ण मुद्राएं दान मे दी, सुवर्णादि की तुलाएं की, सूर्यग्रहण मे झोटिंग भट्ट को पिप्पली (पीपली) गाँव और धनेश्वर भट्ट को पंच-देवला गांव दिया। रायमल ने भी इसी प्रकार कई ब्राह्मणो और विद्वानो को दान से सतुष्ट किया और विविध धार्मिक संस्थाओ को अनुदान देकर अपनी धार्मिक सहिष्णुता का परिचय दिया।

प्रस्तुत प्रशस्ति में इन शासको के अन्य पुण्य कार्यों और सार्वजनिक निर्माण कार्यों का भी वर्णन मिलता है। क्षेत्रसिंह ने धर्मशालाओ तथा ताडागो का निर्माण करवाया। महाराणा कुभा ने कुंभलगढ का बृहद् दुर्ग सुदृढ द्वारो से सुशोभित किया तथा चित्तौड दुर्ग के ऊपर जाने के मार्ग को चौडा बनवाया और यहा लक्ष्मी के मदिर और जनहित के लिए रामकुड का निर्माण करवाया। रायमल ने भी इसी तरह राम, शंकर तथा समयासकट नामक तालाब बनवाया और एकलिंग जी के मन्दिर का जीर्णोद्धार करवाया।

इस प्रशस्ति द्वारा हमें मेवाड के कुछ शासको की सैनिक उपलब्धियों का भी परिज्ञान होता है। इससे पाया जाता है कि क्षेत्रसिंह ने माडलगढ़ के प्राचीर को तोडकर उसके भीतर से लडने वाले योद्धाओ को मारा, तथा युद्ध मे हाडो के मंडल को नष्ट कर उनकी भूमि को अपने अधीन किया। इसके सम्बन्ध में प्रशस्तिकार यह भी लिखता है कि उसने (क्षेत्रसिंह) अमीसाहिरूपी वडे साप के गर्वरूपी विष को निर्मूल किया। इससे स्पष्ट है कि क्षेत्रसिंह ने मालवे के स्वामी अमीशाह को चित्तौड के पास हराया था। इसमे यह भी वर्णित है कि क्षेत्रसिंह ने ऐल (ईडर) के गढ़ को जीतकर राजा रणमल्ल को कैद किया, उसका सारा खजाना छीन लिया और उसका राज्य उसके पुत्र को दिया। इसी तरह युवराज की हैसियत से लाखा ने गयाक्षेत्र में जोगा दुर्गाधिप को परास्त कर उसके हाथी तथा घोडे छीन लिए। इसी तरह उसने बहुत-सी सुवर्ण मुद्राए देकर गया को यवन कर से मुक्त किया। इस लेख में लाखा को बलवान् पक्षवाले शत्रु और लाखो को नष्ट करने वाला, [illegible] में विजय पाने वाला और दूतो के द्वारा दूर दूर की खबरें जानने वाला [illegible] के युद्ध मे [illegible]

परास्त करने वाला बतलाया है । महाराणा कुंभा के सम्बन्ध में प्रशस्तिकार लिखता है कि उसने मालवा के शासक को कुचल दिया और सारंगपुर को नष्ट कर दिया । इस अवसर पर उसने कई स्त्रियों को अपने अंतःपुर में स्थान दिया । रायमल ने भी गयासुद्दीन को चित्तौड़ में परास्त किया और खेराबाद को नष्ट कर वहां से दण्ड इकट्ठा किया । उसने दाडिमपुर के युद्ध में क्षेम को पराजित किया था ।

प्रस्तुत प्रशस्ति से उस युग की शिक्षा की स्थिति पर भी प्रभूत प्रकाश पड़ता है । स्वयं कुंभा ने संगीतराज की रचना की । रायमल ने रत्नखेट गाँव महेश कवि को देकर उसका सम्मान किया तथा अपने गुरु गोपाल भट्ट को प्रहाण और थूर के गाँव भेंट किये । नरहरि, झोटिंग, अत्रि, महेश्वर आदि का भी वर्णन इस प्रशस्ति में दिया गया है जो इस समय के प्रसिद्ध विद्वान थे । थूर गाँव की समृद्धि के वर्णन के प्रसंग में लेखक उस स्थान की उपज का भी वर्णन करता है जिनमें चांवल, दाल और गन्ना प्रमुख हैं । इस प्रशस्ति को सूत्रधार अर्जुन ने उत्कीर्ण किया था और उसी की देखरेख में एकलिंग जी के मंदिर का जीर्णोद्धार करवाया गया था । इस प्रशस्ति में महाराणा हम्मीर से लेकर रायमल तक के राजाओं के सम्बन्ध की कई घटनाओं का उल्लेख होने से मेवाड़ के इतिहास के लिए बड़े महत्त्व की है ।

देव-सोमनाथ का लेख[२०७] (१४९२ ई०)

देव-सोमनाथ के मन्दिर का वि० सं० १५४८ वैशाख सुदि ३ (ई० स० १४९२ ता० ३१ मार्च) के लेख से महारावल गंगदास द्वारा देव-सोमनाथ के मन्दिर में एक तोरण बनाने का उल्लेख है । इस लेख में गंगदास की उपाधि रायरामां महारावल अंकित है । ऐसा प्रतीत होता है इस समय के पीछे वागड के शासक अपने लिए इस उपाधि का प्रयोग करते रहे ।

जावर की प्रशस्ति[२०८] (१४९७ ई०)

यह प्रशस्ति जावर गाँव के रामस्वामी के मन्दिर की है जिसे महाराणा रायमल की बहिन रमाबाई ने बनवाया था । प्रशस्ति का समय वि० सं० १५५४, चैत्र शुक्ला ७ रविवार है । इसमें प्रयुक्त भाषा संस्कृत पद्य तथा लिपि नागरी है ।

प्रस्तुत प्रशस्ति के तीन भाग हैं । प्रथम भाग में १० श्लोक हैं जिसमें कुंभलगढ़ के दामोदर और कुंडेश्वर के मन्दिर का उल्लेख है । इसमें जावर को पुर की संज्ञा दी है जिसमें रमाबाई ने एक कुंड बनवाया था । कुंड की शोभा के वर्णन में अतिशयोक्ति अवश्य है, परन्तु उससे जावर क्षेत्र की वनस्पति, पक्षी तथा जलवायु का संकेत मिलता है । यहाँ के निवासियों पर भी इस प्राकृतिक सौंदर्य का प्रभाव झलकता

---

२०७. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० ७३ ।

२०८. ए० रि० रा० म्यू०; अजमेर, १९२४–२५;
वीर विनोद, भा० २, पृ० ५६८;
गोपीनाथ शर्मा—बिबलियोग्राफी, पृ० ९–१० ।

है। इस भाग के वर्णन से ज्ञात होता है कि रमाबाई का विवाह जूनागढ के यादव राजा मडलीक (अंतिम) के साथ हुआ था।

प्रशस्ति के दूसरे भाग मे 'रमावर्णन' है जिसके ५ श्लोक हैं। इसमे रमाबाई के द्वारा श्री दामोदर के मन्दिर के बनाने का उल्लेख है। इसमे सूत्रधार ने रामा के कल्याण की कामना की है। रमाबाई के वर्णन से उसके सौन्दर्य, गुण, प्रतिभा, सगीत प्रेम आदि की हमे जानकारी होती है। इससे प्रतीत होता है कि उस युग मे उच्च वर्ग की स्त्रियो मे शिक्षा का प्रचार था तथा उनसे रम्यता, प्रवीणता तथा कला प्रेम की अपेक्षा की जाती थी। रमाबाई अपनी कृष्ण-भक्ति के लिए प्रसिद्ध मालूम होती है। राज-परिवार की राणियो मे कृष्ण-भक्ति की परम्परा मे यह एक महत्त्व-पूर्ण सीढी दिखाई देती है। सम्भवत इसके कुछ वर्षो के बाद यह परम्परा मीराँ के लिए प्रेरणा का एक स्रोत रहा हो।

तीसरा भाग 'मण्डलीक प्रबन्ध' है जिसमे महाराज मडलीक के गुणो की व्याख्या की गई। इसमे १२ श्लोक हैं। इसके अंतिम भाग मे इस निर्माण कार्य का श्रेय मडन के पुत्र ईशर को दिया गया है और इसके साथ देवीदास का भी नाम अकित है।

इस प्रशस्ति की कुछ पत्तिया इस प्रकार हैं—

"धत्ते यावदपुत्रवादिगमणिर्माणिक्यनैराजन।
तावच्चारुतर रमा विरचित कुड चिर नदतु॥"
"मेरौकुभकुले महीपतनया श्री मडलीक प्रिया।
दामोदर मदिर व्यरचयत् कैलाश शैलोज्वल॥"
'श्री मेदपाटेवरेदेशे कुभकर्णनृपग्रहे
क्षेत्राष्ट सूत्रधारस्य पुत्रोमडन आरमवान्"

चित्तौड का खरतरगच्छ का लेख[२०९] (१४६९ ई०)

यह लेख वि० स० १५२६ का है जो चित्तौड के खरतरगच्छीय किसी मन्दिर मे रहा होगा। यह अब उदयपुर के सग्रहालय मे सुरक्षित है। मूलत. यह लेख तीन शिलाओ मे था जिसकी दो शिलाए तो नष्ट हो गई हैं और तीसरी शिला से ८३ से १२८ तक के श्लोक उपलब्ध हैं। इसमें जयकीर्ति उपाध्याय को विवेकरत्नसूरि का शिष्य वर्णित किया गया है। इससे हमे अनेक अन्य साधुओ के सम्बन्ध मे भी जानकारी मिलती है। भण्डारी भोजा का भी इस लेख से सम्बन्ध प्रगट होता है। प्रशस्ति मे एक बडे महत्त्व की पक्ति है जिसमे रायमल की महत्ता का बोध होता है। प्रशस्तिकार उसके सम्बन्ध मे 'महाराजाधिराज समस्त रिपु गजघटा रायमल विजयराज्ये' वाक्यों का प्रयोग करता है। इसमे छीतर सूत्रधार का जो ईश्वर का पुत्र था, उल्लेख किया गया है।

---

२०९ एक प्रतिलिपि के आधार पर।

लेख में कुल ३५ पंक्तियां हैं।

नाडलाई की प्रशस्ति[२१०] (१५०० ई०)

नाडलाई के जो मेवाड़ और मारवाड़ की सीमा पर बसा हुआ कस्बा है, आदिनाथ के मन्दिर में एक स्तम्भ प्रशस्ति है। यह ६०"×१" के आकार में ५५½ पंक्तियों में उत्कीर्ण है। इसमें प्रयुक्त की गई भाषा संस्कृत गद्य तथा लिपि नागरी है। इसमें उकेश वंश के सींहा और समदा द्वारा, महाराणा रायमल के समय में नाडलाई में आदिनाथ की मूर्ति की स्थापना का उल्लेख है। इसका लेखन आचार्य ईश्वरसूरि ने किया था और सूत्रधार सोमा ने इसको उत्कीर्ण किया। इस लेख का बड़ा ऐतिहासिक महत्व है। इसके द्वारा हमें मेवाड़ की सीमा निर्धारित करने में सहायता मिलती है। तदनन्तर इसमें उल्लिखित है कि मूर्ति की स्थापना की आज्ञा सींहा और समदा को पृथ्वीराज के द्वारा दी गई थी जो महाकुमार स्वीकृत हो चुका था और मेवाड़ का यह पश्चिमी भाग उसके शासन क्षेत्र का भाग था। उस समय, ऐसा प्रतीत होता है कि कुम्भलगढ़ का भाग मेवाड़ के शासन विभाग की प्रमुख इकाई था। इससे पृथ्वीराज का अन्य कुमारों की तुलना में महाकुमार स्वीकृत होना प्रमाणित होता है। प्रशस्ति का समय वि. सं. १५५७ वैशाख शुक्ल पक्ष ६ शुक्र है। प्रशस्ति में मूल रूप से संडेरगच्छीय साधुओं का वर्णन, राजवंश वर्णन और श्रेष्ठि वर्णन बड़े रोचक हैं। लेख में संडेरगच्छीय आचार्य यशोभद्रसूरि का उल्लेख है जिन्होंने वि. सं. ९६४ में यहाँ मन्दिर बनवाया था। यशोभद्रसूरि पाली के निवासी थे और इनका धार्मिक प्रभावक्षेत्र गोड़वाड़, मेवाड़, चित्तौड़ आदि तक प्रसारित था। चित्तौड़ के 'सतवीस देवरी' के खंडित लेख में जो १०वीं शताब्दी का है 'यशोभद्रसूरि' परम्परा के साधु का उल्लेख मिलता है जो उनके प्रभावक्षेत्र का प्रमाण है।

इसका कुछ अंश यहाँ उद्धृत किया जाता है—

"श्री मेदपाट देशे श्री कुम्भकर्ण पुत्र राणा श्री रायमल्ल विजयमानराज्ये तत्पुत्र महाकुमार श्री पृथ्वीराजानुशासनात्"

"आ. श्री ईश्वरसूरिभि. इति लघुप्रशस्तिरियं लि. आचार्य श्री ईश्वरसूरिणा उत्कीर्णा सूत्रधार सोमाकेन"

घोसुन्डी की बावड़ी का लेख[२११] (१५०४ ई०)

यह लेख वैशाख शुक्ला ३ बुधवार का है और इसमें कुल २५ श्लोक हैं। प्रस्तुत प्रशस्ति में महाराणा रायमल की रानी शृंगारदेवी के—जो मारवाड़ के राजा जोधा (राव जोधा) की पुत्री थी—द्वारा उक्त बावड़ी के बनवाये जाने का

---

२१०. भाव. इन्स. सं. १६, पृ० १४३-१४५।

२११. ज. ब. ब्रा. रा. ए. सो. अंक २३, भा० १; गोपीनाथ शर्मा—बिब-लियोग्राफी पृ० १०।

उल्लेख है। तीसरे श्लोक मे खुम्माण के वशज कुम्भा के पुत्र रायमल का वर्णन दिया हुआ है और यह भी अंकित किया हुआ है कि उसने मालवे के सुल्तान को परास्त किया था। इसके साथ उसकी पत्नी शृ गारदेवी का भी वर्णन है। आगे के श्लोको मे मारवाड के रणमल और जोधा का भी उल्लेख आता है। रणमल की उपलब्धियो का वर्णन करने मे रचयिता ने उसे विपक्षी सेना को दमन करने वाला बताया है। जोधा के सम्बन्ध मे वह लिखता है कि जोधा पठानो और पारसियो को हराने वाला था और उसने गया को कर से मुक्त करवाया था। श्लोक ८ से १७ तक शृ गारदेवी का रायमल के साथ विवाह होने का बडा रुचिकर वर्णन है जिससे हम उस समय होने वाले विवाह की परम्परा के बारे मे जान सकते हैं। इस प्रशस्ति का रचयिता महेश्वर नामक कवि था।

सेवन्त्री मे राठौड बीदा की छत्री के लेख[२१२] (१५०४ ई०)

सेवन्त्री (मेवाड) के तीर्थस्थल रूपनारायण के मन्दिर की परिक्रमा म राठौड बीदा की छत्री बनी हुई है, जिसमे तीन स्मारक पत्थर खडे हुए हैं। उनमे से तीसरे का लेख अस्पष्ट है। पहले लेख का आशय यह है कि वि स. १५६१ ज्येष्ठ वदि ७ को महाराणा रायमल के कु वर सग्रामसिंह के लिए, जो गृहकलह से जान बचा कर भाग रहा था, राठौड बीदा अपने साथियो सहित यहा काम आया। दूसरे लेख पर सग्रामसिंह के लिए राठौड रायपाल का काम आना अंकित है। ये लेख सेवन्त्री गाँव वाली घटना के जो संग्रामसिंह के साथ घटी थी, समय निर्धारण मे बडे सहायक हैं।

बीका स्मारक शिलालेख[२१३] (१५०४ ई०)

यह स्मारक लेख बीका की मृत्यु का सवत् १५६१ आषाढ़ मास शुक्ला ५ सोमवार अंकित करता है। ख्यातो म यह समय १५६१ आश्विन सुदि ३ दिया गया है, जो विश्वसनीय नही है। टॉड द्वारा बीका की मृत्यु का संवत् १५५१ दिया गया है वह भी ठीक नही है। दयालदास की ख्यात मे बीका के साथ आठ राणियो क सती होने का उल्लेख है, वह ठीक नही, क्योकि इस स्मारक लेख मे उसके साथ केवल तीन राणियो के सती होन का उल्लेख है, जो अधिक विश्वसनीय है।

खजूरी गाँव का शिलालेख[२१४] (१५०६ ई०)

बूँदी राज्य के खजूरी गाँव स मिले हुए वि० स० १५६३ (१५०६ ई०) के शिलालेख मे बू दी के हाडाओ का इतिहास उपलब्ध होता है। लेख की भाषा पद्य मय सस्कृत है। इस शिलालेख म निश्चित है कि १५०६ ई० मे बू दी का स्वामी

---

२१२ ओझा, उदयपुर, भा० १, पृ० ३३२।

२१३ दयालदास की ख्यात, जि २, पत्र ७.
टॉड राजस्थान भा० २, पृ० ११३२,
ओझा बीकानेर राज्य का इतिहास, भा० १, पृ० १०८–१०९।

२१४ ओझा, उदयपुर, भा० १, पृ० २४१।

सूरजमल था। इसमें बूंदी का नाम वृन्दावती दिया गया है।
इस सम्बन्ध में श्लोक इस प्रकार हैं—

"गजेन्द्रगिरिसंश्रयं श्रयति धुंधुमारं यकः
सपट्पुरनराधिपो नमति नर्मदो यं सदा।
कुमार इह भक्तिभिर्भजति चन्द्रसेनः पुनः
सवृन्दावतिकाविभुः श्रयति सूर्यमल्लोपिच ।।६।।
विक्रमार्कस्य समये ख्याते पंचदशे शते।
त्रिपष्ट्या सहितेव्दानां मासे तपसि सुन्दरे ।।१४।।

कुम्भलगढ़ में कुंवर पृथ्वीराज का स्मारक[२१५]

यह स्तम्भ पृथ्वीराज की स्मारक छतरी के बीच एक स्तम्भ पर लगा हुआ है जिसके चारों ओर पृथ्वीराज के साथ सती होने वाली रानियों के नाम तथा कुंवर पृथ्वीराज के घोड़े 'साहण' का नाम दिया गया है। इस घोड़े को संभवतः श्री एकलिंग जी के मन्दिर में दे दिया हो जैसाकि यहाँ 'दिवो' शब्द से स्पष्ट है। जिन रानियों के नाम इससे उपलब्ध होते हैं वे हैं—

बाई पना, बा. रणदे, बा. जानी, बा. हीरू, बा. दाना, बा. सेउलदे, बा. मलारदे, बा. सूभो, बा. रायलदे, बा. जेवता, बा. ह······, बा. रोहण, बा. नारु, बा. श्रीतारा, बा. भगवती, बा. व—ला। १७वीं रानी का नाम स्तम्भ के पहले पहलू से नष्ट हो गया है। डॉ. ओझा ने पृथ्वीराज के साथ सती होने वाली स्त्रियों की संख्या १६ दी है (उ. रा. इ. भा. १, पृ. ३४२) जो ठीक नहीं है। प्रस्तुत लेख से १७ रानियों का सती होना स्पष्ट है। उक्त छतरी के एक स्तम्भ पर 'श्री धणप पना' नाम भी अंकित है जो छतरी के बनाने वाला सूत्रधार हो सकता है।

जोधपुर में सुमतिनाथ एवं शीतलनाथ के बिंब के लेख[२१६] (१५०८ ई०)

इसमें एक लेख वि. १५६५ चैत्र सु. १५ का है और दूसरा वि. सं. १५६५ माह सुदि ८ रविवार का है। दोनों में वैश्य समाज में दो पत्नियों के होने का उल्लेख है। इसमें धार्मिक कार्यों में कुटुम्ब के सभी व्यक्तियों का सहयोग भी अंकित है। इनकी कुछ पंक्तियां इस प्रकार हैं—

(१)

"सं. १५६५ वर्षे चैत्र सु. १५ गुरौ उप. भण्डारी गोत्रे सा. नरा भा. नारिणदे पु. तोली भा लाछलदे पु. चिजा रूपा कूणा विजा भा. वीझलदे पु. नाम्ना डामर द्वि. भा. वालादे पु. खेतसी जीवा स्वकुटुम्बेन पितृ निमित्तं श्री सुमतिनाथ बिंबं कारितं प्र. श्री संडेरगच्छे भ. श्री शांतिसूरिभिः"

---

२१५. डॉ० गोपीनाथ शर्मा, कुंवर पृथ्वीराज और उनका स्मारक, कुम्भलगढ़, शोध-पत्रिका, भा० १०, मार्च-जून, १९५९।

२१६. नाहर, जैन लेख, भा० १, नं० ५९६–५९७, पृ० १३९।

(२)

"स १५६५ वर्षे माह सुदि ८ रवौ श्री उपकेशवशे वि साडा भार्या धम्माई सुत वीसा सूरा भार्या लाछी द्वि. भार्या अरधाई धर्म्म श्रेमसे श्री शीतलनाथ विंब प्रति सिद्धान्तीगच्छे श्री देवसुन्दरसूरिभि प्र."

नौगाँव की प्रशस्ति[217] (१५१४ ई०)

वासवाडा जिले के नौगाँव के जैन मन्दिर की प्रशस्तियों में जो वि स १५७१ कातिक वदि २ शनिवार की है। नौगाव को नूतनपुर और इस प्रान्त के लिए 'वाग्वर देश' का प्रयोग किया गया है। यह लेख राउल उदयसिंह के राज्यकाल का है। इसकी एक पक्ति इस प्रकार है—

"संवत् १५७१ वर्षे कार्तिक वदि २ शनौ वाग्वरदेशे राजाधिराज राउल श्री उदयसिंह विजयराज्ये नूतनपुरे "

जैसलमेर के शातिनाथ के मन्दिर की प्रशस्ति[218] (१५२६ ई०)

इस प्रशस्ति मे जयतसिंह के राज्यकाल सघ द्वारा धर्म स्थानो की यात्रा का वर्णन है तथा उसके उपलक्ष मे लड्डू, शक्कर आदि की 'लहण' देने का उल्लेख है। कल्पसिद्धान्त आदि धार्मिक 'ग्रन्थो' के लिखवाने और दान देने का भी इसमे वर्णन है। यह प्रशस्ति देवतिलक द्वारा लिखी गई थी और सूत्रधार पेता ने उसे खोदी थी। स्थानीय भाषा के स्वरूप को समझने मे भी यह बडी सहायक है। इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

"सवत् १५८३ वर्षे मागसिर सुदि ११ दिने श्री जैसलमेरु महादुर्गे राउल श्री चाचिगदेव पट्टे राउल श्री देवकर्ण पट्टे महाराजाधिराज राउल श्री जयन्तसिंह विजयराज्ये कुमर श्री लूणकर्ण युवराज्ये श्री ऊकेशवशे श्री सखवाल गोत्रे स अवा पुत्र स कोचर हूया। जिणइ कोरटई नगरि अनइ सखवाली गामाइ उत्तग तोरण जैन प्रासाद कराव्या। आवूजी राजलइ श्री सघि सु यात्रा कीधीदेहरा मडाव्या स सिवराज श्री जैसलमेर गढ ऊपर प्रासाद कराव्या। स. पेतइ समस्त मारुवाडि माहि रुपानाणा सहित समकित लाडू लह्या। सोना ने आपके श्री कल्पसिद्धान्त ना पोथा लिखाव्या। स. वीदइ श्री शत्रुजय गिरनार आबू तीर्थ यात्रा कीधी। समकित मोदक-घृत खाड साकरनी लाहणि कीधी पाचमीना उजमणा कीना। श्री कल्पसिद्धान्त पुस्तक घणीवार वचाव्या' पाचवार लाप नवहार गुणी चारसा जोडो अल्लीनी लाहणी कीधी। स सहसमच घरे आव्या पछइ स वीदइ घर २ प्रतइ दस २ सेर घृत लाह्या। गाइ सहस १ जाडी घृत अन्न गुल रत घणी वार पद्दरसन ब्राह्मणादिकाना दीधा। गउष करावी दस अवतार सहित लषमीनारायणनी मूर्ति गउषइ मडावी। श्रीदेव तिलकवोपाध्यायेन लिखिता चिर नदनु। सूत्रधार मनसुख पुत्र सूत्रधार पेता केन

---

२१७ ओझा, डूगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० १।

२१८ नाहर, जैन लेख भा० ३, सं २१५४, पृ० ३५-४०।

मुदकारि प्रशस्तिरेषा कारीत"

शांतिनाथ के मन्दिर की प्रशस्ति, जैसलमेर[२१६] (१५२६ ई०)

यह प्रशस्ति जैसलमेर में शांतिनाथ के मन्दिर में लगाई गई थी। इसका समय वि. सं. १५८३ मार्गशीर्ष शुक्ला ११ है। इसमें जैसलमेर के शासक राव चाचिगदेव, देवकर्ण, जयतसिंह और कुंवर लूणकर्ण की दुहाई दी गई है। इसमें वर्णित है कि उकेशवंश के संखवाल आंबा के पुत्र कोचर ने कोरंट नगर और संखवाली गांव में ऊंचे तोरण वाले प्रासाद बनवाये और आबू की संघ के साथ यात्रा की। उसने अपने सब द्रव्य लोगों को देकर कर्ण का स्थान लिया। इसके वंशज आसराज ने शत्रुंजयतीर्थ की यात्रा की। इसकी स्त्री तथा पुत्री ने गिरनार और आबू की यात्रा की। इसके पुत्र नेता ने १५११ में संघ समेत शत्रुंजय तीर्थयात्रा की। इसी तरह उसके एक वंशज पेता ने जैसलमेर के गढ़ पर अष्टापदतीर्थ प्रासाद का निर्माण वि. १५३६ में करवाया और २४ तीर्थंकरों की प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा करवाई। उसने समस्त मारवाड़ में रुपयों के साथ लड्डू की 'लेण' दी और सुनहरी अक्षरों में कल्पसिद्धान्त की पुस्तकें लिखवाईं। उन दिनों जब मुद्रण व्यवस्था न थी धर्मनिष्ठ व्यक्ति धार्मिक पुस्तकों को लिखवाकर पुस्तक-भंडारों में रखवाते थे और विद्वानों को वितरण करते थे। यह प्रथा एक विद्या के विकास का साधन था और इसके द्वारा धन का सदुपयोग भी होता था। इसी तरह संघ मन्दिर निर्माण, यात्रा, लेण आदि भी ऐसी परम्पराएं थीं कि जिनसे धर्म की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिलता था और सामाजिक सम्पर्क स्थापित होता था। इन विषयों के अध्ययन के लिए इस प्रशस्ति का अपना स्वतन्त्र महत्त्व है। प्रस्तुत प्रशस्ति में स्थानीय भाषा का प्रयोग किया गया है जो उस समय के भाषा के स्तर को जानने का अच्छा साधन है। उस समय की प्रचलित मुद्रा को 'नाणा' कहा जाता था जैसाकि इस प्रशस्ति में अंकित है। इसका कुछ अंश यहां उद्धृत किया जाता है—

पंक्ति २२–२३ "सं. पेतइ समस्त मारुयाडि माहि रुपानाणा सहित समकित लाडू लाह्या। सोनाने आपरे श्री कल्पसिद्धान्तना पोथां लिखाव्यां"

शत्रुञ्जय पर्वत लेख[२२०] (१५३१ ई०)

शत्रुञ्जय पहाड़ जो काठियावाड़ का बहुत बड़ा जैन तीर्थस्थान है, आदिदेव के मन्दिर का लेख बड़ा ऐतिहासिक महत्त्व का है। यह सफेद संगमरमर के पत्थर पर, जिसका आकार ३०"×१८", में उत्कीर्ण है और उसमें ५४ पंक्तियाँ श्लोकबद्ध हैं। इसमें मन्दिर के सम्बन्ध में सातवें जीर्णोद्धार का वर्णन है जिसे ओसवाल जातीय

---

२१९. भंडारकर रिपोर्ट, १९०४–०५, १९०५–१९०६, संख्या ५४;
गा. ओ. सि. नं० २१, अपे. नं० ५;
जैन इन्स. भा० ३, पृ० ३६ (नं० २१५४);

२२०. भाव०, इन्स०, संख्या १०, पृ० १३४–१४०।

समृद्ध श्रेष्ठि कर्मा ने सम्पादन करवाया था। यह मेवाड के शासक रत्नसिंह और गुजरात के शासक बहादुरशाह का समकालीन था।

प्रस्तुत लेख मे मेवाड तथा चित्तौड की समृद्ध स्थिति पर प्रकाश पडता है। यहाँ के निवासियो के सम्बन्ध मे प्रशस्तिकार लिखता है कि वे उदार, समृद्ध तथा ईमानदार थे। इसमे दिये गये श्रेष्ठि परिवार के वर्णन मे पोमा, गुवा, दशरथ के दो दो स्त्रियो के होने का वर्णन है जिनमे उनके सच्चरित्र तथा सुखी जीवन की प्रशसा की गई है। ऐसा प्रतीत होता है कि उस युग मे समृद्ध परिवारो मे बहु-विवाह की परम्परा थी और उसे सुखी जीवन का एक अग माना जाता था। कर्मसिंह के सम्बन्ध मे प्रशस्तिकार ने उसको रत्नसिंह के समय का अच्छा व्यापारी तथा शासन अधिकारी बतलाया है। इसके द्वारा आयोजित जययात्रा के उत्सव का भी वर्णन है, जिसमे नृत्य तथा वादित्रो का उपयोग किया गया था। इस प्रशस्ति मे उल्लिखित है कि मन्दिर के जीर्णोद्धार मे गुजरात और चित्तौड के कई शिल्पियो ने काम किया था। ऐसे शिल्पियो मे नाथा, जेता, भीम, वेला, टीला, पोमा, गोरा, ढोला, देवा, गोविन्द, वच्छा, भान, छाभा, दामोदर, हरराज के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। इस नामावली से उस समय के ऐसे शिल्पियो के परिवारो का बोध होता है जिनकी उपयोगिता मेवाड के बाहर के प्रान्तो मे भी समझी जाती थी। इससे श्रमिको का एक भाग से दूसरे भागो मे आदान-प्रदान की व्यवस्था पर भी प्रकाश पडता है। इस प्रशस्ति की रचना प० समयरत्न के शिष्य प० लावण्य ने की थी और उसे विवेकधीरगणि ने लिखा था। इसके अन्त मे कुछ ऐसे व्यक्तियो के नाम दिये हैं जो इसके निर्माण से सम्बन्धित थे—जैसे ठा० हांसा, ठा० मूला, ठा० कृष्णा, ठा० कान्हा, ठा० हर्षा, सु० माधव, सू० बाद्व तथा लोहार सहज।

इसका एक श्लोक यहा उद्धृत किया जाता है—

"श्रीपाद लिप्तललतासर शुद्धदेशे सद्गन्ध मगलमनोहरगीत नृत्यैः ।।
श्री कर्मराज सुधिया जलपात्रिकाया चक्रे महोत्सववर सुगुरुपदेशात् ।।२६।।"

एकलिंग जी के मठ की प्रशस्ति[221] (१५३५ ई०)

यह प्रशस्ति श्याम रग के १५"×८" पत्थर पर स्पष्ट रूप से खुदी हुई है। इसके अक्षर शुद्ध और सुन्दर हैं। यह श्री एकलिंग शिवालय के गोस्वामी जी के मठ की तीसरी मजिल की एक ताक मे लगी हुई है। इसमे प्रयुक्त भाषा सस्कृत है। इसमे कुल ४ श्लोक और कुछ पद्याश भी हैं तथा १० पक्तियो मे उत्कीर्ण है। इसका समय वि० स० १५६२ माघ शुक्ला अष्टमी है। प्रस्तुत प्रशस्ति मे हारीत, ब्रह्मगिरी, पाशुपताचार्य श्री विश्वनाथ तथा नरहरि के नाम उल्लिखित है। श्री नरहरि के बारे मे शिव धर्म मे दीक्षित होना अकित किया है जिन्होने उक्त मठ का विस्तार करवाया था। मठ के विषय मे बताया गया है कि इसमे गूढ मार्ग, तलघाने तथा बाहिर के

---

२२१ एक प्रतिलिपि के आधार पर।

सुन्दर भवन हैं। प्रशस्तिकार दशोरा ज्ञातीय पुरुषोत्तम तथा निर्माण करने वाला सूत्रधार भीमसिंह था।

इसकी आदि तथा अन्त की पंक्तियों के अंश का अक्षरान्तर इस प्रकार है—

"॥श्रीगणेशाय नमः॥ कल्याणानां कदंबानि करो मुञ्चतां सदा"

"दशपुर ज्ञातीय पंडित पुरुषोत्तम कृतेयं प्रशस्ति। सूत्रधार भीमसिंहः कारयिता मठी विस्तारस्य"

चित्तौड़ का शिलालेख[222] (१५३६ ई०)

चित्तौड़ के रामपोल के दरवाजे के बाहरी पार्श्व में वणवीर के समय का एक लेख उत्कीर्ण है, जिसका समय वि० सं० १५९३ फाल्गुन वदि २ है। यह लेख उस समय के पूर्ण ब्राह्मण, चारण, साधु आदि से ली जाने वाली चुंगी (दाण) का उल्लेख करता है और उसे भविष्य में न लिये जाने का इसमें आदेश है।

चींच गाँव का लेख[223] (१५३६ ई०)

बांसवाड़ा जिले के चींच गाँव की ब्रह्मा की मूर्ति पर वि० सं० १५९३ वैशाख वदि १ गुरुवार का लेख है, जिसमें इस भाग के लिए 'वैयागड देशे' शब्द का प्रयोग किया गया है। यह लेख राजश्री राउल जगमाल के समय का है। इसमें संस्कृत गद्य का प्रयोग किया गया है।

इसमें प्रयुक्त पक्तियों का कुछ अंश इस प्रकार है—

"स्वस्ति श्री नृपविक्रमार्कसमयातीत संवत् १५९३ वर्षे वैशाख वदि १ गुरौ अनुराधानक्षत्रे शिवनामयोगे वैयागडदेशे राजश्री राउल जगमाल जी विजयराज्ये...."

सिवाना का लेख[224] (१५३७ ई०)

यह लेख राव मालदेव की सिवाना किले की विजय का सूचक है। इसमें विजय के उपरान्त किये जाने वाले प्रबन्ध का भी वर्णन मिलता है। इससे उस समय की स्थानीय भाषा का भी बोध होता है।

इसका अक्षरान्तर इस प्रकार है—

"स्वस्ति श्रे (श्री) गणेश प्रा (प्र) सादातु (तृ) समतु (संवत् १५९४ वर्षे आसा (षा) ढ वदि ८ दिने बुधवा (स) रे मह (हा) राज (जा) धिराज मह (हा) राय (ज) श्री मालदे (व) विजै (जय) राजे (राज्ये) गडसि वणे (वाणो) लिये (यो) गडरि (री) कु (कूं) चि मं (मां) गलिये देवे भादाउ तु (भदावत) रे हाथि (थ) दि (दी) नी गड थं (स्तं) भेराज पंचा (चो) ली अचल गदाधरे (ण) तु रावले वहीदार लिप (खि) तं सूत्रधार करमचंद परलिय सूत्रधार केसव"

इसमें अष्टमी तिथि के बजाय सप्तमी होना चाहिये और इसे चैत्रादि संवत्

222. ओझा, उदयपुर, भा० १, पृ० ४०२।

223. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० १।

224. रेऊ, मारवाड़ का इतिहास, भा० १, पृ० १२२।

१५६५ मारवाड मे प्रचलित श्रावणादि के विचार से लेना चाहिये ।

नडुलाई का लेख[२२५] (१५४० ई.)

इस लेख मे रायमल के समय मे कु० पृथ्वीराज को महाकुमार की संज्ञा दी है, जो बडे महत्त्व की है । इससे उसके मेवाड के पश्चिमी भाग पर शासकीय अधिकार रहने की सूचना प्राप्त होती है ।

लेख का मूल पाठ इस प्रकार है—

'सवत् १५६७ वर्षे वैशाख मासे शुक्ल पक्षे षष्ठ्या तिथौ शुक्रवासरे शान्ति सूरि वराणा विजय राज्ये । अयेह श्री मेदपाट देशे— श्री रायमल्ल विजयभान प्राज्य राज्ये तत्पुत्र महाकुमार श्री पृथ्वीराजानुशासनात् नंद कुलवत्या पुर्या । इति लघु प्रशस्तिरियं लि. आचार्य श्री ईश्वरसूरिणा उत्कीर्णा सूत्रधार सोमाकेन।"

हीरावाडी (जोधपुर) का लेख[२२६] (१५४० ई०)

यह लेख राव मालदेव के समय का है । ऐसी प्रसिद्धि है कि जब रावजी की सेना ने नागोर विजय के उपरान्त इधर-उधर गावो को लूटना आरभ किया उस समय सेनापति जैता का मुकाम हीरावाडी नामक स्थान मे था । उसके प्रभाव के कारण वहा शान्ति बनी रही । इससे प्रभावित होकर वहा के प्रमुख व्यक्तियो ने सेनापति को १५,००० रुपयो की थैली भेंट की । इस द्रव्य का उपयोग एक बावली बनवाने मे किया गया जो रजलानी गाँव के निकट है । इस बावली मे एक लेख लगाया गया जिसके पूर्व भाग मे १७ श्लोक है । इनमे देवताओ आदि की स्तुति की गई । इन श्लोको से उस समय की सस्कृत भाषा के स्वरूप का हमे अनुमान होता है । इस लेख का उत्तरार्ध बडे महत्त्व का है जिसके कुछ अश इस प्रकार है—

'इति श्री विक्रमायीत साके १४४० संवत् १५६७ वर्षे वदि १५ दिने रउवारे राजश्री मालदेवरा राठड रावारा बावडी रा कमठण ऊधरता राजी श्री रिणमल राठवड गेत्ते (गोत्रे) तत् पुत्र राजी अखैराज सूतन राजश्री पचायण पचायण सूत न राजश्री जैताजी वावड रा कमट (ठा) ऊ घता ।" *इस गद्याश से उस समय की मिश्रित* भाषा का भी पता चलता है एवं राजवश के क्रम का भी ज्ञान होता है ।

इस अश के आगे जैता के कुटुम्बियो के नाम दिये हैं । इससे यह भी सूचना मिलती है कि उक्त वावली के बनवाने का कार्य वि० स० १५६४ मार्गशीर्ष कृष्णा ५ रविवार को प्रारभ किया गया था । इसके निर्माण कार्य मे १५१ कारीगर एव १७१ पुरुष एव २२१ स्त्रिया मजदूर लगाये गये थे ।

इस लेख से सम्पूर्ण कार्य मे १,२१,१११ फदिए खर्च होना पाया जाता है । फदिये का मूल्य उन दिनो एक रुपये के ८ फदिए के बराबर थे अर्थात् दो आने के

२२५. नाहर–जैन लेख, भा० १, संख्या ८५२, पृ० २१५ ।

२२६ विश्वेश्वर नाथ रेऊ, मारवाड़ का इतिहास, भाग १, पृ० ११७–११८

बरावर मूल्य वाली मुद्रा को फदिया संज्ञा दी जाती थी।

इस लेख में वावली बनाने में जो सामान लगा उसकी सूची भी दी गई है—जैसे १५ मन सूत, ५२० मन लोहा, ३२१ गाड़ियां, २५ मन घी, १२१ मन सन, २२१ मन पोस्त, ७२१ मन नमक, ११२१ मन घी, २५५५ मन गेहूं ११,१२१ मन दूसरा नाज और मन अफीम (मजदूरों के लिए)।

उक्त सूची से प्रतीत होता है कि उन दिनों मजदूरी को मुद्राओं में देकर आवश्यक वस्तु के रूप में भी दिया जाता था।

वनेश्वर के पास विष्णु मन्दिर की प्रशस्ति[२२७] (१५६१ ई०)

यह लेख डूंगरपुर के वनेश्वर के पास के विष्णु-मन्दिर का आषाढ़ादि वि० सं० १६१७ (चैत्रादि १६१८) शाके १४८३ ज्येष्ठ सुदि ३ (ई० सं० १५६१ ता० १७ मई) का है। इसमें प्रयुक्त भाषा संस्कृत तथा लिपि नागरी है। इसमें २५ श्लोक तथा पीछे की कुछ पंक्तियों में वागडी भाषा का प्रयोग किया गया है। इस प्रशस्ति से प्रकट है कि आसकरण की माता सज्जनाबाई सोलंकी ने डूंगरपुर में वनेश्वर के मन्दिर के पास उपर्युक्त विष्णु मन्दिर को बनवाकर उसकी प्रतिष्ठा के समय स्वर्ण की तुला आदि दान किये। इससे यह भी ज्ञात होता है कि सज्जनाबाई से आसकरण और अक्षयराज नामक दो कुंवर और लाछाबाई नामक एक कुंवरी पैदा हुई थी। इस प्रशस्ति में गंगदास के सम्बन्ध में जो आसकरण के पहले तीसरी पीढ़ी में वागड का शासक था, लिखा है कि उसने ईडर के स्वामी भाण की १८,००० सेना के साथ युद्ध हुआ, जिसमें उसने भाण के सिर पर प्रहार किया और उसकी सेना को तितर-वितर कर दिया। आसकरण के सम्बन्ध में प्रशस्तिकार लिखता है कि उसके सेवकों ने मेवाड़ के राजा को जीता। इस कथन की अन्यत्र पुष्टि नहीं होती। इसलिए यह कथन कहाँ तक ठीक है, कहा नहीं जा सकता। "यह संभव हो सकता है कि महाराणा उदयसिंह को लेकर धाय पन्ना प्रतापगढ़ से डूंगरपुर पहुंची, उस समय महारावल पृथ्वीराज ने उसे जैसी सहायता देनी चाहिये थी वैसी न दी, जिससे राज्य पाने के पश्चात् उदयसिंह ने डूंगरपुर सेना भेजी हो।" प्रशस्तिकार ने आसकरण को उदार शासक कहा है। उसने स्वयं स्वर्ण का तुलादान किया और विष्णु-मन्दिर की प्रतिष्ठा के समय उसने अपनी माता को स्वर्ण की तुला कराई। इसमें उसके दादा उदयसिंह के द्वारा कल्पवृक्ष के दान देने का भी उल्लेख है। इसमे वागड के शासकों की नामावली दी गई है जिसकी संख्या ४५ है। यह नामावली विजयादित्य से आसकरण तक दी गई है, जिसमें प्रारम्भिक मेवाड़ वंशीय शासक सम्मिलित हैं। प्रशस्तिकार ने अंतिम श्लोक में वागड की साक्षरता पर प्रकाश डाला है जो स्थानीय विद्योन्नति का प्रमाण है।

---

२२७. वीरविनोद भा० २, प्रकरण ११, शेष संग्रह सं० ५, पृ० ११८६-६१। ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० ६६।

इसके कुछ अंश यहाँ उद्धृत किये जाते हैं—

"तुलापुरुषदानस्य हेमसंपादितस्य च
गोसहस्रादिदानाना दात्री पात्रजनस्य या"
"कृष्ण कृष्ण इवापर क्षितितले श्री सज्जनाबा ततो
जाताकारि तया प्रसन्नमनसो प्रासाद एष स्थिर"
"चिरजीवतु बाई श्री सज्जनाऊ ई प्रासाद कराव्यूं छे"

वनेश्वर के मन्दिर का लेख[228] (१५६१ ई०)

यह लेख डूंगरपुर के वनेश्वर के मन्दिर का है। इसमे पद्य मय भाषा संस्कृत है। इसका समय वि स १६१७ ज्येष्ठ सुदि ३ (ई. स १५६१ ता १७ मई) है। इसमे उल्लिखित है कि गगदास का ईडर के स्वामी भाण के साथ युद्ध हुआ, जिसमे गगदास ने उसके शत्रु की १८,००० सेना को तितर-बितर कर दिया और भाण के सिर पर प्रहार किया। इस सम्बन्ध का श्लोक इस प्रकार है—

'येनाष्टादशसाहस्त्र बल भान महात्मना
इलादुर्गाधिपो भानुर्भाले गर्ज्जन ताडित'

द्वारिकानाथ का लेख[229] (१५६१ ई०)

यह लेख डूंगरपुर के वनेश्वर के पास के विष्णु मन्दिर (द्वारिकानाथ) का वि स १६१७ ज्येष्ठ सुदि ३ (ई स १५६१ ता १७ मई) का है। इसकी भाषा पद्यमय संस्कृत है। इस प्रशस्ति से प्रकट है कि पृथ्वीराज की एक राणी सज्जनाबाई चालणोत सोलकी हरराज की पोती और किशनदास की पुत्री थी। उससे आसकरण और अक्षयराज नामक दो पुत्र और लाछबाई नामक पुत्री हुई। उक्त राणी ने इस विष्णु मन्दिर को बनवाया और प्रतिष्ठा के अवसर पर स्वर्ण तुलादि दान किए।

जोगेश्वर महादेव के मन्दिर का लेख[230] (१५६७ ई०)

यह लेख डूंगरपुर के जोगेश्वर महादेव के वि स १६२४ मार्गशीर्ष सुदि ५ (ई सं. १५६७ ता ६ नवम्बर गुरुवार) का है। इस लेख तथा उसी मन्दिर के वि. स० १६३४ की प्रशस्ति से विदित होता है कि उक्त मन्दिर का निर्माता मत्री जगमाल खडायता था। यह प्रशस्ति उक्त मत्री के वश वर्णन के लिए बडी उपयोगी है।

बैराट के जैन मन्दिर का लेख[231] (शक सवत् १५०९ ई०)

यह लेख बैराट के जैन मन्दिर का है जिसमे ४० पंक्तियाँ हैं जो कई जगह खडित हैं। लेख का आशय यह है कि इन्द्रराज ने तीन तीर्थङ्करो की मूर्तियाँ बनवा

---

२२८ ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० ७२।

२२९ ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० ८७–८८।

२३०. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० ९९।

२३१ प्रोग्रेस रिपोर्ट ऑफ आर्कियालोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, पृ० ४६।

कर विमलनाथ के प्रासाद में लगवाई। इनमें से एक चन्द्रप्रभ की मूर्ति पीतल की थी। इसकी स्थापना का कार्य हरविजय सूरि ने किया। इस कार्य का समय फाल्गुन शुक्ला द्वितीया, शक संवत् १५०६ था। इस प्रशस्ति में अकबर को एक महान् शासक व विजेता बताया गया है जिसने हरविजय के उपदेश से अपने राज्य में वर्ष भर में १०६ दिन जीवहत्या का निषेध करवा दिया था। प्रशस्ति के एक भाग में इन्द्रराज तथा हरविजय के वंशक्रम का वर्णन मिलता है। इसमें यह भी वर्णित है कि हरविजय को बादशाह अकबर ने जगत्गुरू की उपाधि अर्पित की थी: इन घटनाओं की पुष्टि देवविमल गणि के हीरसौभाग्य काव्य से भी होती है।

आबू के अचलेश्वर के समीपवर्ती मानराव के मन्दिर की प्रशस्ति[२३२] (१५७६ ई०)

यह प्रशस्ति संस्कृत पद्य और गद्य में है, जिसमें ५ श्लोक और फिर गद्य में अन्तिम भाग है। इसका समय संवत् १६३३ ज्येष्ठ शुक्ला २ रवि है। इसमें चौहान मानसिंह के शौर्य और उपलब्धियों का वर्णन है। इससे यह भी मालूम होता है कि वह राम और शिव का भक्त था। धारबाई ने उसकी स्मृति में इस मन्दिर का निर्माण करवाया और मान की मूर्ति की स्थापना की।

इसकी एक पंक्ति यहां उद्धृत करते हैं—

"तस्येयं परभामूर्तिः पत्नीपंचक संयुता।

कारिता शिवसेवार्थं धारबाय्या शिवालये।।"

उदासर चारणान के निकट छत्री के दो लेख[२३३] (१५७७ ई०)

ये दो लेख उदासर चारणान के समीप एक छत्री पर जो चूरू से लगभग २८ मील पश्चिम में है। प्रथम लेख १४×४ इंच के आकार का है जिसमें पाँच पंक्तियाँ है और दूसरा १५×६ इंच के आकार में ८ पंक्तियों वाला है। इन लेखों से रामसिंह के सम्बन्ध की कई भ्रान्तियां स्पष्ट हो जाती हैं। इसके सम्बन्ध में एक यह भ्रान्ति है कि उसे महाराजा रायसिंह (बीकानेर) ने विष दिया था। इसके लिए यह भी कहा जाता है कि वह मुगलों से या जाटों से लड़कर मारा गया आदि। वास्तव में उसकी मृत्यु चूरू ठाकुर मालदेव के विरुद्ध लड़ते हुए हुई। जहाँ वह मारा गया वहाँ एक दुमंजिली छत्री बनी हुई है और उसी पर ये लेख अंकित हैं। इनसे यह भी ज्ञात होता है कि उसके शव के साथ उसकी दो पत्नियां कछवाही रुक्मादे और भटियानी संतोषदे सती हुई—

दोनों लेखों के मूल पाठ निम्न हैं—

---

२३२. वीरविनोद, भा. २, प्र. ११. पृ. १२१४।

२३३. मरु-भारती, वर्ष १७, अंक २, जुलाई १९६९, पृ० ६६–७२; वैचारिकी, अक्टूबर, १९७१, पृष्ठ २८।

(१)

प "१ सवत् १६३४ वर्षे आषाड मासे शुक्ल पक्ष तिथि १५
२ रविवासरे राजि श्री रामसिंघजी सगाम मृत्यु बहुजी श्री क
३ छवाही रुपमादे बहुजी श्री भटियाणी सतीपदे सहग
४ मण कना राजि श्री रामसिघजी महा सतीया सहित
५ श्री वैक [कु] ठे प्राप्ता सुभ भावतु कल्य [या] ण मस्त [स्तु]"

(२)

प १ स्वस्ति श्री गणेशायनम श्र [शु] सवसरे अरमन् शुभविक्र
२ मादित्य राजे [शु] सवत् १३३४ वर्षे शाके १४६६ प्रवतमाने महामा
३ गल्य आषाढ मासे शुक्ल पक्षे तिथि पूर्णिमा १५ रविवासर राजि
४ श्री रामसिघजी सग्रामे मृत्यु बहूजीकछवाही रुपमादे
५ " " परम पवित्र पतिव्रता महासती सहगमण प्रा
६ प्ता बहू श्री भटियाणी सतीपदे सगमण कता राजि श्री
७ रामसिघजी महासतीया सहित भी वैकुण्ठ प्राप्त सुभ
८ भवतु कल्याणमस्तु सिलावट वीरदास कना जोसी हेमालिपतः

सारन का लेख[२३४] (१५८० ई०)

यह लेख सोजत प्रान्त के सारन नामक स्थान का है जहाँ रावचन्द्र सेन की दाहक्रिया की गई थी। इस स्थान मे एक प्रतिमा बनी हुई है जो चन्द्रसेन जी की घोडे पर सवार की है और उसके आगे ५ स्त्रियाँ खडी हैं जो उनके साथ सती हुई थी। उसमे अकित है—

"श्री गणेशाय नम । सवत् १६३७ शाके १५ [०] २ माघ मासे सू (शु) क्ल पक्षे सतिव (सप्तमी) दिने राय श्री चन्द्रसेण जी देवीकुला सती पच हुई।"

सूरखड की प्रशस्ति[२३५] (१५८५ ई०)

इस प्रशस्ति की छाप उदयपुर संग्रहालय से प्राप्त हुई। इसमे महाराणा प्रताप द्वारा राठौडो को छप्पन क्षेत्र मे हराकर सवत् १६४२ ई० मे अपना राज्य स्थापित करने की सूचना मिलती है। इसके अतिरिक्त इसमे यह भी दर्ज है कि महाराणा का मानसिंह के साथ युद्ध हुआ था। प्रस्तुत लेख मे रणछोड जी के मन्दिर के लिए पुण्यार्थ भूमि ४ हल की दने का पुजारी कुँवर का उल्लेख है। इसकी भाषा मिश्रित है जिसमे मेवाडी के साथ खडी बोली को प्रयुक्त किया गया है। उस समय के अन्य लेखो की भाषा व तरीके से तो यह सुरहलेख मेल नहीं खाता, परन्तु वि० सं०

२३४. रेऊ, मारवाड का इतिहास भा० १, पृ० १५६।
२३५. जी एन शर्मा, मेवाड एण्ड दी मुगल एम्परर्स पृ० ११५-१६, जर्नल ऑफ दी एशियाटिक सोसायटी, भा० ३०, १६५५, पृ० ७४-७७।

१६४२ में राठोड़ों को हराकर प्रताप का छप्पन प्रदेश पर अधिकार होना सर्वमान्य है। रहा भाषा का प्रश्न इस पर भी जब हम गहराई से देखते हैं तो यह भाषा युद्धकाल में चल पड़ी थी जैसा कई स्मारक लेखों से प्रमाणित होता है। यह भी संदेह हो सकता है कि सम्भवतः पुजारी ने पीछे से अपने अधिकार को पुष्ट करने के लिए यह सुरह लेख तैयार करवाया हो। परन्तु अक्षरों की बनावट तो १६वीं शताब्दी सी दीखती है और घटना या तिथिक्रम जो इसमें दिया गया है वह ठीक है।

इसका मूल पाठ इस प्रकार है जिसमें १६ पंक्तियाँ हैं—

"महाराणाधराज प्रतापसीगजी ने राठड का राज पराजित कर सिसोदियण का राज संवत् १६४२ में राज प्रतापत कीग्रा सुरषंड नगेर पर राज काद उस समे मुगल अकबर के विषात सेनापती रामानसेह को सात जुद था महाराणा जी असी वज पइ उ पुसी मे श्री रनसडजी का मदीरा डोरी थ उसका प्रमद कीग्रा लु वीहल ४ पुजारा कुवर को दा जेठ सुकल ११"

डूंगरपुर की नौलखा बावड़ी की प्रशस्ति[२३६] (१५८७ ई०)

यह प्रशस्ति डूंगरपुर की नौलखा बावड़ी की है। इसका समय वि० सं० १६४३ वैशाख सुदि ५ (ई० सं० १५८७ ता० ३ अप्रैल) है। इस प्रशस्ति से हमें कई महत्त्वपूर्ण सूचनाएं मिलती हैं। इस बावड़ी का निर्माण महारावल आसकरण की राणी प्रेमलदेवी द्वारा करवाया गया था। वह बड़ी धर्मनिष्ठ थीं। उसने आबू, द्वारिका और एकलिंगजी आदि तीर्थ स्थानों की यात्रा की थी। वागड के चौहानों के इतिहास जानने के लिए भी इस प्रशस्ति का बडा उपयोग है, क्योंकि इसमें चौहान लाखण से लगाकर उक्त संवत् तक के वागड के चौहानों की वंशावली उपलब्ध है।

राणकपुर प्रशस्ति[२३७] (सभामण्डप) (१५०९ ई०)

इसमें प्राग्वाट् ज्ञाती के साह खेता नामक वर्द्धा पुत्र यशवंतादि ने ४८ सुवर्ण माणक प्रतोली के निमित्त अनुदान दिया।

इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

"संवत् १६४० वर्षे फाल्गुन मासे शुक्ल पक्षे पंचम्यां तिथौ गुरुवासरे श्री तपागच्छाधिराज पातसाह श्री अकबरदत्त जगद्गुरु विरुद्धारक भट्टारिक श्री श्री श्री ४ हीरविजयसूरीणामुपदेशेण चतुर्मुख श्री धरण विहारे प्राग्वाट् ज्ञातीय सुश्रावक सा खेता नायकेन वर्द्धा पुत्र पुत्र यशवंतादि कुटुम्बयुतेन अष्टचत्वारिंशत् (४८) प्रमाणानि सुवर्ण नाणकानि मुक्तानि पूर्व दिक्सत्प्रतोली निमित्तमिति श्री अहमदावाद पार्श्वे उसमा पुरतः ॥श्रीरस्तु॥"

---

२३६. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० १०१–१०२।

२३७. नाहर, जैन लेख, भा० १, संख्या ७१४, पृ० १७०–१७१।

सूरपुर (डूगरपुर) के माधवराय के मन्दिर की प्रशस्ति[२३८] (१५९१ ई०)

यह प्रशस्ति सूरपुर नामक डूंगरपुर ज़िले के माधवपुर के मन्दिर की आषाढ वि० १६४७, तदनुसार ई० सं० १५९१ ता० १७ मई सोमवार की है। इसकी अधिकाश भाषा सस्कृत है। प्रशस्ति को सस्कृत पद्य तथा वागडी गद्य मे लिखा गया है। इसमे वागड देश की समृद्धि का वर्णन है जिसमे ३५०० गाँवो की सख्या बताई गई है। डूगरपुर के वर्णन मे भी बगीचो, बावडियो, सरोवर और कुंओ का वर्णन दिया गया है। इस नगर के वर्णन मे शहर पनाह, दुकाने, मार्ग, मन्दिर आदि भी समावेशित है। प्रशस्ति से उस समय की शिक्षा पर भी प्रभूत प्रकाश पडता है जिसमे वेद, पुराण और शास्त्र अध्ययन के मुख्य विषय है। ब्राह्मणो के सम्बन्ध म इन विषयो के अध्ययन पर बल दिया गया है।

इस प्रशस्ति मे वागड के शासको का सम्बन्ध चित्तौड के गुहिल वश से स्थापित किया गया है और उस चित्तौड के सामन्तसिंह से जोडा गया है। इस क्रम मे सामन्तसिंह, रत्नसिंह रा० नरब्रह्म, रा० भालु रा० केशरी, रा० सामन्तसिंह, रा० सिहडदे आदि हैं। राउल आसकर्ण के लिए इसमे अकबर से युद्ध करना लिखा है। इसी क्रम मे उसके पुत्र सहस्रमल्ल की पट्टराणी सूरजदे द्वारा सूरिजपुर मे सवत् १६४७ मे मन्दिर बनाने का उल्लेख है। इसके द्वारा हमे सहस्रमल के कुंवर करमसी तथा कुमारी जसोदाबाई के नाम उपलब्ध होते हैं। प्रशस्तिकार ने नागर जाति के भाभल व्यास नामी प्रधान, मन्त्री गाधी सिंघा, कोठारी कचरा तथा प्रासाद के निरीक्षक महेसदास, प्रशस्तिकार सोमनाथ, लेखक दीक्षित वेणीदास तथा साक्षी कदोई कान्हा के नाम दिये हैं। इन नामो से उस समय की शासन व्यवस्था के सचालको का बोध होता है। इस प्रशस्ति को सूत्रधार गोदा के पुत्र हरदास न लिखी थी। यह प्रशस्ति वागड के शासको तथा चित्तौड के गुहिलो के सम्बन्ध स्थापित करन मे बडी उपयोगी है। इससे उस समय की सामाजिक, धार्मिक तथा आर्थिक व्यवस्था पर अच्छा प्रकाश पडता है।

इसका कुछ अश यहाँ उद्धृत किया जाता है—

"स्वल्पदेशा नृपदेशा कपा सन्ति सहस्रश
तथापि सप्रशसति गुणा वागड नामभि ।"
'पचत्र्यश शतान् ग्रामान् विविधाभूति भूतय
बहुदवोलया यत्र यत्र पुण्य जनाश्रित "
'आस्ते गिरिपुर नाम नगर नगरजित '
"यत्तदाविततोधानवापीकूपसरोवरैं
शुशुभे शुभपर्यन्तैं वृहत्प्राकार गोपुर ।"

---

२३८ वीरविनोद द्वि० भा० प्रकरण ११, पृ० ११७७–८१,
ओझा, डूगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० १०२।

बीकानेर की प्रशस्ति[२३९] (१५९४ ई०)

यह प्रशस्ति बीकानेर–दुर्ग के द्वार के एक पार्श्व में लगी हुई है जो महाराजा रायसिंह के समय की है। इसकी भाषा संस्कृत है। प्रशस्ति से ज्ञात होता है कि वि० सं० १६४५ फाल्गुन वदि ९ (ई० स० १५८९ तारीख ३० जनवरी) बृहस्पतिवार को बीकानेर के वर्तमान किले के निर्माण का कार्य आरम्भ किया गया और फाल्गुन सुदि १२ (ई० स० १५८९ तारीख १७ फरवरी) सोमवार को नींव रखी जाकर वि० सं० १६५० माघ सुदि ६ (ई० सं० १५९४ तारीख १७ जनवरी) बृहस्पतिवार को गढ़ सम्पूर्ण हुआ। यह काम मन्त्री कर्मचन्द्र के निरीक्षण में सम्पन्न हुआ था। यह लेख महाराजा रायसिंह ने गढ़-निर्माण काल के समाप्त होने के अवसर पर लगाया गया था। विस्तार के विचार से तथा सुन्दरता की दृष्टि से यह लेख बड़े महत्त्व का है। इस लेख का उपयोग और अधिक बढ़ जाता है जब हमें इसमें बीका से रायसिंह तक के बीकानेर के शासकों की उपलब्धियों का परिचय मिलता है। इसमें ६०वीं पंक्ति से रायसिंह के कार्यों का उल्लेख आरम्भ होता है, जिसमें उसकी काबुलियों, सिन्धियों और कच्छियों पर विजयें मुख्य हैं। इसके सम्बन्ध में प्रशस्तिकार लिखता है कि वह काव्य और साहित्य से भी बड़ा अनुराग रखता था। वह स्वयं अच्छा कवि और विद्याप्रेमी था और विद्वानों का आश्रयदाता था। उसे हिन्दू धर्म के प्रति अगाढ़ आस्था थी, परन्तु वह दूसरे धर्मों को भी सम्मान की दृष्टि से देखता था। लेखक ने उसके गुजरात, काबुल, कन्दहार आदि की चढ़ाइयों के अवसर पर अद्भुत शौर्य की प्रशंसा की है। शिलालेख का रचयिता जइता नामक एक जैन मुनि था जो क्षेमरत्न का शिष्य था। यह लेख उस समय की संस्कृत भाषा की स्थिति पर अच्छा प्रकाश डालता है। इस लेख से रायसिंह की भवन निर्माण की रुचि का बोध होता है। इसकी कुछ पंक्तियों का अंश इस प्रकार है—

"अथ संवत् १६५० वर्षे माघमासे शुक्लपक्षे षष्ठ्यां गुरौ रेवतीनक्षत्रे साध्यनाम्नि योगे महाराजाधिराज महाराज श्री श्री श्री २ रायसिंहेन दुर्गाप्रतोली सम्पूर्णा कारिता सा च सुचिरस्थायिनी भवतु।"

सादड़ी लेख[२४०] (१५९७ ई०)

यह लेख सादड़ी स्थित एक बावड़ी के दाहिनी भाग के दीवार पर लगा हुआ

---

२३९. जर्नल ऑफ एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल;
न्यू सीरीज १६, ई० स० १९२०, पृ० २७९;
ओझा, बीकानेर राज्य का इतिहास, भा० १, पृ० १७९;
गोपीनाथ शर्मा–बिबलियोग्राफी, पृ० ११;
गोपीनाथ शर्मा–राजस्थान का इतिहास, भा० १ पृ० १३०।

२४०. भाव० इन्स० संख्या १२, पृ० १४३–४५;
सरस्वती, भाग १८, सं० २, पृ० ९७;
ओझा, उदयपुर, भाग १, पृ० ४३१।

है। जिस पत्थर पर इसे उत्कीर्ण किया गया है, उसका आकार १५"×८" है। इसमे २२ पक्तियाँ हैं। इसमे प्रयुक्त की गई भाषा संस्कृत गद्य तथा लिपि देवनागरी है। इसमे उल्लिखित है कि ओसवाल ज्ञाति के कावडिया गोत्र के भारमल की स्त्री कपूरा ने अपने पुत्र ताराचन्द के पुण्य की स्मृति मे इस तारावाव नामी तीर्थ का निर्माण किया और उसके पुत्र ने उसका विधिवत् उद्घाटन किया। ताराचन्द के साथ उसकी ११ स्त्रियाँ सती हुई। ताराचन्द गोडवाड का हाकिम था और उस समय सादडी मे रहता था। ओझा जी के अनुसार "उसने सादडी के बाहर एक बारादरी और बावडी बनवाई। उसके पास ही ताराचन्द, उसकी चार औरतें, एक खवास, छ गायने, एक गवैया और उस गवैये की औरत की मूर्तियाँ पत्थरो पर खुदी हुई हैं।" यह लेख सवत् १६५४ वैशाख कृष्णा द्वितीया बृहस्पतिवार का है। इस लेख के अनुसार इस बावडी का निर्माण ताराचन्द की माता कपूरा ने कराया था। प्रस्तुत लेख से तथा मूर्तियो से उस समय की प्रचलित सती प्रथा पर प्रभूत प्रकाश पडता है।

इसकी कुछ पक्तियाँ इस प्रकार हैं :

"सवत् १६५४ वर्षे शाके १५२० प्रवर्तमाने महामागल्यप्रदवैशाप मासे कृष्णपक्षे द्वितीयाया तिथौ बृहस्पतिवासरे श्रीसादडी नगरे। महाराजाधिराज महाराणा श्री श्री अगरसीघजी विजयराज्ये उमवाली ज्ञातीय कावेडीय गोत्र श्रावकवरद विराजमान साह श्री भारमलतद्भार्या शीलालकारधारिणी अनेकतुल्य पुरुपादवेभ्य. महापुण्यकारणो नादेचा गोत्रगाय वीगगाजल निर्मला भाई श्री कर्पूरनाम्नि तस्य पुत्रस्य ताराचन्दस्य एकादशसतीसहित सपुण्यार्थं श्रेयार्थं श्रीनारावावि नामक तीर्थं कारित। तत्पुत्रेण साह सरताण (सुरताण) जीनाम केन प्रत (नि) पत्यमान विजयोनाम् शुभ भवतु।"

लाखेरी की बावडी का लेख[२४१] (१६०० ई०)

बूदी से १ मील के अन्तर पर लाखेरी गाँव है। यहा की एक बावडी मे वि स. १६५७ वैशाख वदि १२ सोमवार का एक लेख उपलब्ध है। लेखाकार १३×१२ वर्ग इच तथा अक्षराकार ०६×०१ वर्ग इच है। इसमे २६ पंक्तिया है। लिपिकार सतदास का सेवक गगादास है। लेख मे व्यास सतदास के द्वारा एक बावडी के निर्माण का वर्णन है। इसी सदर्भ मे व्यास गोपालदास, धनेश्वर आदि विद्वानो के नाम अकित हैं जो रावराजा सुर्जन एव राव भोज की सेवा मे थे। इस लेख का उपयोग एतद् कालीन व्यास वश की जानकारी तथा इस क्षेत्र की विद्योन्नति की जानकारी के लिए है। उदाहरण के लिए गोपाल के पाच पुत्र वडे पडित थे। इसी तरह दामोदर व्यास बडा प्रसिद्ध ज्योतिपी था। इसमे सस्कृत तथा बृजभाषा का प्रयोग किया गया है। इसका कुछ अश यहा उद्धृत है—

---

२४१ वरदा, जुलाई १६७१ पृ० ५५, ६२, ६३।

"तद्‌गृहे व्यास श्री संतदास पूज्योजातः तेनेयं पुज्य जला वापिका कारिता"
"संतदास तिनि इह बावरी कराई"
"तीके पुत्र २ उपज्वा व्यास गोपाल के पुत्र पांच प्रतापवान पंडित हुवा तिनिके..............व्यास पीतांबर तिनिके पुत्र...............भये"

नाना गाँव का लेख[२४२] (१६०२ (ई०)

इस लेख में राणा अमरसिंह द्वारा नाना गांव मुहता नारायण को दिये जाने का उल्लेख है। इसी वंश के एक मुहता द्वारा सिवाने में मरने का वर्णन है। इस गाँव से नारायण ने एक रेंठ महावीर की पूजा के लिए अनुदान किया। लेख की भाषा मेवाड़ी है। इससे प्रमाणित है कि नाना गांव (बाली-मारवाड़) उस समय मेवाड़ राज्य के अन्तर्गत था। इसमें मुसलमानों को सुअर की सौगन्द को अंकित किया गया है जो मुगल प्रभाव का द्योतक है। इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

"अथ संवत्सरे नृपविक्रमादित संवत् १६५६ भाद्र पद मास शुक्ल पक्षा ७ तिथौ शनिवारे। श्री वैध गोचे। श्री सविया किण्णोत्रजा। मंत्रीश्वर त्रिभुव तत्पुत्र पूना तत्पुत्र मुहता चांदा तत्पुत्र मु-षेतसी तत्पुत्र मुहता नीसल १ चाइमल २ पीसन पुत्र मुहता श्री उरजन तत्पुत्र मुहता सिवाणे साको करी मज। पिता पुत्र मुहता श्री नारायण १ सादूल २ सूजा ३ सिधा ४ सहसा ५ मुहता नारायण नु राणा श्री अमरसिंह जी मया करेने गांव नाणो दियो मुहतो नारायण अरहट १ श्री महावीर नु सतर भेट पूजा सारु केसर दीवेल सारु दीधो। हीदुंना बरोस उत्थाषे तियेनु गाईरो सुस। तुरक उत्थापे तियनु सुयर री सुंस..............."

रेवास का लेख[२४३] (सीकर) (१६०४ ई०)

प्रस्तुत लेख वि० सं० १६६१ का है जिसमें अंकित है कि यशकीर्ति के उपदेश से खंडेलवाल श्री कुंभा ने रेवास में आदिनाथ मन्दिर में पद्मशिला की स्थापना की। इस समय कूर्मवंश के महाराज रायमल तथा मन्त्री देईदास थे। रेवास उस समय रायमल के अधिकार में होना पाया जाता है।

कोकिन्द के पार्श्वनाथ के मन्दिर का लेख[२४४] (१६०६ ई०)

इसमें महाराजा शूरसिंह तथा कुमार गजसिंह का उल्लेख है जिसमें जोधपुर राज्य की समृद्ध अवस्था का वर्णन है। प्रशस्तिकार लिखता है कि राज्य में चोरी, डकैती का भय नहीं था और न लोग अनावश्यक रूप से आखेट करते थे। आमिष और मद्यपान भी प्रचलित न था। वहां विजय कुशल, सहज सागर विनय जय सागर आदि

---

२४२. नाहर, जैन लेख, भा० १, नं. ८६०, पृ० २३०।

२४३. रि० इ० ए० १९६२–६३, क्र० ३८६;
जैन–शिलालेख संग्रह, नं० २५१, पृ० ९३।

२४४. नाहर, जैनलेख, भा० १, नं० ८७४, पृ० २२५।

जैन विद्वान थे। इस लेख को तोडर सूत्रधार ने उत्कीर्ण किया था। प्रशस्तिकार उदयरुचि एव लेखक जय सागर थे। प्रशस्ति की भाषा सस्कृत है। इसके मूलपाठ का कुछ भाग इस प्रकार है—

"नायत्रवित्ताहरण न चौरी नन्यासमेषोन च मेद्यपाने नाखेट को नाग्य व शानिये वे। इत्यादि स्थिति शासति राज्य मस्मिन्"

नाकोडा का लेख[२४५] (१६१० ई०)

यह लेख कई सूत्रधारो के नाम की सूचना देता है। वे हैं सूत्रधार दामा तत्पुत्र मना धना एव वरजाग।

आमेर का लेख[२४६] (१६१२ ई०)

यह लेख वि० स० १६६६ फाल्गुन शुक्ला पचमी रविवार का है। इसमें जहागीर के राज्य की दुहाई दी गई है, जिसमे आमेर और मुगलराज्य की निकटता का बोध होता है। इसमें कछवाह वश को 'रघुवंशतिलक' कहकर सम्बोधित किया गया है तथा इसमे पृथ्वीराज, उसके पुत्र राजा भारमल, उसके पुत्र भगवतदास और उसके पुत्र महाराजाधिराज मानसिह के नाम क्रम से दिये हैं। इसमें मानसिंह द्वारा जमुआ रामगढ के प्राकार वाले दुर्ग तथा कुंआ और बाग के निर्माण का उल्लेख है। इसके प्रतिष्ठा कार्य के सम्बन्ध में पद्माकर पुरोहित के पुत्र पुरोहित पीताम्बर का नामोल्लेख है। इस कार्य के उत्सव पर अनेक भाग से राजकीय अधिकारी उपस्थित हुए थे। इस लेख से स्पष्ट है कि मानसिंह भगवतदास का पुत्र था। प्रस्तुत लेख में 'निजाम' शब्द का प्रयोग एक प्रान्तीय विभाग के अर्थ में प्रयुक्त है जो मुगल प्रभाव का द्योतक है। इसमे सस्कृत गद्य तथा नागरी लिपि का प्रयोग किया गया है। इसकी कुछ पक्तिया यहा उद्धृत की जाती हैं।

'श्री मज्जहागीर साहि सलेम राज्ये वर्तमाने श्री रघुवश तिलक कछवाहे कुल मडन श्री राजा पृथ्वीराज तत्पुत्र श्री राजा भारमल्ल तत्पुत्र श्री राजा भगवतदास तत्पुत्र श्री महाराजाधिराज मानसिह नरेन्द्र कारित रामगढ प्राकाराख्य दुर्ग कूपारामोप शोभित तत्र परमपवित्र श्रीपद्माकर पुरोहित पुत्र श्री पुरोहित पीताबरस्याधिकारे- सिद्ध ।। तत्र कार्जनियुक्ताशिल्पिना ।। एतद्देशीयनिजामश्च ।। अन्यत्र तन्मता- नुसारिण ।।"

माडलगढ की जगन्नाथ कछवाह की छत्री का लेख[२४७] (१६१३ ई०)

भीलवाडा कस्बे से ६ मील उत्तर म माडल नामका एक पुराना कस्बा है, जहा आबादी के पास ही मेजा गाव की तरफ जाने वाले रास्ते पर एक विशाल बत्तीस थभो की छत्री बनी हुई है, जिसको कछवाहा जगन्नाथ की छत्री और सिहेश्वर

२४५. नाहर जैन लेख, प्रथम भाग सख्या ७२४, पृ० १७३।

२४६ मूल प्रशस्ति की छाप के आधार पर।

२४७ वीरविनोद, भा० २, पृ० २८७-२६८।

महादेव का मंदिर कहते हैं। इस पर वि० सं० १६७० मार्ग शीर्ष शुक्ला ११ शुक्रवार की एक प्रशस्ति लगी हुई है जो उक्त छत्री और शिवलिंग की स्थापना की द्योतक है। मेवाड़ आक्रमण से लौटते हुए कछवाह राजा जगन्नाथ का देहान्त मांडल में हुआ था जिसके स्मारक रूप में पीछे से यह छत्री बनाई गई और उसकी प्रतिष्ठा की गई। कछवाह राजा जगन्नाथ, आंबेर के राजा भारमल का एक पुत्र और भगवन्तदास का भाई था। इस छत्री की प्रतिष्ठा के समय, जो जहाँगीर के राज्यकाल में हुई थी, कई अधिकारी वहाँ उपस्थित थे जिनके नाम इसमें उनके पद के साथ दिये गये हैं जो शासकीय व्यवस्था पर अच्छा प्रकाश डालते हैं। ऐसे पदों में पोतदार, मुसरफी, खीजमतदार, पंडित आदि मुख्य हैं। लेख स्थानीय भाषा में है, जिसकी कुछ अन्तिम पंक्तियां इस प्रकार है—

'मकाम मांडिल छत्री कराई तमाम राजा श्री आसानन्दजी पदम सुत वैसरज सुत पोतदार सहा धरमदास खंडेलवाल मुसरफी ठाकुर सीतलदास कायथ माथुर वासगढ रथथंभ सूत्रधार माधोगोविन्द रामदास गढ का आशा उदयपुर सु पंडित टोडा का सुवाई खीजमतदार श्री शुभं भवतु श्री।"

सांभर लेख[२४८] (१६१५ ई०)

यह लेख एक सांभर की छत्री पर है जो संवत् १६७२ मास कार्तिक का है। यह जहाँगीर के राज्यकाल का है जिसमें वर्णित है कि उक्त छत्री को जुलिकर्ण, पुत्र सिकन्दर ने इसे बनवाया था। इसकी भाषा हिन्दी है जो इस प्रकार है—

"श्री सृष्टिपति सत्य ॥श्री॥ संवत् १६७२ वर्षे कार्तिक मासे पातिसाहि श्री जहाँगीर आदिल विजयराज्ये मध्ये सिकन्दर सुत जुलिकर्ण (?) जी इह छत्री सृष्टि-पति की से बनाई ॥श्रीः॥

इसकी कुछ ४ पंक्तियाँ है—

बड़ीपोल के दरवाजे की छत का लेख[२४९] (१६१६ ई०)

ये लेख उदयपुर के महलों की बड़ी पोल की छत पर खुदा हुआ है जो भाषा तथा फारसी में है। ऐसा अनुमान है कि महाराणा अमरसिंह तथा कुंवर कर्णसिंह के समय में इसे मुगलों से सन्धि होने पर द्वार को भविष्य में कोई आक्रमणकारी इसे न तोड़े, लिखवाया गया हो। इसे काजी जमाल ने तैयार किया था और सुथार मुकन्दराम के पुत्र ने इसे उत्कीर्ण किया था।

इसका कुछ अंश इस प्रकार है—

"सेवक सुतार मुकन्दराम को बेटो……तूरकी ईश्वर, लिखा काजी मूला जमालखां"

---

२४८. डिपार्टमेन्ट ऑफ आर्कियॉलोजी एण्ड हिस्टोरिकल रिसर्च, जयपुर (सांभर) पृ० १४।

२४९. वीरविनोद, पृ० ३१२।

"दर ग्रमले राणा ग्रमरसिंह व कुवर वर्णसिंह, काजी मुल्ला जमाल" "तारीख २२ जिल्कार सन् १०२५ हिज्री"

नागावाडा का सति स्तम्भ लेख[२५०] (१६१८ ई०)

यह लेख बांसवाडा के ग्रन्तर्गत नागावाडा स्थान का है जिसका समय वि० स० १६७५ ज्येष्ठ वदि १३ का है। इसम राठौड केशवदास सलीम के द्वारा भेजी गई फौजो से लडकर काम ग्राने की सूचना प्राप्त होती है। इस लेख की ऐतिहासिक उपयोगिता ही नही वरन् भाषा व सामाजिक ग्रध्ययन की भी उपयोगिता है। संपूर्ण लेख मे वागडी भाषा की प्रधानता है। राजस्थानी भाषा मे गुजराती भाषा का प्रवेश इस भाग मे किस सीमा तक होन पाया था, इसका यह लेख एक ग्रच्छा उदाहरण है। सति स्तम्भ पर जो घुडसवार की तथा स्त्री की मूर्तियां खोदी गई हैं वे दक्षिणी राजस्थान के ग्रवयव, ग्राकार, वेश भूषा ग्रादि के ग्रध्ययन के सुन्दर साधन हैं। घोडे के तथा सवार के ठाट मे मुगलो सस्कृति की झलक दिखाई देती है। लेख इस प्रकार है—

"सवत् १६७५ वर्षे ज्येष्ठ वदि १३ दिने राजश्री राठोड मनोहरदास जी सुत राठोड राजश्री प्रेमजीए पातसाह जी सलेम साहजी फोजे लड्या राठोड केशवदासजी काम ग्राव्या राठोडा ने फोजे भाजी जए १५ काम ग्राव्या महाग्रोल श्री समरसीजी नी पाति कागा ग्रावाने काम ग्राव्या"

चित्तौड की प्रशस्ति[२५१] (१६२१ ई०)

यह प्रशस्ति चित्तौडगढ के रामपोल दरवाजे बाहर जाते हुए दाहिनी तरफ है जिसे सवत् १६७८ ग्रासोज सुदि १५ को महाराणा कर्णसिंहजी की ग्राज्ञा से लगाया गया था। इसमे बारहठ लखा को ग्रामदान देने का उल्लेख है। यह लेख मेवाड के कुछ परगनो का उल्लेख करता है—जैसे मांडलगढ फुन्यारो ग्रौर भिणाय। इसका लिखने वाला पचोली शवरदास रामदास था। प्रशस्ति का ग्रक्षातर इस प्रकार है—

"श्री महाराजाधिराज महाराणा श्री कर्णसिंहजी ग्रादेशातु वारहठ लखा कस्य पहिली श्री दिवाण लखाजी है ग्राम तांबापत्र करेदोधा, या गावारा पत्र गढ चित्र कोटरी पौले लिखायो, १ गाम मन्सवो मांडलगढरो, १ गाव थरावली फुन्यारो, १ गाम जडाणो भिणायरो, सवत् १६७८ वर्षे ग्रासोज सुदि १५ गगामस्तु धारि ग्रालाक्षरा मे सु कोई चोलण करे, श्री एकलिंगजी री ग्राण लिखित पचोली शवरदास रामदास उपादेनी त्रिखित"

---

२५० शोध पत्रिका, मार्च १९५७, पृ० ३१-३७।

२५१ वीर विनोद, पृ० ३११।

डूंगरपुर के गोवर्धननाथ जी के मन्दिर की प्रशस्ति[२५२] (१६२३ ई०)

यह प्रशस्ति डूंगरपुर के गैबसागर तालाब पर के गोवर्धननाथ जी के मन्दिर की वि० सं० १६७९ वैशाख सुदि ६ तदनुसार ई० स० १६२३ तारीख २५ अप्रेल की है। इसमें १०१ श्लोक तथा नीचे का भाग वागडी भाषा में है। यह प्रशस्ति महारावल पुंजा के समय की है। प्रशस्ति के प्रारम्भिक आधे भाग में निरंजन से लेकर बापा आदि राजाओं की वंशावली दी हुई है और इसे सामन्तसिंह से फटने वाली शाखा में सीहड का नाम देकर डूंगरपुर के शासकों का वर्णन दिया है। रा० आसवर्ण के सम्बन्ध में इसमें लिखा है कि वह युद्धविद्या तथा राजनीति में बड़ा निपुण था। इसी प्रकार इसमें महारावल सैहमल को विद्यानुरागी, कवि, वीर तथा शान्ति-प्रिय शासक बताया गया है। इसमें दिये गये महारावल कर्मसिंह के वर्णन से प्रकट होता है कि उसने माही नदी के तट पर बांसवाड़े के उग्रसेन से युद्ध किया और शत्रुओं को मारकर अपने पूर्ण पराक्रम का परिचय दिया। महारावल पुंजा के सम्बन्ध में इस प्रशस्ति से हमें कई सूचनाएं मिलती हैं। उसने पुंजपुर गांव बसा कर पुंजेला तालाब बनवाया एवं घाटड़ी गाँव में भी उसने एक तालाब बनवाया। उसने अपनी राजधानी डूंगरपुर में नौलखा नामक बाग लगवाया और गैबसागर तालाब की पाल पर गोवर्धननाथ का विशाल मन्दिर बनवा कर वि० सं० १६७९ में उसकी प्रतिष्ठा की। उसने मन्दिर के भोग-राग की व्यवस्था निमित्त उक्त देवालय को बसई गांव भेंट किया। इस प्रशस्ति से पुंजराज की १२ राणियों, ५ पुत्रों तथा उसके प्रधान मंत्री रामा के नाम ज्ञात होते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि महारावल ने ब्राह्मणों को वृत्ति दान देकर उन्हें अपने राज्य में बसाया। प्रशस्ति उस समय की शिक्षा प्रसार की स्थिति पर भी प्रकाश डालती है। वागड की समृद्धि और शान्ति तथा शासन व्यवस्था पर भी इससे प्रकाश पड़ता है। प्रशस्तिकार मेदपाट ज्ञाति का जोसी पुंजा सुत हरजी भ्राता हरिनाथ था और इसको सलावट भाणजी ने उत्कीर्ण किया था। इसमें चहुआण भीमाजी, वाघेला माधवदास जी, चहुआण कचरा, दोसी सव जी, अमर जी, वाघ जी आदि के नाम साक्षी के रूप में दिये गये हैं जिससे राजकीय तथा सार्वजनिक कार्यों में नगर के प्रतिष्ठित व्यक्तियों के योगदान का होना प्रकट होता है। इसका कुछ मूल इस प्रकार है—

"प्रासादवर्गोप्यमुना विधायि गोवर्धनोद्धार कृतो निवासे.।
हेम्नस्तुलादानमकारियेन सुवर्णपृथ्वीमददाद् द्विजेभ्यः ।।"

"वासं तत्र विरोचयत् गिरिपुरे तद्राजधान्यां स्वयं।"

"प्रधानो रामजीनामा मुख्योन्येथाधिकारिणः।"

"ओग्रामा श्रीगोवर्धननाथ जी द्वारा धरमषाते आचन्द्रादिक तांबापत्रमुंकीछे ते

---

२५२. वीर विनोद, भा० २, प्रकरण ११, शेष संग्रह ५, पृ० ११८१–११९९; ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० ११२।

प्रमारे वंशमाहे हुग्रेतेपाले नापाले तथा नापालावि तेनो श्रीनाथजी नी प्राण दुदा श्री स्वाप्रतदुवे साहाराम जी।"

जालौर का महावीरजी के मन्दिर का लेख[२५३अ] (१६२४ ई०)

इस लेख से विजयदेव सूरि का अकबर की उदार नीति पर प्रकाश पडता है जिसने शत्रुंजय से जजिया को छोड़ना, अहिंसा की स्थिति पैदा करना तथा हीरविजय सूरि को जगत् गुरु की उपाधि देना अंकित है।

इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

'सवत् १६८१ वर्षे प्रथम चैत्र वदि ५ गुरौ महावीर बिंबे प्रतिष्ठितं। महालेच्छाधिपति पातशाह श्री अकबर प्रतिबोधक तद्दत जगत् गुरु विरुद्ध धारक श्री शत्रुंजयदि तीर्थ जीजीयादि करी मोचक पण्मास अभारि प्रवर्तक श्री हीरविजय सूरि सम्पत्ति विजयमान ६ विजयदेव सूरी श्वराणा मादेशेन"

खमणोर की एक छत्री का लेख[२५३ब] (१६२४ ई०)

खमणोर ग्राम से बाहर एक छतरी है जिसपर मेवाडी भाषा मे उत्कीर्ण ९ पंक्तियों का एक लघु लेख है। यह छतरी ग्वालियर के राजा रामशाह के पुत्र शालिवाहन की है। इसको बनाने का श्रेय उदयपुर के राणा कर्णसिंह को है। इस छतरी का निर्माण काल १६८१ वि० सवत् है। इसके द्वारा हल्दीघाटी के अंतिम चरण के युद्धस्थल को समुचित रूप मे निर्धारित करने मे बडी सहायता मिलती है। उक्त लेख से यह भी प्रमाणित होता है कि प्रताप के पोते कर्णसिंह ने युद्ध मे काम मे आने वाले शालिवाहन के लिए छतरी बनाकर योद्धाओं के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट की थी।

इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

१ समत १६८१ वरपे (वर्षे)
२ रणा (राणा) करणसीघ जी
३ नै कराई छतरी
४ गलेरक (ग्वालियर) रज (राजा) की
५ रजरमस (राजारामशाह) वेटो
६ सलवहण (शालिवाहन) ज (जी) री
७ सीलवट (सिलावट)
८ जत (जाति) वतालीम ने
९ कम (काम) कीधो।

२५३अ. नाहर, जैन लेख, भा० १, न. ९०४, पृ० २४१।
२५३ब शोधपत्रिका, आषाढ संवत् २०१३, पृ० ५३-५४।

जालोर के धर्मनाथ बिंब का लेख[२५४] (१६२६ ई०)

इस लेख में जालोर नगर एवं स्वर्णगिरि दुर्ग (जालोर दुर्ग) को अलग-अलग बतलाया गया है जिससे जालोर नगर की वस्ती उस युग में दुर्ग से अलग थी। इसमें भी मुहणोत परिवार में दो पत्नियों का उल्लेख है।

लेख इस प्रकार है—

"संवत् १६८३ आषाड वदि गुरौ श्रवण नक्षत्र श्री जालोर नगरे स्वर्ण गिरि दुर्गे महाराजाधिराज महाराजा श्री गजसिंहजी विजय राज्ये मुहणोत गोत्र दीपक मं. अचला पुत्र मं जेसा भार्या जेवेतदे पु० मं० श्री जयल्ला नाम्ना भा० स्वरूपदे द्वितीय सुहागदे पुत्र नयणसी सुन्दरदास आस करण नरसिंहदास प्रमुख कुटुम्ब युतेन स्वश्रेयसे श्री धर्मनाथ बिंबंकारितं प्रतिष्ठितं श्री तपागच्छ नायक भट्टारक श्री हीर विजय सूरि पट्टालंकार भट्टारक श्री विजय सेन।"

पाली के लेख[२५५] (१६२९ ई०)

इन लेख में जो महावीर के बिंब पर अंकित है, अकबर के द्वारा दिये गये जगत् गुरु का विरुद हरि विजय सूरि एवं विजय सेन सूरि का उल्लेख है—

"अकबर शाह प्रदत्त जगत् गुरु विरुद्ध धारक
तपागच्छाधिपति प्रतिष्ठिताचार्य श्री विजयसेन सूरि"
"जगत् गुरु विरुद्ध धारक हीर विजय सूरी"

नाडोल का लेख[२५६] (१६२९ ई०)

इस लेख में जहाँगीर के द्वारा सम्मानित विजयदेव सूरि का उल्लेख है—

"सं० १६८६ वदि ५ शुके राजाधिराज श्री गजसिंह प्रदत्त सकल राज्य जालोर नगरे प्रतिष्ठितं जहांगीर प्रदत्त महातपा विरुद्ध धारक श्री विजयदेव सूरिभिः"

नाडलाई का लेख[२५७] (१६२९ ई०)

यह लेख आदिनाथ मन्दिर की मूर्ति पर ६ पंक्तियों में है। इसका समय वि० सं० १६८६ वैशाख शुक्ला ८ शनिवार है और महाराणा जगत्‌सिंह के काल का है। इस लेख में तपागच्छ के आचार्य हरिविजय, विजयसेन और विजयदेव सूरि का उल्लेख है।

लेख का मूल इस प्रकार है -

१. संवत् १६८६ वर्षे वैशाख मासे शुक्ल पक्षे शनि पुष्य योगे अष्टमी दिवसे महाराणा श्री जगत्‌सिंह जी विजय राज्ये जहांगीरी महातपा

---

२५४. नाहर जैन लेख, भा० १, नं० ९०५, पृ० २४२।

२५५. नाहर, जैन लेख, भा० १, २२९, ८२६, ८२७ आदि, पृ० २०३

२५६. नाहर, जैन लेख, भा० १, नं. ८३७, पृ० २०७।

२५७. मूल लेख की एक प्रति के आधार पर।

२. विरुद धारक भट्टारक श्री विजयदेवसूरीश्वरोपदेशकारित प्राक्प्रशस्ति पट्टिका ज्ञातराज श्री सम्प्रति निर्म्मापित श्री जेरपाल पर्वतस्या

३. जीर्णो प्रासादोद्धारेण श्री नडलाई वास्तव्य समस्त सघेन स्वश्रेयसे श्री श्री आदिनाथबिंब कारित प्रतिष्ठित च पादशाह श्री मदकब्बर

४. शाह प्रदत्त जगद् गुरु विरद धारक तपागच्छाधिराज भट्टारक श्री ५ हीर-विजयसूरीश्वर पट्टप्रभाकर भ० श्री विजयसेन सूरीश्व

५ र पट्टालकर भट्टारक श्री विजयदेवसूरिभि स्वपद प्रतिष्ठिताचार्य श्री विजयसिंह सूरि प्रमुख परिवार परिवृतै श्री नड्डुलाई मंडन श्री

६ जेरवल पर्वतस्य प्रासाद मूलनायक श्री आदिनाथ बिंबं ।।श्री।।"

पाली के नौलखा के मन्दिर का लेख[२५८] (१६२६ ई०)

इस लेख मे मेडता के सूत्रधार परिवार का परिचय मिलता है जिसने पाली मे महावीर के बिंब को बनाकर प्रतिष्ठा की ।

इसका मूल इस प्रकार है—

> "संवत् १६८६ वर्षे वैशाख मासे शुक्ल पक्षे अति पुण्य योगे अष्टमी दिवसे मेडतानगर वास्तव्य सूत्रधार कुधरण पुत्र सूत्र ईसर हदाहस्त नामनि पुत्र लखा चोखा सुरताण ददा पुत्र नारयण हंसा पुत्र केशवादि परिवार परिवृतै. स्वश्रेयसे श्री महावीर बिंब कारित प्रतिष्ठापितंच"

जालोर का लेख[२५६] (१६२६ ई०)

इस लेख मे जोधपुर के गजसिंह के समय मे सम्पूर्ण राज्य के प्रमुख न्यायाधीश म० जेसा सु० जयमल्ल द्वारा चन्द्रप्रभु के बिंब की प्रतिष्ठा का उल्लेख है । जहागीर के द्वारा दिये गये महातप के विरुद को धारण करने वाले विजयदेव सूरि के नेतृत्व मे यह काम सम्पादित हुआ ।

इस संदर्भ की पंक्तिया इस प्रकार हैं—

> "सं० १६८६ वदि ५ शुक्रे राजाधिराज श्री गजसिंह जी प्रदत्त सकल राज्य न्यायाधिकारेण म० जेसा सुत जयमल्ल जी नाम्ना श्री चन्द्र प्रभु बिंब कारितं प्रतिष्ठापितं ।........ जहांगीर प्रदत्त महातपा विरुद धारक श्री ५ श्री विजयदेव सूरिभि "

सांभर का लेख[२६०] (१६३४ ई०)

यह लेख सांभर की एक सराय के दरवाजे पर उत्कीर्ण है जो अकबर के समय मे बनाई गई थी । इसमे वर्णित है कि इस सराय का जीर्णोद्धार शाहजहा के काल मे

२५८. नाहर, जैन लेख, भा० १, सख्या ८२६, पृ० २०३ ।

२५६. नाहर जैन लेख, भा० १, सख्या ८३७, पृ० २०७ ।

२६०. डिपार्टमेन्ट ऑफ आर्कियालोजी एण्ड हिस्टोरिकल रिसर्च, जयपुर, (सांभर) पृ० १३–१४।

संवत् १६६१ में हुआ। इस लेख का बड़ा महत्त्व है, इस अर्थ में कि अजमेर हज जाने वाले यात्रियों के लिए मुगल काल में ऐसी संस्थाओं को व्यवस्थित रखा जाता था। लेख की भाषा हिन्दी है।

फलोदी का लेख[२६१] (१६३९ई०)

यह लेख फलोदी के कल्याणराय के मन्दिर के सामने एक पत्थर पर उत्कीर्ण है जिसमें वि० सं० १६९६ आषाढ़ सुदि २ (ई० स० १६३९ ता० २२ जून) का समय दिया हुआ है। यह लेख महाराजा जसवन्तसिंह के समय का है जिसमें उल्लिखित है कि मन्दिर के सामने जैमल के पुत्र नैणसी (प्रसिद्ध ख्यात लेखक) और नगर के सकल महाजनों एवं ब्राह्मणों ने रङ्गमंडप का निर्माण कराया। यह सार्वजनिक कार्यों में सहयोगी कार्य भावना का अच्छा उदाहरण है जिसमें सभी वर्ग के लोग सार्वजनिक कार्य में हाथ बंटाते थे।

धाय के मन्दिर की प्रशस्ति[२६२] (१६४३ ई०).

यह अरसीजी का धाय के मन्दिर की प्रशस्ति है जिसका समय संवत् १७०० माघ शुक्ला १२ गुरु है। इसमें प्रताप, अमरसिंह, जगत्‌सिंह और राजसिंह की उपलब्धियों का वर्णन है। इसमें २३ पद्य हैं जिनकी रचना कवि मथुरानाथ ने की और धर्मसिंह ने इसे लिखा। उक्त प्रशस्ति में रामेश्वर भगवान् की प्रशंसा की गई है। इसकी कुछ पंक्तियां इस प्रकार हैं—

'तस्मादभूत् भोज समान दानी श्री कर्णसिंहो वरणीसतेज:"

"अरिसिंहस्य जननी जवादि तनया शुभा
रामीजी वसता माता भगद्भक्ति तत्परा"

"अरसीभूप निदेशादुदयपुरे लेखिता कविना
मथुरानाभेनेयं प्रशस्ति निर्माणपटु मतिना"

ओंकारनाथ की प्रशस्ति [२६३] (१६४७ ई०)

यह प्रशस्ति ओंकारनाथ के मन्दिर के बाहर के भाग में लगी हुई है। इसका समय १७०४ आषाढ़ सुदि १५ मंगलवार है। इसमें संस्कृत भाषा का प्रयोग है। प्रशस्ति में राणा शाखा के प्रमुख व्यक्तियों का तथा हमीर, लक्षसिंह, मोकल, कुंभकर्ण रायमल्ल, सांगा, उदयसिंह प्रताप, अमरसिंह, कर्णसिंह तथा जगत्‌सिंह के नामों तथा उपलब्धियों का वर्णन है। इसमें महाराणा जगत्‌सिंह की ओंकारनाथ की यात्रा तथा वहां के सुवर्ण तुलादान आदि का उल्लेख है। प्रशस्ति का लेखक मुंकुदभूधर था और सुजरण का पुत्र कल्ला उस समय के प्रबन्धक थे। इसकी कुछ पंक्तियां इस प्रकार हैं—

---

२६१. ओझा, जोधपुर राज्य का इतिहास, भा० १, पृ० ४३।
२६२. वीर विनोद, पृ० ६४२।
२६३. एक प्रतिलिपि के आधार पर।

"राहप्पराणा भुवि तस्य वशे राणेति शब्द पृथयन् पृथिव्या"
"मुक्ता रत्न सुवर्ण मिश्रित महा पूजा तुला चा करोत् ।
कर्ण स्यात्मज एपवर्षे शतशोजीयान्निर्गता दशा ।।"
"प्रशस्ति क्रियता चेय तोरणे चतुलोद्भवे ।
भान्वाख्य सूत्रधारस्य मुकुंदेनच सूनुना ।।"

उदयपुर के धाय के मन्दिर की प्रशस्ति [२६४] (१६४७ ई०)

यह प्रशस्ति उदयपुर के प्रसिद्ध जगदीश के मन्दिर के पास वाले धाय के मन्दिर की वि० स० १७०४ वैशाख शुक्ला ३ की है जिसमे मेवाडी भाषा प्रयुक्त की गई है। इसमे उक्त महाराणा की धाय नोजूबाई द्वारा इस मन्दिर के बनवाये जाने का उल्लेख है। उक्त मन्दिर मे नवलश्याम जी की मूर्ति की स्थापना की गई थी। इसमे धाय के कुटुम्बियो के नाम तथा लाघुजी की दो भार्याग्रो के नाम भी अकित है। इसके अ तिम भाग का अक्षान्तर इस प्रकार है—

"श्री उदयपुरनगरे राणा श्री जगत्सिह जी नी धाय जी श्रीमाजी भाई पुराजी हेमाजी पुत्र लाघूजी धाय नोजूबाई प्रासाद कराव्यो नवलश्याम जी ने मुहूर्त प्रतिष्ठा की धी एकोतर शत कुल उधारणार्थाय ।। शुभमवतु श्री लाघुजी भार्या बाई जगी सबाई राधा ।"

एकलिंग जी का लेख [२६५] (१६४८ ई०)

प्रस्तुत लेख वि० स० १७०५ का महाराणा जगत्सिह के समय का है। इसमें महाराणा जगत्सिह द्वारा यहा किये गये तुलादान का उल्लेख मिलता है।

पाशुपत प्रशस्ति [२६६] (१६५१ ई०)

यह प्रशस्ति एकलिंग जी मे प्रकाशानन्द जी की समाधि पर लगी हुई है जिसे काले पत्थर पर खोदा गया था। सम्पूर्ण प्रशस्ति श्लोको मे है। श्लोक ३३ मे १७०८ वि० स० मे महाराणा जगत्सिह द्वारा प्रशस्ति लगाने का उल्लेख है। श्लोक पाच मे इसके रचयिता का नाम पुरुषोत्तम दिया गया है। प्रस्तुत प्रशस्ति मे लकुलीश सम्प्रदाय के कुछ आचार्यों के नाम दिये हैं जिनमे कुछएक काल्पनिक हैं। श्लोक १६ और २० मे आचार्य रामनन्द के लिए महाराणा जगत्सिह द्वारा ४ गाँव देने का उल्लेख है। इसके उपरान्त योगीराज रामेश्वर और उनके शिष्य प्रकाशानन्द का वर्णन मिलता है। इस प्रशस्ति से श्री एकलिंग जी के मठ के आचार्यों की परम्परा की जानकारी होती है।

एकलिंग जी की प्रशस्ति [२६७] (१६५२ ई०)

ये प्रशस्ति खडी में लकुलीश के मदिर के निकट वाले चबूतरे से प्राप्त हुए

---

२६४. ओझा उदयपुर, भा० २, पृ, ५२६
२६५ एक प्रतिलिपि के आधार पर।
२६६ एक प्रतिलिपि के आधार पर।
२६७. एक प्रतिलिपि के आधार पर।

थे। प्रस्तुत प्रशस्ति से महाराणा द्वारा किये गये तुलादान का वर्णन है। प्रशस्ति श्लोकबद्ध है।

जगन्नाथराय प्रशस्ति[२६८] (१६५२ ई०)

यह प्रशस्ति उदयपुर के जगन्नाथराय के मन्दिर के सभा-मण्डप में जाने वाले भाग के दोनों तरफ श्याम पत्थर पर उत्कीर्ण है। इसके प्रथम भाग में १२१ श्लोक, दूसरे भाग में ४५ और कुछ गद्य भाग तथा इसके अगले भाग में ४७ श्लोक तथा कुछ गद्य और पद्यांश दिया गया है। इसका समय वि० सं० १७०८ वैशाख शुक्ला १५ गुरुवार है (१३ मई, १६५२ ई०)

प्रस्तुत प्रशस्ति के पूर्वार्ध में बापा से लेकर साँगा तक के पूर्वजों की उपलब्धियों का वर्णन है जो अधिकांश ख्यातों या दन्त-कथाओं पर आधारित है। यत्र-तत्र वर्णन में अलबत्ता, प्रशस्तिकार ने पहिले की प्रशस्तियों का भी सहारा लिया है। साँगा के सम्बन्ध में गुर्जर तथा मालव के सुल्तानों के विरुद्ध लड़े गये युद्धों का संकेत यथार्थ है। प्रताप के समय लड़े गये हल्दीघाटी के युद्ध का वर्णन भी वास्तविकता लिये हुए है। कर्णसिंह के समय का सिरोज का विनाश तथा विजय का वर्णन उसकी उपलब्धियों पर अच्छा प्रकाश डालता है।

इसके आगे जगत्सिंह का वर्णन मिलता है जिसमें प्रशस्तिकार उसके सम्बन्ध में हमें कई नई सूचनाएं देता है। इसमें जगत्सिंह के राज्याभिषेक के उत्सव की तिथि वि० सं० १६८५ वैशाख शुक्ला ५ दी है। डूंगरपुर विजय के सम्बन्ध में प्रशस्तिकार लिखता है कि महाराणा ने अपने मन्त्री अक्षयराज को सेना देकर रावल पुंजा पर भेजा। ज्योंही अक्षयराज वहां पहुँचा रावल पहाड़ों में चला गया और उसने शहर को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया तथा महलों के चन्दन के गवाक्ष को गिरा दिया।

जगत्सिंह के कई पुण्य कार्यों का भी इस प्रशस्ति में उल्लेख किया गया है। इन कार्यों में कल्पवृक्ष का दान प्रमुख है, जिसे उसने १७०५ भाद्रपद शुक्ला ३ के दिन ब्राह्मणों को दिया। उक्त दान के सम्बन्ध में इसमें वर्णित है कि वह वृक्ष स्फटिक की वेदी पर खड़ा किया गया जिसका मूल नीलमणि, सिर वैडूर्यमणि, स्कन्ध हीरों, शारपातं मरकत मणि, पत्ते मूँगे, फूल मोतियों के गुच्छों और फल रत्नों के बनाये गये थे। इसमें कुल पाँच शाखाएं थीं और उसके नीचे ब्रह्मा, विष्णु, शिव और कामदेव की मूर्तियाँ बनाई गई थीं। महाराणा विद्याप्रेमी था। उसने काशी के ब्राह्मणों के लिए बहुत-सा सुवर्ण भेजा। उसने अपनी जन्मगाँठ के दिन कृष्णभट्ट को चित्तौड़ के पास भैंसड़ा गाँव दान में दिया और मधुसूदन भट्ट को आहाड गाँव में दो

---

२६८. ए० इ० भाग, २४; वीरविनोद, पृ० ३८४-३९९;
ओझा, उदयपुर, भा० २, पृ० ५२६–५२९;
गोपीनाथ शर्मा—बिबलियोग्राफी, सं० ७६, पृ० १२।

हलवाह (१०० बीघा) भूमि दान दी। उसने वि० सं० १७०४ मे महाकाल और ओंकारनाथ की यात्रा की और वहाँ ज्येष्ठ वदि अमावस्या को सूर्यग्रहण के समय सुवर्ण तुला-दान किया।

प्रशस्तिकार फिर आगे लिखता है कि महाराणा जगत्सिंह ने लाखो रुपये की लागत का राजमहलो के निकट जगन्नाथराय का, जिसे अब जगदीश कहते हैं, भव्य पचायतन मन्दिर बनवाया। प्रशस्ति के अन्तिम भाग से हमें सूचना मिलती है कि यह मन्दिर गूगावत पचोली कमल के पुत्र अर्जुन की निगरानी और भगोरा गोत्र के सूत्रधार भाणा और उसके पुत्र मुकुन्द की अध्यक्षता मे बना था। मन्दिर बनाने वाले इन सूत्रधारो को चित्तौड के पास एक गाँव तथा सोने और चाँदी के गज दिये गये। इस मन्दिर की प्रतिष्ठा बड़े समारोह के साथ वि० स० १७०६ (श्रावणादि १७०८) वैशाखी पूर्णिमा को सम्पन्न हुई और इस अवसर पर कुंवर गायें, अतुल सुवर्ण, कई घोडे तथा ५ गाँव ब्राह्मणों को दिये गये। प्रशस्ति के अनुसार महाराणा ने पीछोला के तालाब मे मोहन मन्दिर बनवाया और रूपसागर तालाब का निर्माण करवाया। प्रशस्तिकार इसमें यह भी उल्लिखित करता है कि राजमाता जांबुवती ने मथुरा और गोकुल की यात्रा की। उसके साथ उसकी दोहिती नन्दकुंवरी और कुंवर राजसिंह भी थे। वहाँ पर जाम्बुवती तथा नन्दकुंवरी ने चाँदी की तथा राजसिंह ने सोने की तुला की। वहा से लौटते हुए प्रयाग मे जाम्बुवती ने चाँदी की तुला की। इन पुण्य कार्यों के वर्णन से उस समय की धार्मिक स्थिति तथा मुगलो से मेवाड के मधुर सम्बन्ध पर अच्छा प्रकाश पडता है। यह प्रशस्ति मेवाड के इतिहास के लिये बडी उपयोगी है।

प्रशस्ति की द्वितीय शिला के अन्तिम भाग से स्पष्ट है कि इस प्रशस्ति की रचना कृष्णभट्ट लक्ष्मीनाथ ने की थी।

इसके कुछ श्लोको के अश इस प्रकार हैं—

"श्रीमत्कर्णमहीमृदात्मज जगत्सिंहः प्रभो
प्रभो राज्ञया प्रासाद किलमेरुजातक मिम श्रीरत्नशीर्षान्हिप ।।
भगोराप्रथितान्वयौ गुणानिधी भानोस्तनूजौत्तभौ,
शील्पी शोसमुकुन्दभूधर इति ख्यातौ चिर चक्रतु ।।४४।।"
"लक्ष्मीनाथा परनाम बाबूभट्ट कृता प्रशस्ति सम्पूर्णा।"

रूपनारायण का लेख[२६६] (१६५२ ई०)

चारभुजा से अनुमान तीन मील पर सेवंत्री गाँव मे रूपनारायण का प्रसिद्ध विष्णु मन्दिर है। इसमे वि० स० १७०६ (ई० स० १६५२) का महाराणा जगत्सिंह प्रथम के समय का एक शिलालेख लगा हुआ है। इससे ज्ञात होता है कि इस मन्दिर का जीर्णोद्धार मेडतिया राठोड चादा के पौत्र और रामदास के पुत्र जगत्सिंह

---

२६६. एक प्रतिलिपि के आधार पर।

ने ५१००१ रुपये की लागत लगाकर करवाया। इसके निर्माण कार्य की देखरेख कोठारी कुम्भा ने की।

फलौधी का लेख[२७०] (१६५८ ई०)

यह लेख फलौधी के गढ़ के बाहर की दीवार पर खुदा हुआ है। इसमें महाराजा जसवन्तसिंह के साथ महाराजकुमार पृथ्वीसिंह का भी नाम है। उक्त लेख से यह प्रमाणित होता है कि जैमल के पुत्र मुंहणोत सामकरण आदि ने उस गढ़ की दीवार का निर्माण कराया।

भवाणां गाँव की बावड़ी का लेख[२७१] (१६६० ई०)

उदयपुर के निकट भवाणां गाँव के दक्षिण की ओर एक बावड़ी है जिसमें वि० सं० १७१७ का एक लेख है। इसका आशय यह है कि महाराणा राजसिंह ने पारड़ा गाँव में सुन्दर बावड़ी बनवाने के उपलक्ष्य में वीसलनगरा नागर ब्राह्मण व्यास बलभद्र गोपाल के पुत्र गोविन्दराम व्यास को भवाणां गाँव में ७५ बीघा भूमि दान की। इससे महाराणा राजसिंह की उदार नीति तथा जनोपयोगी कार्यों की ओर रुचि प्रकट होती है।

वेड़वास गाँव की प्रशस्ति [२७२] (१६६८ ई०)

यह प्रशस्ति वेड़वास गाँव की सराय के पास वाली बावड़ी में सीढ़ियाँ उतरते हुए दाहिनी तरफ की ताक में लगी हुई महाराणा राजसिंह प्रथम के समय की है। इसका समय वि० सं० १७२५, वैशाख शुक्ला ६ सोमवार है। इसकी भाषा मेवाड़ी और लिपि नागरी है। सम्पूर्ण प्रशस्ति में मेवाड़ी गद्य तथा अंत में भाषा के पद्यों का प्रयोग किया गया है। यह प्रशस्ति बड़े ऐतिहासिक महत्त्व की है। इसके प्रारम्भ में भागचन्द तथा फतहचन्द भटनागर कायस्थ के पूर्वजों की नामावली दी गई है। भागचन्द भटनागर जाति का कायस्थ (पंचोली) लक्ष्मीदास का पौत्र और सदारंग का पुत्र था। महाराणा जगतसिंह ने उसको अपना प्रधानमन्त्री बनाया और उसे ऊंटाला आदि १० गाँव, १ गजराज हाथी, ५१ घोड़े, सिरोपाव आदि देकर सम्मानित किया। उसने द्वारिका और मांधाता जी की यात्रा की। जब बांसवाड़े का रावल समरसी बादशाही हिमायत के बल पर महाराणा की अधीनता की उपेक्षा करने लगा, तब महाराणा ने अपने प्रधान भागचन्द को उसके विरुद्ध भेजा। उसके भय से जब समरसी भाग गया तो वह ६ मास तक वहाँ रहा और नगर को लूटा। अन्त में समरसी फिर से लौटा और उसने दो लाख रुपये दण्ड देकर क्षमायाचना की और महाराणा की अधीनता स्वीकार की। इस विजय के अनन्तर भागचन्द ने एकलिंग जी

---

२७०. जर्नल ऑफ दि एशियाटिक सोसाइटी ऑव् बंगाल, जि. १२, पृ० १००।

२७१. ओझा, उदयपुर, भा० २, पृ० ५७६।

२७२. वीर विनोद, भाग २, शेष संग्रह. पृ० ३८१–३।

के बीमजमाता के मन्दिर का जीर्णोद्धार करवाया। इस अवसर पर उसने चाँदी का तुलादान ७२०० रुपये के मूल्य का किया और चार हजार रुपया ब्राह्मणों को दान दिया। इस पर महाराणा इतने प्रसन्न थे कि वे उसके घर तीन बार गये और उसके लिए हवेली बनवादी। उसको इस अवसर पर दिये गये हाथियों के नाम भी इसमें उल्लिखित हैं—चंचलो, सारधार, जगत्मोया तथा हथणी सहेली।

उसका पुत्र फतहचन्द भी महाराणा राजसिंह का प्रधान रहा। महाराणा ने उसे भी १७१६ में बांसवाड़े के रावल के विरुद्ध ५ हजार सेना देकर भेजा। उसके साथ रघुनाथसिंह, मोहकमसिंह, माधवसिंह, जोधसिंह, रामानन्द चौहान, उदयकर्ण आदि सरदार थे। समरसिंह ने अन्त में एक लाख रुपया, दस गाँव, देशदाण, एक हाथी और हथनी देकर महाराणा की अधीनता स्वीकार करली। इसी तरह महाराणा ने उसे देवलिया और मालपुर आदि स्थानों की विजय के लिए भेजा जिसमें वह विजयी रहा। देवलिया के कुंवर प्रतापसिंह ने पाँच हजार रुपया और एक हथणी देकर क्षमायाचना की। टोडा मालपुरा से भी उसे ३५ हजार दण्ड मिला। इन विजयों के वर्णन में 'देशदाण और 'उमेदण्ड' का उल्लेख आता है। उस समय देश, नगर, गाँव आदि की सीमाओं पर चुंगी लगती थी जिसे देशदाण कहते थे। और लूट के समय उसी समय जो दण्ड वसूल किया जाता था उसे 'उमेदण्ड' कहते थे।

महाराणा तीन बार फतहचन्द के घर गये और उसे सम्मानित किया। उसने तीन बार यात्रा की। फतहचन्द ने वेडवास में एक बावली, बाग तथा धर्मशाला बनाकर अपनी सम्पत्ति का सदुपयोग किया। वेडवास ग्राम मार्ग पर जाते पड़ता था जहाँ महाराणा रुकते थे और बावली का पानी पीते थे। वैसे यह गाँव अन्य मार्गों के केन्द्र में भी था, जिसमें कई यात्री यहाँ की धर्मशाला में ठहरते थे। इन निर्माण कार्यों से उस समय की आर्थिक स्थिति का बोध होता है। प्रशस्ति के एक पद्य में राम और रहमान का एक स्थान पर प्रयोग होना उस समय की सहिष्णुतापूर्ण नीति का द्योतक है। प्रशस्ति का लेखक सूत्रधार हम्मीरजी और प्रति तैयार करने वाला (?) मथानीशेखर तथा काम की अध्यक्षता करने वाले गजधर कमलाकर पुत्र दोनों तथा रूपो गजधर गौड़ जाति के थे।

इसके एक पद्य का अंश तर इस प्रकार है—

'जिहा मसमान धरतीयां निहीं रामरहमा न"

जिहां लग रहसी चन्द्र तर कीय फता कमठाण।"

देबारी के द्वार की प्रशस्ति[233] (१६७४ ई०)

यह प्रशस्ति देबारी के दरवाजे की उत्तरीय ताक पर उत्कीर्ण है। वैसे प्रशस्ति में केवल यही उल्लिखित है कि वि० सं० १७३१ में देबारी के द्वार के किवाड़ लगाये गये, परन्तु इससे महाराणा राजसिंह द्वारा देबारी के नाकेबन्दी करने तथा

---

233 एक प्रतिलिपि के आधार पर।

सामरिक तैयारी करने पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। इसका मूल इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणाजी श्रीराजसिंहजी आदेशात सावण सुद ५ सोमे संवत् १७३१ विषे पोलरा कमाड चढाव्या लिखतु जोसी गोरखदास साह पंचोली नाथू पंचोली"

नरवाली गाँव का लेख[२७४] (१६७४ ई०)

माही नदी के किनारे बाँसवाड़े के नरवाली गाँव की छत्रियों का यह लेख वि० सं० १७३० ज्येष्ठ वदि ७ का है। इसमें उल्लिखित है कि चौहान नारू महाराणा की सेना से लड़कर काम आया और उसके लड़के करणजी ने नारू के स्मारक का निर्माण करवाया इसका गद्यांश इस प्रकार है—

"संवत् १७३० वरीषे जेठ वदि ७ दीनेवार सुकरा सवण नरूजी राणाजी नी फोज काम आव्या"

रंगथोर गाँव के महादेव के मन्दिर की प्रशस्ति[२७५] (१६७५ ई०)

यह प्रशस्ति डूंगरपुर जिले के रंगथोर गाँव के महादेव के मन्दिर की है जिसका समय वि० सं० १७३१ वैशाख सुदि ६ (ई० स० १६७५ ता० २१ अप्रेल) है। इससे हमें बड़ी महत्त्वपूर्ण सूचना मिलती है कि चौबीसा जाति का जागेश्वर नामक ज्योतिषी था वह कई विद्याओं में पारंगत था। उसकी स्त्री ने उक्त शिवालय बनवाया। यह प्रशस्ति वागड़ प्रान्त के विद्वानों और प्रचलित विद्याओं के अध्ययन के लिए बड़े काम की है।

त्रिमुखी बावड़ी की प्रशस्ति[२७६] (१६७५ ई०)

यह प्रशस्ति देबारी के पास त्रिमुखी बावड़ी में लगी हुई है। इसे महाराणा राजसिंह की राणी रामरसदे ने, जो अजमेर जिले के परमार रायसल की प्रपौत्री, जुझारसिंह की पौत्री और पृथ्वीसिंह की पुत्री थी, वि० सं० १७३२, माघ शुक्ला द्वितीया गुरुवार में देबारी के पास 'जया' नाम की बावड़ी बनवाई। इसको अब 'त्रिमुखी' बावड़ी कहते हैं। इस बावड़ी के बनवाने में धार्मिक भावना तो रही है, परन्तु इसमें देबारी के दरवाजे के किवाड़ के बनवाने के उल्लेख से उसकी सैनिक उपयोगिता भी प्रमाणित होती है। इस बावड़ी के लगभग एक वर्ष पूर्व ही देबारी द्वार के किवाड़ लगाये गये थे जैसाकि उक्त द्वार के उत्तरी शाखा में खुदे हुए वि० सं० १७३१ श्रावण सुदि ५ के लेख से सिद्ध है। आगे होने वाले औरंगजेब के युद्ध से भी इस कल्पना की पुष्टि होती है। इसी द्वार पर महाराणा ने एक सेना रखी थी, जो वहाँ कई दिनों लड़ती रही। उस समय बावड़ी और द्वार के किवाड़ों ने सुरक्षा के

२७४. ओझा, बाँसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० ११०।

२७५. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० ११६।

२७६, वीर विनोद, प्रकरण आठवाँ, शेष संग्रह, संख्या ८–९;
ओझा, उदयपुर, भा० १, पृ० ५७५, ५७६, ५७७।

साधन का काम किया ।

प्रस्तुत प्रशस्ति में बापा से लेकर राजसिंह के समय तक के प्रमुख शासकों के नाम तथा उनकी उपलब्धियां संक्षेप मे दी गई हैं । क्योंकि प्रशस्तिकार राजसिंह का समकालीन रहा है वह उनके सम्बन्ध में अधिक सूचना देता है । जैसे जगत्सिंह के समय के रत्न और सुवर्ण तुलादान, मन्दिर निर्माण, [illegible], कल्पतरुदान, सप्तसागर दान आदि का इसमें वर्णन मिलता है । इसमें राजसिंह के समय मे सर्वऋतुविलास नाम के बाग के बनाये जाने, मालपुरा की विजय और लूट, चारुमति का विवाह, डूंगरपुर विजय आदि का उल्लेख है । इन महाराणा के द्वारा दिए गये भूमिदान, ग्रामदान, तुलादान आदि की सूचना भी हमें इस प्रशस्ति से मिलती है । इसमे राज परिवार की कन्याओं के विवाह के अवसर पर अन्य कन्यादानों का भी उल्लेख है जो महाराणा की उदारता का द्योतक है । इनकी प्रतिष्ठा के अवसर पर पुरोहित गरीबदास, व्यास जयदेव, हरिराम त्रिवाड़ी आदि को भूमिदान देने का उल्लेख है । इसमे एक हल भूमि की इकाई का जिक्र है जो ५० बीघा के बराबर होती थी । इसका प्रशस्तिकार रणछोड़ भट्ट तथा मुख्य शिल्पी नाथू गौड़ था । इसके निर्माणकार्य की देखरेख करने वाले लाला पोरवाड़ और धाभाई गरीबदास थे । सम्पूर्ण प्रशस्ति मे ६० श्लोक हैं और अन्त की पंक्तियों में संस्कृत गद्य और मेवाड़ी भाषा का मिलाजुला प्रयोग किया गया है ।

इसकी कुछ पंक्तियां यहां उद्धृत की जाती हैं—

"हैमीकल्पलतावापी हिरण्याश्वंददौ तथा
पंचग्रामान् जगत्सिंहो रत्नधेनुं चदत्तवान्"

"दग्धंमालपुराभिख्यं नगरंव्यतनोदिह
दिनानानवकोस्थित्वा लुंटनं समकारयत्"

"दहबारी महाघट्टे घालाश्लष्टे विशङ्कटे
जयावहा जयानाम्नी वापी पाप प्रणाशिनी"

"सहस्त्रैं रूप्यमुद्राणां चतुर्विंशति संमितः
एकाग्रैः पूर्णतां प्राप्तंवापी कार्यं महाद्भुतं"

राज प्रशस्ति[277] (१६७६ ई०)

राज प्रशस्ति कुल २५ श्याम रंग के पाषाणों पर उत्कीर्ण है जो औसतन ३'×२½' के आकार में हैं । ये पाषाण पट्टिकाएं नौ चौकी की पाल के ताकों में लगी हुई हैं तथा अच्छी हालत मे है । इनमें से एक संगमरमर की चौकी में लगी हुई है । इनमें प्रयुक्त भाषा संस्कृत है जिसे पद्यों में लिखा गया है । प्रशस्ति के अन्त में कुछ पंक्तियां

---

२७७. ए. इ., भा० २९-३०; रि. रा म्यू; अजमेर, १९१८-१९, पृ. २-३; गोपीनाथ शर्मा, बिब्लियोग्राफी, पृ० १२; गोपीनाथ शर्मा, राजस्थान का इतिहास, भा. १, पृ. २३१ ।

भाषा में खोदी गई हैं। प्रत्येक २४ पट्टिकाओं में प्रशस्ति का एक-एक सर्ग उत्कीर्ण है और इस तरह से इसकी संज्ञा महाकाव्य की दी गई है। अन्तिम पट्टिका में विविध कार्य-कर्त्ताओं का परिचय अङ्कित है। इसका समय वि० सं० १७३२, माघ शुक्ला १५ है। इसमें कई स्थानीय तथा फारसी शब्दों को संस्कृत के रूप में परिणित कर दिया गया है जिससे इन भाषाओं पर संस्कृत का प्रभाव या संस्कृत पर इन भाषाओं का प्रभाव दिखाई देता है। सेरा (सेर-एक वजन), लत्ता (लात) सलाम आदि ऐसे उदाहरण हैं जो इसकी पुष्टि करते हैं। इस प्रशस्ति का रचयिता रणछोड़ भट्ट था जो तेलंग ब्राह्मण था और कठोंदी में पैदा हुआ था। इसकी माता का नाम वेणी मिलता है जो वैष्णव संप्रदाय की अनुयायी थी। संभवतः रणछोड़ भट्ट के नाना नाथद्वारा के आचार्यों के सम्बन्ध में थे। वैसे तो रायसिंह की आज्ञा से रणछोड़ भट्ट ने इस प्रशस्ति को राजसमुद्र के निर्माण की पूर्णाहुति के समय लगाने के लिए तैयार की थी, परन्तु जैसाकि वह लिखता है, इसका प्रयोग उसने अपने भाई व बच्चों के पढ़ाने के लिए भी किया था। प्रशस्ति से मालूम होता है कि राजसमुद्र का निर्माण दुष्काल के समय श्रमिकों के लिए काम निकालने के लिए कराया गया था और उसे बनाने में पूरे १४ वर्ष लगे थे। इस तालाब के बनजाने का अन्तिम महोत्सव वि. सं. १७३२ माघ शुक्ला पूर्णिमा को मनाया गया था जिसके अन्तर्गत यज्ञ, यात्रा, दान, पारितोषिक, तुलादान आदि कार्यों का आयोजन अलग-अलग अवसर पर आयोजित किया गया था। प्रशस्ति के उत्कीर्णक गजधर मुकुन्द, अर्जुन, सुखदेव, केशव, सुन्द लालो, लखो आदि थे जिन्होंने सुन्दर और शुद्ध रूप में उसे तैयार किया था। इसमें कार्य निरीक्षकों के नाम भी अन्त में दिये गये हैं।

प्रत्येक पट्टिका के प्रारम्भ के पद्यों में देवस्तुति दी गई है और फिर मेवाड़ राजवंश के शासकों की उपलब्धियों का उल्लेख किया गया है। प्रारम्भिक सर्गों में दिये गये प्राचीन शासकों के नाम भाटों की वंशावलियों पर आधारित हैं जिनमें कई नाम काल्पनिक हैं। इसमें बापा, कुम्भा, साँगा, प्रताप आदि शासकों की उपलब्धियों तथा युद्धों पर अच्छा प्रकाश डाला गया है। बापा के लिए बाष्प शब्द का प्रयोग किया गया है और लिखा गया है कि वह ५० पल के सोने के कंकण पहिनता था। कुम्भा की विजय तथा साँगा के युद्धों का भी इसमें अच्छा चित्रण है। प्रताप के समय लड़े गये युद्ध और अमरसिंह के समय में की गई मुगलों की सन्धि का भी इसमें उल्लेख मिलता है। करणसिंह का गंगा पर किए गए तुलादान का तथा जगत्सिंह के दानों का इसमें वर्णन है इनके तीर्थयात्राओं के वर्णन भी बड़े रोचक हैं।

इस प्रशस्ति का ऐतिहासिक उपयोग जगत्सिंह तथा राजसिंह के समय के लिए अत्यधिक है, क्योंकि प्रशस्तिकार इनके समय में जीवित था और उसको इनके समय की घटनाओं से तथा उनके सम्बन्धी ऐतिहासिक सामग्री से परिचय था। जगत्सिंह के समय के निर्माण कार्यों और उपलब्धियों के वर्णनों के अतिरिक्त रचनाकार ने राजसिंह की अजमेर, टोंक, लालसोट, साँभर, शाहपुरा, जहाजपुर आदि

स्थानों की विजयो का तथा राजसमुद्र झील की नौ चौकियो की सुन्दर तक्षण कला का अच्छा वर्णन किया है। इसके बनने मे मजदूरो के पारिश्रमिक तथा कुशल कारीगरो के पारिश्रमिक पर भी अच्छा प्रकाश पडता है। झील का उपयोग सिंचाई के लिए कितना था और उससे कितने गांव प्रभावित थे इसका भी इसमे अच्छा व्यौरा दिया गया है। उस समय के विवाह, मेल, शिक्षा, निर्माणकार्य, मुद्रा, सैनिक शिक्षा, पठन-पाठन, समृद्धि, नगर-योजना, उपवन, महल, वस्त्र और रत्नो की विशेषता धर्म, दान, व्यवसाय, निर्माणकार्य के साधन, भोजन के प्रकार, सिरोपाव आदि विविध विषयो पर प्रशस्तिकार प्रकाश डालता है। औरङ्गजेब के साथ के युद्ध और संधि तथा अन्य राज्यो से राजसिंह के सम्बन्ध आदि का भी इसमे अच्छा विवरण है, जिससे हम राजपूतो के युद्धकौशल तथा कूटनीति को अच्छी तरह समझ सकते हैं। इसमे राजसिंह के प्रथम विवाह की आयु १२ वर्ष दी है और इसमे रूपमति के विवाह का भी उल्लेख है। औरङ्गजेब के दरबार मे भेजे गए व्यक्तियो के नाम भी इसमे दिये गये हैं। देश वर्णन मे मेवाड, डूंगरपुर, चित्तौड, एकलिङ्ग जी, कुटिला तथा गोमती नदी का सुन्दर वर्णन है। राजसमुद्र के बनने के उपलक्ष मे की गई पूर्णाहुति तथा उस अवसर पर वहाँ तथा बाहिर भेजे गए उपहारो से उस समय की समृद्धि आकी जा सकती है। इस तालाब के बनाने के लिए, लाहौर, गुजरात, सूरत आदि स्थानो से भी कारीगर बुलाये गये थे। मुख्य शिल्पी को महाराणा ने २५,००० रु० दिये थे इसका इसमे उल्लेख है। इसके निर्माण कार्य मे १०५०७६०८ रुपये व्यय हुए यह भी इससे विदित है।

इसके कुछ पद्यो को यहाँ उद्धृत किया जाता है—

"बाप्प: सूर्यान्वयो सर्गे सूर्यवंशं वदे द्रिमे"

"गत्वात्रपीलियारवाल परिधि पर्यकल्पयन्
स्वदेश सीमानमय रत्नसिंहोथ राज्यकृत्"

"प्रतापसिंहोथ नृपः कच्छवाहेन मानिना
मानसिंहेन तस्यासीद्द्वैमनस्य भुजेविधौ"

"टोकच साँगरि ग्रामाल्लाल सोटिच चाटसूं
रानेन्द्र सुभटा जित्वा दंडयित्वा बभुर्भृशं"

"बडी ग्रामे तडागस्योत्सर्गे रूप्यतुला व्यधात्
नामाकरोत्तडागस्य जनासागर इत्ययं"

"तडागेत्रागतानद्यो गोमती तालनामयुक्
कैलावास्त नदीसिंधौ गंगाद्या विविशुर्यथा"

"ग्रामोथ दानं गजराजिदानं हयालिदान घटतोप्रदान
गोवृददान नृपतिः प्रकल्प्य नानाविध दानमथोतनिष्ट"

"घानोरानगरे चक्रे नियुद्धं योधविक्रमः
बीकासोलंकि वीरोथ युद्धरक्षा रणंव्यधात्"

"काव्यं राजसमुद्र मिष्टजलधे सृष्टप्रतिष्टाविधे:
स्तोत्राक्तं रणछोडभट्टरचितं राजप्रशस्त्याह्वयं"

जनासागर की प्रशस्ति २७८ (१६७७ ई०)

यह प्रशस्ति महाराणा राजसिंह के समय की है। इसमें दिया हुआ काल वि० सं० १७३४ वैशाख कृष्णा १३ है जो जनासागर के निर्माण का काल है। उक्त तालाब को महाराणा ने अपनी माता जनादे (कर्मेती) के, जो मेड़तिया राठौड़ राजसिंह की पुत्री थी, नाम से उदयपुर से पश्चिम के बडी गाँव के पास बनवाया था। इस तालाब को सिंचाई के काम में प्रयोग लिये जाने का था और यह कार्य महाराणा के समय की आगे आने वाली युद्ध-स्थिति के संबन्ध में था। उसकी जब प्रतिष्ठा की गई तो महाराणा ने चाँदी का तुलादान किया। इस अवसर पर पुरोहित गरीबदास को गलूंड और देवपुरा गाँव धर्मार्थ दिये गये थे। तालाब के धार्मिक कार्य में २६१००० रुपये व्यय हुए। प्रशस्तिकार ऐसे गहरे तालाब बनाने की गतिविधि के सम्बन्ध में वर्णन करता है कि पहले तालाब के पाल की नींव खोदी गई जिसको 'पाँव लेना' कहते थे। फिर उस पर सीसा ढ़ाला गया तथा नींव को शुद्ध किया गया फिर १५ गज का आसार उस पर बनाया गया। इसमें मेडता परिवार को हमेशा विष्णु के उपासक के रूप में प्रस्तुत किया गया है जो मीरां के समय की कृष्ण भक्ति की परम्परा पर अच्छा प्रकाश डालता है। प्रस्तुत प्रशस्ति में ४१ श्लोक हैं। तालाब के वर्णन से उस स्थान की गहन वनस्पति का तथा प्राकृतिक स्थिति का बोध होता है। प्रशस्तिकार कृष्ण भट्ट का पुत्र लक्ष्मीनाथ तथा लेखक उसका भाई भास्कर भट्ट था। निर्माण कार्य का शिल्पी गजधर सुथार सगराम पुत्र नाथू था। इसमें गिलूंड गाँव को चित्तौड़ के निकट और देवपुरा को थामला के निकट होना उल्लिखित है जो चित्तौड़ और थामल ।शासन की इकाई के द्योतक हैं।

इसके कुछ पद्यांश इस प्रकार हैं—

"दात्रीदानव्रजस्या प्रियरिपु निधने पार्वती वोग्रभावा
दीने नित्यंदयालुर्नृपमु कट जगत्सिंह राणा प्रियासीत्"
"वडीग्रामस्य निकटे तत्कासारस्य राजत:
जना सागर इत्येवं प्रसिद्धि स्सभजायत"

इसका अंतिम भाग भाषा में इस प्रकार है—

"दोयलाखइगसठहजार रुपिया तलावरी प्रतिष्ठा हुई जदी रूपारी तुलां कीधी गाम गलूंड चित्तौड़ तिरा गाम देवपुर थामलातीरा प्रोहित श्री गरीबदासजी है आधार करे भथा किधो तलावरी पालरो पांवले ने रवाड़ा खोधा सीसोफेरे ने नीम

२७८. डा० ओझा ने इस प्रशस्ति का समय वि० सं० १७२५ दिया है और इसमें होने वाले व्यय को ६८८००० रुपये लिखा है, उदयपुर राज्य का इतिहास भा० २, पृ० ५७५।

सोधेन गज १५ आसार कीधा कमठाणारा गजधर सुतार सगराम सुत नाथू तेन कोठारी १७३५ वर्षे"

सुन्नणपुर गाँव का लेख [२७९] (१६८६ ई०)

यह लेख बासवाडा के सुन्नणपुर गाँव का है। इसका समय वि० स० १७४२ वैशाख शुक्ला २ है। इसमे उल्लेख है कि गोहिल मलक नामक व्यक्ति कुवर अजबसिंह के नेतृत्व मे महाराणा जयसिंह की सेना से युद्ध करता हुआ काम आया। इस शिलालेख मे दी गई घटना से प्रतीत होता है कि उक्त महाराणा के समय मे मेवाड और बासवाडा का सम्बन्ध वैमनस्यपूर्ण था। मेवाड के इतिहास मे इस युद्ध का कहीं उल्लेख नही मिलता जिससे इस शिलालेख का महत्व बढ जाता है।

'इसका गद्यांश इस प्रकार है—

सवत् १७४२ वर्षे वेसाक सुदि [५] दिने गोहिल मलकजी दिबाणजीरि फौज माहे काम आव्या कवर अजबसिंघजी आगल"

बैराट का लेख [२८०] (१६८६ ई०)

यह लेख बैराट की एक छत्री का है जिसका समय पोष शुक्ला पचमी, संवत् १७४३ है इसमे वर्णित है कि पाण्डे छीतरमल, जो टोडरमल का पुत्र और धनिया का पोता था स्वर्ग सिधारा। उसकी मृत्यु पर उसकी स्त्री जमना जो मोहन की पुत्री थी उसके साथ सती हुई। मोहन जोडाला का मन्त्री था। छत्री का निर्माण छीतरमल के भतीजे सावलदास ने करवाया। सावलदास गौड ब्राह्मण था। इसको औरंगजेब ने सिंह की उपाधि दी थी और उसे पापडी गाँव जागीर मे दिया गया था। इस लेख की भाषा ढूढाडी है और इसमे १० पक्तिया है जिन्हें यहा उद्धृत किया जाता है—

१. सवत् १७४३ वरष पोह सुदी
२. ५ पाडे छीतरमल टोडर को बेटो ध
३. णिया का पोता देवलोक पधरा
४. जीन के सग लाडी जमना मोहन
५. की पधान झोडाला की बेटी स
६ ती हुई : छतरी सावलदास पभ
७ राज कै बेटै छीतरमल कै [भ] ती जै
८ करी : जाती का बीरामण गोड : स
६. सन हरीतवाल उदरा जमीण
१० वर्ष जहर्न राम राम वचण

---

२७९ ओझा, बांसवाडा का इतिहास, पृ०-१११

२८०. प्रोग्रेस रिपोर्ट ऑफ आर्कियालोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, पृ० ४६.

धुलेव के विष्णु मन्दिर की प्रशस्ति[२८१] (१६८८ ई०)

यह प्रशस्ति उदयपुर जिले के धुलेव गांव के एक विष्णु मन्दिर की है जिसका समय वि० सं० १७४४ वैशाख सुदि ७ (ई० स० १६८८ ता० २६ अप्रैल) है। इसमें उल्लिखित है कि डूंगरपुर के शासक जसवन्तसिंह के राज्य का खडायता जाति के मनोहरदास द्वारा उक्त मन्दिर का जीर्णोद्धार कराया। इनसे यह भी सूचना मिलती है कि महारावल की पटरानी फूलकुंवरी तथा कुंवर खुंमाणसिंह थे।

गलियाकोट का लेख[२८२] (१६९४ ई०)

डूंगरपुर जिले के गलियाकोट के वि० सं० १७५१ मार्गशीर्ष वदि १ (ई० स० १६९४ ता० २२ नवम्बर) का लेख है जिसमें महारावल खुंमाण द्वारा खुंमाणपुर गांव बसाने का उल्लेख है। इसमे महारावल का लोकोपकारी कार्य में रुचि लेना सिद्ध होता है।

बांसवाड़ा के सतीपोल का लेख[२८३] (१६९८ ई०)

यह लेख बांसवाड़ा के 'सतीपोल' नामक द्वार का वि० सं० १७५४ वैशाख वदि २ का है। इसमें उल्लिखित है कि नायक सरदार मेवाड़ की सेना से लड़कर काम आया। वागड़ी भाषा की विशेषता पर भी इस लेख से अच्छा प्रकाश पड़ता है।

इसका गद्यांश इस प्रकार है—

"संवत् १७५४ वरषे वइसाख वदि २ दिने नायक
सरदार काम आव्या दिवाणजा नी फोज आवीतारे"

देवसोमनाथ के एक स्तम्भ का लेख[२८४] (१६९९ ई०)

यह लेख वि० सं० १७५५ वैशाख सुदि ९ शुक्रवार का है जो देवसोमनाथ के एक स्तम्भ पर उत्कीर्ण है। इस लेख में मेवाड़ के अमरसिंह द्वितीय के चाचा सूरतसिंह और प्रधान दामोदरदास का फौज लेकर डूंगरपुर के विरुद्ध पहुँचना और फिर देवसोमनाथ के दर्शनार्थ जाना उल्लिखित है। यह लेख कई राजनीतिक घटनाओं का पोषक होता है। जब अमरसिंह द्वितीय के गद्दीनशीनी के उत्सव पर डूंगरपुर का रावल टीका लेकर नहीं उपस्थित हुआ तो महाराणा ने अपनी

---

२८१. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० ११९।

२८२. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० १२१।

२८३. ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० ११३, ११५।

२८४. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० ११९–१२०;
वजीर असदखां का अमरसिंह के नाम १० सफर सन् ४३ जुलूस (वि० सं० १७५६ श्रा. सु. १२=ई० स० १६९९ ता० २८ जुलाई) का पत्र;
वीर विनोद, भा० २, पृ० ७३५, ७३६, ७५५, १००९।

एक फौज उक्त व्यक्तियों के साथ डूंगरपुर के विरुद्ध भेजी। सोमनदी पर लड़ाई हुई जिसमे दोनो तरफ के कई सैनिक काम आये। फिर देवगढ के रावत द्वारिकादास के प्रयत्न से ज्येष्ठ सु० ५ (ई० स० १६६६ ता० २३ मई) डूंगरपुर के रावल द्वारा १७५००० रु०, दो हाथी और मोतियो की माला महाराणा को देने की शर्तों पर सुलह हुई। ऐसा प्रतीत होता है कि इस कार्य सम्पादन के उपरान्त चाचा और प्रधान देवसोमनाथ के दर्शनार्थ गये थे। और उस अवसर की स्मृति मे स्तम्भ पर लेख उत्कीर्ण कराया गया था। ये सन्धि स्थाई न रह सकी, क्योंकि डूंगरपुर रावल ने महाराणा की शिकायत की, परन्तु औरंगजेब दक्षिण विजय मे व्यस्त होने के कारण इस पर कोई विशेष ध्यान नही दे सका।

स्तम्भ लेख की पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

> संवत् १७५५ वरष (वर्षे) वैशाख सुदि ६ शुक्रे महाराजा श्री सूरतसिंघ (ह) जी पचोली श्री दामोदरदासजी डूंगरपुर फोज पधार्या जद इतरी जात्रा सफल ....।"

इन्द्रगढ के एक कुंड का लेख[२८५] (१७०१ ई०)

इन्द्रगढ से लगभग १½ मील की दूरी पर कुछ भग्नावशेष है जिनमे एक जलाशय है। उसके दीवार पर वि० स० १७५८ शक संवत् १६२३ वैशाख बुधवार का एक लेख है। लेखाकार १६×१७ वर्ग इंच तथा अक्षराकार ०.५×०.१ वर्ग इंच है तथा पंक्तियों की कुल संख्या १६ है। इसमे वर्णित है कि चौहान राजा सिरदारसिंह के राज्यकाल मे गौड ब्राह्मण राय रामचन्द्र द्वारा उक्त कुंड का निर्माण करवाया गया। इससे प्रमाणित है कि रामचन्द्र का पद प्रधान का था और वह राज्य कई परगनो मे विभाजित था। यहाँ के शासकों को मुगलो द्वारा मनसब भी प्रदान की गई थी जैसाकि इसमे उल्लिखित है।

खडगदा गाँव के लक्ष्मीनारायण के मन्दिर की प्रशस्ति[२८६] (१७०१ ई०)

यह लेख खडगदा गाँव के लक्ष्मीनारायण के मन्दिर की वि० स० १७५७ वैशाख सुदि ३ (ई० स० १७०१ ता० २६ अप्रैल) का है। इसमे कुंवर रामसिंह को युवराज लिखा है जो उस समय की शासन व्यवस्था तथा युवराज पद के महत्व की ओर संकेत करता है।

इस लेख की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

> " .... अद्येह श्री गिरिपुरे रायराया महाराजाधिराज महाराउल श्री खुमाणसिंघजी विजयराज्ये महाकुंअरजी श्री रामसिंघजी यौवराज्ये.. ...।

---

२८५ वरदा, जुलाई १९७१, पृ० ५४, ६२।

२८६ ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० १८

मोटा गडा गाँव का लेख[२८७] (१७०१ ई०)

मोटा गडा गाँव के चार शिलालेखों की उपलब्धि हुई है जिनमें वि० सं० १७५८ श्रावण वदि २ का समय दिया गया है। इन शिलालेखों के समूह से पाया जाता है कि ठाकुर सरदारसिंह के सहायता कार्य में झाला वनराय, अजबसिंह, वाघेला राजसिंह और मादावत अखेराज काम आये।

वांसवाड़ा का एक स्मारक[२८८] (१७१२ई०)

इस लेख से महारावल भीमसिंह का मृत्यु काल १७६९ (वि०) विदित होता । इनके साथ ९ रानियां सती हुईं। इस छत्री की प्रतिष्ठा राणी पुरवणी रूपकुंवरी ने वि० सं० १८०० में करवाई।

इसका गद्यांश इस प्रकार है—

"सं० १७६९ व० सावण शुद २ महाराग्रोल श्री भीमसिंगजी देवलोक पधारा। सती ९ सहगमन कीधा। सं० १८०० व० जेठ शुद ९ राणी पुरवणी रूपकुंवरजीए छत्री प्रतिष्ठा कीधि"

देव सोमनाथ के मन्दिर के एक छवने का लेख[२८९] (१७१६ई०)

यह लेख देव सोमनाथ के मन्दिर के छवने पर वि० सं १७७३ द्वितीय ज्येष्ठ वदि १४ (ई० स० १७१६, मई) का है जिसमें महाराणा संग्रामसिंह द्वितीय के आदेश से पंचोली विहारीदास तथा काका भारतसिंह डूंगरपुर को अधीन करने के अभिप्राय से ससैन्य भेजे गये। उस समय महारावल रामसिंह ने १२६००० रु० देकर उनसे समझौता कर लिया क्योंकि डूंगरपुर में सरदारों की शक्ति बढ़ रही थी। यह लेख सामन्तों के अधिकार बढ़ाने के प्रयत्नों के सम्बन्ध में बड़े महत्त्व का है।

इसकी कुछ पंक्तियां इस प्रकार हैं—

"सिध श्री महाराजाधिराज महाराणा श्री संग्रामसिंघजी आदेशातु प्रतदुए पंचोली विहारी दासजी काका भारतसिंघजीं सं० १७७३ वर्षे दति जेठ [व] दी १४…………फोल………"।

दक्षिणामूर्ति लेख[२९०] (१७१३ ई०)

यह लेख उदयपुर के राजप्रासाद के दक्षिण में स्थित राजराजेश्वर के शिव मन्दिर में लगा हुआ है। इस लेख में संस्कृत पद्यों में २९ पंक्तियां उत्कीर्ण हैं जो

---

२८७. ओझा, वांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० ११५।

२८८. ओझा, वांसवाड़ा का इतिहास, पृ० ११६।

२८९. वीर विनोद भा० २, पृ० १०१०;
ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० १२४।

२९०. भाव० इन्स० संख्या, १५, पृ० १५५–१५७।
गोपीनाथ शर्मा, बिबलियोग्राफी, पृ० १३।

१६" × १३" के आयात को घेरे हुए है। इसमे प्रयुक्त लिपि देवनागरी है और इसका समय वि स. १७७० है।

यह लेख उस समय के विद्या के स्तर पर प्रभूत प्रकाश डालता है। श्री दक्षिणामूर्ति नामी प्रकाण्ड विद्वान् महाराणा संग्रामसिंह द्वितीय के गुरु थे जो उनके साथ रहते थे। वे वेद, वेदाङ्ग, शास्त्र, स्मृति, तंत्र आदि के विद्वान् थे। इनके द्वारा अनेको विद्यार्थियो को शिक्षा प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। महाराणा ने इन्ही गुरु की प्रेरणा से इस शिवालय और उसके निकट वाले कुण्ड का निर्माण करवाया। उस के प्रतिष्ठा के समारोह के समय सैकडो वेद के जानने वाले ब्राह्मणों को आमन्त्रित किया गया और स्वस्ति वाचन, यज्ञ आदि कार्यों का सम्पादन हुआ। इन ब्राह्मणो का नेतृत्व स्वयं श्री दक्षिणामूर्ति ने किया। इस लेख से उस समय के अध्ययन विषयो और गुरु शिष्य परंपरा की गति विधि का भी बोध होता है। इससे सग्रामसिंह की धार्मिक प्रवृत्ति, नीति कुशलता तथा लोकप्रियता पर भी अच्छा प्रकाश पडता है। लेख के कुछ अंश इस प्रकार हैं—

'ब्राह्मणान् शतसख्याकान् पूजाद्रव्याधलंकृतान्
नियोज्य पृथिवीपाल. स्वस्तिवाचन कर्मणि
प्राण प्रतिष्ठामकरोद्राजराजेश्वरस्य च"

मेतवाला गांव का लेख[२६१] (१७१४ ई)

यह लेख मेतवाला गाव का वि. स १७७१ मार्ग शीर्ष सुदि १२ भौमवार का है। इसमे चौहान केशवदास का महाराणा की सेना से लडकर मारे जाने का उल्लेख है। इस लेख का उपयोग उस समय की भाषा के अध्ययन के लिए भी बडे महत्त्व का है—

"सवत् १७७१ ना मगसर (मार्ग शीर्ष) सुद १२ भुमा (भोमे) सहुआण (चौहान) केसवदास जी काम आव्या। फोज श्री दीवाण जी नी आवी तारे कामा आव्या"

सागवा गाव का लेख (१७२३ ई.)

वि. स. १७७६ चैत्र सुदि ५ का सागवा गाव का यह लेख बाघेला पूंजा के काम आने का उल्लेख करता है।

गुजर बावडी की प्रशस्ति[२६२] (१७१५ ई.)

वि. स. १७७२ माघ सुदि १ की प्रशस्ति गुजर बावडी की प्रशस्ति के नाम से प्रसिद्ध है। यह भी श्लोकबद्ध प्रशस्ति है। इसमे उल्लिखित है कि बापारावल मेवाड का बडा पराक्रमी शासक था जिसे एकलिंग जी की कृपा से एकछत्र राज्य प्राप्त हुआ था। इसी वश के राजा जयसिंह ने इन्द्रसरोवर बनाया। इसके बाद

---

२६१. ओझा—बासवाडा राज्य का इतिहास, पृ० १२४

२६२ —एक प्रतिलिपि के आधार पर।

इसमें संग्रामसिंह द्वितीय का वर्णन है जिसकी बहिन चन्द्रकुंवरी का विवाह आमेर नरेश सवाई जयसिंह के साथ हुआ था। इसमें उसकी धाय का नाम भीला दिया हुआ है। इसकी बहिन खीमी भी संग्रामसिंह की धाय थी। श्लोक ७ से १४ तक इस धाय के परिवार का विस्तृत वर्णन है। इसमें उल्लिखित है कि भीला का विवाह केशवदास के साथ हुआ था। इनके पुत्र का नाम मानजी दिया हुआ है। भीला ने सदाशिव के मन्दिर का एवं एक बावड़ी का निर्माण करवाया। इनकी प्रतिष्ठा के समय में एक बड़े यज्ञ का आयोजन किया गया था। प्रस्तुत प्रशस्ति से साधारण समाज के व्यक्तियों द्वारा सार्वजनिक कार्यों में रुचि लेना प्रमाणित होता है।

बेदला गाँव की सुरताण बावड़ी का लेख[२६३] (१७१७ ई०)

यह लेख बेदला गांव की सुरताण बावड़ी में अन्दर जाते हुए बाईं तरफ ताक में लगा हुआ है जिसकी प्रतिष्ठा वि० सं० १७७४ वैशाख सुदि १५ रविवार को हुई थी। यह बावड़ी बेदला के चौहान सबलसिंह के पुत्र राव सुरतानसिंह ने बनवाई थी। इसमें एक हरि मन्दिर तथा बाग के बनाये जाने का उल्लेख है। प्रशस्ति का लेखक मावट किरपा गजधर उदा सोमपुरा था। इस अवसर पर जो खर्च हुआ था उसका उल्लेख इस प्रकार है—

"ज्यागतग्र १३००१ बावडी तथा हरि मन्दिर कमठाणा लेखे ६०७७६ श्री दीवाण जी आईराज की देव कुंवर बाई गोने पधारया, सो खरचाणा जणीरी वीगत २२६६६, घोडा ५६, खरच्मा ८६००, सीधो खरचाणो १५१३, गेणो खरचाणो ७०००, कपडा खरचाणा ७५००. रोकड खरचाणा जीरा रुपया ६०७७६ हुआ; कमठाणा बागरा हजार तेरा वीगेरा साव सर्व जमा रुपया ७३७८०"

वैद्यनाथ मन्दिर की प्रशस्ति[२६४] (१७१९ ई०)

यह प्रशस्ति उदयपुर के तालाब पीछोला के पश्चिमी तट पर बसे हुए सिसारमा गांव के वैद्यनाथ महादेव के मन्दिर में लगी हुई है और उसका समय वि० सं० १७७५ ज्येष्ठ कृष्णा ३ है। इस प्रशस्ति में १३६ श्लोक हैं तथा वे ५ प्रकरणों में विभक्त हैं सम्पूर्ण प्रशस्ति दो बड़ी-बड़ी शिलाओं पर खुदी हुई है। इसमें बापा की हारीत ऋषि की अनुकंपा से राज्य प्राप्ति का उल्लेख है। इसमें बापा से लेकर प्रारंभिक राणा शाखा तथा चित्तौड़ के शासकों का संग्रामसिंह द्वि० तक का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। इसमें मातृभक्त संग्रामसिंह द्वितीय द्वारा अपनी माता देवकुंवरी (बेदला के राव सबलसिंह की पुत्री) के कथनानुसार वैद्यनाथ के विशाल मन्दिर के निर्माण का उल्लेख है। इसमें इसकी प्रतिष्ठा का समय वि० सं० १७७२

---

२६३. वीर विनोद, पृ० ११७६–११७७।

२६४. वीरविनोद, भाग २, प्रकरण ११, शेष संख्या ७;
ओझा, उदयपुर, भा० २, पृ० ६१२, ६१३, ६२०, ६२१, ६२२, ६२३।

माघ शुक्ला १४ गुरुवार, तदनुसार ई० स० १७१६ ता० २६ जनवरी दिया गया है। इस अवसर पर राजमाता ने चादी की तुला की और प्रतिष्ठा समारोह मे लाखो रुपये व्यय हुए। इस अवसर पर कोटाधीश भीमसिंह और डूंगरपुर का रावल रामसिंह आदि अन्य राजा भी उपस्थित थे। महाराणा के सम्बन्ध मे भी इसमे उल्लिखित है कि उसने दक्षिणामूर्ति नामक दक्षिणी विद्वान् ब्रह्मचारी को एक गाँव और सिरोपाव, अपनी सभा के वैद्य मगल को एक गाँव, और काशीनिवासी शम्भु के पुत्र पण्डित दिनकर को वि० स० १७७० मे सोना और घोडे सहित एक गाँव चन्द्रग्रहण के दिन, पडित पुण्डरिक भट्ट घोडे सहित गाँव तथा यज्ञ के लिए १०००० रुपये, ब्राह्मण देवराम को एक पालकी तथा गाँव ज्योतिषी कमलाकान्त भट्ट को तिलपर्वत सहित एक गाव और एकलिंगजी के मन्दिर को हाथी, घोडे आदि भेंट किये। इस वर्णन से महाराणा का विद्यानुराग तथा धार्मिक वृत्ति का बोध होता है। इससे उस समय के विद्वानों का भी हमे परिचय मिलता है।

प्रस्तुत प्रशस्ति मे महाराणा की सेना का रणबाजखा की सेना के साथ युद्ध होने का वर्णन है। यह युद्ध पुर-माडल के परगनो के सम्बन्ध मे था। दोनो सेनाओ का बाधनवाडे के निकट घमासान युद्ध हुआ जिसमे राजपूतो की विजय हुई और रणबाजखा अपने भाई बेटो के सहित खेत रहा। मुगल सेना का बहुत सा सामान राजपूतो के हाथ लगा। इस अवसर पर रावत महासिंह और दौलतसिंह मारे गये। प्रशस्तिकार ने यहा युद्ध का अच्छा वर्णन दिया है जिससे राजपूत प्रणाली की सैनिक व्यवस्था, वेशभूषा आदि की हमे जानकारी मिलती है। इस प्रशस्ति का लेखक रूप भट्ट तथा लिपिकार गोवर्द्धन का पुत्र रूपजी था।

इसके कुछ पद्याश इस प्रकार हैं।

"प्रतापसिंहोथ बभूव तस्माद्धनुधरो धर्मधरो धरिण्या" "बिहारिदासे वरमंत्रि मुख्ये सर्वाधिकारेषु नियुज्यमाने विशोपका विंशतिरेखलेख्या धर्मस्य सत्यस्य चशारत्र विद्धि" "तुला तृतीया विधिनाव्य कार्पीत्सग्रामसिंहस्य नृपस्यमाता" "श्रीवैद्यनाथ शिवमद्यभवा प्रतिष्ठा देवी चकार किल देव कुमारि काख्या"

ब्रह्मपुरी उदयपुर की एक सुरह[२६५] (१७२४ ई०)

यह सुरह लेख उदयपुर की ब्रह्मपुरी (पीछोला तटवर्ती) के गोरवालो के मुहल्ले के शिव मन्दिर के पास लगी हुई है। इसकी भाषा मेवाडी है। यह सुरह सग्रामसिंह द्वितीय के समय के शासन सम्बन्धी विषयो पर कुछ प्रकाश डालती है। इसमे उल्लिखित है कि महाराणा ने ब्रह्मपुरी की बस्ती के सम्बन्ध में आदेश दिया था कि इसमे राय श्रीनिवास के भाग मे कुछ ब्राह्मणो ने घर बनाये और उनको आपस मे बचना शुरु किया। इस बिकाव की जकात और लागत राज्य की थी। परन्तु सक्रान्ति के अवसर पर जकात और लागत लेने का अधिकार भट्ट देवराम को दे दिया गया।

---

२६५ वीर विनोद, द्वि० भा०, प्रकरण ग्याहरवाँ,

इस सम्बन्ध में महाराणा ने यह भी आदेश दिया कि भविष्य में कोई कामदार या कोतवाल ब्रह्मपुरी में लागत और जकात वसूल न करे और न दिन में इस हलके में जावे। केवल मात्र रात को चौकीदार और कोतवाल ब्रह्मपुरी में चौकसी और हिफाजत के लिए जा सकते थे। इसमें यह भी स्पष्ट कर दिया गया कि यदि ब्रह्मपुरी में मकान वेचे जायें तो वे ब्राह्मणों को ही वेचे जायें और उसकी जकात भट्ट देवराम ही वसूल करे। सरकार के लिए इस भाग की जकात या लागत एक प्रकार से शिवनिर्माल्य घोषित किया गया। राय श्रीनिवास भाग की सीमा चांदपोल की पुल से लेकर तालाव के पश्चिमी पाल तथा गोलेरे से अपाडे तक थी। इस सम्पूर्ण क्षेत्र की लागत मुआफ की गई थी।

प्रस्तुत सुरह से विदित होता है कि सम्पूर्ण शहर की भूमि खालसे में शुमार होती थी। और उसके वेचने पर सरकारी जकात लगती थी। वहां कई प्रकार की लागत भी लगती थीं। शहर विशेष रूप से जातिवार मुहल्लों में बँटा रहता था और ब्रह्मपुरी में ब्राह्मण रहते थे। इसीलिए आदेश था कि ब्रह्मपुरी में अन्य कोई जाति मकान नहीं ले सकती थी। इस मुहल्ले को विशेष प्रकार से समझा गया था, जहाँ रात के अतिरिक्त दिन में सरकारी अधिकारी या कोतवाल प्रवेश नहीं कर सकता था। जकात और कोतवाल, दरवार आदि शब्दों का प्रयोग मुगल प्रभाव का द्योतक है।

राज तालाव का लेख[२६६] (१७२७ ई.)

बांसवाड़ा के राज तालाव पर यह लेख वि० स० १७८४ मार्गशीर्ष सुदि ७ का है। इसमें सोलंकी सरदारसिंह का महारावल विष्णुसिंह की सेना में रह कर परमगति पाने का उल्लेख है।

झाला का गुढा का लेख[२६७] (१७२८ ई.)

यह लेख झाला का गुढा नामक गाँव में जो बांसवाड़ा जिले में है, वि० सं० १७८५ कातिक वदि १४ का है। इसमें उल्लिखित है कि झाला राजश्री सरूपसिंह के साथ कंठा की सेना में लड़कर चौहान धन्ना की मृत्यु हुई थी। इसमें 'कंठा' शब्द का प्रयोग मरहठे सेनापति सवाई कांटसिंह कदमराव से है जिसने उक्त संवत् में बांसवाड़ा पर आक्रमण किया था।

भंवरिया गाँव का लेख (१७२८ ई०)

पाराहेडा के भँवरिया गाँव (बांसवाड़ा) का यह लेख वि० सं० १७८५ कातिक वदि १४ भौमवार का है। इसमें उल्लिखित है कि मेड़तिया गोपीनाथ के पुत्र मेड़तिया वल्ला कंठा की फौज से लड़कर काम आया।

---

२६६. ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० १२५।
२६७. ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० १२५।
२६७. ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० १२५।

अडोर गांव के लेख[२६८] (१७२८ ई०)

अडोर गाँव (बासवाडा) मे ११ लेख उपलब्ध हुए हैं। जिनका समय वि० सं० १७८५ कार्तिक वदि १६ भौमवार है। इसमे ठाकुर मोहकमसिंह के साथ मे रह कर कंठा की फौज से लडकर चौहान परबत, सीसोदिया भूमा, चौहाण मदन आदि राजपूत काम आये। सामन्तो की फौजो मे भी अन्य शाखाओ और वंशो के राजपूत रहते थे और उनके लिए सैनिक सेवाएं देते थे ऐसा इस लेख से प्रमाणित होता है।

झाला का गुडा का लेख[२६९] (१७२८ ई)

यह झाला के गुडा का लेख वि० स० १७८५ मार्गशीर्ष सुदि ४ का है। इसमे दर्ज है कि झाला सरूपसिंह का सदीलाव मगरे के घेरे मे तलवाडा गाँव मे कार्तिक वदि १४ को कंठा की फौज से लडकर मारा गया। इस लेख से मराठाओ की घेराव पद्धति से युद्ध लडने की प्रणाली पर काफी प्रकाश पडता है और यह भी प्रमाणित होता है। कि 'कठा'—काटसिंह एक स्थान से दूसरे स्थान घेरे डालता रहा और पद-पद पर बासवाडा के जागीरदारो ने अपने सहयोगियो की सहायता से इनका मुकाबला किया तथा वीरोचित गति प्राप्त की।

अडोर गाव के लेख[३००] (१७२९ ई)

बासवाडा के अडोर गाँव के दो लेख जो वि० स० १७८६ कार्तिक सुदि १४ के है 'कंठा' के घेरे सम्बन्धी सूचना देते हैं। इसमे उल्लिखित है कि मेडतिया ठाकुर मोहकमसिंह और रावल सरूपसिंह के गनीम कंठा की सेना द्वारा घेरे जाने पर, शत्रु से लडते हुए उक्त तिथि को काम आये और उनके स्मारको की प्रतिष्ठा उपर्युक्त दिन हुई।

कोलायत का शिला लेख[३०१] (१७२९ ई)

यह लेख कोलायत के तीर्थस्थल से प्राप्त हुआ है जिसका समय सवत् १७८६ फाल्गुण कृष्णा सोमवार है। यह लेख क्रमाक ३७/२२२ से बीकानेर के राजकीय सग्रहालय मे सुरक्षित है। इसके द्वारा यह सूचना मिलती है कि उक्त समय में महाराजा सुजानसिंह ने कपिल तीर्थ पर घाट के निर्माण का प्रारंभ किया था। इसमे सस्कृत पद्यो मे १२ पंक्तिया है। इसकी कुछ पक्तिया इस प्रकार है—

"दुर्लभ तं तीर्थप्रवरं नमामि वरदं त्रैलोक्य सपूजित
महाराजधिराज श्री सुजानसिंहाना श्री कपिल तीर्थे
घाटस्थ प्रारंभ कृत स चिरस्थायी भूयात्"

---

२९८. ओझा, बासवाडा राज्य का इतिहास, पृ० १२५।
२९९. ओझा, बासवाडा राज्य का इतिहास, पृ० १२५।
३०० ओझा, बासवाडा राज्य का इतिहास, पृ० १२५–१२६।
३०१ शिलालेख बीकानेर सग्रहालय क्रमाक ३७/२२२ '

डूंगरपुर के मगनेश्वर महादेव के मन्दिर की प्रशस्ति[३०२] (१७३० ई०)

यह लेख डूंगरपुर नगर स्थित मगनेश्वर महादेव के मन्दिर की वि० सं० १७८६ माघ वदि ६ शुक्रवार (ई० स० १७३० ता० २६ जनवरी) की है। इससे प्रतीत होता है कि उक्त मन्दिर नागर जाति के पंचोली मगनेश्वर ने बनवाया था। इससे यह भी ज्ञात होता है कि महारावल रामसिंह ने अपने पुत्र शिवसिंह को अपना युवराज बनाया जो ज्ञानकुंवर से जन्मा था। प्रशस्ति श्लोकबद्ध है और अन्तिम पंक्तियां संस्कृत गद्य में हैं—

"स्वस्ति श्री संवत् १७८६ वर्षे मासोत्तम माघ वदि ६ भृगौ अत्र दिने। अद्येह श्री गिरिपुरे महाराजाधिराज महाराओल श्री रामसिंहजी विजयराज्ये। कुमार श्रीशिवसिंहजी युवराज्य स्थिते"

हरनेवजी के खुरेवाले शिवालय का लेख[३०३] (१७३३ ई०)

यह लेख उदयपुर स्थित हरनेवजी के खुरे वाले शिवालय के मन्दिर वि० सं० १७९० वैशाख शुक्ला १३ का है। इसमें सनाढ्य ब्राह्मण हरिवंश के द्वारा शिवालय, बावड़ी और वाड़ी बनाने का उल्लेख है। प्रशस्ति में ३० श्लोक हैं जिनकी रचना रूपभट्ट के पुत्र रामकृष्ण ने की थी। प्रारम्भ में मेवाड़ के महाराणाओं की प्रशंसा और फिर हरिवंश के वंश का वर्णन है। इस प्रशस्ति से स्थानीय जनसमुदाय की धार्मिक वृत्ति का बोध होता है। इसका कुछ अंश इस प्रकार है—

"शिवसौध: शिवावापी वाटिका हरिमन्दिर
अकारि हरिवंशेन चतुर्भद्रं चतुष्पथे"

"श्रीरूपभट्टजनुषा कविराड्वंदितांघ्रिणा
रामकृष्णेन रचिता प्रशस्ति रियमुत्तमा"

"संवत् १७९० वर्षे वैशाख शुद १३ दिन राणा श्री जगत्सिंहजी विजयराज्ये सनावड जाति जोशी हरिवंश ताराचंदोत श्री हरिवंशेश्वरजी की तथा हरिमन्दिर री प्रतिष्ठा कीधी ने वाड़ी वावड़ी सुधी तयार कराये ने देवरे चढ़ाई"

माकरोरा (सिरोही) का लेख[३०४] (१७३३ ई०)

इस लेख में रत्नसूरी, कमलविजय गणिआदि साधु माकरोरा में वर्षाऋतु में रहे तब वहां के श्रावकों तथा श्राविकाओं ने साधुओं की भक्ति की यह अंकित है। इसका मूलपाठ इस प्रकार है—

"संवत् १७९० वरषे कमल कलसा गच्छे भट्टारिक श्रीमत रत्नसूरि पं०

---

३०२. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० १२७।

३०३. वीरविनोद, पृ० १५१८–१९;
ओझा, उदयपुर, भा० २, पृ. ६३९।

३०४. नाहर, जैन लेख, भा. १, नं० ९७०, पृ० २४९।

कमलविजय गणि वेठाणा ७ संघाति चौमासु रह्या । मुहता मोटा सा० घना मु दरनरथ कोठारी करमसी अमरा रणछोड देवा भगवान रामजीराज जोगा कल्याण सुजाण जोगा आसा बाई चापी बाई जगी समस्य श्राविक श्राविकाइ सेवा भगति भलीरीति कीधी सघस्य कल्याणाय भवतु"

महारावल विष्णुसिंह का स्मारक का लेख[३०६] (१७३७ ई०)

यह लेख महारावल विष्णुसिंह (बांसवाडा) की स्मारक छत्री पर उत्कीर्ण है जिससे उक्त महारावल की मृत्यु वि० स० १७९३ चैत्र सुदि ७ को होना प्रमाणित होता है। कविराज श्यामलदास ने महारावल विष्णुसिंह का देहान्त वि० १७८९ के पूर्व होना माना है जो इस लेख के उल्लेख के प्रतिकूल है। उक्त महारावल के साथ एक पासवान रूपाबाई का सती होना भी इससे प्रमाणित होता है। इस स्मारक की प्रतिष्ठा वि० स० १८०० के जेठ शु० ६ को माताजी श्री पुरवणीजी रूपकुवरी के द्वारा होना सिद्ध है।

इसका गद्यांश इस प्रकार है—

"स १७९३ वर्षे चईत्र शुद ७ महाराओल श्री विष्णुसिहजी देवलोक पधारा शति १ पाशवान बाई रूपाए सहगमन कीधो सं १८०० वर्षे जेठ शु ६ माताजी श्री पुरवणीजी रूप कुऐंरजी छत्री प्रतिष्ठा किधि"

बखतपुरा गाव का लेख [३०६] (१७३८ ई०)

अर्थूणा ठिकाने के बखतपुरा गांव का यह लेख बडे महत्त्व का है। इससे, प्रमाणित होता हैं महारावल विष्णुसिंह (बासवाडा) का कुटुम्बी भारतसिंह राजद्रोही होगया और उसने वि० स० १७९४ और वि० सं० १७९५ में बासवाडा राज्य की सेना से युद्ध किया। इस युद्ध में चौहान बहादुरसिंह, भारतसिंह के पक्ष से रहकर लडता हुआ मारा गया। इस लेख से सामन्तो का राज्य से विरोधी होने की घटनाओ पर प्रकाश पडता है। लेख की पक्तिया इस प्रकार हैं—

"संवत् १७९५ वरषे मागसर सुदि ७ दने चहुआण श्री बादरसिंगजी काम आवा सेती भारतसिंघजी नी फोज महे काम आवा फोज म्हे"

गोवर्धन विलास में मानजी धाय भाई के कुड की प्रशस्ति[३०७] (१७४२ ई०)

उदयपुर से दो मील की दूरी पर गोवर्धनविलास नामी गाव मे माना धाय भाई के कुंड की वि० स० १७९९ चैत्र सुदि १ की प्रशस्ति है। इसमे चन्द्रकुंवरी (जिसका विवाह सवाई जयसिंह के साथ हुआ था) की गूजर जाति की धाय भीला के पुत्र माना धाय भाई के द्वारा, कुड और बाग बनाये जाने का उल्लेख है। प्रशस्ति मे

३०५ ओझा, बासवाडा का इतिहास, पृ० १२३।

३०६. ओझा, बासवाडा राज्य का इतिहास, पृ १२६।

३०७. वीर विनोद, पृ० १५१९–१५२१;
ओझा, उदयपुर, भा० २, पृ० ६३६–६४०।

३० श्लोक हैं जिनकी रचना भट्टमेवाडा जाति के कवि रामकृष्ण ने की थी। अंतिम भाग मेवाड़ी भाषा में है। उक्त प्रशस्ति में गूजर जाति के मानजी के वंश के व्यक्तियों की धर्मनिष्ठा तथा योग्यता का अच्छा वर्णन है। यह प्रशस्ति धाय भाइयों की समृद्धि तथा राजमान्यता के विकास पर अच्छा प्रकाश डालती है। इसका कुछ अंश इस प्रकार है—

"सम्मानिता मानजिता समस्ता समाजितस्तत्र सुरा नराश्च
जयस्वनैस्तुष्ठहृदोऽ मृमुच्चैरवाकिरन् पुष्पभरैरतीव"

"संवत् १७९५ वर्षे ज्येष्ठ मासे शुक्ल पक्षे ११ दिने गूजर ज्ञाति वास उदयपुर झांझाजी सुत नाथाजी तत्पुत्र तेजाजी तत्पुत्र केशवदास जी तत्पुत्र रिचंजीवी धाय भाई जी श्री मानजी कुंडवाडी तथा सारी जायगा बंधाई कुंडरी खुदाई कुमठाणों तथा व्याव वृद्धरा समस्त रुपीया ४५१०१ अखरे रुपीया पैतालीस हजार एक सौ एक लगाया संवत् १७९९ वर्षे चैत्रमासे शुक्ल पक्षे १ दिने गुरु वासरे महाराजाधिराज महाराणा श्री जगत्सिंह जी विजय राज्ये मेदपाटज्ञाती भट्टरुप जी तत्पुत्र भट्टरामकृष्ण या प्रशस्ति बणाई छै"

पंचोलियों का मंदिर उदयपुर की प्रशस्ति[३०८] (१७४३ ई०)

यह प्रशस्ति उदयपुर में दिल्ली दर्वाजे के पास, बाईजी राज के कुंड के दर्वाजे के सामने पश्चिम दिशा में रास्ते पर पंचोलियों के मन्दिर की है। इसका समय वि. सं १८०० वैशाख सुदि ८ है। इसमें भटनागर कायस्थ देवजित् (देवजी, जो महाराणा का मंत्री था) के द्वारा विष्णु मन्दिर, शिवालय, बावड़ी और धर्मशाला बनाये जाने का उल्लेख है। उक्त प्रशस्ति में देवजित् के वंश का भी विस्तृत वर्णन है। उक्त प्रशस्ति में ५९ श्लोक हैं जिनकी रचना कवि नाथूराम ने की थी। इससे उस समय की उदारता, धर्मनिष्ठा तथा मन्त्रिगणों की लोकप्रियता और समाज की ब्राह्मणों के प्रति सत्कार की भावना का बोध होता है। इसके कुछ अंश यहाँ उद्धृत किये जाते हैं—

"वाटिकां देवयोश्चै पूजार्थं सुमनोयुतां
मध्येप्रासादयोश्चक्रे नाना द्रुमनोहरां"
"कृत्वा पारायणं विप्रास्थ स्तथा मंत्र जपादिकं
सर्वे जपदशांशेन जुहुवुस्ते प्रथक् प्रथक्"
"श्री जगत्सिंह भूपस्य प्रीतिपात्रं महामतिं
सुपुत्रो देवजिज्जीयाच्चिरं सर्व सुखान्वितः"
"इति श्री कायस्थ वंशावतंसदेवजित्का रित प्रशस्तिः
संपूर्णा श्चटंषागोत्रजातेनसूत्रधारेण धीमता अमरारमेन रचित प्रासादः
त्तष्टसूनुना"

---

३०८. वीरविनोद, पृ० १५२१–१५२५;
ओझा, उदयपुर, भा० २, पृ० ६४०।

महती जी के मन्दिर की सुरह[३०९] (१७४५ ई०)

यह लेख सवत् १८०२ कार्तिक शुक्ल २ का है जो माडलगढ की भीतरी तलहटी के बाजार वाली महतीजी के मन्दिर के निकट सुरह के रूप मे उत्कीर्ण हैं। इस लेख का आशय यह कि मांडलगढ मे अव्यवस्था फैलजाने से जो जन समुदाय कस्बे को छोड कर चले गये थे उन्हे फिर से बसाने का आग्रह स्थानीय पचो को किया गया है। उन्हें यह भी बताया गया है कि कर देने वाले व्यक्तियो से दड लेने की प्रथा हटा देना चाहिये। इसमे स्थानीय शासन सत्ता के महत्त्व को भी स्वीकार किया गया है। इसमे कर देने वालों के लिए 'देवाल' शब्द का प्रयोग किया गया है जो २० वी शताब्दी के प्रारभ तक यहा प्रचलित था। इसका मूल इस प्रकार है—

'सिद्ध श्री दिवाण जी आदेसातु प्रतदुवे महता देवी चंद जी कसबा माडलगढ तलेटीरा समसत पचा कस अपरच थे जमापातर रापेर गामरी आवादान करज्यो, आसाम्या बारणे गई है ज्यानो पाछी ल्यावज्यो, आदका देवालको अेव आसामी को हात पकड डड करणो नही........ ..लिखता गोड सोलाल सयूरा सवत् १८०२ रा काती सुद ४ रवे"

बासवाडा का उदयसिंह का स्मारक लेख[३१०] (१७४६ ई०)

यह लेख उदयसिंह के स्मारक का है जिसका समय वि० सं० १८०३ आश्विन वदि है। इससे उदयसिंह की मृत्यु के समय के निर्धारण मे सहायता मिलती है। लेख से यह भी प्रतीत होता है कि स्मारक की मूर्ति खण्डित हो जाने से वि० स० १८९३ जेष्ठ सुद १५ को दूसरी मूर्ति की स्थापना मारफत ठाकुर अर्जुनसिंह तथा जानी लखमीचद के हुई। इसकी भाषा इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महारावल श्री उदेसघजी देवलोक पधारा स० १८०३ ना आसोज वद ते मुरती खडित थई हती ते स० १८९३ ना जेठ सुद १५ दीनो बीजी मुरती बेसारी मारफत ठाकर अरजणसिघजी दसगत जानी लखमीचद।"

अर्जुनसिंह चौहाण गढी का स्वामी था और वि० स० १८९३ (ई० स० १८३६) मे बांसवाडा राज्य का मुख्य कार्यकर्त्ता था।

गरसिया गाँव का लेख[३११] (१७४६ ई०)

बासवाडा के गरसिया गाँव के वि० स० १८०३ पौष वदि १२ का यह लेख मे सरदारसिंह का किसी की फौज से लडकर काम आने का उल्लेख है।

---

३०९. वीर विनोद, पृ० १५२५।

३१०. ओझा, बांसवाडा राज्य का इतिहास, पृ० १२८।

३११. ओझा, बांसवाडा राज्य का इतिहास, पृ० १२७।

बीकानेर का एक स्मारक लेख[३१२] (१७४७ ई०)

यह लेख वेणीरोत सवाईसिंह की देवली पर है जिसका समय संवत् १८०४ शाके १६६६ श्रावण कृष्णा ३ सोमवार है। इसमें वेणीरोत सवाईसिंघ का जोधपुर की फौजों से लड़ते काम आने का उल्लेख है। इस समय का शासक गजसिंह था। लेख में १७ पंक्तियां राजस्थानी भाषा में हैं। लेख का कुछ अंश इस प्रकार है—

"बीकानेर मध्ये महाराजाधिराज महाराज श्री गजसिंहजी विजय राज्ये काश्यपगोत्र राठोड कांधल वंस वेणीरोत राजा श्री अजबसघजी तत्पुत्र मोहकमसघजी तस्यात्मज सवइसघजी जोधपुर री फौज भागी ताहीं रा काम आया।"

डडूका गाँव का लेख[३१३] १७४८ ई०)

यह लेख बांसवाड़ा के अन्तर्गत गढ़ी के पट्टे के गाँव डडूका का है। यह लक्ष्मीनारायण के मन्दिर के पास खड़ा है जिसमें वि० सं० १८०४ चैत्र वदि ३ का समय दिया गया है। इसमें कुछ भूमि दान का उल्लेख है।

चितवा गाँव का लेख[३१४] (१७४६ ई०)

यह बांसवाड़ा के पट्टे कुंडला के चितवा गाँव का वि० सं० १८०५ माघ सुदि ५ का शिलालेख है। जिसमें राठौड़ नाथजी के किसी शत्रु सेना से लड़कर काम आने का उल्लेख है।

भटियाणीजी की सराय के मन्दिर की सुरह[३१५] (१७५० ई०)

वि० सं० १८०७ आषाढ़ वि० ४ का यह लेख भटियाणीजी की सराय के मन्दिर (उदयपुर) में लगा हुआ है। उक्त लेख में महाराणा जगत्सिंह द्वितीय की राणी भटियाणी के बनवाये हुए द्वारिकानाथ के मन्दिर के लिए भूमिदान का उल्लेख है। इस अनुदान से मन्दिर के राग-भोग तथा साधु-सन्तों के आतिथ्य की व्यवस्था की गई है। इसमें भूमि की किस्म पीवल, माल, मगरा तथा नाप हल आदि का उल्लेख किया गया। इसमें पंचोली हरकिसन साह पुसाल तथा गुलाबराय का भी जिक्र किया गया है जो महाराणा के समय के उच्च अधिकारी थे। इसका मूल इस प्रकार है—

"सिद्ध श्री तावापत्र प्रमाणे सुरे श्री मन्महीमहेन्द्र महाराजाधिराज महाराणाजी श्री जगत्सिंहजी आदेशात् ठाकुरजी श्री द्वारिकानाथजी रो देवरो राणीजी भट्याणीजी करायो जींरर सादु सेवग रहैगा जीरा भाता सारु धरती हल १ एकरी आगे पेमारी सराय मांहे थी देवाणी थी, तीरे वदले भट्याणीजी री सराय मांहे थी

---

३१२. बीकानेर संग्रहालय क्रमांक १०/१६४।

३१३. ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० १३७।

३१४. ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० १३८।

३१५. वीर विनोद, पृ० १५२६;
ओझा, उदयपुर, भा० २, पृ० ६४०

धरती वीगा ३८।। साडा अडतीस मध्ये पीवल वीगा १८ अठारे माल मगरारी वीगा २।। साडाबीस देवाणी पेमारी सराण्री धरती हल १ री रो हासल भट्याणीजी री सराय मेलेसी पेली नापा पत्र सवत् १८०२ रा काती विद ८ सोमेरो साह पुसालरे भंडार सूंप्यो लागत त्रिलगत धर ठाम सुदी उदक आधार करे श्री रामार्पण कीधो···· प्रत दुवे पचोली हरक्सिन लिपत पचोली गुलाबराय कान्होत संवत् १८०७ वर्षे असाड विद ४ शने"

वासवाडे के राजतालाब का लेख[३१६] (१७५५ ई०)

बासवाडे के राज तालाब पर वि० सं० १८१२ भाद्रपद सुदि १३ का एक शिलालेख है जिसमे स्थानीय लोगो द्वारा सार्वजनिक कल्याण कार्य मे हाथ बँटाने का उल्लेख है। इसम उल्लिखित है कि आभ्यन्तर नागर ज्ञाति के पंडया उत्तमेन्द्र ने रुद्रेश्वर का शिवालय और सन्मुख ने बासवाडे के राजतालाब पर एक घाट का निर्माण करवाया।

वासवाडा के राजतालाब का लेख[३१७] (१७५५ ई०)

बासवाडा के राजतालाब के वि० स० १८१२ आश्विन वदि ८ के लेख मे नागर जाति के जानी रंगेश्वर ने ५०१ रुपये व्यय कर राजतालाब पर एक घाट बनाने का उल्लेख है। इससे स्थानीय जनता के व्यक्तियो द्वारा सार्वजनिक कार्यों मे रुचि लेना प्रमाणित होता है। केवल ५०१ रु० मे घाट का निर्माण होना उस समय की आर्थिक स्थिति पर प्रकाश डालता है।

डूंगरपुर के शिव ज्ञानेश्वर महादेव की प्रशस्ति[३१८] (१७५६ ई०)

यह प्रशस्ति डूंगरपुर के गैब सागर तालाब के तट पर शिवज्ञानेश्वर शिवालय मे लगा हुआ है जिसे रावल शिवसिंह ने अपनी माता की स्मृति मे बनवाया था। लेख का समय वि० स० १८१३ माघ सुदि ५ (ई० स० १७५७ ता० २४ जनवरी) है। उपर्युक्त प्रशस्ति से उस समय की डूगरपुर राज्य की सम्पन्नता तथा विद्योन्नति का पता चलता है। महारावल के विद्यानुराग तथा राज्य और नगर की सम्पन्न अवस्था पर भी इस प्रशस्ति से अच्छा प्रकाश पडता है। इस प्रशस्ति मे महारावल के लिए 'महाराजाधिराज', 'रायराया', 'महारावल' तथा 'महिमहेन्द्र' की उपाधियो का प्रयोग मिलता है। प्रशस्ति से स्पष्ट है कि शिवसिंह वीर, बुद्धिमान, राजनीतिज्ञ और उदार था। उसमे प्रजाहित सम्पादन की भावना थी और वह कुशल शासक था।

नवागाँव का लेख[३१९] (१७५६ ई०)

बासवाडा राज्य के नवागांव के वि० स० १८१३ मार्गशीर्ष सुदि ८ के लेख मे

---

३१६ ओझा, बासवाडा राज्य का इतिहास, पृ० १३८।

३१७. ओझा, बासवाडा राज्य का इतिहास, पृ० १३८।

३१८. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० १३०–१३१।

३१९ ओझा, बासवाडा, पृ० १३५।

बांसवाड़ा और लूणावाड़ा के बीच युद्ध होने का उल्लेख है। इस युद्ध में कुंवर उदयराम मारा गया था। यह लेख भी उस समय की आन्तरिक स्थिति तथा पड़ोसी राज्यों से सीमा सम्बन्धी झगड़ों पर प्रकाश डालता है। लेख की पंक्तियां इस प्रकार हैं—

"संवत् १८१३ वरषे मागसर सुद ८ दने कोअर (कुंअर) श्री उदेरामजी काम आव्या सूंथवाला नी फोज लूणावाडा......झगडो.......।

कोनिया गाँव का लेख[320] (१७५९ ई०)

बांसवाड़ा के कोनिया गाँव का वि० सं० १८१५ माघ वदि ६ का यह शिला-लेख डोली वज्रा का युद्ध में काम आना उल्लिखित करता है। युद्ध में राजपूतों के अतिरिक्त अन्य जातियां भी सहयोग देती थीं इसका यह लेख अच्छा प्रमाण है।

कोनिया गाँव का लेख[321] (१७५८ ई०)

बांसवाड़ा के कोनिया गांव का वि. सं. १८१५ पौष सुदि १ का। यह लेख राठौड़ बाघसिंह का युद्ध मे काम आना उल्लिखित करता है।

कोनिया गांव के लेख[322] (१७५९ ई०)

बांसवाड़ा के कोनिया गांव के तालाब पर वि. सं. १८१५ माघ वदि १ के दो लेख हैं जिनके द्वारा कुंवर दुलहसिंह व राठौड़ सामंतसिंह का युद्ध में काम आना प्रमाणित होता है।

सरवाणिया गांव का लेख[323] (१७६३ ई०)

बांसवाड़ा जिला के सरवाणिया गांव के वि. सं. १८२० कार्तिक वदि १ का यह लेख चौहान उदयसिंह के नेतृत्व में लड़े गये युद्ध के अवसर पर पटेल प्रेमा सुत शेखा शत्रु से लड़कर काम आने का उल्लेख करता है।

उभेदगढ़ी का लेख[324] (१७६८ ई०)

यह लेख बांसवाडा जिले के उभेदगढ़ी का है जिसका समय वि. सं. १८२४ ज्येष्ठ सुदि १५ है। इसमें राठौड़ उदयसिंह का रणक्षेत्र में काम आने का उल्लेख है।

बांसवाड़ा में एक सती लेख,[325] (१७७४ ई०)

इस लेख में उपपत्नि के सती होने का उल्लेख है। -इसकी पंक्तियां इस प्रकार हैं—

---

३२०. ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० १३८।

३२१. ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० १३८।

३२२. ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० १३८–१३९।

३२३. ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० १३९।

३२४. ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० १३९।

३२५. बांसवाड़ा माफी दफ्तर से प्रतिलिपि प्राप्त।

"स्वस्ति श्री सवत १८३१ वर्षे कार्तिक वदि ८ वार शनौ चौमाणजी श्री उदयसिंघजी देवलोक पामा पाशवान बाई जीवी सती हुआ''

गोनेर के जगदीश के मन्दिर का लेख[326] (१७७६ ई०)

जयपुर से टोक के राष्ट्रीय मार्ग के १२ मील के पत्थर से ५ मील दूर पूर्व मे स्थित गोनेर गाँव (जयपुर) के समीप एक छोटा सा तीर्थ स्थान है । यहा एक जगदीश का प्राचीन मन्दिर है । इस मन्दिर के सामने वाले चौक की दीवार पर वि. स. १८३३ भाद्रपद वदि १४ मंगलवार का एक लेख है । लेखाकार १०×१८ वर्ग इंच है जिसमे कुल ६ पंक्तिया हैं । इसमे वरिणत है कि मन्दिर के निमित्त दरबार ने मापा, जंढा, सेहरण और बलाही जो स्थानीय कर थे माफ कर दिये । यह माफी का हुक्म श्री जीवनराम एवं तपदास के द्वारा दिया गया । इससे यह भी बतलाया गया कि इसके उल्लघन करने वाले हिन्दू को गऊ की और मुसलमानो को सुअर की सौगध है । इस लेख से सिद्ध है कि उस समय राज्याज्ञाओ का सम्बोधन सैल, पटवारी, महाजन, पंच, चोकायत सेहरणा आदि को किया जाता था जबकि स्थानीय करो को बंद करने या लगाने का प्रश्न अथवा अन्य ऐसी कोई स्थानीय परिस्थिति पैदा होती थी । इसका गद्याश इस प्रकार है—

"श्री दीवान वचनात मो० कसबा गोनोर का सैल पटवारी पंच माहाजन श्री जी चोकायत सैहणा वलाही कीई छै मापा ऊ ढाभा दाम लागै छै सो साही दरबार सू माफ करी हयंदु ले तो गउ की सोगन मुसलमान लै तो सुअर की सोगन । माप हुई मारफत जीवनराम तपदास स्योजी राम कीया नई साल की मीति भादवा बुदी १४ मगलवार संवत १८३३ का"

रोणिया गाव का लेख[327] (१७८४ ई०)

बासवाडा जिले के रोणिया गाव के वि० स० १८४० फाल्गुन वदि ७ के इस लेख मे राठोड केसरी का सभाजी की फौज से लड़ते हुए काम आने का उल्लेख है ।

बासवाडा के पृथ्वीविलास बाग के निकट का लेख[328] (१७८६ ई०)

बासवाडा के पृथ्वीविलास बाग मे सतियो के सामने के मन्दिर का वि. स १८४५ माघ सुदि ६ का शिलालेख है जिसमे उल्लिखित है कि राठौड कनीराम की स्त्री ने उपर्युक्त मन्दिर का निर्माण कराया । इस लेख से उस समय की धार्मिक प्रवृत्ति का बोध होता है ।

---

३२६. वरदा, वर्ष १४ अंक ४, अक्टूबर-दिसम्बर, १९७१, पृ० ७, १६ ।
३२७. ओझा, बासवाडा राज्य का इतिहास, पृ० १४० ।
३२८ ओझा, बांसवाडा राज्य का इतिहास, पृ० १४०

श्री एकलिंग जी का एक लेख [३२९] (१७९६ ई०)

यहां का एक और वि० सं० १८५३ का महत्त्वपूर्ण लेख है। इस लेख में उल्लिखित है कि छोटे राठौड़जी राणीजी के पुत्र उत्पन्न हुआ जिस समय 'बोलमा' के अनुसार सभी सरदारों के सहित महाराणा भीमसिंह ने एकलिंग जी तक पैदल यात्रा की। वहां उन्होंने वैशाख शुक्ला १५ को इष्टदेव का पूजन किया और चारण, भाट और छन्यानी ब्राह्मणों के कई कर माफ किये। उस समय कई शक्तावत तथा चूंडावत सरदार महाराणा के साथ थे जिनकी नामावली भी इस लेख में दी गई है। प्रस्तुत लेख में कई करों का भी उल्लेख किया गया है जो उस समय लिए जाते थे। वे ये थे–देश विराड, खरच विराड, डंड, दुमालो, फोज विराड, टिलोर, नूंतो, चोथ दस्तूर, रखवाली, पालो, मपत्री, घरगणती. धूंध विराड, परगना चोतरा री लागत आदि।

पारोदा गांव का स्मारक लेख [३३०] (१७९७ ई०)

वांसवाड़ा राज्य के पारोदा गांव के इस स्मारक लेख में, जो वि० सं० १८५४ वैशाख सुदि ४ का है, मेवाड़ राज्य की सेना और वांसवाड़ा राज्य की सेना के बीच युद्ध हुआ। इस युद्ध में हटीसिंह काम आया। संभवत: महाराणा भीमसिंह ने ईडर से लौटते समय वांसवाड़ा को घेरा और वहां से दंड वसूल किया। यहां से वह प्रतापगढ़ की ओर गया।

"संवत् १८५४ वर्षे वइसाख सुदी ४ दनो हटीसिंघ फोज दीवाणजी री आवी तारे काम आवा"

वांसवाड़ा के सिद्धनाथ के चबूतरे के लेख [३३१] (१७९९ ई०)

ये दो लेख वांसवाड़ा के सिद्धनाथ महादेव के समीवर्ती चबूतरे के हैं जिनका समय वि० सं० १८५५ चैत्र वदि १२ बुधवार है। इन लेखों का महत्त्व इस दृष्टि से अधिक है कि इसमें कसारा रणछोड़, ओमा, दोला आदि जन साधारण के व्यक्तियों का महारावल विजयसिंह की सैन्य में काम आने का उल्लेख है।

सागडोदा की वावली का लेख [३३२] (१८०१ ई०)

वांसवाड़ा जिले के सागडोदा की वावली का वि० सं० १८५८ आषाढ़ सुदि २ [illegible] लेख जनसाधारण द्वारा [illegible]जनिक कार्यों में रुचि लेने के सम्बन्ध में है। इस[illegible] कि कोठारी नाथ[illegible]ी, शोभाचन्द्र और उम्मेदवाई ने उपर्युक्त वाव[illegible] कराया।

श्री एकलिंगजी का एक सुरहलेख [333] (१८०३ ई०)

वि० स० १८६० का एक सुरह लेख बडे महत्त्व का है। इसमे जसवन्तराव होल्कर के मेवाड आक्रमण का उल्लेख है जो वि० सं० १८६० मे हुआ था। इस लेख मे उल्लिखित है कि जब जसवन्तराव होल्कर का आक्रमण हुआ तब उदयपुर की प्रजा को अत्यन्त कठिनाई का सामना करना पडा। उन्हे डड के रूप मे धन भी देना पडा। इसलिए नगरसेठ साधुदास बापना ने इस सुरह को लगाकर यह आदेश दिया कि यदि भविष्य मे मराठो का घेरा हो तो ढोलीराव प्रजा से शादी के अवसर पर ली जाने वाली लाग बाग के लिए अपन यजमानो को तग न करें। जितना भी वे प्रसन्नता से देदें उसे स्वीकार करलें। इसमे यह भी अकित किया गया कि 'घर गणति' बराड आदि सरकार द्वारा नही लिये जायेंगे क्योकि मराठा आक्रमण से चारों ओर बर्बादी के चिह्न दिखाई दे रहे थे।

श्रीनाथजी की हवेली उदयपुर का लेख[334]

यह लेख सुरह के रूप मे श्रीनाथजी की हवेली उदयपुर के बाहर लगा हुआ है। इस लेख मे भी यशवन्तराव होल्कर के मेवाड आक्रमण का वर्णन है। इसमे यह भी उल्लिखित है कि श्रीनाथजी की मूर्ति उदयपुर पधराई गई थी और मूर्ति लाने के लिए श्री एकलिंगदास बोलिया को नियुक्त किया गया था। अतएव प्रतिमा को माह वि० १० को उदयपुर लाया गया।

फतेपुर की बावली का लेख[33] (१८०४ई०)

बाँसवाडा जिले के फतेपुरे की बावली का वि० स० १८६० वैशाख वदि ६ का,यह लेख अकित करता है कि बड-नगरा जाति के नागर ब्राह्मण पचोली प्रभाकरण ने उपर्युक्त बावली को बनवाया।

बरोडा गाव का स्मारक लेख[336] (१८०५ ई०)

बासवाडा राज्य के बरोडा गांव के वि० स० १८६२ कार्तिक सुदि १२ के लेख से ज्ञात होता है कि उक्त सवत् मे भी वहाँ मेवाड की सेना आई थी और उसने बासवाडा की फौज से युद्ध किया था। इस युद्ध मे आडा भोपजी काम आया। इसके स्मारक की पक्तियाँ इस प्रकार हैं

'संवत् १८६२ ना कातक सुदि १२ आडा भोपजी
काम आवा राणाजी नी फोज आवी तारे काम आवा ""

---

३३३ एक प्रतिलिपि के आधार पर।
३३४ एक प्रतिलिपि के आधार पर।
३३५ ओझा, बासवाडा राज्य का इतिहास, पृ० १४८।
३३६. ओझा, बासवाडा राज्य का इतिहास, पृ० १४२।

बांसवाड़ की विजयवाव की प्रशस्ति[३३७] (१८०६ ई०)

बांसवाड़ा की विजयवाव की वि० सं० १८६३ आषाढ़ सुदि ३ गुरुवार की प्रशस्ति में उल्लेख है कि महारावल विजयसिंह ने उपर्युक्त बावली का निर्माण करवाया।

डूंगरपुर के रणछोड़ राय के मन्दिर की आघाट,[३३८] (१८०८ ई०)

यह सुरह बड़े महत्त्व की है जिसमें डूंगरपुर के महारावल जसवन्तसिंहजी ने नगर में यह आदेश कर दिया था कि जब शत्रुओं का आक्रमण हो तब कोई व्यक्ति गौओं को न सतावे और स्त्रियों से दुर्व्यवहार न करे। इस तरह का आदेश नागरिकों के नैतिक स्तर को बनाये रखने में बड़ा सहायक रह सकता है और इससे महारावल की जनकल्याण के प्रति उदार भावना प्रकट होती है।

इसका मूल भाग वागडी भाषा में है—

"रायराये महाराजाधिराज महारावल श्री जसवन्तसंघ जी लखावीतांग जत श्री दरबार मे आ करी ने श्री डूंगरपुर तथा वरती मध्ये केने रोकणयाओ तो बईराने रोकवा नहे तथा फोजफांटो सडे तो गाओनो वारणवार बी नही तथा आगदी मरडी ने भारम रस लेवो नहीं।...... ......होकम हजूरनो संवत् १८६५ नाफगण सु० ५ प्रवानगी साहा जवेर चंदनी ब्रवाडी रखवजी आघाट लोये तेने गदेडे गार छे"

डडूका गाँव का लेख[३३९] (१८०८ ई०)

बांसवाड़ा जिले के डडूका गाँव (पट्टगड़ी) का वि० सं० १८६८ वैशाख सुदि ७ के स्मारक लेख में परमार जयसिंह की बसी गाँव लूटते समय काम आने का उल्लेख है।

गरणियां गाँव का एक स्मारक लेख[३४०] (१८१२ई०)

बांसवाड़ा जिले का गरणियां गाँव का वि० सं० १८६८ वैशाख सुदि ७ का स्मारक लेख सीसोदिया देवीसिंह के युद्ध में काम आने का उल्लेख है।

तलवाडा गाँव का स्मारक लेख[३४१] (१८१४ ई०)

बांसवाड़ा राज्य के तलवाडा गाँव के वि० सं० १८७० का फाल्गुन वदि ५ के लेख से स्पष्ट है कि पेडतिया शेरसिंह सिंधी शाहजादे की फौज से लड़कर काम आया।

इसकी कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

---

३३७. ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० १४८।

३३८. डूंगरपुर राजपत्र, सितम्बर ५, १९४७।

३३९. ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० १४८।

३४०. ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० १४८।

३४१. ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० १४५।

"संवत् १८७० दीनो राज श्री मेडतीग्रा सेरसिंघजी काम आव्या फागणवदी ६ दीन ' फोज शाहेजादा शेदीया ने फोज मे खोडने वेले काम श्राव्या।

तलवाडा गाव का स्मारक लेख[342] (१८१५ई०)

बासवाडा राज्य के तलवाडा गाँव के वि० स० १८७२ कातिक सुदि १४ के एक स्मारक लेख से स्पष्ट है कि जब होल्कर के सेनापति रामदीन ने बासवाडा राज्य म लूटमार करना आरम्भ किया, इस उपद्रव के अवसर पर खडिया शक्ता का पुत्र हमीरसिंह अमरेई गाँव मे काम आया। इसकी मुटभेड रामदीन से अमरेद गाँव में हुई।

इसकी पक्तियाँ इस प्रकार हैं—

'सवत् १८७२ ना कारतक सुदी १४ दिने खडिमा सकताजी सुत हमीरसिंघजी काम श्राव्या तेनो चीरो राव्यो छे गाम अमरइ उपर काम आव्या रामदीन नी फोज आवी तारे'

बूडवा गाव का लेख[343] (१८१७ई०)

बासवाडा जिले के गारीगाँवा पट्टे के बूडवा गाँव के वि० स० १८७४ वैशाख वदि १० शनिवार के लेख से प्रमाणित है कि करीमखाँ पिंडारी के आक्रमण के दौरान चौहान उदयसिंह काम आया। इस लेख तथा सूरपुर गाँव के लेख से पिंडारियो का बासवाडा राज्य म उपद्रव होने का पता चलता है। इससे यह भी प्रमाणित होता है कि जागीरदार ये आश्रित राजपूत आक्रमणो का मुकाबला करते थे और अवसर आने पर अपने प्राण को न्योछावर कर देत थे ।

सूरपुर गाव का लेख[344] (१८१७ई०)

यह लेख सूरपुर गाँव (बासवाडा) का वि० स० १८७३ वैशाख सुदि १२ का है जिससे प्रमाणित होता है कि नवाब करीमखा पिंडारी बासवाडा राज्य मे आ पहुचा और वहाँ लूटमार प्रारम्भ की। उसकी सेना ने युद्ध करते हुए उस अवसर पर तवर नाहरसिंह मारा गया।

'सवत् १८७३ वैशाख सुद १२ दने तवर नाहरसिंघ जी काम आव्या नवाब करमखाँ नी फोज आवी "

सूरपुर गाव का स्मारक लेख[345] (१८२० ई०)

सूरपुर गाँव (बासवाड़ा) का वि० स० १८७७ कार्तिक वदि १४ के स्मारक लख से तवर बहादुरसिंह की मदथला नामक पहाड पर मृत्यु होने की सूचना

---

३४२ ओझा, बासवाडा राज्य का इतिहास, पृ० १४६।
३४३ ओझा, बासवाडा राज्य का इतिहास, पृ० १५५।
३४४ ओझा, बासवाडा राज्य का इतिहास, पृ० १४६–१५०।
३४५ ओझा, बासवाडा राज्य का इतिहास, पृ० १६६।

निसाण समेत पाला १०० जैसलमेर रा रावजीरा असवार २०० टूक रै नवाब रा असवार ४०० फुटकर असवार २०० पह और अङ्गरेजी जापतो चपरासी तिलगा सोनेरी रूपेरी घोरेवाला जायगा २ परवाना बोलावा एवं पालख्या ७ हाथी ४ म्याना ५१ रथ १०० गाडियाँ ४०० ऊट १५०० इतातो सघ्यारा घर संघ री गाड्या ऊट प्रमुख न्यारा। सर्व खरचरा तेरे लाख रुपया लागा। उदयपुर कोटा धर्मशाला कराई जैसलमेर में अमरसागर में बाग करायो लुद्रवेजी मे धर्मशाला कराई श्री पूज्यजीरा चौमासा जायगा २ कराया पुस्तका रा भंडार कराया कोठो मे दोय लाख रुपया देने बंदीवानों छुडायो बीज पाचम आठम इग्यारस चउदसरा जजमण किया। रचना रची केसरीचद।"

जैसलमेर लेख[३४९] (१८४० ई०)

यह लेख जिनमहेन्द्रसूरि के जैसलमेर जाने से और समझाने से दो वास के सघ मे दो दल हो गए थे वे पुन मिल गये। इसमें साधुश्री को बड़ा यश मिला। वे यहा एक मास तक रहे। लेख उस समय की धार्मिक एव सामाजिक अवस्था पर प्रकाश डालता है जिसका मूल पाठ इस प्रकार है—

'सवत् १८९७ वर्षे चे० व० ८ दिने जिनमहेन्द्रसूरि पधारया। तठे श्री सघरै माहोमाही दोनो ही वासरे घडा था सु एकमेक किया बडो जस हुवो मास १ रह्या"

बेणेश्वर का लेख[३५०] (१८६६ ई०)

डूगरपुर से लगभग ५० मील दूर बेणेश्वर का एक शिव-मन्दिर है, जो महारावल आसकरण के समय का माना जाता है। इस मन्दिर के सम्बन्ध मे डूगरपुर और बासवाडा राज्यो के बीच झगडा चला था। अन्त मे इस मन्दिर को डूगरपुर राज्य की सीमा मे माना गया। यहा इस आशय का वि० स० १९२२ माघ सुदि (१५ ई० स० १८६६ ता. ३० जनवरी) का एक शिला लेख लगा हुआ है। इस पर मेजर एम. एम मैकेंजी पोलिटिकल सुपरिन्टेन्डेन्ट हिली ट्रेक्ट्स के अङ्ग्रेजी म हस्ताक्षर हैं। सीमा निर्धारण के सम्बन्ध मे इस लेख का ऐतिहासिक महत्त्व है।

नैनवा (बूदी) के गढ के फाटक का लेख[३५१] (१८७४ ई)

नैनवा मे गढ के द्वार पर वि स. १९३१ वैशाख शुक्ल तृतीया का एक लेख है। इसका आशय यह है कि गढ के भीतर अथवा पास मे कोई वृक्ष या मकान अथवा चबूतरी नही बनायेगा क्योकि तोपो को इधर उधर ले जाने मे असुविधा हानी है। तोपों के साथ दोनो ओर दो आदमियो के चलने की सुविधा भी चाही गई है। इसकी सुविधा के लिए आसपास की चबूतरियों को गिराने का भी आदेश इसम सम्मिलित

३४९ नाहर, जैन लेख, भा. ३ न २५७६, पृ १८६।

३५०. ओझा, डूगरपुर राज्य का इतिहास, पृ १६।

३५१. वरदा, वर्ष १४, अक ४, अक्टूबर दिसम्बर १९७१, पृ. १३, ३०।

है जिससे ४॥ गज का रास्ता बन सके। इस लेख से उस समय की नगर योजना का आभास होता है। लेख का अंश इस प्रकार है—

"रंगनाथ जयति।

ई किला का कोट के भीतर जतरी छेटी में तोप फिर जावे और तोप का दोनों पावां के साथ दोय मनुष्य सुख सू चाल सकै जतरी छेटी कै भीतर हल मकान चोतरा वगरेन रहे ही तो गिराया जावे है छे। टीको प्रमाण ४॥ साडा चार गज संगन राखी छै और मरेलां के मरैला कीना लावे और परकोट के भीतर वृक्ष वगर रहे ही नहीं मिति वैशाख सुदन ३ तृतीय शनिवार संवत् १९३१ सिरकारी"

डूंगरपुर की उदयवाव का लेख[352] (१८८० ई०)

यह लेख डूंगरपुर की उदयवाव नामक वापी के सम्बन्ध का है, जिसका समय वि. सं. १९३६ माघ सुदि ३ (ई० स० १८८० ता १३ फरवरी) शुक्रवार है। इस लेख में महारावल उदयसिंह द्वारा वापी बनाने और उसकी दानशीलता, विद्याप्रेम आदि गुणों का वर्णन है।

डूंगरपुर के राधेविहारी के मन्दिर का लेख[353] (१८८० ई०)

यह लेख डूंगरपुर के राधेविहारी के मन्दिर का वि. सं. १९३६ माघ सुदि १० (ई० स० १८८० ता २० फरवरी) का है। इसमें महारावल उदयसिंह द्वारा उक्त मन्दिर के बनाने का उल्लेख है। इस प्रशस्ति में महारावल के स्वर्णतुला, यात्रा, धार्मिकता, सिंहों की शिकार, न्यायपरायणता आदि का भी वर्णन दिया गया है।

(ब) फारसी भाषा के लेख

फारसी भाषा के लेख राजस्थान में प्रचुरमात्रा में मिलते हैं जिन्हें मस्जिदों, दरगाहों, कब्रों, राजप्रासादों, सरायों, बावलियों, तालाबों के घाटों एवं चबूतरों पर पत्थर में उत्कीर्ण कर लगवाया गया था। इनमे कुछ लेख ऐसे भी हैं जो फारसी एवं स्थानीय भाषा में भी उपलब्ध हैं। इन लेखों का ऐतिहासिक दृष्टि से बड़ा महत्व है। सर्वप्रथम इनके द्वारा हम तुर्की एवं मुगली विजयों एवं राजनीतिक प्रभाव क्षेत्रों का समुचित अध्ययन कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त इनमे दी गई सूचनाएं राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक विषयों पर प्रभूत प्रकाश डालती हैं। ये लेख सांभर, नागौर, जालोर, साचोर, जयपुर, अलवर, तिजारा, अजमेर, मेड़ता, टोंक, कोटा आदि क्षेत्रों में अधिक मिलते हैं क्योंकि इन स्थानों पर मुस्लिम सत्ता का प्रभाव

---

३५२. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० १८१।

३५३. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० १८१।

या शासन रहा। यहा के हाकिमो ने समय समय पर मस्जिदे, दर्गाह आदि यहा बनवाये और कभी-कभी इनके निर्माण मे प्राचीन मन्दिरो की सामग्री का भी उपयोग किया। प्रसगवश इन लेखो मे शासन की इकाईयो—इक्ता, परगने, शिक, कस्बे आदि की सूचना प्राप्त होती है। इसी प्रकार मुक्ति, आमिल, हवालदार, हाकिम, नाजिम, नायब हाकिम, रसालदार आदि पदाधिकारियो के नाम भी मिलते हैं जो शासन व्यवस्था की जानकारी के लिए उपयोगी हैं। कही-कही प्रसगवश मुस्लिम अधिकारियो की नामावली के साथ उनकी प्रारभिक जाति का भी उल्लेख आता है जिससे प्रमाणित होता है कि वे पहले चौहान, गहलौत आदि वर्ग के थे। सभवत. परिस्थितिवश उन्हे धर्म परिवर्तन करना पडा। कई लेखो से शिल्पियो, लेखको, विद्वानो, सन्तो आदि के नाम का भी हमें बोध होता है। कही कही ऐसे लेख भी यहा पाये जाते है जिससे स्थानीय शासको एव सुलतानो तथा मुगल सम्राटो की उदार नीति पर प्रकाश पडता है। कई नए एव पुराने करो की जानकारी भी हमे इन लेखो से प्राप्त होती है। अब हम इन कतिपय लेखो के साराश को यहा उद्धृत करते हैं जिनके अध्ययन मे हमे रिसर्चर अक १० व ११ से बडी सहायता मिली है।

अजमेर का लेख[1] (१२०० ई०)

यह लेख ढाई दिन के झोपडे के दूसरे गुबज की दीवार के पीछे है। इसमे अबूबक्र नामी व्यक्ति का जिक्र है जिसके निर्देशन मे मस्जिद का काम कराया गया था। लेख से स्पष्ट है कि अजमेर विजय के साथ इमारतो को परिवर्तन का काम आरभ कर दिया गया था। इसी इमारत मे इल्तुतमिश के समय के अल अभीत, अली अहमद आदि व्यक्तियो के नाम अलग अलग समय के भी हैं जिन्होने इसके बनाने या जीर्णोद्धार के काम का निर्देशन किया था।

बडी खाटू का लेख[2] (जि० नागौर) (१२०३ ई०)

इसके द्वारा यहा एक इमारत बनने का बोध होता है। यह लेख ठाकुर धोकलसिंह की हवेली मे एक मस्जिद के खण्डहर के केन्द्रीय मिहराब पर है। इससे १३वी सदी के प्रारभ मे इस भाग पर तुर्की प्रभाव पर प्रकाश पडता है। यहा मगरिवशाह की दर्गाह (१२३२ ई०), (१२६८ ई०) कसाई मोहल्ला की मस्जिद, कनाती मस्जिद (१३०१) तथा संदैनी की मस्जिद (१३०२–०३ ई०) आदि से भी तुर्की प्रभाव का स्पष्टीकरण होता है।

गोकुलचन्द्र जी के मन्दिर का लेख[3] (१२७१ ई०)

यह लेख प्रारभ मे उक्त मदिर मे लगा था जहा से हटाकर इसे सरकारी सग्रहालय मे सुरक्षित कर दिया गया है। इस लेख मे एक तरफ सस्कृत म लेख है

---

१ एपिग्राफिया इण्डो मोस्लेमिका, १९११–१२, पृ० १५, ३०, ३३ आदि।

२. रिसर्चर १९७०–७१, खण्ड १०–११, न० ८६–९०, पृ० २८–२९।

३ एपि० इण्डो मोस्लेमिका, १९३७–३८, पृ० ५–६।

और दूसरी ओर फारसी में। जब मंदिर तोड़े जाते थे तो उसके कुछ भागों का प्रयोग मस्जिदें आदि बनाने में होता था। इसके फारसी लेख में दर्ज है कि यहां एक खण्डित बावली थी जिसको किसी मुक्ति ने ठीक नहीं करवाया। परन्तु खानेआजम की हाकमी के समय नसरत खां मुक्ति ने इसे ठीक करवाया। इस कार्य को इब्राहीम अबूबक्र के निर्देशन में करवाया गया।

बयाना की काजी मस्जिद का लेख[४] (१३०५ ई०)

इस लेख में मस्जिद के पुनः बनाने और दुरुस्त करने का श्रेय अब्दुल मलिक को दिया गया है जिसका पिता अबूबक्र अलबुखारी था, जो इस जिले का हाकिम था।

ईदगाह (जालौर) का लेख[५] (१३१८ ई०)

इस लेख से जो उत्तरी मिहराब पर अंकित है यह जाहिर होता है कि ईदगाह को गुर्ग के वंशज होशंग ने बनवाया था। इसको नसरत के निरीक्षण में बनवाया गया था जो रुस्तम का पुत्र था। इसको अस–शामसी ने लिखा था।

लेख जालियाबास की मस्जिद का[६] (जि० नागौर), (१३२० ई०)

केन्द्रीय महराब के लेख में अंकित है कि यहां की मस्जिद को ऊमर के पुत्र मुजफ्फर ने बनवाई जबकि ताजउद्दीन दौलत दारुल-खैर (अजमेर) के अन्तर्गत मुक्ति था। इससे तुर्की प्रभाव क्षेत्र का अच्छा अनुमान होता है।

चित्तौड़ का सुल्तान गयासुद्दीन का लेख[७] (१३२१–१३२५ ई०)

यह फारसी लेख चित्तौड़ में है जिसका समय १३२१ से १३२५ ई० के लगभग किसी वर्ष का होना चाहिए। इसमें तीन पंक्तियां हैं और इनमें तीन शेर खुदे थे। लेख का दाहिनी ओर का चौथा हिस्सा टूट गया जिससे प्रत्येक शेर का प्रथम चरण जाता रहा है। जो भी अंश बचा है उसका आशय यह है—

"तुगलकशाह वा[illegible] सुलैमान के समान मुल्क का स्वामी ताज और तख्त का मालिक, दुनिया [illegible] करने वाले सूर्य और ईश्वर [illegible] छाया के समान, बादशाहों में सबसे ब[illegible] का एक ही है...... [illegible]। फरमान उसकी राय से सुशोभि[illegible] [illegible] दाताओं का [illegible] की रक्षा [illegible]ने वाला है और उस[illegible] की नींव दृढ़ है" [illegible] उल् [illegible]। परमेश्वर इस [illegible] करे और इस ए[illegible] बदले उसे हजार गुना देवे।'

इस लेख को डा० [illegible] [illegible]कर विघटो[illegible]

[illegible] ...० २...

...रि० इण्डि... १

...इण्डि०

किया था। यहा से अब यह राजकीय सग्रहालय की नई इमारत, उदयपुर मे सुरक्षित किया गया है।

धाईवी पीर की दर्गाह का लेख[8] (१३२५ ई०)

चित्तौड मे इसमे सुल्तान सराय के बनाये जाने का उल्लेख है जिसे मलिक असदुद्दीन ने बनवाया था, जो वहाँ का गवर्नर था। इसमे चित्तौड को खिज्राबाद अंकित किया गया है। इस लेख से मुहम्मद बिन तुगलक के प्रभाव क्षेत्र का अनुमान होता है।

हिन्डौन की एक कब्र एव दर्गाह का लेख[9] (हिण्डौन जि० सवाई माधोपुर), (१३२६)

यह लेख २३ दिसम्बर, १३२६ ई० का मुहम्मद बिन तुगलक शाह के समय का है जिसमे अंकित है कि मन्दू अफगान की पुत्री समरू ने अपने पति गाजी तमन मुहम्मद अफगान बागी की यादगार मे कब्र एव दर्गाह का निर्माण कराया। इस लेख से तुगलको के राजस्थान मे विकास का अनुमान लगाया जा सकता है।

महमूद कत्ताल शहीद की दर्गाह का लेख[10] (नागौर), (१३३३ ई०)

यह दर्गाह एक पहाडी पर है जो मुहम्मद तुगलक शाह के समय की है। इसमे अन्य अधिकारियो के नाम हैं, जैसे मलिकउल-उमरा मुक्ति था, अजमेर का सैफूदौलत अबूरबेग ए-मेसेरा था एवं सीराज मुर्हरिर था।

नागौर किला का लेख[11] तुगलक कालीन

इसमे समय का अक्ष जाता रहा है, परन्तु इससे बोध होता है कि यहा एक फीरोज सागर का निर्माण मलिक-उल-उमरा-फीरोज के गवर्नरी काल मे हुआ था। मलिक पाएगा-ए-खामा-ए कादिम का प्रमुख अधिकारी था और मुक्ति का पुत्र था। इसमे खलफुल-मुल्क ताज-उद-दौलत के नाम भी अंकित है।

साभर आमेर की बावली का लेख[12] (१३६३ ई०)

यह लेख पुरातत्व विभाग, आमेर के सग्रहालय मे सुरक्षित है जो प्रारम्भ मे साभर के बाहर एक बावली पर लगा हुआ था। इसमे दो भाषाओ का प्रयोग किया गया है—एक स्थानीय और दूसरी फारसी। इसमे वर्णित है कि कमालुद्दीन अहमद बुर्रम की गवर्नरी मे वामदेव, पुत्र नाथु, पुत्र गगादेव के प्रयत्न से उक्त बावडी का

---

८ एपिग्राफिया इण्डिका अरेबिक और पर्शियन (सप्लिमेन्ट), १६५५-५६ पृष्ठ ७०।

६ एन्यु० रि० इण्डि० एपि०, १६५५-५६, न० डी. १६३

१० एन्यु० रि० इण्डि० एन्टि०, १६६२, न० डी १६८

११. एन्यु० रि० इण्डि० एन्टि०, १६६२-६३, नं० डी, १६४

१२० ए० इ० १६५५-५६, पृ० ५७-५८।

निर्माण करवाया गया। इस बावड़ी की व्यवस्था के लिए सांभर में पैदा होने वाले कुछ नमक का अनुदान अंकित है। यह लेख फीरोजशाह के समय का है जिससे उस समय तुगलक अधिकार-क्षेत्र का पता चलता है। इसी प्रकार निर्माता के लिए मुतीउल-इस्लाम' का प्रयोग करना शासन व्यवस्था की स्थिति पर प्रकाश डालता है। इसमें दो भाषाओं का प्रयोग करना भी तुगलकों की विस्तार नीति व शासन नीति का द्योतक है :

लाडनू के उमराव शाह घासी की दर्गाह का लेख[13] (१३७१ ई०)

इसमें वर्णित है कि नष्टप्राय जामी मस्जिद को पुनः निर्मित किया गया जबकि मलिक मुलुकी की हाकमी तथा मलिकू शाह की नायब-हाकमी तथा मुहम्मद की सिपहसालारी थी।

कुतबुद्दीन नाजिम की कब्र का लेख[14] (नागौर), (१३८९ ई०)

यह लेख मलिक कुतबुद्दीन नाजिम की कब्र का है जो नागौर और जालौर शिक का नायब था। उसके लिए इसमें उल्लिखित है कि वह मध्याह्न की नमाज़ के बाद मुस्लिम फौज में लड़ते हुए शहीदी को प्राप्त हुआ। इसका समय १९ जनवरी, १३८९ का है।

विजयमनदुर्ग का लेख[15] (१४०० ई०)

ये लेख उक्त दुर्ग की फाटक चोर दरवाजे पर लगा हुआ है जो तीन प्रस्तर खण्ड पर उत्कीर्ण है। इसमें तैमूर के आक्रमण से होने वाली अव्यवस्था का वर्णन है जिसमें लोग घरबारों को छोड़ इस दुर्ग में शरण के लिए आये। इसके अनन्तर इकबालखाँ ने पुनः शान्ति स्थापित की और मस्जिद आदि का पुनः निर्माण करवाया। ये लेख तुगलकवंशीय महमूदशाह के काल का है।

तलेटी मस्जिद बयाना का लेख[16] (१४२० ई०)

इस मस्जिद का निर्माण मलिक मौज्जम द्वारा करवाया गया था। उसके निर्माण में व्यय निजी धन से दिया गया था। ये औढखाँ नामी स्थानीय शासक के काल का था जो बयाना के औढी वंश का था।

गौरीशंकर ताल नरायना का लेख[17] (जि. जयपुर), (१४३७ ई०)

यह लेख प्रमुख तालाब के घाट की दीवार का है जिसका समय ३० जून १४३७ ई० है। इसमें वर्णित है कि बाजिहुलमुल्य के पुत्र शम्सखां और उसके पुत्र

१३. एन्यु० रि० इण्डि० एपिग्रा०, १९६८-६९, नं० डी।
१४. एन्यु० रि० इण्डि० एन्टि०, १९६९-७०, नं० डी १९७।
१५. एन्यु० रि० इण्डि० एन्टि०, १९६३-६४, नं० डी ३०९।
१६. आ० सर्वे० आफ इण्डि० रिपोर्ट, खण्ड २०, पृ० ८३।
१७. एपि० इण्डो० मोस्ले०, १९२३-२४, पृ० १५।

मुजहिदखा ने डीडवाना, साभर और नरायना को विजित किया और वहाँ किलो तथा मस्जिदो का निर्माण करवाया। उसने शाही युद्धस्थल के स्थान पर प्रतिष्ठित व्यक्तियो की अभ्यर्थना पर एक तालाब बनवाया। यह लेख इस क्षेत्र की विजय और तदुपरान्त वहाँ की शासकीय व्यवस्था प्रणाली पर प्रकाश डालता है। इस तालाव का नाम मुस्तफासर रखा गया।

बहरोर का लेख[18] (जि० अलवर) (१४३६ ई०)

इसमे वर्णित है कि यहाँ एक बावली, अबुल लेयनस द्वारा जो मुग्थि अल-लाहोरी का पुत्र था, बनवाई गई थी। इस कार्य को मुबारकखा के समय म सम्पादित करवाया गया था। अल-लाहोरी हजरत मखदूम शेख फदुल्लाखा बुखारी का सेवक था। इस लेख से १५वी शताब्दी म (१४३६-४२ ई० नवम्बर, दिसम्बर मे) तुर्की सत्ता का प्रभाव इस क्षेत्र म प्रकट होता है।

त्रिजयमन्दिर गढ की मीनार का लख[19](१४५६-५७ ई०)

यह लेख प्रारम्भ मे द्वार पर लगा हुआ था जो मीनार के पास पडा हुआ प्राप्त हुआ। इसमे वर्णित है कि मुहम्मदखाँ के पुत्र मसनद ए अली आजम हुमायू दाऊदखा द्वारा उक्त मीनार का निर्माण कराया गया था।

किला लाडनू का लेख[20](१४८२ ई०)

इसमे किले तथा कस्बे की फाटक के निर्माण का वर्णन है और इसम फौज दार तथा हाकिम के नाम भी अकित हैं।

खानजादो की मस्जिद का लेख[21] (नागौर किला) (१४८२ ई०)

यह लेख मजस्दि के केन्द्रीय मिहराब पर है। इसमे स्थानीय मुक्ति मलिक उल उमरा तथा ताजउद्दीन आदि के नाम अकित हैं और फीरोजखा का पूरा वशक्रम दिया है।

नौगाँवा अलवर का लेख[22](१४८३ ई०)

यह लेख अलवर सग्रहालय मे सुरक्षित है जिसको नौगाँवा के एक मेयो के घर से प्राप्त किया गया। यह लेख खण्डित है। इसमे वर्णित है कि नौगाँवा के कस्बे का किला एव द्वार का—जो जर्जरित अवस्था मे थे—पुनर्निर्माण मसनद ए अली अलावल खा के अधिकार के समय एक जलाल के द्वारा, जो जकारिया का पुत्र था, करवाया गया।

---

१८ एन्यु रि इण्डि एपिग्राफी, १९६५-६६ न० डी, ३०९।
१९ एन्यु रि इण्डि एपि १९५५-५६, डी, १२२।
२० एन्यु रि इण्डि एपिग्रा १९६९-७०, न० डी, १६०।
२१ एन्यु रि इण्डि एपि० १९६२-६३, न० डी, १९५।
२२ ए इ १९५५-५६ पृ० ५३।

जामी मस्जिद का लेख सांचोर[२३] (१५०६ ई०)

इस लेख में हबलुलमुल्क के पुत्र बुद्ध को उक्त मस्जिद बनाने के आदेश की सूचना है। यह व्यक्ति जालोर के शिक का तथा महमूदाबाद (सांचोर) का मुक्ति था। इस लेख का समय २४ मई, १५०६ है, जबकि मुहम्मदशाह प्रथम यहां का शासक था।

विजय मन्दिर की उत्तरी फाटक का लेख[२४] (बाबरकालीन)

ये लेख खंडित अवस्था में है। इसमें वर्णित है कि जब लोहे की फाटक को उड़ाने के कार्य में यहां सुरंग लगाई गई तब एक अरब युवक की, जो नफ़दार था, मृत्यु हो गई। इससे बाबर के तोपखाने के व्यवस्थित प्रयोग पर प्रकाश पड़ता है।

नागौर का लेख[२५](१५५२ ई०)

यह शिलालेख नागौर से लाकर जोधपुर संग्रहालय में सुरक्षित कर दिया गया है। लेख द्विभाषी है। इसमें वर्णित है कि भट्टारक कीर्तिचन्द्र की 'पोशाल' (पाठशाला) जो पहले बन्द कर दी गई थी उसे पुनः आरम्भ किया गया। इसमें शेख सुलेमान ने मध्यस्थता की और उसे आरम्भ करने की आज्ञा युसुफ अली ने प्रदान की। इस लेख से मुग़ल सम्राट के शासन की उदारता प्रकट होती है।

शाहीजामी मस्जिद का लेख[२६] (नागौर किला) (१५६१ ई०)

इस मस्जिद के केन्द्रीय मेहराब में अकबरकालीन लेख है जिसमें वर्णित है कि उक्त मस्जिद का जीर्णोद्धार इस्लामबेग के द्वारा करवाया गया था। ये काम रोडजी नामक शिल्पी को सुपुर्द किया गया। इससे स्पष्ट है कि स्थानीय शिल्पियों का उपयोग हर प्रकार के भवनों को बनाने में किया जाता था।

गीसूखाँ की मस्जिद का लेख[२७] (१५६८–६९ ई०)

यह लेख केन्द्रीय मेहराब में लगा हुआ है जो अजमेर में है। इसमें गेसूखाँ, पुत्र इमरान द्वारा जलाशय (सक्का) बनाने का उल्लेख है। इस लेख को दरवेश मुहम्मद-अल-हाजी ने लिखा था।

आंबेर का लेख[२८] (जि० जयपुर) (१५६९–७०ई०)

यह लेख आंबेर की जामे मस्जिद की उत्तरी दीवार की एक तांग में लगा

---

२३. एन्यु. रि. इण्डि. एन्टि., १९६६–६७, नं० डी, १९७।

२४. एन्यु. रि. इण्डि. एपि., १९५५–५६, नं० डी, १२५।

२५. एन्यु. रि. इण्डि., १९५२–५३, नं० सी, १०७।

२६. एन्यु. रि इण्डि. एन्टि, १९६२–६३, नं० डी, १९६.

२७. एपिग्राफिया इण्डिका, १९५७, ५८, पृ० ४५।

२८. ए. इ. अरेबिक और फारसी का सहायक अंक १९६५–५६ नं० डी, १३६।

हुआ है। इसकी अवस्था टूटी-फूटी और खण्ड रूप मे है। इसमे वर्णित है कि उक्त मस्जिद को आमेर मे एक हाजी तवाचीबाशी ने बनवाया था। इससे प्रमाणित होता है कि अकबर काल मे मुगली अफसर यहाँ रहता था या उसे आबेर मे मस्जिद बनाने का आदेश दिया गया था। इस लेख से आबेर राज्य के एव मुगल राज्य के सम्बन्ध पर अच्छा प्रकाश पडता है।

तारागढ का सैय्यद हुसेनखा की दर्गाह का लेख[२९] (१५७० ई०)

इस लेख मे इस्माइल कुलीखां द्वारा बृहद् द्वार बनाने का उल्लेख है। इसका लेखक भी दरवेश मुहम्मद-अल-हाजी था।

गज-ए शहीदान तारागढ का लेख[३०] (१५७१ ई०)

इस लेख मे वर्णित है कि शाह कुलीखां ने गंज-ए शहीदान के दर्शन किये और उसे पुनर्निर्मित करवाया। इस लेख को मुहम्मद बाकी ने लिखा।

हजरत हमीउद्दीन की दर्गाह[३१] (गागरौन) (१५८०-१५८३ ई०)

ये लेख द्विभाषी है, जिसमे मियाईशा द्वारा पुत्र अलावलखाँ, जो थानेश्वर का निवासी था, यहा दर्वाजा बनाने का उल्लेख है। यह निर्माण कार्य सुलतान राठौड के अमल (गर्वनर) काल मे सम्पादित हुआ था। सुलतान राठौड राय कल्याणमल, बीकानेर का पुत्र था।

नौगांवा के बाव (अलवर) का लेख[३२] (१५८१ ई०)

इस लेख को नौगांवा के एक बाव से प्राप्त कर राजकीय सग्रहालय अलवर मे सुरक्षित कर दिया गया है। इसमे वर्णित है कि नौगांवा कस्बे में एक बावली शाहबाजखा एव सरदारखाँ करोडी के द्वारा बनवाई गई थी। ये व्यक्ति नाथू धूसर के पुत्र थे। इससे प्रमाणित होता है कि इस प्रान्त मे करोडी की इकाई का आरम्भ हो गया था एव इन दोनो अधिकारियों ने अपना धर्म परिवर्तन कर लिया था, क्योकि इनका पिता नाथू धूसर बनिया था।

फकीरो के तकिया (जयसलमेर) का लेख[३३] (१५९९ ई०)

यह लेख इस आशय का है कि जब सम्राट् अकबर ने मीर सफाई तिरमिद्धी के पुत्र मीर मुहम्मद मासूम नामी बक्कारी को कंधार की तैनाती से बुलाया तो उसने यहाँ मुकाम करने के दौरान मे उक्त तकिये का निर्माण करवाया। इस लेख को मीर बुजुर्ग के पुत्र नामी ने उत्कीर्ण किया। इससे जयसलमेर मे सम्राट् की प्रभुता पर

---

२९. ए आ इ., १९५७-५८, पृ० ४६-४७।

३०. एन्युल रिपोर्ट आन इण्डियन एपिग्राफी, १९५३-५४, नं० सी. २१।

३१. एन्यु रि इण्डि. एपि., न. डी, ३२८।

३२. ए. इ., १९५५-१९५६, पृ० ५४-५५।

३३. एन्यु. रि. इण्डि. एपि, १९६१-६२, नं० डी, २३१।

प्रकाश पड़ता है।

दर्गाह मगरिवशाह का लेख [३४] (१६००–०५) (नागौर)

एक लेख उत्तरी दीवार पर १६०० का है और उस पर अंकित है कि मीर वुजुर्ग अपने पिता नवाव अमीर मुहम्मद मासूम के साथ इसको देखने के लिए आया। इसी तरह मुख्य द्वार पर दूसरा लेख १६०१–०२ का अंकित है जिसमें लिखा है कि सम्राट अकवर ने भक्कर के मुहम्मद मासूम को ईरान एलची वनकर जाने की आज्ञा दी। दीवार के उत्तरी छोर में उसी मीर वुजुर्ग का पुनः दर्गाह आने का हवाला है जव मुहम्मद मासूम ईरान से लौट आया था।

सूफी साहिव की दर्गाह का लेख [३५] (नगौर) (१६०१)

इसमे लेख है कि लेखक मीरवुर्ज नागौर में नवाव अमीर मुहम्मद मासूम के साथ ईरान से लौटकर आया और अपनी पुस्तक से यहां कुछ पद्य लिखे। इसमें पांच पुस्तकों के नाम भी दिये गये हैं—मादानू अफकार, हुस्नीनाज, राय सूरत, अकवरनामा और खम्साए मुध्यारा।

फकीरों के तकिये का लेख[३६] (जयसलमेर), (१६०१-०३ ई०) व (१६०५-०६ ई०)

इसमें वर्णित है कि सम्राट् अकवर ने मीर मुहम्मद मासूम वक्कारी को ईराक का एलची नियुक्त किया। वह वक्कर के लिए जयलमेर से गुजरा। नामी ने इसे लिखा।

इसी में दूसरा लेख इस आशय का है कि मीरवुजुर्ग का पिता नवाव अमीर मुहम्मद मासूम का रावल जीऊ (जयसलमेर के रावल) से घनिष्ट सम्वन्ध था। वह उसके आग्रह से यहां दस दिन रुका। इस लेख से भी मुगल सत्ता का जयसल पर प्रभाव प्रगट होता है।

यहीं पर एक लेख १६०५–०६ का है जिसमें उसी नवाव सैय्यद अमीर का नाम है और अंकित है कि यह इमारात जयसलमेर में आम रैयत की आसाइश के लिए वनवाई गई थी।

तिजारे का लेख [३७] (१६०४–०५ ई.)

यह लेख प्रारंभ में तिजारे में था। यहां से उसे लाकर राजकीय संग्रहालय में रख लिया गया है। इसमें वर्णित है कि एक इस्कन्धार इसावी ने यहां एक हम्माम का निर्माण करवाया और इस लेख की रचना धुवारी के द्वारा की गई। प्रस्तुत लेख से राजस्थान के स्थापत्य के विकास पर प्रकाश पड़ता है।

---

३४. रिसर्चर, १९७०–७१, खण्ड, १०–११, नं० ११०–११२, पृ० ३५-३६

३५. एपिग्राफिया इण्डो–मोस्लेमिका, १९४४–५०, पृ० ४२।

३६. एन्यु. रि. इण्डि. एपि., १९६१–६२, नं० डी, २२७।

३७. ए इ. अरेविक एवं फारसी सहायक अंक, १९५५, पृ० ५५।

पर्वतसर (जि. नागौर) का लेख, [38] (१६०४-०५ ई०)

प्रस्तुत लेख में मुहम्मद मासूम का ईराक से राजदूत के साथ से लौटकर पर्वतसर पहुँचने की सूचना है। इससे प्रतीत होता है कि यह स्थान पश्चिमोत्तर भाग से आने के मार्ग में था। इसमें यह भी दर्ज है कि इसमें उत्कीर्ण पद्य स्वयं मु० मासूम द्वारा बनाये गये थे। इससे स्पष्ट है कि अकबर के काल में ऐसे उत्तरदायी कार्यों के लिए योग्य व्यक्तियों का चयन किया जाता था।

अजबगढ़ का लेख, [39] (१६०५)

यह लेख सोमसागर के पास एक दिवाल में अजबगढ़ जिला अलवर में है। यह दो भाषा में लिखा गया है जिसका आशय यह है कि यहाँ कोई मछली आदि को न पकड़े। यह आदेश अकबरकालीन शासन के समय में माधोसिंह के द्वारा दिया गया था। दो भाषाओं में शिलालेख लिखवाना मुगल प्रभाव का द्योतक है।

बरबद (बयाना के निकट, जि. भरतपुर) का लेख [40] (१६१३-१४ ई०)

यह बरबद गाँव की एक दिवाल पर है जिसमें वर्णित है कि अकबर की पत्नी मरयुम जमानी की आज्ञा से यहाँ एक बाग एवं बावड़ी का निर्माण करवाया गया। इसका निर्माण काल जहाँगीर के राज्यकाल का है। इससे स्पष्ट है कि उक्त राजपूत महिला ने अपनी भारतीय पद्धति से बावड़ी एवं उपवन के निर्माण में रुचि ली।

मुहरंग पोल (जालोर) का लेख, [41] (१६०८ ई०)

इस पर अंकित है कि इस इमारत को कस्बा जालोर में नवाब गजनवी के आधिपत्य के काल में बनवाया गया था और इसका निरीक्षण सैय्यद मुहम्मद ने किया था।

चश्मा हाफिज जमाल, अजमेर का लेख, [42] (१६१५ ई०)

इस लेख में वर्णित है कि जहाँगीर यहाँ बसंत ऋतु में आया और प्रस्तुत चश्म को चश्मे नूर का नाम दिया तथा उसके किनारे एक महल बनाने का आदेश दिया। इस लेख को अब्दुल्ला ने लिखा था।

पुष्कर के जहाँगीरी महल का लेख, [43] (१६१५ ई०)

प्रस्तुत लेख में राणा अमरसिंह के राज्य पर की गई विजय का उल्लेख है और सम्राट जहाँगीर द्वारा पुष्कर में राजप्रासाद बनाये जाने के आदेश है। ये प्रासाद [illegible] के निरीक्षण में बनाये गये।

---

३८ एन्यु रि. एपि., इंडि १९६६-६७, नं० डी० २३४।

३९ एन्यु रिपोर्ट ऑन इण्डियन एपिग्राफी, नं० डी, ३१३।

४०. प्रोसि० ऑफ एशि०-सोसा० बंगाल, १८७३, पृ० १५६।

४१. एन्यु रि इण्डि. एपि., १९६६-६७, नं० डी, १८४।

४२ एपि० इण्डिका, १९५७-५८, पृ० ५६।

४३ एपि० इण्डो मास्ले०, १९२३-२४, पृ० २

तारागढ़ की सैय्यद हुसैन की दर्गाह का लेख,[४४] (१६१५ ई०)

यह लेख दक्षिणी कटहरे पर अंकित है जिसमें वर्णित है कि इतबारखां ने उक्त दर्गाह के लिए कटहरा तैयार करवाया जबकि सम्राट् जहांगीर सुवर्ण सिंहासन पर (अजमेर मुकाम) बैठा था और उसे राणा (महाराणा अमरसिंह) पर विजय प्राप्त करने की प्रसन्नता थी।

ह० मुइन्नुद्दीन चिश्ती की दर्गाह का लेख,[४५] (१६२८ ई०)

यह लेख चिल्ला-ए-चिश्त के प्रवेश में अंकित है जिसको तालिबि ने बनाया था। इसमें वर्णित है कि जब महाबतखां को (खानेखानन) अजमेर का सूबेदार नियुक्त किया था तब शिकदर दौलतखां ने अमीन की हैसियत से, उसके उपलक्ष्य में, चिल्ला-ए-चिश्त का निर्माण करवाया।

नागौर का लेख,[४६] (१६३० ई०)

यह लेख भी नागौर से लाकर सरदार संग्रहालय में सुरक्षित कर दिया गया है। इसमें ताजेब द्वारा एक मस्जिद बनाने का उल्लेख है। इसके निर्माण काल में वहां का अधिकारी सिपहसालार खान-ए-खानन महाबतखां था।

शाहजहानी-मसजिद, अजमेर का लेख,[४७] (१६३७ ई०)

इस लेख में अंकित है कि जब खुर्रम राणा पर विजय प्राप्त कर यहां आया तो उसने अजमेर में एक मस्जिद बनाने की बाधा ली थी। बादशाह बनने पर उसने इसको पूरा किया। इसमें मसजिद की सुन्दरता का अच्छा वर्णन है।

समनशाह की दर्गाह (नागौर) का लेख[४८] (१६०४, १६३९ ई०)

इस दर्गाह पर दो प्रमुख लेख हैं जिनमें एक में फारसी में पद्य अंकित हैं। इसकी रचना अमीर मुहम्मद मासूम नामी ने की थी। इसके द्वारा यह अभ्यर्थना की गई थी कि मृत आत्मा के लिए प्रार्थना की जाय। दूसरे लेख में वर्णित है कि यहां एक मस्जिद नाहिरशाह की आज्ञा से बनी जो मीयाँशाह संगतराश का पुत्र था।

कनाती मस्जिद (नागौर) का लेख[४९] (१६४१ ई०)

इसमें जमालशाह द्वारा मस्जिद के निर्माण का उल्लेख है। जमालशाह जुमीशाह का प्रपौत्र था और जुमीशाह चौहान वंशीय था। इसका लेखक कादिर अब्दुर्रहीम था। इससे चौहानों से मुस्लिम बनाने की स्थिति पर प्रकाश पड़ता है।

---

४४. ए. इ., १९५७-५८, पृ० ५४।

४५. ए. इ., १९५७-५८, पृ० ६१।

४६. रिसर्चर।

४७. ए. इ, १९५७-५८, पृ० ६३-६४।

४८. एन्यु. रिपो. इण्डि. एन्टि, १९६६-६७, नं० डी, १९९, २०१।

४९. एन्यु. रि. इ. एन्टि., १९६६-६७, नं० डी, २०४।

इसी मे एक दूसरे लेख में जुमीशाह को भी चौहान कहा गया है ।

एक मिनार मस्जिद जोधपुर का लेख,[५०] (१६४६–५० ई०)

यह लेख टूटी अवस्था मे है जिसमे वर्णित है कि निर्माणकर्ता ने मस्जिद की व्यवस्था के लिए ६ दुकानो का अनुदान किया ।

मकराना की बावली का लेख[५१] (१६५१ ई०)

इसमे उल्लिखित है कि मुर्जाअली बेग ने यह सूचना इस लेख के द्वारा दी कि ऊंची कौम के लोगो के साथ निम्न वर्ग के लोग कुए से पानी न खींचे । इसके विरुद्ध काम करने वाले को दण्ड देने का भी भय अंकित किया गया था ।

दर्गाह बाजार की मस्जिद, अजमेर का लेख [५२] (१६५२ ई०)

इस लेख मे वर्णित है कि मियाँ तानसेन कलावन्त की पुत्री बाई तिलोकदी ने इस मस्जिद का निर्माण १६५२ मे करवाया । इसमे निर्माणकर्ता का नाम बाई के नाम से सम्बोधित है।

शाहजहानी दर्वाजा, दर्गाह अजमेर का लेख [५३] (१६५४ ई०)

इस लेख मे वर्णित है कि इस समय तक अर्थात् १६५४ ई० तक शाहजहां ने मूर्तिपूजा के अंधकार को समाप्त कर दिया । इससे शाहजहा की कट्टर नीति प्रमाणित होती है ।

ईदगाह का लेख, मेडता का लेख [५४] (१६५५ ई०)

यह लेख केन्द्रीय मिहराब पर है और खण्डित दशा मे है । इसमे वर्णित है कि फराशत खां एव मिस्त्री ने ईदगाह को बनवाया जिसमे जसवन्तसिंह महाराज की अनुकम्पा का योगदान रहा । फराशतखां ने इसके मूल को लिखा । लेख के किनारे सैय्यद मुहम्मद सत्तार, पुत्र पीर मुहम्मद खजानची, मारवाड के राठौडो के दरोगा का भी नाम अंकित है । प्रस्तुत लेख से महाराजा जसवन्तसिंह की उदार नीति का बोध होता है । इससे यह भी प्रमाणित होता है कि मारवाड़ मे शासन कार्य के लिए मुस्लिम अधिकारियो की नियुक्ति की जाती थी ।

अमरपुर (जि० नागौर का लेख) [५५] (१६५५ ई०)

यह लेख एक मस्जिद की मिहराब पर उत्कीर्ण है । इसमे वर्णित है कि दीनजावास के मउडा गाँव मे मुहम्मद के द्वारा एक मस्जिद बनवाई गई। यह मुहम्मद उथमान चौहान का लडका था । राजस्थान मे चौहानो के धर्म परिवर्तन

५०. एन्यु रि इण्डि. एपिग्रा, १६५५–५६, न० डी १५३ ।

५१ एन्यु रि इण्डि एपिग्रा, १६६२–६३, न० डी २३६ ।

५२. ए. इ १६५७–५८, पृ ६६ ।

५३. ए. इ. १६५७–५८, पृ ६८ ।

५४. एन्यु रि एन्टि १६६४–६५, न० सी० ३३५ ।

५५. एन्यु रिपोर्ट आन इण्डियन एपिग्राफी, १६६? – डी

होने के अनेकों उदाहरण मिलते हैं जिनमें यह भी एक है। इसके अतिरिक्त नागौर और आसपास के गाँवों में सत्रहवीं शताब्दी तक (शाहजहां के समय में) इस्लाम का प्रभाव बढ़ चुका था इसकी पुष्टि इस लेख से होती है।

गादीतान की मस्जिद का लेख[५६] (मेड़ता) (१६५६ ई०)

इसमें अलावल के पुत्र फीरोजशाह के द्वारा मस्जिद बनाने का उल्लेख है। अलावल के नाम को उर्फ राठौड़ भी अंकित किया गया है जिससे प्रमाणित होता है कि अलावल राठौड़ था जिसका धर्म परिवर्तन हो गया। इस लेख को काजी मुहम्मद ने लिखा था।

जामी मस्जिद, मेड़ता का लेख[५७] (शाहजहाँ कालीन)

यह लेख मस्जिद के मिहराब पर है और खण्डित हालत में है। इसमें वर्णित है कि राजा सूरजसिंह की मृत्यु पर मेड़ता परगना शाही जागीर के अधीन हो गया और उसे अबू मुहम्मद के अधिकार में दे दिया गया। इसने उक्त मस्जिद को बनवाया। इस समय इसके साथ शेख ताज मजधूब था।

कचहरी मस्जिद का लेख[५८] (हिन्डोन) (१६५६-६० ई०)

इसमें उल्लिखित है कि आका कमाल ने शाहजफर की दर्गाह में एक मस्जिद बनवाई। शाहजफर मक्का से यहां तशरीफ लाए थे और उनको यहीं दीक्षा प्राप्त हुई थी। इस लेख से प्रमाणित है कि जहाँ-जहाँ मुस्लिम सत्ता की स्थापना होती थी वहाँ इस्लाम के बन्दे भी प्रचारार्थ पहुँच जाते थे।

बारावंभा का लेख[५९] (हिण्डोन) (१६६३ ई०)

यहां कब्र के कटहरे पर दर्ज है कि १०७३ हि० रजब को यहां आका कमाल नामी सन्त का देहावसान हुआ। यह शाहजफर के शिष्य परम्परा में थे।

जामी मस्जिद, मेड़ता का लेख[६०] (१६६५ ई०)

इस मस्जिद को हाजी मुहम्मद सुलतान, पुत्र पायन्दा मुहम्मद बुखारी ने बनवाई। बुखारी जोधपुर सरकार का मुतावल्ली तथा मुहतसिब था। इसमें खोजा शाह अली और उस्ताद नूर मुहम्मद शिल्पी का नाम भी दर्ज है। इस लेख को मुहम्मद-दीया ने लिखा था।

---

५६. एन्यु. रि. इण्डि. एन्टि. १९६४-६५, नं० डी० ३३८

५७. इन्यु. रि. इण्डि. एन्टि. १९६२-६३, नं० डी० २१०।

५८. एन्यु. रि. इण्डि. एपि. १९५५-५६, नं. डी. १५८।

५९. एन्यु. रि. इण्डि. एपि. १९५५-५६, नं० डी. १५७; सफरनामा, पृ० २१०।

६०. एन्यु. रि. इण्डि. एन्टी, १९६२-६३, नं. डी. २११

गाजी मस्जिद का लेख[61] (१६६५ ई०)

यह मस्जिद जीनानी तालाब पर है जिसकी छत पर यह लेख है। यह लेख द्विभाषी है। इसमे एक दरवाजे के बनाने का उल्लेख है जो दर्वाजा-ए-इस्लाम के नाम से ज्ञात है। इसको राजा रार्यसिह, जो ग्रमरसिह का लडका था, के समय मे बनवाया गया। इसको बनवाने मे कोटवाल डूंगरसिह का, जो गहलोत राजपूत था, हाथ था। इस लेख को काजी दोस्त ने लिखा था।

लोहारों की मस्जिद का लेख[62] (डीडवाना) (१६६५-६६ ई०)

यह एक लोहारो की मस्जिद का लेख है जो नूरा, ईदू एवं फीरोज लुहारों द्वारा बनाई गई थी। उस समय का गवर्नर मिर्जा मुहम्मद ग्रारिफ था ग्रौर यह लेख हाफिज ग्रब्दुल्ला ग्रन्सारी नागौरी द्वारा लिखा गया था।

बकालिया का लेख[63] (जि० नागौर, सन् १६७०)

यह बकालिया के केन्द्रीय महाराव पर है ग्रौर खण्डित ग्रवस्था मे है। इसमे वर्णित है कि यहां एक मस्जिद, एक बावली ग्रौर एक ताल हमीद की पुत्री किलोल बाई ने बनवाई थी। यह हम्मीद सगीतज्ञ गोपाल का लडका था। इसमे निर्माता को दरबारी सेवक ग्रकित किया गया है। इस लेख का महत्त्व इस ग्रर्थ मे है कि नागौर जिले मे ग्रौरगजेब का प्रभाव था एव उस काल मे धर्म परिवर्तन एक साधारण घटना बन गयी थी।

निर्मलबालकृष्ण का मकान नागौर से प्राप्त लेख[64] (१६७० ई०)

इस लेख मे दर्ज है कि डूगरसिह गहलोत ने रार्यसिह के शासनकाल मे हवेली के साथ एक दरवाजा का निर्माण करवाया। डूगरसिह नारायणदास का पुत्र था। इस लेख को शेखजा ने लिखा।

ग्राबेर का लेख[65] (१६७२ ई०)

यह लेख ग्रामेर से उपलब्ध हुग्रा जिसे वहा के संग्रहालय मे सुरक्षित कर दिया गया है। इसमे वर्णित है कि ख्वाजा सरा मुहम्मद दानिश ने महाराजा रामसिह के समय मे मुहम्मद ताज के निरीक्षण में एक बावली का निर्माण कराया। इस लेख की रचना मुहम्मद जमाल ने की ग्रौर इसे मुहम्मद शरीफ ने लिखा। इस लेख से प्रमाणित है कि २५ जुलाई सन् १६७२ मे ग्रौरगजेब का प्रभाव इस क्षेत्र मे था।

---

६१. एपि इण्डो. मोस, १६४६-५०, पृ० ४७।
६२ एन्यु. रि इण्डि एपि, १६६६-७०, न. डी. १५२।
६३. एन्यु. रि. इण्डि. एपि, १६६८-६६ डी, ४१०
६४. एन्यु रि. इण्डि एप्टि, १६६१-६२, न. डी. २५०।
६५. ए इ ग्ररेबिक एव फारसी का सहायक ग्रंक १६६ एव ५६, पृ० ५६।

शेखों की मस्जिद का लेख[६६] (डीडवाना) (१६७५ ई०)

यह मस्जिद फीरोज, जहान नामी स्त्री एवं मिय्यांशा की निगरानी व मालिकाना अधिकार में बनवाई गई थी। ये व्यक्ति तेली वर्ग के थे।

जुन्जाला के तालाब के स्तम्भ का लेख[६७] (१६७६ ई०)

यह लेख हि० सं० १०८६ हिज अव्वल का तदनुसार ४ जनवरी, १६७६ ई० का है। इसके द्वारा यह सूचना दी जाती है कि रायसिंह के लड़के राव इन्द्रसिंह के जागीरी काल में तथा डूंगरसिंह गहलोत के सक्रिय प्रयास से यह निर्धारित किया गया कि उक्त तालाब की आय, जो नागौर परगने में है, अन्य किसी कार्य में न लगाई जाय सिवाय इसके कि तालाब की मरम्मत हो। यह लेख कादिर मुहम्मद के लड़के शाह मुहम्मद ने लिखा।

शाहबाद (जि० कोटा) का लेख[६८] (१६७६ ई०)

यह लेख प्रारम्भ में कोतवाली के निकटस्थ एक चबूतरे में मिला जिसे तहसील के दफ्तर में सुरक्षित कर दिया गया। यह लेख द्विभाषी है और खण्डित अवस्था में है। इसमें वर्णित है कि कस्बे के महाजन, व्यापारी और ब्राह्मणों ने शाही दरबार में उपस्थित हो यह फर्याद की कि उनसे अपनी अचल सम्पत्ति पर सायर की वसूली की जा रही है। इस अभ्यर्थना पर औरंगजेब ने यह तगदीर जारी की कि इस प्रकार का सायर लेना अनुचित है अतएव वह उनसे न लिया जाय। इस हुक्म के तहत जागीरदार रंधुल्लाखाँ ने मुत्तसद्दियों को यह आदेश दिया कि वे इस प्रकार की सायर वसूल न करें। इसका फल यह हुआ कि आधी रकम जकात, बटाई, खूत तलाई, कोतवाली आदि से वसूल की गई और आधी रकम देने वाले की मरजी पर छोड़ दिया गया जिसे वे या तो न दें या जमा करावें। परन्तु पैदाइश, विवाह आदि पर लिये जाने वाले करों को मुआफ कर दिया गया। अन्त में उन लोगों को (हिन्दु एवं मुसलमान) राम तथा अल्लाह का श्राप का भाजन बतलाया गया जो इसकी तामील नही करेंगे। ये लेख स्थानीय करों की व्यवस्था पर तथा मुग़लों की समयोचित नीति पर प्रकाश डालता है।

बरन का लेख[६९] (जि० कोटा) (१६८० ई०)

यह लेख एक मस्जिद पर है जिसमें विक्रमी एवं हिजरी काल अंकित है जिसके अनुसार २५ जून, १६८० ई. होता है। इसमें मुहम्मद शफी माजन्दरानी द्वारा एक मस्जिद बनाने का उल्लेख है, जबकि सैय्यद मुहम्मद वासी अमीन के पद पर था। इससे प्रकट है कि इस भाग पर औरंगजेव के अधिकारी नियुक्त थे।

---

६६. एन्यु. रि. इण्डि. एपि., १९६९–७०, नं. डी. १३९

६७. एन्यु. रि. इण्डि. एपिग्रा., १९६६–६७, नं. डी. २१५

६८. एपि. इण्डि. अरेबिक एण्ड पर्शियन सप्लीमेन्ट, १९६८, पृ० ७०

६९. रिसर्चर, १९७०–७१, खण्ड १०–११, नं ८४, पृ० २७–२८

दर्गाह हजरत मिठ्ठे शाह का लेख[७५] (गागरौन) (१६९४-९५)

उक्त दर्गाह की फाटक के मिहराव में लेख अंकित है कि इरादत खां जो सरकारी सेवक था उसने चौकिया (गांव?) का लगान वार्षिक उर्स के लिए अर्पित किया और यह भी उल्लिखित किया कि इस सम्वन्ध में कोई हस्तक्षेप न करे।

सांभर की मस्जिद का लेख [७६] (१६९७-९८ ई०)

यह लेख एक कब्र के पास पड़ा मिला जिसे वहां से उठवा कर विश्रान्तिगृह में रखवाया गया। इस लेख में अंकित है कि औरंगजेब के राज्यकाल में यह मस्जिद एक मंदिर के स्थान पर शाह सब्जअली द्वारा वनवाई गई थी।

अब्दुल्ला खाँ की दर्गाह के पीछे वाली मस्जिद का लेख [७७] (अजमेर का लेख) (१७०३ ई०)

इस लेख में वर्णित है कि दानिश के निर्देशन में यहां एक मस्जिद और एक वाग का निर्माण करवाया गया।

शाह छांगी महारी मस्जिद का लेख [७८] (डीडवाना) (१७११)

यह लेख मस्जिद की मिहराव पर अंकित है। इसमें उल्लिखित है कि इसका निर्माण शाह छांगी मदारी के निरीक्षण में कराया गया था। इसमें शाहआलम प्रथम के लिए सुलतान मुहम्मद मुअज्जम शाह वहादुर आलमगीर द्वि० अंकित किया गया है।

गुदड़ी वाजार मस्जिद का लेख [७] (डीडवाना) (१७४१ ई०)

यह लेख केन्द्रीय मिहराब में अंकित है जिसका आशय यह है कि उक्त मस्जिद को शाह वक्शअली ने वनवाया था। यह शाह शाहशाकिरअली का शिष्य था जो शाह मदार का अनुयायी था। इससे सन्त परम्परा का बोध होता है।

सांभर का एक लेख [८०] (१७७० ई०)

यह लेख ६ अक्टूवर, १७७० ई० का है जो शामलात की कचहरी के पास लगा हुआ है। यह द्विभाषी है। इसमें महाराजा की आज्ञा का उल्लेख है कि जैन, वैष्णव, ब्राह्मण, काजी व उनके भाई, गरीब एवं विदेशियों के ठाकुरद्वारों को पैमाइश व नाप से मुक्त किया जाता है। इस प्रथा का जयपुर में प्रारंभ इस काल के पूर्व हो चुका था। यह ध्वनि भी इस लेख से निकलती है।

---

७५. एन्यु. रि. इण्डि. एपि., १९६५-६६ नं डी. ३२४

७६. एन्यु. रि. इन्डि. एण्टि. १९५५-५६, नं० डी. १४३

७७. ए. इ. १९५९-६०, पृ. ४६।

७८. एन्यु. रि. इण्डि. एपि० १९६९-७०, नं० डी, ११४

७९. एन्यु. रि. एपि०, १९६९-७०, नं० डी, १४६

८०. एन्यु. रि. इण्डि इन्टि. १९५५-५६, नं० डी, १४८, १९५६-५७, ०

ईदगाह, अजमेर का लेख [८१] (१७७३-७४ ई०)

इस लेख में ईदगाह का निर्माण चमन बेग द्वारा कराया जाना अंकित है। इसमें ख्वाजा मुईन्नुद्दीन चिश्ती तथा उनके अनुयायी फखरुद्दीन तथा शामशुद्दीन की प्रशसा की गई है। इससे सन्त परम्परा पर प्रकाश पडता है।

बैराट (जि० जयपुर) का लेख, [८२] (१७७६ ई०)

यह प्रार्थना कक्ष के केन्द्रीय मेहराब मे है। इसमे वर्णित है कि सैय्यद अली फौजी ने यहा एक मस्जिद का निर्माण कराया। इसका समय शाहआलम के काल का पढा गया है जो सन्देहात्मक है। बैराट के उत्खनन की रिपोर्ट, पृ० १५ से स्पष्ट है कि यह लेख ८९५ हिजरी का है और इसका समय अलाउद्दीन आलमशाह का है। यदि शाहआलम के काल मे इसे रखते हैं तो इसका समय ११८९ पढ़ा गया प्रतीत होता है। समय का अकन या पढा जाना सन्देहात्मक है।

कर्नाटकी दालान अजमेर का लेख [८३] (१७९१ ई०)

यह लेख ह० ख्वाजा मुइनुद्दीन की दर्गाह के कर्नाटकी दालान के वृत्त के मध्य मे अकित है। इसमे वर्णित है उक्त दर्गाह के अन्दर नबाब मुहम्मद अली खाँ न, जो कर्नाटक का नवाब था, अपने कर्मचारी मुहम्मद जफर खाँ, कादिरयार खाँ एव अली मुहम्मद खाँ की निगरानी मे कर्नाटकी दालान का निर्माण करवाया। इस लेख से कर्नाटक के तथा अजमेरी हुकूमत के अच्छे सम्बन्ध पर प्रकाश पडता है।

तारागढ की सैय्यद हुसैन की दर्गाह का लेख, [८४] (१८०७-०८ ई०)

इस लेख मे वर्णित है कि राव बाला इगनिया ने यहा एक दालान का निर्माण सैय्यद हुसैन रिंग सवार नामी सन्त के स्वप्न के आदेश से करवाया।

जामी मस्जिद का लेख, [८५] मेडता (१८०७-०८ ई०)

उक्त मस्जिद के दालान मे घुसते हुए यह लेख मिलता है जिसमे दर्ज है कि यह मस्जिद औरगजेब द्वारा बनवाई गई थी। बद पडी रहने से इसकी हालत खराब हो रही थी, अतएव मारवाड के राजा ढोकलसिंह ने इसकी मरम्मत करवाई और यह आदेश दिया कि भविष्य मे कोई राजा इसमे हस्तक्षेप न करे और इसके दुकानो के भाडे का जो मस्जिद के लिये हैं दुरुपयोग न करें। यहा ढोकलसिंह के रहने का भी सकेत इस लेख से मिलता है।

---

८१ ए ई १९५९-६० पृ ५०

८२ रिसर्चर, खण्ड १०-११, १९७०-७१, न० ८०, पृ० ३६

८३. ए इ, १९५९-६०, पृ० ५१।

८४ ए इ, १९५९-६०, पृ० ५३-५४।

८५. इम्पु रि इण्डि एन्टी, १९६२-६३, न० डी २१२।

तारागढ़ की सैय्यद हुसैन की दर्गाह का लेख,[८६] (१८१३ ई०)

इसमें वर्णित है कि हिजरी सन् १२२७ से १२२६ में शाह रिवंग सवार की दर्गाह में राव गुमान जी सिंधिया ने दालान का निर्माण करवाया। इससे मराठों की धर्म सहिष्णु नीति पर प्रकाश पड़ता है।

जालन्धर जी का मकान का लेख,[८७] (निवाई) (१८१३ ई०)

इसमें प्रवेश होते ही यह लेख है जिसमें मुहम्मद शाह खां वहादुर द्वारा इजरा किये जाने वाले फर्मान का उल्लेख है। इसमें वर्णित है कि स्थानीय सेना के रिसालदार एवं जमादार उदक भूमि, जो पलाई में है और जहां पुराना जलन्धरनाथ जी का मन्दिर है की इज्जत करें और उसमें किसी प्रकार का हस्तक्षेप न करें। मुहम्मद शाह खां का पूरा नाम नवावुल मुल्क मुख्तियारुद्दोला मुहम्मद शाह खां वहादुरजंग इसमें अंकित है। इस लेख से सहिष्णुपूर्ण नीति पर प्रकाश पड़ता है।

जामी मस्जिद का लेख,[८८] (१८४५ ई०)

इस मस्जिद वाले लेख में दर्ज है कि वृजमहाराज बलवन्तसिंह ने आदेश दिया कि नगर में मस्जिद बनवाई जाय। इस आदेश से भरतपुर की मुस्लिम प्रजा तथा सैनिकों ने अपने चंदे से यहां एक मस्जिद बनवाई। इससे भरतपुर के शासकों की सहिष्णुपूर्ण नीति पर प्रकाश पड़ता है।

जामी मस्जिद का लेख,[८९] (डीडवाना), (१८५५--५६ ई०)

इनमें से एक लेख द्विभाषी है जिसमें अंकित है कि कुछ दुकानें सुलतान महमूद पीर पहाड़ी की दर्गाह की है। इनके सम्बन्ध में अंकित है कि इनको गिरवी नहीं रखा जा सकता। यह शर्त बहुधा सभी मुआफी की जायदाद के सम्बन्ध में दर्ज रहती थी। ऐसे ही दूसरे लेख में दुकान का किराया नहीं देना या उसका दुरुपयोग करना गुनाह बतलाया गया है।

जालोर में फैद्ुल्ला खाँ की छत्री का लेख,[९०] (१८९४--९५ ई०)

यह लेख द्विभाषी है। इसमें वर्णित है कि खैबर का निवासी फतहशाह जो बीबी जम-जम का शिष्य था और वह मिठ्ठाधा की शिष्या थी, की मृत्यु जालोर में हुई तब उसके शिष्य अनवर अली ने ६० रुपये लगाकर अपने मालिक की स्मृति में दर्गाह बनवाई। इस लेख में रहमत खां, मीर अफजल खां, आजम खां, शेरसिंह, गुलाब खां, दोदयाल काकनूर आदि के साक्षी होने का उल्लेख है। इसका बनाने वाला शिल्पी

---

८६. ए. इ. १९५९--६०, पृ० ५४।

८७. एन्यु. रि. इण्डि. एन्टि., १९६२--६३, नं० डी. २४२

८८. सफरनामा, पृ० २१०--११

८९. एन्यु. रि. इण्डि. एपि., १९६९--७० नं० डी. १२०, १२१

९०. एन्यु. रि. इण्डि. एन्टी., १९६६--६७, नं० डी. १९३

४

दान-पत्र

दान-पत्रों का ऐतिहासिक साधनों में एक महत्त्वपूर्ण स्थान है । ये दान-पत्र ताम्र-पत्र भी कहे जाते हैं क्योंकि इनके लिए ताम्बे की चद्दरों को काम में लाया जाता था । कागज का वैसे प्रयोग पूर्व मध्यकालीन काल से हो चुका था, परन्तु स्थाई अनुदानों का अंकन ताम्बे की चद्दरों पर उत्कीर्ण कर दिया जाता था जिससे उसके नष्ट होने का कम भय रहता था । ऐसी चदरें तांवे को गाल कर और फिर उसे कूट-कर वनाई जाती थी । उसको उसी आकार में तथा मोटाई में कूटकर बनाया जाता था जितना अंकन उसमें करना होता था । प्राय: ये ताम्र-पत्र लगभग ८"×६" या १२"×८" आदि लम्बाई चौड़ाई के होते थे, जिन पर पहिले काली स्याही से प्रमाणित लेखक, जो एक विशेष अधिकारी होता था उस पर इवारत लिख देता था और फिर उसको दस्तकार द्वारा उस पर उत्कीर्ण करा लिया जाता था । ये ताम्र-पत्र संस्कृत एवं स्थानीय भाषा में होते थे । पूर्व मध्यकालीन युग के पहले काल में संस्कृत का प्रयोग दान-पत्रों में किया जाता था परन्तु इस काल के द्वितीय चरण तथा उत्तर-मध्यकाल में इनमें स्थानीय भाषा काम में ली जाती थी । इनमें प्रयुक्त की गई लिपि प्रथम चरण में कुटिल होती थी, परन्तु ज्यों-ज्यों स्थानीय भाषा का प्रयोग वढ़ता गया महाजनी लिपि [illegible] ग होने लगा । भाषा के सम्बन्ध में अशुद्धियां इन ताम्र-पत्रों में अधिक रहती [illegible] चन्द्राकार, अर्ध विराम, अनुस्वार आदि का प्रयोग वहुत कम होता था । [illegible] में वि[illegible] लाने के लिए एक लम्बी रेखा खींच ली जाती थी या [illegible] चिह्न [illegible] ाते थे ।

[illegible] कया जाता था
ताम्र-पत्रों को राज्य [illegible]
णेषायनमः,' 'रा[illegible] ामजी,' 'श्री
[illegible] ी,' 'श्री माता [illegible] किये गये
इकलिंगजी प्र[illegible] से प्रयुक्त
[illegible] ड़ के दा[illegible]
[illegible] ा

कई राजनीतिक घटनाओ, आर्थिक व्यवस्था तथा व्यक्ति विशेषो की हमे जानकारी होती है। समसामयिक विषयो पर इनके द्वारा प्रभूत प्रकाश पडता है। इनके द्वारा अनुदान देने वाले की धर्म परायणता का बोध होता है और अनुदान लेने वाले की क्षमता का भी सकेत मिलता है। किसी भी समय के ताम्र-पत्र से भूमि सम्बन्धी सूचनाएँ मिलती हैं क्योंकि विशेष रूप से अनुदानो मे भूमिदान का ही महत्त्व अधिक रहा है। इनसे वशक्रम को निर्धारित करने तथा शासन-अधिकारियो के नामो को क्रमबद्ध जानने मे भी इनका उपयोग है। भूमि के नाप मे 'बीघा' तथा 'हल' शब्दों का प्रयोग होता है, जो छोटे तथा बडे नाप होते थे। एक हल मे ५० बीघा का प्रमाण होता था और बीघा साधारणत २५ से ४० बास तक आका जाता था। भूमि की किस्मो मे पीवल, मगरो, पडत, गलत-हास, चरणोत, राखड, बीडो, बाडी, कांकड, तलाई, गोरमो, आदि शब्द प्रयुक्त होते थे। फसलो को सीयालू एवं उनालू और फिर रबी व खरीफ मे बाटा जाता था। खेतो के भी नाम तथा पडोस इनमे बतलाया जाता था और इसी प्रकार कुओ के भी नाम होते थे। पीपल के वृक्ष वाला कुँआ, पीपलीवारो कुँओ, तथा वट वृक्ष वाला खेत, 'वडलावालो खेत' आदि नामो से सम्बोधित होते थे।

अनुदान विशेष रूप से पर्वो पर, धार्मिक कार्यों पर, यात्रा के अवसर पर, मृत्यु पर अथवा विजय के उपलक्ष आदि मौके पर दिये जाते थे। कभी-कभी चारण-भाटो, ब्राह्मणो आदि के भरण-पोषण के लिए तथा ठाकुर की पूजा-प्रतिष्ठा के लिए दान दिये जाते थे। विशेष उपलब्धियो पर योद्धाओ को भी दान-पत्र देकर सम्मानित किया जाता था। परन्तु कभी-कभी अव्यवस्थाकाल मे नकली दान-पत्र भी भूमि पर अधिकार रखने के लिए बना लिये जाते थे जिन्हें पहिचानना कठिन हो जाता है। सच्चे व गलत दान-पत्रो के जाचने के लिए व्यक्तियो, तिथियो और लिपियो का ज्ञान विशेष रूप से आवश्यक हो जाता है।

जहाँ तक दान-पत्रो की संख्या का प्रश्न है वे लाखो की तादाद मे हैं, जिनका थोडा-थोडा भी परिचय इस अध्याय मे देना कठिन है। केवल इन दान-पत्रो की विशेषता जानने के लिए हम कुछएक चुने हुए ही दानपत्र (राजस्थान के इतिहास से सम्बन्धित) देंगे जिनसे उनकी सज्ञा एवं सन्दर्भ का हमे आशिक बोध हो सके। इन थोडे से दान-पत्रो के परिचय के साथ-साथ यथा साध्य उनके मूल पाठ को या उसके अंश को भी दे दिया गया है जिससे उनके महत्त्व को भलीभाँति समझा जा सके।

धूलेव का दानपत्र[1], (६७९ ई०)

इस दान-पत्र की एवं अपराजित के लेख (६६१ ई०) की लिपि मे साम्यता है। इसमे प्रयुक्त की गई भाषा सस्कृत है और उसे तावे को कूटकर तैयार की गई चद्दर पर खोदा गया है। इसको ऋषभदेव के एक ब्राह्मण के पास देखा गया था। इसमे

१. एन्युल रिपोर्ट राजपूताना म्यूजियम, ३१ मार्च, १९३३, पृ० २

वर्णित है कि किष्किन्धा (कल्याणपुर) के महाराज भेटी ने अपने महामात्र आदि अधिकारियों को आज्ञा देकर अवगत कराया कि उसने महाराज वप्पदत्ति के श्रेयार्थ तथा धर्मार्थ उब्बरक नामक गाँव को भट्टिनाग नामी ब्राह्मण को अनुदान के रूप में दिया। इसका समय २३वां वर्ष अर्थात् हर्ष संवत् है जो ६७९ ई० के लगभग अनुमानित किया जाता है। इसमें दिये गये संवत् को 'अश्वाभुज संवत्सर' कहा गया है। इसमें महाराज भेटी एवं भट्टिवाड के हस्ताक्षर का चिह्न अंकित है। इस दान-पत्र को त्रांबापाली नामक डेरे से इजरा किया गया था। इसमें यज्ञदत्त दूतक का नाम दिया गया है। इसमें प्रयुक्त किये गये महाराज शब्द से भेटी की राजनीतिक स्थिति का पता चलता है। महामात्र एवं दूतकादि अधिकारियों का इसके नेतृत्व में होना म० भट्टि की शासकीय स्थिति को बतलाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि मेवाड़ के दक्षिणी भाग का वह शक्तिसम्पन्न शासक था। इसमें प्रयुक्त किये गये 'वप्पदत्ति' शब्द से संभवतः इसका सम्बन्ध बापा से होना अनुमानित किया जा सकता है या इस शब्द का प्रचलित प्रयोग दिखाई देता है। यदि ऐसा है तो बापा का काल इस शताब्दी के लगभग आता है। फिर भी इस विषय में अधिक शोध की आवश्यकता है। इस दान-पत्र का उपयोग सातवीं शताब्दी की धार्मिक एवं राजनीतिक स्थिति की जानकारी के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

मथनदेव का ताम्र-पत्र[२], (९५९ ई०)

यह ताम्र-पत्र मथनदेव का है जिसका समय सं० १०१६ माघ सुदि १३ शनिवार है। इसमे समस्त राजपुरुष एवं गाँव के प्रतिष्ठित व्यक्तियों के समक्ष देवालय के निमित्त भूमिदान की व्यवस्था अंकित है। इसमें प्रति दुकानों से वस्तुएं तथा घाणी से तेल देने का भी उल्लेख है। इस दान-पत्र को हरि ने खोदा था। इसमें प्रयुक्त की गई भाषा संस्कृत है। इसका मूलपाठ का कुछ अंश इस प्रकार है—

"ॐ स्वस्ति" परम भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर श्री क्षितिपालदेव पादानुध्यात परम भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर विजयपाल देवानामभिप्रवर्ध-मान कल्याण विजय राज्ये संवत्सर शतेषु दशसु षोडशोत्तरकेषु माघमाससितपक्ष त्रयोदश्यां शनियुक्तायामेव १०१६ माघ सुदि १३ शनावद्य श्री राज्यपुरावस्थितो महाराजाधिराज परमेश्वर श्री मथनदेवो............सर्वानिवराजपुरुषान्नियोगस्थान क्रमागमिकान्नियुक्त कानियुक्तकांस्तन्निवासिमहत्तरमहत्तमवणिक्प्रवणि प्रमुखजन-पदाश्च... ....व्यघ्रवाटक ग्रामः स्वसीमातृणं युतिगोचरपर्यन्तः..................।शासनं कृतवान्देवो लिखितं तस्य सूनुना। व्यक्तं सूर प्रस्तादेन उत्कीर्ण हरिणाततः...............।। प्रतिहट्टव्यावहरिकविं २ घटककूपकं प्रतिघृतस्य तैलकस्य च पलिके द्वे २ वीथीं प्रतिमासि २ विं २ तथा वहि प्रविष्ठ चोल्लिकां प्रतिपर्णानां ५० एतद्देवस्य कृतमिति ।। श्रीमथनः ।।"

---

२. वीरविनोद, भा० ४, पृ० १५३१–१५३२

रोपी ताम्र-पत्र[3] (१००२ ई०)

भीनमाल से ६ मील की दूरी पर रोपी गाँव है वहाँ का यह ताम्रपत्र है। इसका आकार ९"×८" है और इसके दो भाग हैं जिन्हें दो छल्लों में कड़ी के द्वारा जोड़ा गया है। एक पत्र में ११ पंक्तियाँ और दूसरे में १२ पंक्तियाँ हैं। इसकी भाषा संस्कृत है। इसके अन्त में अनुदानकर्त्ता के हस्ताक्षर हैं। इसमें भीनमाल नगर के बाहर एक क्षेत्र आऊरकाचार्य को देवराज के द्वारा चन्द्रग्रहण के अवसर पर दिये जाने का उल्लेख है। भूमि के पड़ौस में वामन, पूरणचन्द्र, श्रीधर आदि व्यक्तियों के खेत हैं। इसका लेखन व्यास के पुत्र सूर्यरवि के द्वारा किया गया था। इसमें देवराज के गुरु मतृकाक का नाम साक्षी के रूप में दिया है। इसमें उल्लिखित देवराज परमार वंशीय होना चाहिये जिसे महीपाल भी कहते थे और जो आबू का शासक था, इसी ने सोलंकी कुमारपाल की सामन्ती स्वीकार की थी। इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

प्रथम पट्टिका

१ सिद्धम् ॐ नमः शिवाय ॥ संवत् १[०]५९ मा
२. घ सु(शु)दि १५ अद्या संवत्सर मासपक्षादि
३ वसपूर्व्वायां श्री २ मालावस्थित महाराजा
४ धिराज श्री देवराज. स्वभुज्यमान विषये
५. धर्म्मदायेन क्षेत्रशासन (न) प्रयच्छमि ॥ यदि है
६ व श्री २ मालीय कोट्टाद्दक्षिणदिग्भागे क्षेत्रं
७. यस्याघाटनानि ॥ पूर्व्वतो गोविन्द ब्राह्मण
८. सत्काभूमीमा । दक्षिणतो वामनदुर्ल्लभसु-
९. तसत्का भूमीमा । पश्चिमतो महाब्राह्मण श्री
१० पूर्णचन्द्रसत्क [ब्रा]ह्मण सह भूमीमा
११ उत्तरत. श्रीधरस्य (ब्रा)ह्मण क्षे[त्रे]ण भूमीमा

द्वितीय पट्टिका

१२ एवमेतदनुज्ञाघ(घा)ट नाध्यन्तःक्षेत्रं ।
१३. दस्माभि सोमग्रहणे स्नात्वा त्रिलोकी गुरुं भव-
१४. मभ्यर्च्य मातापित्रोरात्मनश्च पुण्ययशोभिवृद्धय(ये)
१५ शासनेनो(नो)दकपूर्व्वमाचन्द्रार्क्कं कालीनमया प्रति
१६. पादित[म] उच्छ्राचार्याय । अष्टशिवाचार्यपुत्रा
१७. य......... ...श्री सिद्धेश्वरदेवस्यानाधीशाय
१८ प्रदत्त न केनापि परिपन्थनीय ॥ अस्मद्वंशजैरन्यै
१९. श्च भाविभोक्तृभिः अत्रसाक्षी श्रीदेवराजगुरुमंत्रा
२० क. । अत्र साक्षी श्रीपूर्णचन्द्र. लिखितं सूर्यरवि-

३. एपिग्राफिया इण्डिका, भा० २२, पृ० १९६–१९८ ।

२१. णा व्याससुतेन । यो यः पृथिव्यां राजाहि ममा
२२. तोर्द्ध भविष्यति । तस्याहं करलानस्तु शासनं सा(मा)
२३. व्यतिक्रामेत् । स्वहस्त श्रीदेवराजस्य ।"

आबू के परमार राजा धारावर्ष का ताम्र-पत्र[४] (११८० ई०)

यह ताम्रपत्र परमार राजा धारावर्ष के समय का है। इसकी भाषा संस्कृत पद्य एवं गद्य है। इसकी प्राप्ति सिरोही जिले के हाथल गाँव के एक शुक्ल ब्राह्मण के पास से हुई थी। इस ताम्र शासन के दो पत्र हैं जिसमें दो स्थलों पर अक्षर स्पष्ट नहीं हैं। इसमें प्रयुक्त शब्द 'हल' भूमि के नाप, 'ग्रास' एक प्रकार की भूमि तथा 'गोचर' चरागाह के द्योतक हैं। इसका समय वि० सं० १२३७ है। इस समय का मंत्री कोवीदास था। यह अनुदान देवोत्थापनी एकादशी का था जिसमें शिवधर्म के आचार्य के लिए साहिलवाड़ा तथा गोचर भूमि की सुविधा दी गई। भूमिदान में दो हल भूमि का उल्लेख है। इसका मूलपाठ इस प्रकार है—

प्रथम पत्र

"संवत् १२३७ वर्षे कार्तिक सुदि ११ गुरावद्येह चाज्ञापनं ।। समस्त राजावली समलंकृत श्रीमदर्बुदाधिपति श्री धूमराजदेवकुल कमलोद्योतनमार्तंडमांडलिकेपु चरंतु श्रीधारावर्षदेवकल्याणविजयराज्ये तत्पादपद्मोपजीविन महं-श्रीकोविदा समस्तमुद्राव्यापारान्परिपंथयतीत्येवं कालेप्रवर्तमाने शासनाक्षराणि लिख्यते यथा उदये संजाते दैवा.......का..........महापक्षीणनलिनीदलगतजललवतरलतरंजीवितव्यासिद-विधाय परमाप्तैवाचार्य भट्टारकवीसलउग्रदमके

द्वितीय पत्र

—साहिलवाड़ाग्रामे ग्रह–मुक्ति ।। तथा एतदीय धरणीगोचरे चरणीया तथा कुंभारनुलीग्रामे सुरभिमर्यादापर्यन्त भूमिदत्ताहल २ हलद्वयभूमिशासनेनोदक पूर्वप्रदत्ता ।। द्यूतोत्रमहंश्रीकोविदासजी जाल्हणी ।। मतै ।। श्री ।। बहुभिर्वसुधामुक्ता राजभिः सगरादिभिः ।। यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्यतस्यतदाफलम् ।।१।। स्वदत्तांपरदत्तांवा योहरेत वसुंधरां ।। षष्ठिवर्षसहस्त्राणि विष्टायां जायतेकृमि ।।२।। ममवंशक्षयेक्षीणे अन्योह नृपतिर्भवेत् तस्याहं करलग्नोस्मि ममदत्तं न लोपयेत् ।।३।। शुभंभवतु ।। मागडीग्राम ग्रासभूमिदत्ता दातड़लीग्रामग्रासभूमिदत्ता ।।

वीरपुर का दान-पत्र[५] (११८५ ई०)

यह दान-पत्र जयसमुद्र के बांध के निकटवर्ती वीरपुर (गातोड़) गाँव का है। इसका समय वि० सं० १२४२ कार्तिक सुदि १५ (ई० सं० ११८५ ता० ६ नवम्बर) रविवार का है। यह भीमदेव (दूसरे) के सामंत महाराजाधिराज अमृतपाल का है,

---

४. इण्डि० एन्टी० भा० वर्ष १६४१, पृ० १६३–१६४;
वीरविनोद, भा० २, प्रकरण ११, शेष संग्रह ११, पृ० १२०६।

५. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० ४६–५०।

२१. णा व्याससुतेन । यो यः पृथिव्यां राजाहि ममा
२२. तोर्द्ध भविष्यति । तस्याहं करलानस्तु शासनं सा(मा)
२३. व्यतिक्रामेत् । स्वहस्त श्रीदेवराजस्य ।"

आबू के परमार राजा धारावर्ष का ताम्र-पत्र[४] (११८० ई०)

यह ताम्रपत्र परमार राजा धारावर्ष के समय का है। इसकी भाषा संस्कृत पद्य एवं गद्य है । इसकी प्राप्ति सिरोही जिले के हाथल गाँव के एक शुक्ल ब्राह्मण के पास से हुई थी। इस ताम्र शासन के दो पत्र हैं जिसमें दो स्थलों पर अक्षर स्पष्ट नहीं हैं। इसमें प्रयुक्त शब्द 'हल' भूमि के नाप, 'ग्रास' एक प्रकार की भूमि तथा 'गोचर' चरागाह के द्योतक हैं। इसका समय वि० सं० १२३७ है। इस समय का मंत्री कोवीदास था। यह अनुदान देवोत्थापनी एकादशी का था जिसमें शिवधर्म के आचार्य के लिए साहिलवाड़ा तथा गोचर भूमि की सुविधा दी गई। भूमिदान में दो हल भूमि का उल्लेख है। इसका मूलपाठ इस प्रकार है—

प्रथम पत्र

"संवत् १२३७ वर्षे कार्तिक सुदि ११ गुरावद्येह चाज्ञापनं ।। समस्त राजा वली समलंकृत श्रीमदर्बुदाधिपति श्री धूमराजदेवकुल कमलोद्योतनमार्तंडमांडलिकेषु चरंतु श्रीधारावर्ददेवकल्याणविजयराज्ये तत्पादपद्मोपजीविन महं-श्रीकोविदा समस्तमुद्राव्यापारान्परिपंथयतीत्येवं कालेप्रवर्तमाने शासनाक्षराणि लिख्यते यथा उदये संजाते दैवा""""का""""""महापक्षीणनलिनीदलगतजललवतरलतरंजीवितव्यासिद-विधाय परमाप्तेवाचार्य भट्टारकवोसलउग्रदमके

द्वितीय पत्र

—साहिलवाड़ाग्रामे ग्रह–मुक्ति ।। तथा एतदीय धरणीगोचरे चरणीया तथा कुंभारनुलीग्रामे सुरभिमर्यादापर्यन्त भूमिदत्ताहल २ हलद्वयभूमिशासनेनोदक पूर्वप्रदत्ता ।। धूतोग्रमहंश्रीकोविदासजी जाल्हणी ।। मतं ।। श्री ।। वहुभिर्वसुधामुक्ता राजभिः सगरा-दिभिः ।। यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्यतस्यतदाफलम् ।।१।। स्वदत्तांपरदत्तांवा योहरेत वसुंधरां ।। षष्ठिवर्षसहस्त्राणि विष्टायां जायतेकृमि ।।२।। ममवंशक्षयेक्षीणे अन्योह नृपतिर्भवेत् तस्याहं करलग्नोस्मि ममदत्तं न लोपयेत् ।।३।। शुभंभवतु ।। मागडीग्राम ग्रासभूमिदत्ता दातड़लीग्रामग्रासभूमिदत्ता ।।

वीरपुर का दान-पत्र[५] (११८५ ई०)

यह दान-पत्र जयसमुद्र के बांध के निकटवर्ती वीरपुर (गातोड़) गाँव का है इसका समय वि० सं० १२४२ कार्तिक सुदि १५ (ई० सं० ११८५ ता० ६ नवम्बर रविवार का है। यह भीमदेव (दूसरे) के सामंत महाराजाधिराज अमृतपाल का

४. इण्डि० एन्टी० भा० वर्ष १६४१, पृ० १६३–१६४;
वीरविनोद, भा० २, प्रकरण ११, शेष संग्रह ११, पृ० १२०६ ।
५. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० "" ।

पूर्वस्यां सीमा ऊ वरऊम्रा

प २८ अरघट्ट । दक्षिणाया ग्रामेण सीमा । पश्चिमाया ढीकोलरघट्टसीमा । उत्त रायां गोमती नदी सीमा

प २६ एतदरघट्ट तथा भूमीच सतिष्टमान चतुसीमापर्यंत सवृक्षमाला कुलसोद्र सपरिकर सकाष्टत्

प २७ 'णोदकोपेत नवविधानसहित अस्मद्व सजैरन्यैरपिच पालनीय ।

प ४१ स्वहस्तोय महाराजाधिराज श्रीप्रमृनपालदेवस्य ।। स्वहस्तोऽय महाकुमार श्रीसोमेश्वर देवस्य

प ४२ स्वहस्तोय पुरो पाल्हा पालापत्रस्य ।। शुभभवतु"

कदमाल गाँव का दान पत्र, (११६४ ई०)

यह ताम्र पत्र ७ × ६ के ताव के टुकडे पर खुदा हुआ है, जिसका नीचे का भाग एक तरफ से टूटा हुआ है। ऐसा प्रतीत होता है कि इसकी तावे की चद्दर कूट कर बनाई गई हो। इसके सिरे पर एक गोलाकार छेद बना हुआ है जो एक कडी म पिरोकर दूसरे ताम्र पत्र के साथ रखे जान के लिए है। इस ताम्र-पत्र की भाषा सस्कृत मिश्रित स्थानीय भाषा है । लिपि उस समय की लिपि के अनुसार स्पष्ट है, परन्तु खोदने वाल ने इसमे कई अशुद्धिया रख दी हैं । मूल ताम्रपत्र म १२ पक्तिया हैं। मूल ताम्रपत्र को मैंने १६४८ ई० मे श्री लहरूलाल छोटा पालीवाल के पास देखा था और तभी इसकी प्रतिलिपि तैयार कर ली गई थी।

मेवाड के गुहिल वशीय नरेश पद्मसिंह का यह पहला ताम्रपत्र है। इसम सोमपर्व के अवसर पर शिवगुण को कदमाल म भूमि के अनुदान देने का उल्लेख है। इस ताम्रपत्र से यह भी स्पष्ट है कि ऐसे अनुदानो म स्थानीय वणिक, ब्राह्मण तथा शासक वग के राजपूतो की साक्षी रहती थी क्योकि स्थानीय शासन व्यवस्था के वे अग होते थे। शासन म मत्री का भी प्रमुख स्थान होता था जैसाकि इस ताम्रपत्र स स्पष्ट है।

इसका अक्षान्तर इस प्रकार है—

प १ ॐ ।। स्वस्ति श्री स० १२५१ वर्षे महाराज धिराज

प २ श्री पदमस्यहदेव मत्रि जगस्यह वर्तमाने । चाहू

प ३ हाण रा बाहड सुत रा मोकलस्य सकल राज्ये ।

प ४ चैत्र सुदि पोर्णिमास्या सोमपर्वे आराघर सू (सु)

प ५ त सि (शि) वगुणस्य हस्ते उदकपूवक । शविलर भूम्या

प ६ कदम्बालग्राम गाजणरहट मध्यवृति स

प ७ जुक्ता प्रदत्त भाव्य काल्हण साक्षि वणिककाल

प ८ उ साक्षि मेहरू रामूणसाक्षि सोलकिउ वो

प ९ ल्हण साक्षि अश्वमेघ सहस्त्राणि वाजपेय सता (शता)

प १० [निचगवा कोटि] प्रदानेन भूमिहर्तान सुध्यति (शुद्धति)

पं. ११. ....लयतिःऽहं पुण्य पवित्रता

पं. १२. ....स्यदोपं ऽअस्तिः सुभम् (शुभम्) ।

आहाड का ताम्रपत्र[७], (१२०६ ई०)

यह ताम्रपत्र गुजरात के सोलंकी राजा भीमदेव (दूसरे, भोलाभीम) का (आषाढ़ादि) वि० सं० १२६३ श्रावण सुदि २ (ई० स० १२०६ ता० ९ जुलाई) रविवार का है। इसकी भाषा संस्कृत है। इसमें मूलराज से लेकर भीमदेव दूसरे तक की वंशावली दी गई है। इसके पश्चात् इसमें लिखा है कि 'परमभट्टारक, महाराजाधिराज, परमेश्वर, अभिनव सिद्धराज श्री भीमदेव ने अपने अधीन के मेदपाट (मेवाड़) मंडल (जिले) के आहाड में एक अरहट उससे सम्बन्ध रखने वाली भूमि तथा कडवा के अधिकार वाला क्षेत्र एवं उसके निकट का मकान नौलीगाँव के रहने वाले कृष्णात्रिय गोत्र के रायकवाल ज्ञाति के ब्राह्मण वीहड के पुत्र रविदेव को दान दिया। इस दान-पत्र से कई ऐतिहासिक तथ्यों पर प्रकाश पड़ता है। इस दान-पत्र से निश्चित है कि वि० सं० १२६३ (ई० स० १२०६) तक मेवाड़ पर गुजरात के राजाओं का अधिकार था। इसमें मंडल शब्द का प्रयोग जिले की इकाई के लिए प्रयुक्त किया गया है जिससे प्रमाणित होता है कि आहड मेवाड़ का एक मंडल (जिला) था।

इसका कुछ मूलपाठ यहां उद्धृत किया जाता है—

"ॐ स्वस्ति''''समस्त राजावली विराजितपरम भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर श्री मूलराज देव पादानुध्यात'''परम भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वराभिनवसिद्धराज श्री मद्भीमदेवः स्वभुज्यमान मेदपाट मंडलांतः पातिनः समस्त राज पुरुषान्.......... वो (बो) धयन्यस्तुवः संविदितं यथा। श्री मद्विक्रमादित्योत्पादित संवत्सरशतेषु द्वादशेसु (पु) त्रिषष्ठि उत्तरेषु लौ. श्राम्व (व) ण मास शुक्लपक्ष द्वितीयायां रविवारेऽत्रांकतोपि संवत् १२६३ श्राम्व (व) ण शुदि २ रवावस्यां.......... श्री मदाहाडतल.............. [वमाउवा] नामारघट्टस्तअति व (व) द्धवा (वा) ह्यभूमिकडवासत्कक्षेत्रसमं श्रीमदाहाडमध्ये अस्य स..........गृहान्वितः....... नवलीग्राम वास्त० कृष्णा त्रिगोत्रे (त्रेय-गोत्राय) रायकवालज्ञाति० ब्रा (ब्रा)० वीहडसुत रविदेवाय शासनोदकपूर्व्वमस्माभिः प्रदत्तः............

कदमाल का ताम्रपत्र, (१२५९ई०)

यह ताम्रपत्र ७"×६" के आकार के ताँबे के टुकड़े पर खुदा हुआ है जिसके ऊपर के भाग में एक छेद हैं जो कड़ी के द्वारा दूसरे ताम्रपत्र को इसके साथ रखे जाने के लिए है। इसकी चद्दर प्रतीत होता है कि कूटकर बनाई गई हो। इसकी

---

७. इण्डियन ओरियन्टल कॉन्फ्रेन्स, दिसम्बर १९३३;
ओझा डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० ४८–४९।
ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ० ३६–३७, ६१।

भाषा संस्कृत मिश्रित स्थानीय भाषा है और उसमे प्राकृत की छाया है। लिपि उस समय की लिपि के अनुसार सुवाच्य है, परन्तु लेखक अथवा खोदने वाले ने इसमे अशुद्धियाँ रख दी हैं, विशेष रूप से 'श' के स्थान पर 'स' का खूब प्रयोग किया गया है।

उपर्युक्त ताम्र-पत्र मुझे १६४८ मे श्री लेहरूलाल, छोटा पालीवाल के पास देखने को मिला। इसकी प्रतिलिपि उसी समय तैयार कर ली गई थी। इसमे कुल १३ पंक्तियां हैं।

मेवाड के गुहिल वशीय नरेश तेजसिंह के समय का यह प्रथम ताम्रपत्र है जिसम सूर्य-पर्व मे शिवगुण के पुत्र तिकव को तेजपाल द्वारा कदमाल गाँव मे भूमि दान देने का उल्लेख है। इस अनुदान मे वहाँ के शिष्ट व्यक्तियों की साक्षी है जो उस समय की परम्परा का द्योतक है। इसी तरह मन्त्री की भी प्रमुखता इससे स्पष्ट होती है।

इसका अक्षातर इस प्रकार है।

प १ "ॐ" स्वस्तिश्री, स० १३१६ वर्षे महाराजाधिराज
प २ श्री तेजसिंहदेव रा० ललतपालस्य मन्त्रि समधरस्य
प ३ वर्तमाने । महुप्राग रा० सीहा सुत रा० चौदस सक
प ४. ल राज्ये कर्द्म्वाल ग्रामस्थिते ब्राह्मण सि (शि) वगुण
प ५ सुत तीकम्ब हस्ते उदक पूर्वक । वैशाख वदि ० (मे)
प ६. सूर्य पर्वे ऽरहट प्राजण मध्ये शविलरभूम्या । प्रदत्त
प ७. माई विजोयउ साखि । ब्राह्मणभालउ नालउ साक्षिः म
प ८ त्रि चादउ माखि वणिक् वइरउ वील्हण चाह० वाघ
प ९ रणमीह साक्षि मेहरउ वइजउ चावः मोरि उलवउ क
प १० मा धाधलः ऽस्वमेध सहस्राणि वाजपेय सतानि च
प ११ गवां कोटि प्रदानेन । भूमिहर्तान सुध्यति ऽस्मतवसे
प १२ समक्ने ऽमनोराजा भविष्यनि । तस्याह करे लग्नोनलो
प १३ प ममसासन ऽप्रस्य सासन परिपालयति सुम

वीरसिंह देव का ताम्रपत्र* (१२८७ ई०)

यह ताम्रपत्र वीरसिंह देव का है जिसका समय (आषाढादि) वि० स० १३४३ (चैत्रादि १३४४) वैशाख वदि १५ (अमावास्या, ई० स० १२८७ ता० १३ अप्रैल) रविवार का है। इसकी भाषा संस्कृत है। इसमे देवपाल देव के श्रेय के निमित्त भारद्वाज गोत्र के ब्राह्मण वैजा के पुत्र साल्हा को पतिज (पतिमोर) पथक (परगने) के माल गाव मे डेढ हल भूमिदान करने का उल्लेख है। इसमे आगे पीछे की भूमि सहित एक घर देने को भी अकित किया गया गया है। इस ताम्रपत्र से वागड के राजाओं के वशक्रम को निर्धारित करने मे सहायता मिलती है, यथा वीरसिंह के पहले देवपाल

*ओझा, डूगरपुर राज्य का इतिहास, ३६-३७, ६१

देव यहां का शासक था और उनकी राजधानी वटपद्रक (वड़ौदा) थी। इस दान-पत्र के साक्षीरूप में कई प्रसिद्ध पुरुषों के नाम दिये हैं। जिनमें श्री नूलदेवी (राजमाता), मंत्री वागण, खेतल, पुरोहित मोकल, व्यास सोमादित्य, राजगुरु सूदा, सेठ पारस, भीमा, श्रोत्रिय वावण और पंडित ताल्हा आदि मुख्य हैं। इन साक्षियों के नाम से यह प्रमाणित है कि उस समय शासन व्यवस्था में राजमाता, मन्त्री, राजगुरु, पंडित आदि का हाथ था और स्थानीय प्रतिष्ठित व्यक्तियों को भी ऐसे कार्यों में सम्मिलित कर लिया जाता था। इससे यह भी स्पष्ट है कि १३वीं सदी के वागड को मंडल में विभाजित किया गया था और मंडलों के नीचे पथक (परगने) एवं ग्राम थे। इसमें उस समय के कतिज नाम के पथक का उल्लेख है। इसके मूलपाठ का कुछ अंश इस प्रकार है—

"ॐ।। संवत् १३४३ वैशाख अ (=असित) १५ रवावद्येह वागड वटपद्रके महाराज कुल श्री वीरसिंह देव कल्याण विजय राज्ये........इहैव........महाराज कुल श्री देवपालदेव श्रेयसे भारद्वाज गोत्राय दोडी ब्राह्मण वयजापुत्राय ब्रा० तल्हा शर्मणे कतिज पथ के माल ग्रामे भूमिहल १½ हलैकस्य भूमि गृह १........एतद् शासनोदक पूर्व धर्मेण संप्रदत्त"।

नादिया गांव का ताम्रपत्र[८] (१४३७ ई०)

यह ताम्रपत्र नादियाग्राम, सिरोही से उपलब्ध हुआ था जिसे डा० ओझा ने राजपूताना संग्रहालय, अजमेर में सुरक्षित किया। इसका समय वि० सं० १४९४ आषाढ़ वदि है। इसमें अजाहरी (अजारी) परगने के चूरडी (चवरली) गांव में दवे परमा को भूमि दान करने का उल्लेख है। इससे प्रमाणित है कि आबू का प्रदेश महाराणा कुंभा द्वारा उक्त संवत् के पूर्व अपने अधिकार में किया गया होगा। यह समय देवड़ा सैंसमल का होना चाहिये जब आबू कुंभा के अधीन हो चुका था। इस ताम्र-पत्र का उपयोग १४वीं शताब्दी की स्थानीय भाषा के अध्ययन के लिए भी है। इसमें प्रयुक्त 'प्रगणां' शब्द बड़े महत्त्व का है जिसका रूपान्तर परगना है इसका कुछ मूलपाठ इस प्रकार है।

"स्वस्ति राणा श्री कुंभा आदेशता।। दवे परमा जोग्य अजाहरी प्रगणां चुरडीए ढीवडु नाम गणासू षे (खे) त्र वडनां नाम गोलीयावउ। बाई श्री पूरबाई नइ अनामि दीधउं........।। संवत् १४९४ वर्षे आषाढ वदि।।...."

खेरोदा का ताम्रपत्र[९] (१४३७ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा कुंभा के समय का है जिसमें वर्णित है कि उक्त महाराणा ने श्री एकलिंगजी के मन्दिर में प्रायश्चित कर दस हल भूमि का दान उपाध्याय जोशी जाना को दिया। इस दान में खेरोदा गांव के अलग-अलग स्थानों के खेतों को

---

८. ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भा० १, पृ० २८४

९. ओल्ड डिपो. रेकार्ड नं० २५८

दिया गया था जिनका पडोस एवं नाम इसमे दिये गये हैं। इसके अतिरिक्त उन खेतो के पास से जाने वाले मार्गों को भी दिया गया है जो 'भटेवर की वाट', 'माहोली री वाट' 'निवाण्वारी वाट' और 'वगडी री वाटी' के नामो से प्रसिद्ध थे। इससे सेरोदा की केन्द्रीय स्थिति का बोध होता है जहाँ से कई व्यापारिक मार्ग जाते थे। इसमे शभू को ४०० टका के दान का भी उल्लेख है जो उस समय की प्रचलित मुद्रा थी। इस दान के साक्षीरूप सेरोदा के प्रतिष्ठित व्यक्तियो के नाम भी उल्लिखित हैं जो कि स्थानीय परम्परा का बोध कराते हैं। यह लेख वि. सं. १४६४ माह सुदी ११ गुरु का है जो कुंभाकालीन आर्थिक एव धार्मिक व्यवस्था पर अच्छा प्रकाश डालता है। इसमे एकलिगजी मे राणा द्वारा प्रायश्चित करने का जो उल्लेख है वह बडे महत्त्व का है। उक्त महाराणा का १४३३-१४३६ का काल विजयों का काल है। सभवतः १४३७ मे किसी विजय के अनन्तर धर्मस्थान मे प्रायश्चित कर इस अनुदान द्वारा उसने पुण्य कार्य सम्पादन किया हो। ऐसी विजयो मे जो इस अवधि मे की गई थी वे सारंगपुर, नागोर, गागरोन, अजमेर, नरायणा, मण्डोर, आदि की थी, इन्ही किन्ही विजयो के उपलक्ष मे परम्परा के अनुसार प्रायश्चित के अनन्तर यह धार्मिक कार्य सम्पादित किया गया था। इसका मूल पाठ जो उस समय की स्थानीय भाषा मे है इस प्रकार है—

"स्वस्ति श्री एकलिंग प्रसादातु महाराजाधिराज महाराणा श्री कुंभकर्ण आदेशात् पेरोदा ग्राम मध्ये हला दत्ता १० मु. भटेउर री वाटी खेत गूजरारा रहटे वालो पीपली मुद्धा भटेवररी वाटी नीचा छापर आगे मुद्दा खेत १ मेललाभोढि माहोलीरी वाटी वहोडोरो येडो खेत १ तलारे उटे निवाण्या री वाटी पेत १ गोइराह वाटी वगडिरी वाटी मेत १ अनलाई तलाई आगोरी खेडेपरसाणे रो एवं भुंइ हल १० री राणे श्री कुंभकर्ण उपाध्याय जोशी जाना सुत हरी थी टका शत ४०० उपाध्याय श्रृंमइ दीधी सही दीधी प्रोहित मोत्ता इत साह-साहण तीरा विद्यमान दिवाडी गामरा गामहटा श्रृं दिवाडी देव श्री एकलिकमाहे सर्वप्रायश्चित करे दीधी सही "संवत् १४६४ वर्षे माह शुद्धि ११ गुरु दिनो। सेरादारी भुइरूपत्र "शुभंभवतु" कल्याण भूयात्" ॥

करेडा गाव का ताम्रपत्र [१०], (१४६० ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा कुभा के समय का है जिसमे ओझा कलु को करेडा ग्राम मे ३ हल भूमि चन्द्रपर्व के समय पुण्यार्थ देने का उल्लेख है। इसका मूल इस प्रकार है—

. "स्वस्ति राणा श्री कुंभा आदेशात् ॥ ओजा कलु योग्य करेडा ग्राम मध्ये क्षेत्र हलवा ३ उदक दीधऊं चन्द्रपर्व मध्ये दत्ता। सवत् १५१७ वर्षे पोष सुदी १५ शने लिषतं दुम्र श्रीमुख प्रतिदुए रावनरसिंघ"

---

१०. ओल्ड डिपोजिट रेकार्ड, न. १३६१

पारसोली का ताम्रपत्र [11], (१४७३ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा रायमल के समय का है। इसमें उल्लिखित है कि उक्त महाराणा ने गणेशराय चोबीसा ब्राह्मण को पारसोली गांव में, जो परगना बारा में था, तीसरे हिस्से की जमीन पुण्यार्थ दी। इस ताम्रपत्र में भूमि की किस्मों पर प्रकाश पड़ता है जो पीवल, गोरमो, माल, मगरा आदि नामों से जानी जाती थी। इस भूमि को समस्त लागों से भी मुक्त कर दिया गया था जो उस समय प्रचलित थीं। ये दान चन्द्रपर्व के समय किया गया था। इस दान-पत्र को पंचोली रायरणछोड़ टीकमदासोत ने लिखा था। पारसोली गांव में अनुदान की व्यवस्था बड़े महत्त्व की है। उदा से राज्य छीनने के समय रायमल इसी मार्ग से चित्तौड़ गया था। संभवतः गणेशराय चोबीसा उसका सहयोगी रहा हो। ये दान-पत्र भी उसके राज्यारोहण के निकट काल का ही है जिससे उक्त अनुमान की पुष्टि होती है।

चीकली ताम्र-पत्र [12], (१४८३ ई०)

इस ताम्र-पत्र की भाषा १५वीं शताब्दी की वागडी है जिसमें खेतों के टुकड़ों को कटकों में बांटने की पद्धति पर प्रकाश पड़ता है। इसमें उस समय लिए जाने वाली लागतों का उल्लेख है। इसमें पटेल, सुथार एवं ब्राह्मणों द्वारा खेती की जाने का वर्णन है। प्रस्तुत ताम्रपत्र में रावल गंगदास द्वारा जोशी वेणा को भूमि का अनुदान देना अंकित है। इसका मूल इस प्रकार है—

"संवत् १५४० वर्षे फागण वदि ७ सनौ अद्येह श्री गिरिपुरे राउल श्री गंगादास आदेसात जोसी वेणानइ आचन्द्रार्क आघाटे श्री शलाए ने उलहणी श्री देहासिरि उदक करी आविऊं छई ते मुई झाडुला आगड माही आयु छई तथा लहुडी चीखली माहि धकुड़ी नु काढछई तथा वडीआ खेत्रना कटका २ तथा खलालू भाढी डो श्री सहित गाव माही घाती आपूछई अपरं हल ३त्रणी भूमि गिरिआता ग्राम माहि आपी भूमि छई तथा आंबा तत्र आगला राजश्री पई छई ने ते भूमि नी न्यही हल भुमि २ पटेल रावुसेलु खेडि छई तेऊ वरुज अरहट खान सहित सुतहार लखमण वेडई छइ तेहनी स्वस्या कु'णि न करवी स्वस्या करइ तेहन राउल गियानी आण छइ। दुई श्री स्वयं प्रति दुए परमार विह महे लखमणसी तिवाडी"

रायमल का ताम्रपत्र [13], (१४८७ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा रायमल का है जिसमें जोशी कडुआ को वरवाडे में एक रहट व खेत देने का उल्लेख है जो सरकारी भूमि से दिया गया है। इसकी भाषा कई जगह अस्पष्ट है। इसका मूलपाठ इस प्रकार पढ़ा गया है—

"स्वस्ति श्री महाराजाधिराज महाराणा श्री रायमल आदेशात्॥ जोसी

---

११. ओल्ड डिपो० रेकार्ड नं० १७७

१२. डूंगरपुर राज-पत्र

१३. ओल्ड डिपो० रेकार्ड, नं० १२८६

कडुग्रा योग्य ।। रहट एक हुडसा बरवाडा मध्ये······ हुते सु कडुग्रा हे ग्राघाटेउ छे दत्ता रहट एक बडला ग्रनइ प्रथमज पेत्र जोसी कडुग्राती रहहुता सु सेत्र राउलाती ग्रापी कण नाही करे ।। संवत १५४४ वर्षे जेठ सु. ५ दुए श्री मुखे"

मेनाल का ताम्रपत्र[14], (१४८८ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा रायमल्ल के समय का है जिसमें राजि नामक मेनारिया ब्राह्मण को सौ टका प्रतिवर्ष का ग्रनुदान के उल्लेख है। यह ग्रनुदान उक्त महाराणा ने ग्रपने पिता कुंभा एवं ग्रपनी माता ग्रपूर्व देवी के श्रेयार्थ चित्तौड के समाधीश्वर के समक्ष किया। इस ताम्रपत्र में १५ वी शताब्दी की प्रचलित भाषा का रूप है जिसका मूलपाठ इस प्रकार है—

"स्वस्ति श्री महाराजाधिराज महाराणा श्री रायमल्ल ग्रादेशाती गाम महणार टंका सो १०० ऽ ग्रके टका सो एक श्री राजि वरस करय ग्रापता सु श्री राजि महिणार्‌या ब्राह्मण जोगा उदक करे पाम्या संवत १५४५ वर्षे मार्ग वदि ३० ग्रमावस्या सोमेदेव श्री समाधीश्वर सनिध्य ने टंका सो १०० ऽ एक वरस कर्‌या उदक कीयू पूजा राणा श्री कुंभकर्ण राणी श्री ग्रपूरवदे प्रीती उदक कर्‌या"।

ग्रांवागाम का ताम्रपत्र[15] (१५०० ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा रायमल के समय का है जिसमे उल्लिखित है कि महाराणा ने पड्या रामदास को ग्रावा गाँव मे सात हल भूमि का दान किया। इसकी ग्राज्ञा पचोली हीरा के द्वारा दी गई। इसका मूलपाठ इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणा श्री रायमलजी ग्रादेशात् ।। पड्या रामदास योग्य गाम ग्रावो माहे हल ७ तुइ ग्राघाट उदकि करे दई सवत् १५५७ वर्षे माह सुदि १५ पर्वणी दुवे श्रीमुखि प्रति दुवे पचोली हामण····"

तलोडी का ताम्रपत्र[16] (१५३३ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा विक्रमादित्य के समय का है जिसमे व्यास शंकर को तलोडी गाव सूर्यपर्व पर पुण्यार्थ देने का उल्लेख है। इसकी ग्राज्ञा शाह माणा द्वारा दी गई थी ग्रौर उसे पंचोली विनायक ने लिखा था। ये ग्रनुदान बहादुरशाह के चित्तौड ग्राक्रमण की सम्भावना के समय किया गया प्रतीत होता है। इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणा श्री विक्रमादीत ग्रादेसात् व्यास··· भरत साकर योग्य १ गाम थने तलोडी मया कीधी उदकी ग्राधाटि दती सवत् १५८९ वरषे भावदा-वदी ३० सूर्य परव मध्यदत्ता दुए साह माधा लिषत पचोली विनायक स्वदत्ता ···"

---

१४. ग्रोल्ड डिपो० रेकार्ड न० ६२५

१५. ग्रोल्डडिपोजिट रेकार्ड, बिना नबर

१६ ग्रोल्ड डिपो० रेकार्ड जागीर मिसल २६/४७ सं० १५

पुर का ताम्रपत्र[१७], (१५३५ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा श्री विक्रमादित्य के समय का हैं जिसमें हाडी कर्मेती द्वारा जौहर में प्रवेश करते समय तिवाडी करण को पुर में एक हल भूमि दान देने का उल्लेख है। इसका समय संवत् १५९२ चैत्रवदि ११ है। इस ताम्रपत्र का बड़ा ऐतिहासिक महत्त्व है। ये वह समय था जब बहादुरशाह के चित्तौड़ के दूसरे घेरे के समय सभी राजपूतों ने उक्त गढ़ की रक्षा के लिए अपना बलिदान किया था और राजपूत वीराङ्गनाओं ने जौहरव्रत द्वारा अपने सतीत्व की रक्षा की थी। इस ताम्रपत्र से जौहर की प्रथा पर प्रकाश पड़ता है तथा चित्तौड़ के द्वितीय शाके का ठीक समय निर्धारित होता है। इसका मूल इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणा श्री विक्रमादित जी बाइ श्री करमती हाडी जी जौहर पैंठता हल १ एक उदक दीधी तिवाडी करनौ जाति गुजरगौड....नै दीधो दुवाई पंचोली जेस्यंघ प्रतिदुवे श्री राणी करमैती बाई श्री हजूरी धरती हल १ एकरी पुरमाहे दीधी....संवत् १५९२ वरषे चैत्र मासे कृष्णपक्षे एकादसी बुधवारे चित्रकोट माहे दीधे सुभं भवतु.॥"

धनवाडा का ताम्रपत्र[१८], (१५२१ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा साँगा के समय का है जबकि वह गुजरात आदि स्थानों की विजयों से निश्चिन्त हो बाबर के आक्रमण के पूर्व अपने राज्य की व्यवस्था में संलग्न था। इसमें उल्लिखित है कि उसने पुरोहित दामोदर को, जो पल्लिवाल जाति का ब्राह्मण था, अनुदान देकर सन्तुष्ट किया। इसमें दिया हुआ समय वि० सं० १५७८ जेठ वि० ३० शुक्र है।

गाँव बटेरी का ताम्रपत्र[१९], (१५२५ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा सांगा के समय का है जिसमें श्रीधर को बटेरी गांव पुण्यार्थ दिया जबकि उसके द्वारा दूसरे राजाओं से कर आदि संग्रह का काम लिया। इसका लेखन साह गिरधर ने किया। इस ताम्रपत्र का बड़ा ऐतिहासिक महत्त्व है जिसमें राणा की राजनीतिक स्थिति पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। उसके समय में अनेक राजा कर, लीक आदि देते थे यह भी इसमें उल्लिखित है। इसका मूल इस प्रकार है—

'महाराजाधिराज महाराणा श्री सागा आदेसातु" ग्राम बटेरी कस्य श्रीधर योगा आघाट सरब इते दुजा (रजा) दण्ड कर लीक देता पहुंचा स्वामि महे आघाट दत्ता संवत् १५८२ वर्षे वैसाक वदि १ सुक्र श्रीमुषे लिषत साह गरधर पंचोली मालारा स्वदत्त परदत्त वा यो हरति वसुधरा षष्टि वर्ष सहस्राणि विष्टाया जायते कृम।"

---

१७. ओल्ड डिपोजिट रेकार्ड, नं० १४९८

१८. ओल्ड डिपोजिट रेकार्ड, उदयपुर की प्रतिलिपि के आधार पर

१९. ओल्ड डिपो० रेकार्ड, नं. २६/१४४

सग्रामसिंह का ताम्रपत्र[20] (१५२६ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा सग्रामसिंह के समय का है जिसम श्रीधर को सूर्यपर्व मे एक गाव पुण्यार्थ देने का उल्लेख है। यह पुण्य खनवा के युद्ध के पूर्व चित्तौड दुर्ग से दिया गया था जबकि बाबर पानीपत के युद्ध को जीत चुका था। उन दिनो युद्धारम्भ के पूर्व तथा पश्चात् अनुदान देते थे ऐसी परम्परा थी। इसका मूल पाठ, जो कई जगह अस्पष्ट है, इस प्रकार है—

"स्वस्ति श्री चित्रकूट गढ महादुर्गात् महाराजाधिराज महाराणा श्री सग्राम आदेसात् ।। गाव १ मिह प्राप्तगा ग्रामे भट्ट बदुश्रा विद्याधर योग्य सूर्यपर्व उदक आधार करे दीध सवत १५८३ आषाढ विदि ७ "

जालिया गाव (मेवाड) का ताम्रपत्र[21], (१५३२)

यह ताम्रपत्र महाराणा विक्रमादित्य का है जिसने सवत् १५८९ मे पुरोहित जानाशकर को जालिया ग्राम बाई लषा से विवाह करते समय माडलगढ़ मे पुण्यार्थ दिया। इस ताम्रपत्र से सिद्ध है कि उक्त सवत् के पूर्व महाराणा गद्दी बैठ गये थे। कर्नल टॉड ने सवत् १५९१ मे महाराणा का गद्दी बैठना लिखा है वह ठीक नही है। अमरकाव्य मे तथा ख्यातो म भी विक्रमादित्य का गद्दी पर बैठना सवत् १५८७ म माना है। मिराते सिकन्दरी तथा वशभास्कर से भी इस सवत् की पुष्टि होती है। ताम्रपत्र का मूलपाठ इस प्रकार है—

"स्वस्त श्री महाराजाधिराज महाराणा श्री विक्रमादित आदेसातु प्रोहीत जानासकर हो ग्राम १ जालौ मयाकरे आघाटी रामदतु करी दियो श्री नाइण श्रीनी करे दियो श्रीराजी माडलगढी पारणौबा पधारया बाई लषा परणआ आया तिरो चोडी मधे उदक किधो रा श्री रावत भवानीदासजी हाडा अरजन विदमान सहस्रारा बहु भीर वसुआ मुकाराम भी सगरादिभी —स्याजमजदाभुमी तस्या तस्यतदात स्वदत परदत वाजो हरती वमुधरा पस्ट वर्ष सहस्राणा बीष्टाया—जाइने क्रमी १ सवत् १५८९ वष वीसाष सुदि ११ लीपत पचोली महेस छौजी"

विजन गाव का ताम्रपत्र[22], (१५३९ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा उदयसिंह के समय का है जबकि उसने अपने राज्यारोहण काल के उपरान्त चित्तौड के आसपास पुन नई व्यवस्था स्थापित करना प्रारभ किया था। उसके राज्यकाल के प्रारभिक वर्षों की उपलब्धियो मे इससे काफी प्रकाश पडता है। इसमे दिया गया समय वि० स० १५९६, पौष सुदी १५ है।

---

२०. ओल्ड डिपो० रेकार्ड, न० ६२६,

२१. वीर विनोद, भा० २, पृ० २५, ५५।

२२ ओल्ड डिपोजिट रेकार्ड, उदयपुर की प्रतिलिपि के आधार पर।

देवथडा गांव का ताम्रपत्र[२३], (१५४३ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा उदयसिंह के काल का है जिसमें उल्लिखित है कि उसने केशवनाथ ब्राह्मण को देवथडा गांव में अगणवे रहट का वाड सहित अनुदान किया। इसकी आज्ञा साह हीराचंद के द्वारा दी गई थी। यह ताम्रपत्र भी उसी संधि काल का है जब मेवाड़ शेरशाह के आक्रमण की संभावना की परिस्थिति से गुजर रहा था। इसका समय वि. सं. १६०० माघ वदि अमावस्या है। इसमें प्रयुक्त किये गये शब्द रहटि, वाड्या आदि उस समय की भूमि व्यवस्था के अध्ययन के लिए उपयोगी हैं।

पलासिया गांव का ताम्रपत्र[२४], (१५४३ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा उदयसिंह के समय का है जिसमें व्यास शंकर को पलासिया गांव, परगने मांडलगढ़, का ग्रास पुण्यार्थ दिये जाने का उल्लेख है। इसकी आज्ञा भवानदास तथा साह आशा के द्वारा दी गई। इसका भी समय शेरशाह के चित्तौड़ आक्रमण की परिस्थिति के लगभग का है इसका मूल इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणा श्री उदेसिंघ आदेशातु व्यास संकरकस्य ग्रास ममाकीधो १ ग्राम पलास्यो पडीगाने मांडलगढ़ रे मया कीधा आघाट उदक करे मया कीधो दुए श्रीमुख प्रति दुवे राजत भवान्तदास साह आसो स्वदत्तं.......संवत १६०० वर्षे मगसर सुदी ४ गुरु।

घोडच का ताम्रपत्र[२५], (१५४३ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा उदयसिंह के समय का है। इसमें घोडच गांव के केशवनाथ को एक रहट तथा बीड़े की भूमि देने का उल्लेख है। यह ताम्रपत्र बड़े महत्त्व का है क्योंकि यह भूमिदान भी उस समय का है जबकि संभवतः महाराणा शेरशाह के आक्रमण की संभावना के काल से गुजर रहा था। उस समय पुण्यादि कार्यों को परम्परा के अनुसार सम्पादित किया जाता था। इसका ठीक समय वि० सं० १६०० माघ वदि अमावस्या है।

गांव महदी का ताम्रपत्र[२६], (१५४४ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा उदयसिंह के समय का है जिसमें व्यास ब्रह्मदास को ग्राम महदी का पुण्यार्थ देना अंकित है। इस समय साह आसा प्रधान पद पर था। इसका समय वि० सं० १६०१, माह सुदि १२ है। संभवतः शेरशाह के आक्रमण की संभावना से निश्चिन्त अवस्था में ऐसा अनुदान किया गया हो। जोधपुर की विजय के बाद (१५४३ ई०) शेरशाह चित्तौड़ की ओर आ रहा था कि उसके जहाजपुर के

२३. ओल्ड डि० रेकार्ड नं० २५६।

२४. ओल्ड डि० बिना नंबर।

२५. ओल्ड डिपोजिट रेकार्ड, नं० २५८।

२६. ओल्ड डिपो० रेकार्ड, नं० ७५६।

घीमे पर राणा ने किले की कुंजियाँ उसके पास भेज दी और सुलह कर उसे लौटा दिया। इस अर्थ मे इस दान-पत्र का बड़ा महत्व है जिसका मूलपाठ इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणा श्री उदेसिंघ आदेसातु व्यास ब्रह्मदास कस्य गाम १ महदी आधार उदवे कर मया कीधो संवत् १६०१ वर्षे माह सुदि १२ दुए श्रीमुखे प्रतिदुए साह मासो..........."

गांव पाडीव (सिरोही) का ताम्रपत्र[२७] (१५४६ ई०)

इस ताम्रपत्र मे अरिसिंहजी दुर्जणसाल द्वारा जोसी रामा को भूमि दान देने का उल्लेख है। इसमे ढीबडुं तथा खेत्र एवं ग्रास शब्दो का प्रयोग उस समय के सिंचाई तथा खेतो की व्यवस्था के लिए प्रयोग किया गया है। ये अनुदान चन्द्रग्रहण के समय किया गया था।

इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

"महाराव श्री अरिसिंहजी दुर्जणमालजी व चनातु गांव पाडीव माहे ढीबडुं १ खेत्र नीचे १३ वाणिहे भा मोकाम डाबला जोसी रामानी उदाक आकारि मया कीध्यं हैमा ममधिज हाजी वरसाली ग्रास सर्वलाल हालो उघरथा हरस मेति जोसी रामानु दीधु संवत १६०३ वर्षे काती सुदी १५ श्रुग्रो चन्द्र-ग्रहण उदक कीध्न स्वदेत परदत्तावा सोहरे वसुधरा पष्टिवष सहश्राणि विष्टया जायता कमि श्रीरस्तु"

भीमगढ गाँव का ताम्रपत्र[२८] (१७५६ ई०)

भीमगढ गाव (बासवाडा) का एक ताम्रपत्र महारावल पृथ्वीसिंह के समय का है जिसमे वि० स० १८१३ मार्गशीर्ष सुदि ५ (ई० स० १७५६ ता० २६ नवम्बर) को लूणावाडा के स्वामी सखतसिंह से युद्ध होने का उल्लेख है। इस अवसर पर उसके (सखतसिंह) काका उदयसिंह का मारा जाना और शत्रुओ से फतहजग नामक नक्कारे का महारावल के हाथ आना अकित है। इस युद्ध मे राणा भागा, उसकी फौज नष्ट हुई, केवल मात्र एक घोडी बच गई। इस विजय के उपलक्ष मे नगारची मामद (महम्मद) को गांव भीमगढ इनाम के रूप मे देने का वर्णन है। उपर्युक्त ताम्रपत्र मे सखतसिंह नाम भूल से उत्कीर्ण हुआ हो या प्रतिलिपित हुआ हो ऐसा प्रतीत होता है, क्योकि लूणावाडा मे इस नाम का कोई राणा नही हुआ। इस समय वहाँ का शासक बख्तसिंह था और यह युद्ध भी उसी के साथ हुआ था।

इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

"रायाराय महाराजाधिराज महारावल श्री पृथ्वीसिंघजी विजेराज्ये नगाराजोडी सू तरी फतेजग गाव लूणावाडे राणा सखतसिंहजी सूं वजीयो हुओ तारी आवी छे। स० १८१३ ना मगसर सुदि ५ दने श्री राउल जी ने फते हुई।

---

२७ सिरोही रेकार्डस से प्राप्त अपेन्डिक्स 'बी'।

२८ ओझा, बासवाडा राज्य का इतिहास, पृ० १३४-१

राणा नाठा, फोज मराणी, राणानो काको उदेसिंघजी मारा गया.........
फोज सर्व मारी गई घोड़ी १ वेरी आवी छे इस इनाम में नगारची मामथ (महम्मद) ने गाम भीमगढ आप्यु छे लेतु खुशी थी वापरजे जुगो जुग"।

दामाखेड़ी का ताम्रपत्र[29] (१५६४ई०)

यह ताम्रपत्र दामाखेडी गाँव को पुरोहित दामा को सूर्यग्रहण पर दान देने का उल्लेख है। इसका आकार ८.७"×५" है। इसमें सूर्यपर्व पर दिये जाने अनुदान और अन्य करों के न लिये जाने की व्यवस्था दी है।

इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

"श्री महारावत जी श्री तेजसिंह जी वचनातु आगे बरामण परोत दामाजी जोग्य थने श्री कृष्णार्पण सूरजपरव माहे गाम दामाखेड़ी नीमसीम सुदा जी माहे जमीन बीघा ११०० अगारे से या चन्द्रार्क यावत् उदक आघाट कर सारी लागट व लगट टकी टुसी सहित नीरदोस करी आपी जणीरी मारा-वंशरो थई ने चोलण करेगा नहीं चोलण करे जणीने चीत्तोड़ भाग्यानु पाप छे। स्वदत्तां आदि..........दुवे श्री मुख हर संवत् १६२१ रा वर्षे भादवा सुदी ११ दीने श्रीरस्तु"।

इसको चन्द्र-ग्रहण पर न देकर सनद पीछे से बनाया जाना प्रमाणित होता है क्योंकि सूर्य ग्रहण आषाढ़ वदि ३० सं० १६२१ को था।

मुलेलागाँव का ताम्रपत्र[30] (१५६९ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा उदयसिंह का है जिसमें शिव को मुलेला गांव में एक रहट देने का उल्लेख है। इसकी आज्ञा शाह जस्त के द्वारा दी गई थी। इसका समय वि० सं० १६२६ भाद्रपद शुक्ला १५ है। लगभग वि० सं० १६१६ से १६२६ तक के काल के इस प्रकार के सैंकड़ों ताम्रपत्र महाराणा उदयसिंह के मिलते हैं जिनको गिरवा जिले को बसाने के उपलक्ष में दिये गये थे। चित्तौड़ छोड़ने के बाद नई उदयसिंह की व्यवस्था पर प्रकाश डालने में ऐसे ताम्रपत्र बड़े उपयोगी हैं। यह ताम्रपत्र भी उनमें एक है।

ढोल का ताम्रपत्र[31] (१५७४ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा प्रताप के समय का है जबकि उसने ढोल नामक गाँव में सैनिक चौकी का प्रबन्ध किया था और उसी के प्रबन्धक जोशी पुनो को ढोल में भूमि का अनुदान दिया था। हल्दीघाटी के युद्ध के पूर्व किये गये प्रबन्ध का यह एक महत्त्वपूर्ण पक्ष था जिस पर उक्त महाराणा ने पूरा ध्यान दिया। इसका

---

२९. ओझा, प्रतापगढ़ राज्य का इतिहास, पृ० १०१

३०. ओल्डडिपो० रेकार्ड, नं० ६९०; जी० एन शर्मा मेवाड़ एण्ड मुगल, पृ० ५७; जी० एन शर्मा, बिबलियोग्राफी, पृ० १४

३१. ओल्ड डिपो० रेकार्ड, उदयपुर, नं० २१४

आकार ६"×४" है और मूल पाठ मे ८ पंक्तियां हैं।
जिसका कुछ अंश इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणाजी प्रतापसिंघ जी आदेशातु जोसी पुनो कस्य गाम ढोल माहे चोकीरा खत्रा माहे सवारारी मुरचा घाटे रार बगता [राखी] ...... मया कीधा सवत् १६३१ वरषे काती सुदी १५ श्री मुख प्रति हुकम धणीरा माफिक पचाली गोवर्धन"

गांव पीपली (मेवाड़) का ताम्रपत्र [32] (१५७६ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा प्रतापसिंह जी के समय का है। इसमे महाराणा द्वारा आचार्य बालाजी को पीपली मया करने का उल्लेख है। इससे स्पष्ट है कि हल्दीघाटी के युद्ध के बाद केन्द्रीय मेवाड के क्षेत्र मे प्रजा को पुनः बसाने का काम महाराणा ने आरभ कर दिया था। जिन्हें युद्ध के समय मे हानि उठानी पड़ी थीं उनकी सामयिक सहायता की गई थी। इस समय भामा प्रधान के कार्य को करने लगा था और रामा भी राज्य के किसी कार्य भार को उठाये हुआ था। इसका मूलपाठ का अंश इस प्रकार है।

"महाराजाधिराज महाराणा श्री प्रतापस्य आदेशातु आचार्य बाला जीवा कीसनदास बलभद्र कस्य गांव १ पीपली मया कीधो उदक आघाटे दत्ता कुंभलमेर मध्ये सवत् १६३३ वर्ष भादवा सुदी ५ रीवो दुग [श्री मुखे प्रति दुए रामजी] साह भामो पहला पतर बले गुयो लुटे गयो सु नवो करे मया कीधो"

ओडा गांव का ताम्रपत्र [33] (१५७७ ई०)

यह ताम्रपत्र वि० स० १६३४ मार्गशीर्ष वदि ३ का है। इसका आशय यह है कि महाराणा प्रताप ने ओडा गाव (मेवाड) पुरोहित रामभगवान काशी को पुण्यार्थ दिया। यह गाव पहले महाराणा उदयसिंह ने दान किया था, परन्तु गोगुन्दे की लड़ाई के दिनो मे पुराना ताम्रपत्र खो गया, जिससे यह नया कर दिया गया। इसकी आज्ञा भामाशाह के द्वारा दी गई थी और पचोली जेता ने इसे लिखा था। राम जाति से सनाढ्य ब्राह्मण था और कोठारिया ठिकाने के चौहानों का पुरोहित था। वणवीर के समय उदयसिंह को कुंभलगढ मे गद्दी बिठाने वाले सरदारो मे रावत खान (कोठारिया) ने प्रमुख भाग-लिया था। उस पर पूर्ण विश्वास होने के कारण महाराणा ने अपने भरोसे के सेवक उसी से लिये थे, जिनमे पुरोहित राम भी था। उसी समय से राम के वंशज उदयपुर मे रहने लगे थे।

इस दानपत्र से महाराणा की व्यवस्था नीति पर अच्छा प्रकाश पडता है। हल्दी घाटी के युद्ध से जो अव्यवस्था हो गई थी उसको ठीक करने का काम प्रताप ने शीघ्र आरभ कर दिया था। इससे यह भी स्पष्ट है कि राज्य मे ओसवालो और

---

३२ ओल्ड डिपो० रेकार्ड, जागीर मि० न० ६५ फाइल न० २६/१३३
३३. ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भा० १, पृ० ४६२

पंचोलियों की प्रमुखता बढ़ गई थी।

मृगेश्वर गाँव ताम्रपत्र [३४] (१५८२ ई०)

यह ताम्रपत्र वि० सं० १६३९ फाल्गुन सुदि ५ का है, जिसका आशय यह है कि महाराजाधिराज महाराणा प्रतापसिंह ने चारण कान्हा को मीरघेसर (मृगेश्वर) गाँव, जो गोडवाड में था, भामाशाह की उपस्थिति में दिया।

इस ताम्रपत्र को मुंशी देवीप्रसाद ने सरस्वती में 'दन्ताल-पत्र' सहित प्रकाशित किया है (चारण लोग ताम्रपत्र के आशय को कविता बद्ध कर लिया करते थे जिसे दन्ताल-पत्र कहते हैं।)

इस दानपत्र का ऐतिहासिक महत्त्व है। इससे प्रमाणित होता है कि गोडवाड का भाग महाराणा प्रताप के अधिकार में था।

गाँव पंडेर का ताम्रपत्र [३५], (१५८८ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा प्रतापसिंह के समय का है जिसमें पंडेर में राणा द्वारा त्रिवाडी सादुन्ननाथ को पुनः भूमिदान करने का उल्लेख है। इस ताम्रपत्र का बड़ा ऐतिहासिक महत्त्व है, क्योंकि इसके द्वारा महाराणा की पुनः विजय बनास के कोठे वाले पंडेर गांव तक हो जाना प्रमाणित है। इससे यह भी सिद्ध है कि कर्नल टॉड द्वारा वर्णित महाराणा की दयनीय स्थिति विशेष रूप से काल्पनिक है। इस ताम्रपत्र से महाराणा की व्यवस्था नीति पर प्रकाश पड़ता है। इसका मूलपाठ इस प्रकार है—

"सिद्धश्री महाराजाधिराज महाराणा जी श्री प्रतापसिंघजी आदेशातु तिवाडी सादुल नाथरा भवान काना गोपाल टीला धरती उदक आगे राणाजी श्रीजी तावा पत्र करावे दीधो थो प्रगणे जाजपुर रा गाम पडेर महे धरती वीगा ११ करे दीधी श्रीमुष हुकम हुओ साह भाभा संवत् १६४५ काती सुद १५।

• "महाराणाजी श्री उदेसिंघजी रो दत्त"

प्रतापगढ़ का ताम्रपत्र [३६], (१५९५ ई०)

यह ताम्रपत्र वि० सं० १६५२ आषाढ़ सुदि १ का भानुसिंह द्वारा दिया गया जोशी नारायण के नाम का है। इसमें महारावत तेजसिंह के अन्तिम समय में अमलावदा गाँव में संकल्प की हुई पैंतीस बीघा भूमि दान करने का उल्लेख है। इसके द्वारा सूचना प्राप्त होती है कि आज्ञा की सूचना देने वाला कोठारी शामल एवं इसका लेखक पंचोली नेता था। इसका कुछ अंश इस प्रकार है—

"महाराज श्री रावत भानजी वचनातु जोशी नराणजी जोग आप्रच। मु

---

३४. सरस्वती, भाग १८, संख्या २, पृ० ९५–९८
ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भा० १, पृ० ४६२

३५. ओल्ड डिपो० रेकार्ड, नं. ३६८

३६. ओझा, प्रतापगढ़ राज्य का इतिहास, पृ० ११७

वीगा ३५) स्राके पैंतीस रावतु श्री तेजसीजी रे स्रातर सम्परा उदक करी थी, ज्या गाम स्रमलावदा मांहे 'उदक स्राघाट ताया पत्र करे दीधी (दुवे कोठारी शामल लिखु पचोली नेता) समत १६५२ वरषे स्रापाड सुद १"

प्रतापगढ का ताम्रपत्र[37], (१६२२ ई०)

यह ताम्रपत्र वि.स. १६७६ कार्तिक सुदि ११ सोमवार का जोशी ईसरदास के नाम का है जिसमें बहु राठोड तथा बहुराणी खानए का ३१ बीघा भूमि सूर्य-ग्रहण के अवसर पर दान करने का उल्लेख है। इससे उस समय की धार्मिक स्थिति का पता चलता है। इसका मूल इस प्रकार है—

"महाराज श्रीरावल सीगाजी (सिंहा) वचनातु जोसी इसरदास योग्य ग्रप्र च खेत बीगा ३१ स्रके स्रकतीस दीदा जेरी खेत बीगा ११ वहुजी राठोड-कमल्या महे दीदा खेत बीगा २० बहुजी रणी खानए महे धर पेती, रु भडा सो दीदो मणी थगते बीगा ३१ सुरजपरब महे दीदा उदक स्रघट कर दीदा मारा वसरो, कोहो मद करसी नहीं स्वदत स्रादि सवत १६७६ वरषे काती सुद ११ वार चोम दीने"

भावरिया गाँव का दानपत्र[38], (१६१८ ई०)

यह दानपत्र भावरिया गाँव (बांसवाडा) का है। इसका समय वि०स० १६७५ मार्गशीर्ष सुदि १५ (ई० स० १६१८ ता २१ नवम्बर) है। इसमे उल्लिखित है कि जब महारावल समरसी उज्जैन तथा मालवा से पीछे लौटे तो इनकी माता श्यामबाई ने उत्सव किया और उस समय भावरिया गाँव का दान किया।

ठीकर्‌या गाँव (मेवाड) का ताम्रपत्र[39], (१६२८ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा जगतसिंह के समय का है जिसमे गढवी सोमराज दधिवाड्या को गाव ठीकर्‌या उदक देने का उल्लेख है। इसको साह स्रखेराज के प्रतिदुवे से पचोली केसवदास द्वारा लिखा गया। इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

"महाराजाधीराज महाराणा श्री जगत्‌सिंघजी स्रादेशातु गढवी सोमराज जात धधवाड्या कस्य १ गाव ठीकर्‌यो वडो उदक स्राघाट करे मयाकीधो, दुवे श्रीमुख प्रतदुवे साह स्रखेराज लीषत पचोली केसोदास स्वदत्तं परदत्तं जे हरत वीसधरा पस्ट वरस से हसराणा वीस्टा स्रजाईते कम सवत् १६८५ व्रपे स्रासाड बदी ३ गुरु"

पीपलूस्रा गाँव का दानपत्र[40], (१६३७ ई०)

यह ताम्र पत्र महारावल समरसी (बांसवाडा) के समय का है जिसका समय वि० स० १६६३ माघ सुदि १५ (ई० स० १६३७ ता ३० जनवरी) सोमवार है। इसको

---

३७. स्रोझा, प्रतापगढ राज्य का इतिहास, पृ० १२६

३८ स्रोझा, बांसवाडा राज्य का इतिहास, पृ० १००

३९. वीरविनोद, भा० ३, पृ० ३८०

४०. स्रोझा, बांसवाडा राज्य का इतिहास, पृ० १

देवीदास मुकुन्द को दान देने का उल्लेख है ।

मणुआराखेडा का ताम्रपत्र[४१] (१६४१ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा जगतसिंह प्रथम के समय का है जिसमें जोशी सुखदेव को २५ बीघा भूमि मणुआ के खेडे में देने का उल्लेख है । इस भूमि में २० बीघा सीयालू के साख की और ५बीघा उन्हालू के साख की थी ।। यह भूमि पहिले महाराणा कर्णसिंह जी की राणी कवरदेकोर ने द्वारिका की यात्रा के समय दी थी । इस सम्बन्ध की जब प्रार्थना की गई तो उसे पुन: जगतसिंह ने पुण्यार्थ करदी । इसका समय संवत् १६६८ पौष सुदि १५ बुध है । इससे स्पष्ट है कि महाराणा कर्णसिंह के समय में मुगलसंधि का पूरा उपयोग किया गया था, जब कि राजपरिवार की स्त्रीएँ मेवाड़ के बाहर यात्रा के लिए जा सकती थीं ।

इसका मूलपाठ इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज जगतसिंहजी आदेशातु जोसी सुखदेवकस्य गाँव मणुआरा खेडा माहे धरती बीघा २५ अंके धरती बीघा पचीस उदक आघाट करे रामा अरपण कीधी बीघा २० अंके धरती बीघा बीस सीआली बीघा ५ अंके धरती बीघा पाच उन्हाली राणाश्री करणसिंघजी री वहु कअरदेकोर दुआरकाजी गया था उठे बामण हे दे आया था सुवीनतीकरे दीवाडी दुवे श्री मुख स्वदतं परदतं जे हरंती बीसंधरा षस्ट वरस सेहसराण वीस्टाया जाईते क्रम संवत् १६६८ बखे पोस सुदी १५ बुधे लषतं पंचोली केसोदास"

जोथल (बाँसवाड़ा) का दान पत्र[४२] (१६४१ई०)

इस ताम्रपत्र में खेत के लिए टुकड़े का प्रयोग किया गया है जो बाटीराम को उदक रूप में दिया गया था इसकी भाषा वागडी है । इसका आकार ११.५" × ७" है ।

इसका मूल इस प्रकार है—

"महारावल श्री ५ समरसिंह जी वसनात बाटीरामजी जोगमहा उधारी ने गाम जोथल महा पसाह आपु अघोट आवद्राक जावत् त्रांबा ने पत्रे आपु छे तजपोर नु पाणी टुकडे आपा छि ते टुकडा लेवा पावे नहीं ते सही छ चहा परतर प्रेम कुवर वेणी पर बाणगवण अंग संवत् १६६८ वरषे अश्रो वद ७ सनऊ"

मचलाणा गाँव का ताम्रपत्र[४३] (१६४२ ई०)

यह ताम्रपत्र मचलाणा गाँव का है जिसमें बाबा हंसपुरी का नाम है । इसका समय १६६६ पोष सुदि ११ है । इसको जोशी हरजी के दुए से पंचोली

---

४१. ओल्ड डिपोजिट रेकार्ड, नं. १४६६

४२. बाँसवाडा के लेखागार की प्रति से

४३. ओझा, प्रतापगढ़ राज्य का इतिहास, पृ० १४५

गोविन्द ने लिखा था। इसका ऐतिहासिक महत्व यह है कि उक्त संवत् में महारावल हरिसिंह का देवलिया पर अधिकार था और उसने उपर्युक्त गाँव दान किया। संभव है कि इसके पहले ही वह अपने साथ शाही सेना लाया हो और इस भाग पर अधिकार करने में सफल हुआ हो। यह ताम्रपत्र इस समय अप्राप्य है। पंडित जगन्नाथ शास्त्री ने इस ताम्रपत्र की प्रतिलिपि ओझाजी को भेजी थी।

वेडवास गाँव का दानपत्र[४४] (१६४३ ई०)

यह दानपत्र समरसिंह (बाँसवाडा) के काल का है। इसमें वि० सं० १७०० मार्गशीर्ष सुदि ७ (ई० स० १६४३ ता० ८ नवम्बर) बुधवार को वेडवास गाँव में एक हल भूमि दान करने का उल्लेख है।

ठीकरा गाव का ताम्र पत्र[४५] (१४६४ ई०)

देवलिया राज्य से मेवाड की सेना का उत्पात मिटाने के पीछे महारावन हरिसिंह प्राय. शाही दरबार में आता-जाता था। वि० स० १७०१ में इस ताम्रपत्र से ऐसा प्रतीत होता है कि वह पुन. शाही दरबार में गया और आगरे रहने समय वि० सं० १७०१ चैत्र सुदि ५ को उसने ठीकरा गाँव दुबे जगन्नाथ और ईदर को प्रदान किया। इसमें इस प्रान्त में लगने वाले वेठ (वेगार) और बराड का जिक्र है। गाँव के लिए यहाँ 'मौजा' शब्द का प्रयोग किया गया है। इसका मूल इस प्रकार है—

"महाराज श्री रावत श्री हरीसघ जी वचनातु आगे दुबे जगनाथ दुबे इदरजी जोग याम्रे गाम १ मोजे ठीकरो मया करे आवापत्रे आचद्रारक दीदो वेठ बराड माफ आगरा माहे दीदो श्रीमुख हजूर सवत् १७०१ चेत सुदि ५"

साचोर का ताम्रपत्र[४६] (१६४६ ई०)

यह ताम्रपत्र ६"×५" है। इसका तोल लगभग १½ पाव के है और थोडा सा दाहिनी ओर टूटा हुआ है। इसको रामनारायण व्यास, साचोर के पास देखा गया था। इसमें स्थानीय शासक बलभद्र द्वारा व्यास रामाजी को डोहली देने का उल्लेख है। डोहली के पडौस का तथा साक्षियो का इसमें उल्लेख दिया गया है। स्थानीय भाषा के, जो उस समय प्रचलित थी, अध्ययन के लिए इसका उपयोग है। इसका अक्षरान्तर इस प्रकार है—

"सिध श्री महाराजाधिराज महाराज जी श्री बलभदजी महाराज कुंवर श्री वणीदासजी वचन तो व्यास रामाजीनु डोहली १ दीधा धरती बीघा २०१ अपरे बीघा दोइसाई का मो सोधसर माहे षेत १ भागरता पाटडी मो उसला गाम वसरा कफड छे। सुदीध छे। सहर १ पाः चोहथा रो सेहर १ मु. राजधरारो. सेहरा १ मो उलररो सेहरी नीलडी सीधसरा रा महाराज कुंवर श्री

४४. ओझा, बाँसवाडा राज्य का इतिहास, पृ० १०१.

४५. ओझा, प्रतापगढ राज्य का इतिहास, पृ० १४६

४६. लेखक की प्रतिलिपि मे

वणीदासजी उदक कर दीधा छे..........श्री सांचोर माहे पटा लीप दीधा छे स० १७०३ श्रीवण सुद ७ ली मु. दुदा ली मु. सुजा.

डीगरोल गांव का ताम्रपत्र [47] (१६४८ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा जगतसिंह के काल का है जिसमें गढवी मोहनदास को डीगरोल गांव, जो परगना आगरिया में था, पुण्यार्थ दिया गया था। उक्त महाराणा प्रतिवर्ष एक चांदी की तुलादान करता था। वि. सं. १७०४ से तो उसने प्रतिवर्ष स्वर्ण की तुला करने और भूमिदान करने की भी व्यवस्था की थी। यह भूमिदान भी इसी श्रृंखला में है। इस दानपत्र का महत्त्व इस अर्थ में भी है कि जगतसिंह के काल से मिलने वाले अन्य दानपत्रों में गांवों को परगनों के साथ जोड़कर अंकित किया जाता था और इस काल तक मेवाड़ में कई परगने बना दिये गये थे, जिनमें आगरिया भी एक था। इसका मूलपाठ इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणा श्री जगतसिंघजी आदेशात् गढवी मोहणदास जात बोकसाकस्य गांग १ डीगरोल पडगने आगर्‌यारे उदक आघाट करे मया कीधो दुवे श्रीमुष स्वदत्तं परदतं आदि........प्रतदुवे दोसी लपु लीखतं पंचोली केसोदास गोरावत संवत १७०४ वरषे मगसीर सुदी ६ गुरे"

कीटखेडी (प्रतापगढ़) का ताम्रपत्र [48], (१६५० ई०)

यह दानपत्र कीटखेडी गांव का भट्ट विश्वनाथ को दान देने के सम्बन्ध का है। इसे राजमाता चौहान द्वारा बनवाये गये गोवर्धननाथजी के मंदिर की प्रतिष्ठा के समय दिया गया था। यह ताम्रपत्र शाहवर्षा के कहने से लिखा गया था और उसे सुनार केशव ने खोदा था। इसकी भाषा स्थानीय है परन्तु अन्त में दो श्लोक दिये गये हैं जिसमें विश्वनाथ को 'दीक्षागुरु' कहा गया है। अन्य उल्लेखों से ज्ञात है कि शाह वर्षा हूंबड़ जाति का वैश्य था और विश्वनाथ त्रिवाड़ी मेवाड़ी ब्राह्मण था। कवि गंगाराम ने उसे व्याकरण, न्याय, मीमांसा, दर्शन आदि शास्त्रों का ज्ञाता बतलाया है। इससे सिद्ध है कि हरीसिंह के समय में विद्योन्नति अच्छी होने पाई थी और उसको विद्वानों के प्रति रुचि थी। इसका मूल इस प्रकार है—

"महाराज रावत श्री हरिसिंहजी वचनात् भट विश्वनाथ योग्य मोटो प्रसाद कीधो। मया करेने गाम १ मोजे कीटखेडी दीधो उदक आघाट तांवा पत्र करे दीधो देवल प्रतिष्ठा हुई जदी माताजी चहुआन रे देहरे दीधो आप दत्तेपु परदत्तेपु ये लुम्बन्ति वसुन्धाम ते नरा नरकं यान्ति यावच्चन्द्र दिवा करौ। अणी गांव री कदी कपीत कर लागट व राड कोई करवान पावे। संवत् १७०७ वरषे मास वैसाख सुदि १५ पुनम दिने गुरु लखतं स्वहसो दुवे साह वर्षा। आचंद्रार्क यावत् श्री गोविन्द रे पट्टे पीढी री पीढी दीधौ खोद्‌यो सोनी केशव'

---

४७. ओल्ड डिपो० रेकार्ड नं० २७५

४८. ओझा, प्रतापगढ़ राज्य का इतिहास, पृ० १६८–१६६

श्रीसिंहरावतसुतो भगवन्तसिंह
स्नरसमयो विजयते हरिसिंहदेवः।
तेन व्यधायि सुरसद्मममहा प्रतिष्ठा
श्री देवगुर्गपुरिमालवराजधान्याम् ॥ १ ॥
तदा सो उदात् कीटगेंडी ग्राम ब्रह्मास्पद धयत्
विश्वनाथाय विदुषे दत्त दीक्षागुरोः पदम् ॥२॥

इसमे दिया गया संवत् १७०७ न होकर १७०५ होना चाहिये क्योंकि १७०५ को गुरुवार था। सम्भवत. ताम्र-पत्र की प्रतिलिपि के समय १७०५ के स्थान पर १७०७ लिखा गया है।

रंगीली ग्राम (मेवाड) का ताम्रपत्र[४९] (१६५६ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा राजसिंह के समय का है जबकि उसने गंधर्व मोहन को रंगीला नाम का गाव उदक किया। इसके साथ गाव में लगने वाली राड, लाकड और टका की लागत को भी छोडा गया। इसको पचोली राघोदास ने सुन्दर पवागण के प्रतिदुवे से लिखा। इसका मूलपाठ इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणा श्री राजसिंहजी आदेशात् गधर्व मोहण मम्य, ग्राम १ रगीली भरस तीरली उदक आघाट करे श्री रामामर्पण कीधी, राड लाकड गाम टको मया करे छोड्यो, दुऐ श्रीमुख प्रत दुऐ पवाराण सुन्दर लोपत पचोली राघोदास गोरावत स्वदत्तां परदत्ता वाजहेरति वसुन्धरा षष्ट वर्ष सहस्राणि विष्टाया जायते क्रमी सवत १७१३ वरषे जेठ वदी १० सोमे"

कडियावद का ताम्रपत्र[५०], (१६६३ ई०)

कडियावद प्रतापगढ़ से ७ मील की दूरी पर है। प्रस्तुत ताम्रपत्र श्री मनोहर सिंहजी के पास है जिससे इसकी प्रतिलिपि उपलब्ध हुई है। इसका आकार १४ २" × ६ ३" है। इसमें बाटीराम को 'नेग' वसूल कर देने की अनुज्ञा रावत हरिसिंहजी के द्वारा दी गई है जिसे कई राज्य के सर्दारों ने भी स्वीकार किया है। 'नेग' वसूल करने का अधिकार चारणों को सुरजमल के समय से था इसकी पुष्टि इस ताम्रपत्र से होती है। इसका मूल इस प्रकार है—

"महाराजा श्री राउत श्री हरिसिंघजी वचनातु बाटीरामजी जोग। थाने गाव १ मोजे कडियावाद महा तावापत्र आघाट करी दीदो पमलामेमो करी नेगा करी दीदो मोटो नेग करी दीधो रारीत श्री सुरजमलतना पटेनु नेग करी दीधो वेठ वराड माफ दुवे श्री मुख हजूर कामा साह श्री वरखाजी सीवता १७२० फागण वदी १०

राजाश्री मनासिंघजी सीसोदिया
जोगीदासजी सीसोदिया अरक

---

४९. वीर विनोद मा० ३, पृ० ५७३।
५०. श्री मनोहरसिहजी की प्रतिलिपि से

दासजी सीसोदिय भोगीदासजी
सीसोदिआ सरलुदासजी सीसोदिआ
कहनजी सीसोदिआ रणछोडदासजी
सीसोदिआ अचल दासजी सीसोदिआ
चंदर भानजी सीसोदिआ संवत् १७२० वरषे फागण वीदी १०

वडासालिआ का दानपत्र[५१], (१६६५ ई०)

यह दानपत्र महारावल कुशलसिंह (बाँसवाड़ा) के समय का है जिसमें वर्णित है कि (आषाडादि) वि सं. १७२१ (चैत्रादि १७२२, अमांत) वैशाख (पूर्णिमांत ज्येष्ठ) वदि ५ (ई०स० १६६५ ता० २४ अप्रैल) को जोशी केशवा, पूंजा आदि को एक हल भूमि सूर्यग्रहण के अवसर पर दान दी गई। इससे उस समय की धार्मिक प्रवृत्ति का बोध होता है।

सरवाणिया गाँव का दानपत्र[५२], (१६६७ ई०)

यह दानपत्र कुशलसिंह (बाँसवाड़ा) के समय का है जिसमें उल्लिखित है कि महारावल की रानी अनूपकुंवरी ने (तंवर) चन्द्रग्रहण के अवसर पर सरवाणिया गांव में दवे लाला को भूमिदान किया। इससे उस समय की धार्मिक प्रवृत्ति का बोध होता है।

बांसवाड़ा का दानपत्र,[५३] (१६७१ ई०)

यह दानपत्र बाँसवाड़ा के महारावल कुशलसिंह के समय का है जब कि महारावल की माता आनंदकुंवरी ने गंगाजी वि. सं. १७२७ माघ सुदि ५ (ई० स० १६७१ ता० ५ जनवरी) महोत्सव के अवसर पर भूमि दान किया। इस महोत्सव का वागड प्रान्त में तथा राजस्थान के ग्रामीण भागों में बड़ा महत्त्व है।

पाटण्या गाँव के ताम्रपत्र,[५४] (१६७६ ई०)

यह ताम्रपत्र संस्कृत में है जो देवलिया के महारावल प्रतापसिंह के समय का है। इसमें इस वंश के शासकों के नाम हैं जो चित्तौड़ के शासकों के भाई खेमा के पुत्र सूर्यमल से सम्बन्धित थे। इससे यह भी स्पष्ट है कि देवलिया को संस्कृत साहित्य मे देव दुर्ग कहते थे। इसका सम्बन्धित पाठ इस प्रकार है—

"अत्युग्रधामा जगदेकनामा तस्मादभूच्छ्रीहरिसिंहदेवः।
श्रीदेवदुर्गस्य विराजमाने सिंहासने राजति तत्तनूजः॥"

पारणपुर दानपत्र,[५५] (१६७६ ई०)

यह ताम्रपत्र श्री मेहता नाथूलाल जी (प्रतापगढ़) के पास देखा गया जिसका

५१. ओझा. बाँसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ १०९
५२. ओझा, बाँसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ०-१०६
५३ ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० ११०
५४. ओझा, प्रतापगढ़ राज्य का इतिहास, पृ० १६।
५५. मूल महता नाथूलाल जी के पास है।

आकार ६"×५५" एवं वजन लगभग पौना सेर के है। इसमें उस समय के पंडित वर्ग के तथा शासक वर्ग के नामों का एवं धार्मिक उद्यापन करने की परम्परा का बोध होता है। स्थानीय भाषा के अध्ययन के लिए भी यह उपयोगी है। इसमें टकी, लाग एवं रखवाली आदि करों का उल्लेख है। इसका मूल इस प्रकार है—

"महाराजा श्री रावत प्रतापसिंघ वचनातु विद्याराम जी जोग मोटो प्रसाद किधो मया करे गाम १ मोजे पारणपुर दिधो उदक आघाट करे दियो धार पहाड़ जावन दीधा उण्या अेकादसी उद्यापन करे दीधो मणारी टकी लाग रखोली सुधी मणीरी वध पावल करे जणी हे चितोड़ रो पाप छे पीढी पीढी दीधा कृष्णार्पण दीधो। स्वदत्तापरदत्ता वा जो लोपंती वसुंधरा ते नरा नरकं जावतो आपन चदर दीवाकर ॥१॥ खासा दसकत छे दूबे साह वर्धमान उदेभाणा संवत् १७३३ वरसे माघ सुद दुआदसी १२ रवुते राजा रे पंडत भट वेसमनाथ विद्याराम भगवान हरदेव मामा भीम जी बूलावत घासी नाम एं जणी धर्म हुकम श्री सेन दीधा जणीरी बीगत कार्ं जी मानसिंह जी मोहणपुरा मध्ये कराया भ. रणछोड़ जी पेड़ो मध्ये खेत विघा १५ दीधा परसी धण्‌।

पाटण्या गांव का दानपत्र[५६], (१६७७ ई०)

इस दानपत्र में पाटण्या गांव महारावत प्रतापसिंह (प्रतापगढ़) द्वारा महता जयदेव को दान करने का उल्लेख है। दानपत्र की भाषा गद्यमय संस्कृत है। यह इतिहास के लिए बड़ा उपयोगी है क्यों कि इसके प्रारम्भ की पंक्तियों में गुहिल से लगा कर भर्तृभट्ट तक के गुहिल राजाओं के नाम दिये हैं और फिर क्षेमकर्ण से लगाकर हरिसिंह तक प्रतापगढ़ के नरेशों का क्रमबद्ध वर्णन है। इसके अतिरिक्त इसमें महारावत की माता, पट्टराणी, राजकुमारों, भाइयों, सरदारों, राजगुरु, राजवैद्यों, मन्त्रियों आदि के नाम भी मिलते हैं। इसको सोनी हीरा ने खोदा था। इसमें उस समय की धार्मिक प्रवृत्ति एवं कर व्यवस्था का उल्लेख है। इस ताम्रपत्र का समय वि० सं० १७३३ माघ सुदि १५ है। इसका मूल का कुछ भाग इस प्रकार है—

"महेन्द्रसमेन श्री महाराजाधिराजमहाराजरावत श्री प्रतापसिंहदेवेन सोच्छेदमुक्तं .... एकादशीव्रतोद्यापनेऽयमापशुरलंकारदश्मा मया प्रतापसिंहनृपेण महतरजयदेवद्विजाय .... पाटणपुराख्यो ग्राम: स्वसीमावृक्षपर्यन्तमसाशय-कापुं वहल [इमं] राजामात्यादि सर्वलागटंकोपरकोपटकोचतुराघाटं, मह.......... स्वस्तिपत्रेण .... दानश्रावयेनन दत्त .... संवत् १७३३ माघ सुदि पूर्णिमास्यां लिखितमिदम्। सोनी हीरो।

बासवाड़ा का दानपत्र,[५७] (१६७७ ई०)

यह दानपत्र महारावल कुशलसिंह के समय का है जिसमें श्याम उदय को

---

५६ ओझा, प्रतापगढ़ राज्य का इतिहास, पृ० १६२–१६३।

५७. ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० ११०।

कुशाल बाग की तरफ का एक कुंआ वैशाखी पूर्णिमा पर चन्द्रग्रहण पर दान किया गया। इसमें दिया गया समय वि सं १७३४ आषाढ़ सुदि ५ (ई० सं० १६७७ ता० २५ जून) है। ऐसे दानों को वैशाखी पूर्णिमा के उपलक्ष में करना बड़ा धार्मिक कार्य माना जाता था।

गांव पंचाइणपुरा,[५८] (१६७७ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा राजसिंह के समय का है जिसमें गडवी गंगदास चारण को पंचाइणपुरा गांव देने का उल्लेख है। यह गांव राव वेरीसाल के पट्टे से उसके अर्ज करने पर पुण्यार्थ दिया गया। इसकी आज्ञा भीपु के द्वारा दी गई और उसे पंचोली चत्रभुज राघोदासोत ने लिखा। इसमें राव वेरीसाल की जागीर से दी गई भूमि का महाराणा द्वारा स्वीकृति रूप से ताम्रपत्र दिया गया था जो बड़े महत्त्व का है। इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणाश्री राजसिंघजी आदेशातु गडवी गांगदास चारण-कस्य गांव पंचाइणपुरा पडगने वीजोल्या रे राव वेरीसाल रा पटा भी है छै सुराव वेरीसाल अरजकरे दीवाडा सु आघाट करे मया कीधो दुएश्री मुख प्रतदुए श्री भीपु लीखतां पंचोली चत्रभुज राघोदासोत स्वदत्तां...................संवत् १७३४ व्रषे जेठ, वदी २ रीवो"

राजसिंह का ताम्रपत्र, [५६] (१६७८ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा राजसिंह के समय का है जिसमें वेणा नागदा को दो गांवों में तीन हल की भूमि राणी वडी पँवार के राजसमुद्र पर तुलादान के उपलक्ष में पुण्यार्थ दिये जाने का उल्लेख है। ये तुलादान राणी द्वारा १७३२ माघ सुदि १५ को किया गया था और दानपत्र १७३५ श्रावण सुदि ५ को दोसी भीपु के द्वारा आज्ञा दिये जाने पर पंचोली चत्रभुज ने लिखा था। इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणा श्री राजसिंघ जी आदेशातु जोसी वेणा नागदा-कस्य ग्राम दोय पडगने ऊंटालारे तीमाह हल ३ आके तीन री धरती १५० आंके वीघा डोड से राणी वडी पँवार—तुला राजसमंद पे संवत् १७३२ वर्षे माह सुदी १५ कीधी जदी हल ३ री धरतो उदक आघाट करे श्री रामा अरपण की धी वीगत वीघा—

८०) आंक वीघा ग्राम नवाण्या मांहे

७०) आंके वीघा सीतर ग्राम की कांकण भाटे

१५०) आंके वीघा डोडसे

दुए श्री मुख प्रतदुए दोसी भीखु लीपतां पंचोली चुत्रभुज राघोदासोत स्वदत्त

---

५८. ओल्ड डिपो० रेकार्ड, नं १४८६।

५६. ओल्ड डिपो० रेकार्ड नं० ६५१

.... संवत् १७३५ वर्षे श्रावण सुदी ५ रीवु"

तलवाड़ा गांव का दानपत्र,[६०] (१६७६ ई०)

महारावल कुशलसिंह का तलवाड़ा (बांसवाड़ा) गांव का दानपत्र वि० स० १७३६ भाद्रपद सुदि १ (ई० स० १६७६ ता० २७ अगस्त) का है। इसमें पंड्या गुणा, सवा आदि को भूमिदान करने का उल्लेख किया गया है।

उनी गाव का ताम्रपत्र,[६१] (१६८२ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा जयसिंह का है जिसमें वर्णित है कि श्रावण सज्जन को उनीगाव में १०० बीघा भूमि का दान उक्त महाराणा ने दिया। इससे प्रतीत होता है कि उस समय भूमि की दो मौसम की उपज की क्षमता पर बांटा जाता था और उसके अन्तर्गत उनका विभाजन पहाड़ी जमीन या उपजाऊ भूमि के विचार से भी होता था। इसका मूल इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणा श्री जैसिंघजी आदेशातु प्राइम गुसैंग रावल वस्य गाम उनी पड़गने मदारारे जीणी माहे धनी बीघा १०० श्रांके एक सो मांगोदा दुवारकादास अरज करे श्रासण सान्द धरम गाने दीवाली तीरो विगत-

८०) श्रंके बीघा असी मगरा सीमाडू

२०) श्रंके बीघा बीस उनालू

१००) श्रंके बीघा एकसो दुए श्रीमुख जनदुए दोसी भीमु लीखतं पचोली चत्रभुज रायो दासोत........संवत् १७३६ वर्षे जेठ सुदी ७ सीनु"

पिंगथली का दानपत्र,[६२] (१६८६ ई०)

यह दानपत्र पिंगथली के उदक का है जिसका मूल श्री नाथूलालजी (प्रतापगढ़) के पास है। इसका आकार १०"×५७" तथा तोल सेर दो के लगभग है। इसमें श्री प्रतापसिंह (प्रतापगढ़) के राज्यकाल में शासन के अधिकारी साह वर्धमान तथा महता हरिदेव का उल्लेख मिलता है। इसके द्वारा उस समय की स्थानीय भाषा पर प्रकाश पड़ता है। इसका मूल इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराज रावत श्री प्रतापसिहजी वचनातु मे० रंगदेवजी गोपालजी जोग्य यत कुवर कीर्तिसिंहे मोजे गाम पिंगथली मध्ये गेत बीघा २६ श्रंके श्रोगण तीस आचन्द्रार्क यावत् उदक आघाट करी दीधा ते श्रमे पासी दीधा श्रप कावल रहित दीधा श्रीकृष्णार्पणे करी दीधा जेनी वीगत गेनदेव भगु सारव सात नावाला जोमले विघा १६ रगदेवनो वाती बीघा १० बालगोपाल देव ने आपा एवंबार २६ बीघा दुए साह वर्धमान ॥ "स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत् वसुन्धरा षष्ठी वर्ष सहस्राणी विष्ठाया जायते कृमि" संवत् १७४३ वर्षे मगसर वदी १३ लिखतं मेता हरिदेव"

---

६०. ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० ११०

६१. ओल्ड डिपो० रेकार्ड, नं० ३२५

६२ लेखक की प्रतिलिपि से

जवाखेड़ा का ताम्रपत्र[६३] (१६९२ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा जयसिंह के समय का है जिसमें ब्राह्मण जयदेव को जवाखेडे में एक हल भूमि देने का उल्लेख है। यह भूमिदान वि० सं० १७४७ जेठ सुदि ५ को किया गया था जब राणी बडी हाडी ने जसनगर में तुलादान किया था। इसकी आज्ञा साह रामसिंघ द्वारा दी गई थी और इसे पंचोली इन्द्रभाण ने लिखा था। ताम्रपत्र देने का समय संवत् १७४९ भादवा वदि ९ गुरुवार है। इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणा श्री जैसिघजी आदेसातु बामण जैदेव.......ग्राम मया कीधो गाम जवाखेडा मा धरती हल एक अेकरी राणी बडी हाडी जसनगर माहै तुला कीधी उदक आघाट करे रामा अरपण कीधी १७४७ जेठ सुदी ५ जमे हल १ मदे वीगत वीघा ५० पचास साआलू—

प्रतदुए साह रामासिघ लीपतं पंचोली इन्द्रभाण दआवदासोत संवत् १७४९ वीषे भादवा वदी ९ गुरै"

कालोडा का ताम्रपत्र[६४] (१६९४ ई.)

यह ताम्रपत्र महाराणा जयसिंह के समय का है जिसमें दवे रामदत्त को कालोडा गांव, परगना मगरा में दो हल भूमि दान दी गई थी। इस ताम्रपत्र में स्पष्ट रूप से दो हल भूमि का नाप १०० वीघा दिया गया है जिसके अनुसार एक हल भूमि ५० वीघा के बराबर मानी जाती थी ऐसा सिद्ध है। इसमें भूमि का विभाजन 'उनालू' तथा 'सीयालू' की उपज के आधार पर किया गया है—अर्थात् २० वीघा भूमि केवल 'उनालू' की थी और ८० वीघा 'सीयालू' की उपज के लिये थी।

इसका मूलपाठ इस प्रकार—

"महाराजाविराज महाराणा श्री जैसिंघजी आदेशातु दवे रामदत्त कस्य ग्राम कालोडो पडगने मगरारे तीमाहे धरती हल २ दोईरी वीघा १००) उदक आघाट करे श्री रामा अरपण कीधी वीगत वीघा—

२०) वीघा बीस उनालू थी अर ८० वीघा अससी सीयालू माल मगरा

१००) अंके वीघा एक सो दुए श्री मुख लीषतं पंचोली हरनाथ मोहणोत

स्वदत्त (आदि) संवत् १७५१ व्रषे प्रथम असाड सुदी १० भौमे"

मुकनपुरा का दानपत्र[६५] (१६९४ ई०)

महारावल अजबसिंह (बांसवाड़ा) के समय का यह दानपत्र है जिसमें (आषाडादि) वि० सं १७५० (चैत्रादि१७५१) चैत्र सुदि १ (ई० स० १६९४ ता० १६ मार्च) को डोलिया धोमण्ट को बडी पडार गांव में तालाब की भूमि देने का उल्लेख

---

६३. ओल्ड डिपो० रेकार्ड, नं० १४७२

६४. ओल्ड डिपो० रेकार्ड नं० ४७१

६५. ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० ११४

है। तालाब की भूमि बड़ी उपजाऊ मानी जाती थी जिसे विशेष कृपा होने पर दिया जाता था।

सेवाना गांव का दानपत्र[६६] (१६६५ ई०)

यह दानपत्र वि० सं० १७५२ (श्रमांत) कार्तिक पूर्णिमांत (मार्गशीर्ष) वदि (ई०स० १६६५ नवम्बर) है का जो अजबसिंह (बांसवाड़ा) के काल का है। इसमें गार्दी के निकट का सेवाना गांव जोशी रतना के पुत्र राघानाथ और रामकिशन को सूर्यग्रहण के अवसर पर दान करने का उल्लेख है।

बाघेल्या गांव का ताम्रपत्र[६७] (१६६६ ई०)

यह ताम्रपत्र कुंवर अमरसिंह दूसरे का है जिसमें उल्लिखित है कि चारण सीमा को बाघेल्या गांव में, जो करेड़ा परगने में था, दो हल भूमि (१०० बीघा) पुण्यार्थ दी गई है। इसकी आज्ञा रावजी द्वारा दी गई और इसे गोरधन दास पंचोली ने राजनगर में लिखा। इस समय भी भूमि का विभाजन सीधानू एवं उनालू की उपज की क्षमता पर तथा पीवल के आधार पर किया जाता था।

इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

> "महाराजकुंवर अमरसिंहजी आदेशात् चारण सीमा नाथुरा जात मिहडुरस्य ग्राम बाघेल्यो पड़गने करेड़ारे जणीमांहे हल २ दायरो धरती बीघा १०० एक सौ आघाट करे मया कीधी बीगत बीघा २० बीस पीवल ८० बीघा अस्सी सीवाली दुबे श्री मुख प्रवदुमे रावजी लीखत पचोली गोरधनो संवत १७५३ श्रीषे बैसाख वदी ३० रीऊ राजनगर माहे लीखदी

बांसवाड़ा का दानपत्र[६८] (१६९९ ई०)

यह बांसवाड़ा के रावल खुमाणसिंह के नाम का (श्रावणादि) वि० सं० १७५५ (चैत्रादि १७५६) ज्येष्ठ सुदि २ (ई० स० १६६६ ता० २० मई) का दानपत्र है, जिसमें उल्लिखित है कि उपर्युक्त ब्राह्मण को सूर्यग्रहण के अवसर पर बांसवाड़े के बोरड़ा तालाब का आधा हिस्सा महाराज कुमार भीमसिंह द्वारा दान किया गया था।

सुन्दरचो गांव का ताम्रपत्र[६९] (१७०३ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा अमरसिंह द्वितीय के समय का है जिसमें जोशी चत्र-भुज एवं समस्त नागदा ब्राह्मणों को सुन्दर गांव तथा अन्य धरती, जो खालसे हुए थे पुनः पुण्यार्थ देने का उल्लेख है। इसकी आज्ञा पचोली दामोदरदास के द्वारा दी गई

---

६६ ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० ११४

६७ ओल्ड डिपो० रेकार्ड नं० ६४०

६८ बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० ११५

६९ ओल्ड डिपो० रेकार्ड नं० ७०२

जवाखेड़ा का ताम्रपत्र[६३] (१६६२ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा जयसिंह के समय का है जिसमें ब्राह्मण जयदेव को जवाखेडे में एक हल भूमि देने का उल्लेख है। यह भूमिदान वि० सं० १७४७ जेठ सुदि ५ को किया गया था जब राणी वडी हाडी ने जसनगर में तुलादान किया था। इसकी आज्ञा साह रामसिंघ द्वारा दी गई थी और इसे पंचोली इन्द्रभाण ने लिखा था। ताम्रपत्र देने का समय संवत् १७४६ भादवा वदि ६ गुरुवार है। इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणा श्री जैसिंघजी आदेसातु वामण जैदेव……ग्राम मया कीधो गाम जवाखेडा मा धरती हल एक अेकरी राणी वडी हाडी जसनगर माहै तुला कीधी उदक आघाट करे रामा अरपण कीधी १७४७ जेठ सुदी ५ जमे हल १ मदे वीगत वीघा ५० पचास साग्रालू—

प्रतदुग साह रामसिंघ लीपतं पंचोली इन्द्रभाण दआवदासोत संवत् १७४६ वीपे भादवा वदी ६ गुरं"

कालोडा का ताम्रपत्र[६४] (१६६४ ई.)

यह ताम्रपत्र महाराणा जयसिंह के समय का है जिसमें दवे रामदत्त को कालोडा गांव, परगना मगरा में दो हल भूमि दान दी गई थी। इस ताम्रपत्र में स्पष्ट रूप से दो हल भूमि का नाप १०० वीघा दिया गया है जिसके अनुसार एक हल भूमि ५० वीघा के वरावर मानी जाती थी ऐसा सिद्ध है। इसमें भूमि का विभाजन 'उनालू' तथा 'सीयालू' की उपज के आधार पर किया गया है—अर्थात् २० वीघा भूमि केवल 'उनालु' की थी और ८० वीघा 'सीयालू' की उपज के लिये थी।

इसका मूलपाठ इस प्रकार—

"महाराजाधिराज महाराणा श्री जैसिंघजी आदेशातु दवे रामदत्त कस्य ग्राम कालोडो पडगने मगरारे तीमाहे धरती हल २ दोईरी वीघा १००) उदक आघाट करे श्री रामा अरपण कीधी वीगत वीघा—

२०) वीघा वीस उनालू थी अर ८० वीघा अससी सीयालू माल मगरा

१००) अंके वीघा एक सो दुए श्री मुख लीपतं पंचोली हरनाथ मोहणोत स्वदत्त (आदि) संवत् १७५१ व्रषे प्रथम असाड सुदी १० भौमे"

मुकनपुरा का दानपत्र[६५] (१६६४ ई०)

महारावल अजवसिंह (बांसवाड़ा) के समय का यह दानपत्र है जिसमें (आषाडादि) वि० सं १७५० (चैत्रादि१७५१) चैत्र सुदि १ (ई० स० १६६४ ता० १६ मार्च) को डोलिया धोमण्ट को वडी पडार गाँव में तालाब की भूमि देने का उल्लेख

---

६३. ओल्ड डिपो० रेकार्ड, नं० १४७२

६४. ओल्ड डिपो० रेकार्ड नं० ४७१

६५. ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० ११४

है । तालाब की भूमि बड़ी उपजाऊ मानी जाती थी जिसे विशेष कृपा होने पर दिया जाता था ।

सेवाना गाँव का दानपत्र[६६] (१६६५ ई०)

यह दानपत्र वि० स० १७५२ (प्रमात) कातिक पूर्णिमात (मार्गशीर्ष) वदि (ई०स० १६६५ नवम्बर) है का जो प्रजबसिंह (बासवाडा) के काल का है । इसमें सादडी के निकट का सेवाना गाँव जोशी रतना के पुत्र राधानाथ और रामकिशन को सूर्यग्रहण के अवसर पर दान करने का उल्लेख है ।

वाघेल्या गाँव का ताम्रपत्र[६७](१६६६ ई०)

यह ताम्रपत्र कु अर अमरसिंह दूसरे का है जिसमे उल्लिखित है कि चारण सीमा को वाघेल्या गाँव मे, जो करेडा परगने मे था, दो हल भूमि (१०० बीघा) पुण्यार्थ दी गई है। इसकी आज्ञा रायसी द्वारा दी गई और इसे गोरधन दास पंचोली ने राजनगर मे लिखा । इस समय भी भूमि का विभाजन सीयालू एव उनालू की उपज की क्षमता पर तथा पीवल के आधार पर किया जाता था ।

इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

> "महाराजकु अर अमरसिंहजी आदेशात् चारण सीमा नाथुरा जात मेहडुरस्य ग्राम बाघेल्यो पडगने करेडारे जणीमाहे हल २ दोयरी घरती बीघा १०० एक सौ आघाट करे मया कीधी वीगत बीघा २० बीस पीवल ८० बीघा असी सीयाली दुवे श्री मुख प्रनदुवे रायसी लीखत पचोली गोरधनो सवत १७५३ वर्षे वैसाख वदी ३० रीऊ राजनगर माहे लीख्यो

बाँसवाडा का दानपत्र[६८] (१६९९ ई०)

यह बाँसवाडा के गोवर्द्धन सवा के नाम का (आषाढादि) वि० स० १७५५ (चैत्रादि १७५६) ज्येष्ठ सुदि २ (ई० स० १६९९ ता० २० मई) का दानपत्र है, जिसमें उल्लिखित है कि उपर्युक्त ब्राह्मण को सूर्यग्रहण के अवसर पर बाँसवाडे के बोरेरा तालाब का आधा हिस्सा महाराज कुमार भीमसिंह द्वारा दान किया गया था ।

सुन्दरछो गाँव का ताम्रपत्र[६९](१७०३ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा अमरसिंह द्वितीय के समय का है जिसमे जोशी चत्र-भुज एव समस्त नागदा ब्राह्मणों को सुन्दर गाँव तथा अन्य धरती, जो खालसे हुए थे पुनः पुण्यार्थ देने का उल्लेख है । इसकी आज्ञा पचोली दामोदरदास के द्वारा दी गई

---

६६ ओझा, बाँसवाडा राज्य का इतिहास, पृ० ११४

६७. ओल्ड डिपो० रेकार्ड न० ६४०.

६८ बाँसवाडा राज्य का इतिहास, पृ० ११५

६९ ओल्ड डिपो० रेकार्ड, नं० ५०२

और पंचोली कान्हां ने इसे लिखा (इसका समय संवत् १७६०, आसोज सुदि १३ भोम है।

इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणा श्री अमरसिंघ जी आदेशातु ग्राम सुन्दर छा रा जोसी चत्रभुज कान्हा प्रषोत्तम सोभारामा तथा समसत न्यात नागद्राकस्य यांरा ग्राम सुन्दरछो खालसैं हुओ थो सो पाछो मया कीधो नैं पेहली धरती तांबापत्र है जठा उपरांत गावलारी धरती थी सो खालसे हुई थी जणीरा रुपया ८००० आठ हजार करे चांमोचांम उदक आघाट करे श्री रामापरण कीधी दुअे श्री मुख.............प्रतदुअे पंचोली दामोदरदास लीपतं पचोली कान्ह छीतरोत संवत् १७६० वर्षे आसोज सुदि १३ भोमे"

कोथाखेडी गाँव का दानपत्र[७०] (१७१३ई०)

यह दानपत्र श्रावणादि वि० सं० १७७० चैत्रादि १७७१) द्वितीय आषाढ़ सुदि १२ मंगलवार का है। इसमें महाराणा संग्रामसिंह द्वितीय के समय में दिनकर भट्ट को कोथाखेडी गांव के दान करने का उल्लेख है। इससे महाराणा की दानशीलता पर प्रकाश पड़ता है और प्रमाणित होता है कि दिनकर भट्ट उस समय का एक अच्छा विद्वान था।

गांव भुवाणे का ताम्रपत्र[७१] (१७१३ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा संग्रामसिंह जी द्वितीय के समय का है जिसमें ठाकुर सीतारामजी बेदला को भुवाणा गांव में दो हल भूमि भेंट करने का उल्लेख है। इसकी आज्ञा बिहारी दास के द्वारा दी गई थी और मूलतः यह भेंट बाईजीराज ने की थी जिसकी स्वीकृति का ताम्रपत्र उक्त महाराणा के नाम का है।

इसका मूल इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणा श्री संग्रामसिंघ जी आदेशातु ठाकुर श्री सीताराम जी गाँव बेदले विराजे सेवग भगवत लछमणदास सेवा करे जणी हरिमंदिर पूजा सारु ग्राम भवाणो पडगने गिरवारे जणीमाहे धरती हल दोयरी बीघा १०० एक सौ तीमधे बीघा २० बीस पीवल उन्हाली ने बीघा ८० असी सीयाली माल श्री बाईजीराज चढाई तांबापत्र करे दीवाणो दुअे श्री मुख स्वदत्तां......... प्रतदुअे पंचोली बिहारीदास लीपतं पंचोली लखमण छीतरोत संवत् १७७० वरषे प्रथम आसाड सुदी ६ गुरे"

कोथाखेडी (मेवाड़) का ताम्रपत्र[७२] (१७१३ ई०)

यह ताम्रपत्र कोथाखेडी गाँव का है जिसको महाराणा संग्रामसिंह दूसरे ने दिन-

---

७०. ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भा० २, पृ० ६२२

७१. ओल्ड डिपो० रेकार्ड नं० ८२४

७२. वीरविनोद, भा० ४, पृ० ११७५

कर भट्ट को हिरण्याश्वदान मे दिया था। ये गाँव भरख परगने के अन्तर्गत था जहाँ कई प्रकार की लागतें, जैसे खड, लाखड, गाँवटका, पेनूखूट आदि ली जाती थी। महाराणा ने इन सब लागतो को उसके लिए माफ कर दी थी। इस ताम्रपत्र को पचोली लक्ष्मण ने बिहारीदास पचोली के प्रतिदुवे से लिखा था।

इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणा श्री सग्रामसिंह जी आदेशातु भट्ट दिनकर महादेवरा न्यात महाराष्ट्र कस्य ग्राम कोघाखेडी पडगने भरकरे पहली थारे पटे थो सो हिरण्यास्व महादान जेठ सुदि १५ भोमरे दिन दीधो, जदी दक्षिणारो लागत खडलाकड गामटका मेलुखूट तथा सर्वसूधी ऊदक आघाट करे श्री रामार्पण कीधो दुवे श्री मुख प्रतदुवे पचोली विहारीदास लिखत पचोली लखमण छीतरोत स० १७७० वर्षे दुती आसाढ सुदी १२ भामे"

गाव आसोट्या का ताम्रपत्र[73] (१७१४ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा सग्रामसिंह द्वितीय के समय का है जिसम उक्त महाराणा द्वारा आसोट्या गाँव को द्वारकाधीश को भेंट किये जाने का उल्लेख है। इसको सभी राजकीय कर स भी मुक्त किय जान का म कन है। यहाँ काकरोली गाँव मे गरीबदास पुरोहित के भाग का भी जिक्र है जो गरीबदास की जागीर म था। ये अनुदान महाराणा ने यहाँ दर्शनार्थ आन के समय किया जिसकी आज्ञा पचोली बिहारी दास द्वारा दी गई और उस पचोली लक्ष्मण छीतरोत ने लिखा।

इसका मूल इस प्रकार है—

'महाराजाधिराज महाराणा श्री सग्रामसिंघजी आदेशातु गुसाई गिरधारलाल जा कस्य ग्राम काकडोली पडगने राजनगर रे जणीमाहे प्रोहितजी री वट थो सो जागीर गरीबदास जगनाथ थी गाम टका तथा लागत सरबसुधी गाम आसोट्यो श्री द्वारकानाथजी रे दरसण मागसेर वदि ११ दीन हजूर पधारा जदी उदक आघाट कर श्री रामार्पण कीधो दुग्रे श्री मुख स्वदत्ता प्रतदुए पचोली बीहारीदास लीपत पचोली लछमण छीतरोत सवत् १७७१ वर्षे चेत सुदी ७ बुधे'

वेगू का ताम्रपत्र[74] (१७१५ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा सग्रामसिंह के समय का है जिसम प्रह्लाद को वेगू मे एक रहट व भूमि पीवल, माल, बाग आदि के देने का उल्लेख है। यह अनुदान भूमि के सभी वृक्ष, कुए, नीवाण समेत किया गया था। यहाँ का दाण राज्य का रहेगा ऐसा भी उल्लेख है। इसकी आज्ञा पचोली बिहारीदास द्वारा दी गई थी। इसम खेतो के अलग अलग नाम दिये गये है जो उस समय की भूमि विभाजन की प्रथा

---

७३ ओल्ड डिपो० मिसल जागीर स० ६५, २६/४०६ बी०

७४ ओल्ड डिपोजिट रेकार्ड, न० १८७१

और पंचोली कान्हा ने इसे लिखा। इसका समय संवत् १७६०. आसोज सुदि १३ भोम है।

इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणा श्री अमरसिंघ जी आदेशातु गाम सुन्दर रा रा जोसी पुरुभूज कान्हा प्रषोत्तम सोभाराम तथा समस्त न्यात नागदा कस्य थारा गाम सुन्दरसो न्यातसुं हुओ थो सो पाछो मया कीधो नै देहली धरती सावधन है जठा उपरांत गावतारी धरती थी सो खालसे हुई थी जणीरा रुपया ८००० आठ हजार करे सांमोसांम उदक आघाट करे श्री रामारपण कीधो दुवै श्री मुख............ प्रतदुवै पंचोली दामोदरदास लीषतं पंचोली कान्ह लीखतेत संवत् १७६० वर्षे आसोज सुदि १३ भोमे"

कोशाखेडो गांव का दानपत्र[७०] (१७१३ ई०)

यह दानपत्र श्रावणादि वि० सं० १७७० चैत्रादि (१७७१) द्वितीय आषाढ़ सुदि १२ मंगलवार का है। इसमें महाराणा संग्रामसिंह द्वितीय के समय में दिनकर भट्ट को कोशाखेडी गांव के दान करने का उल्लेख है। इससे महाराणा की दानशीलता पर प्रकाश पड़ता है और प्रमाणित होता है कि दिनकर भट्ट उस समय का एक अच्छा विद्वान था।

गांव भुवाणे का ताम्रपत्र[७१] (१७१३ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा संग्रामसिंह जी द्वितीय के समय का है जिसमें ठाकुर सीतारामजी देदला को भुवाणा गांव में दो हल भूमि भेंट करने का उल्लेख है। इसकी आज्ञा बिहारी दास के द्वारा दी गई थी और मूलतः यह भेंट बाईजीराज ने की थी जिसकी स्वीकृति का ताम्रपत्र उक्त महाराणा के नाम का है।

इसका मूल इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणा श्री संग्रामसिंघ जी आदेशातु ठाकुर श्री सीताराम जी गांव देदले बिराजे सेवग भगवत लछमणदास सेवा करे जणी हरिमंदिर पुजा सारु गाम भुवाणो परगने गिरवारे जणीमाहे धरती हल २ दोयरी बीघा १०० एक सौ तीनमे बीघा २० बीस पीवल उन्हाली ने बीघा ८० असी सीयालो माल श्री बाईजीराज चढाई तांबापत्र करे दीवाणो दुवे श्री मुख स्वदस्त .... प्रतदुवे पंचोली बिहारीदास लीषतं पंचोली लखमण कीतरोत संवत् १७७० वर्षे प्रथम आषाढ सुदी ६ गुरे"

कोशाखेडी (मेवाड़) का ताम्रपत्र[७२] (१७१३ ई०)

यह ताम्रपत्र कोशाखेडी गांव का है जिसको महाराणा संग्रामसिंह दूसरे ने दिन-

---

७०. ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भा० २, पृ० ६२२

७१. ओरह डिपो० रेकार्ड नं० ८२४

७२. वीरविनोद भा० ४, पृ० ११७५

कर भट्ट को हिरण्याश्वदान मे दिया था। ये गाँव भरख परगने के अन्तर्गत था जहाँ कई प्रकार की लागतें, जैसे खड, लाखड, गाँवटका, येलूखूट आदि ली जाती थी। महाराणा ने इन सब लागतो को उसके लिए माफ कर दी थी। इस ताम्रपत्र को पचोली लक्ष्मण ने बिहारीदास पचोली के प्रतिदुवे से लिखा था।
इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

'महाराजाधिराज महाराणा श्री सग्रामसिह जी आदेशातु, भट्ट दिनकर महादेयरा न्यात महाराष्ट्र कस्य ग्राम कोपाखेडी पडगने भरखरे पेहली थारे पटे थो सो हिरण्याश्व महादान जेठ सुदि १५ भोमरे दिन दीधो, जदी दक्षिणारो लागत खडलाकड गामटका केजुरूट तथा सर्वसुधो ऊदक आघाट करे श्री रामार्पण कीधो दुवे श्री मुख प्रतदुवे पचोली बिहारीदास लिखत पचोली लखमण छीतरोत स० १७७० वर्षे दुती आसाढ सुदी १२ भामे"

गाव आसोट्या का ताम्रपत्र[७३] (१७१४ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा सग्रामसिह द्वितीय के समय का है जिसम उक्त महाराणा द्वारा आसोटया गाँव को द्वारकाधीश को भेंट किये जान का उल्लेख है। इसको सभी राजकीय कर म भी मुक्त किये जान का कथन है। यहाँ काकरोली गाँव मे गरीबदास पुरोहित के भाग का भी जिक्र है जो गरीबदास की जागीर म था। ये अनुदान महाराणा ने यहाँ दर्शनार्थ आन के समय किया जिसकी आज्ञा पचोली बिहारी दास द्वारा दी गई और उसे पचोली लक्ष्मण छीतरोत ने लिखा।
इसका मूल इस प्रकार है—

'महाराजाधिराज महाराणा श्री सग्रामसिघजी आदेशातु गुसाई गिरधारलाल जी कस्य ग्राम काकडोली पडगने राजनगर रे जणीमाहे प्रोहितजी रो वट थो सो लागीर गरीबदास जगनाथ री गाम टका तथा लागत सरबसुधी गाम आसोटयो श्री द्वारकानाथजी रे दरसण मागसेर वदि ११ दीन हुजूर पधारा जदी उदक आघाट कर श्री रामापण कीधो दुश्रे श्री मुख स्वदत्ता प्रतदुए पचोली बीहारीदास लीपत पचोली लछमण छीतरोत सवत् १७७१ वर्षे चत सुदी ७ बुधे

वेगू का ताम्रपत्र[७४] (१७१५ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा सग्रामसिह के समय का है जिसम प्रहलाद को वेगू म एक रहट व भूमि पीवल, माल, बाग आदि के देने का उल्लख है। यह अनुदान भूमि के सभी वृक्ष, कुए, नीवाण समेत किया गया था। यहाँ का दाण राज्य का रहेगा ऐसा भी उल्लेख है। इसकी आज्ञा पचोली बिहारीदास द्वारा दी गई थी। इसम खेतो के अलग अलग नाम दिये गये हैं जो उस समय की भूमि विभाजन की प्रथा

---

७३ ओल्ड डिपो० मिसल जागीर स० ६५, २६/४०६ बी०
७४ ओल्ड डिपोजिट रेकार्ड, न० १४७१

और पंचोली कान्हां ने इसे लिखा (इसका समय संवत् १७६०, आसोज सुदि १३ भोम है।

इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणा श्री अमरसिंघ जी आदेशातु ग्राम सुन्दर द्वारा जोसी चत्रभुज कान्हा अपोतम गोभारामा तथा समस्त न्यात नागद्राकस्य थांरा ग्राम सुन्दरछो न्यात में हुयो थो सो पाछो मया कीधो नैं पेहली वरती तांबापत्र है जठा उपरांत गायनारी धरती थी सो खालसे हुई थी जणीरा रुपया ८००० आठ हजार करे नांमोनांम उदक आघाट करे श्री रामापरण कीधी दुअें श्री मुख.............. प्रतदुअें पचोली दामोदरदास लीपतं पचोली कान्ह छीतरोत संवत् १७६० वर्षे आसोज सुदि १३ भोमे"

कोघाखेड़ी गांव का दानपत्र[70] (१७१३ई०)

यह दानपत्र श्रावणादि वि० सं० १७७० चैत्रादि १७७१) द्वितीय आषाढ़ सुदि १२ मंगलवार का है। इसमें महाराणा संग्रामसिंह द्वितीय के समय में दिनकर भट्ट को कोघाखेड़ी गांव के दान करने का उल्लेख है। इससे महाराणा की दानशीलता पर प्रकाश पड़ता है और प्रमाणित होता है कि दिनकर भट्ट उस समय का एक अच्छा विद्वान था।

गांव भुवाणे का ताम्रपत्र[71] (१७१३ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा संग्रामसिंह जी द्वितीय के समय का है जिसमें ठाकुर सीतारामजी बेदला को भुवाणा गांव में दो हल भूमि भेंट करने का उल्लेख है। इसकी आज्ञा बिहारी दास के द्वारा दी गई थी और मूलतः यह भेंट बाईजीराज ने की थी जिसकी स्वीकृति का ताम्रपत्र उक्त महाराणा के नाम का है।

इसका मूल इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणा श्री संग्रामसिंघ जी आदेशातु ठाकुर श्री सीताराम जी गांव बेदने विराजे सेवग भगवत लछमणदास सेवा करे जणी हरिमंदिर पूजा मारू ग्राम भवाणो पडगने गिरवारे जणीमाहे धरती हल दोयरी वीघा १०० एक सौ तीमधे वीघा २० वीस पीवल उन्हाली ने वीघा ८० असी सीयाली माल श्री बाईजीराज चढाई तांबापत्र करे दीवाणो दुअें श्री मुख स्वदत्तां .... प्रतदुअें पंचोली बिहारीदास लीपतं पंचोली लखमण छीतरोत संवत् १७७० वरषे प्रथम आसाड सुदी ९ गुरे"

कोघाखेड़ी (मेवाड़) का ताम्रपत्र[72] (१७१३ ई०)

यह ताम्रपत्र कोघाखेडी गांव का है जिसको महाराणा संग्रामसिंह दूसरे ने दिन-

---

७०. ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भा० २, पृ० ६२२

७१. ओल्ड डिपो० रेकार्ड नं० ८२४

७२. वीरविनोद, भा० ४, पृ० ११७५

कर भट्ट को हिरण्याश्वदान मे दिया था। ये गांव भरख परगने के अन्तर्गत था जहाँ कई प्रकार की लागतें,-जैसे खड, लाखड, गांवटका, फेलूखूंट आदि ली जाती थी। महाराणा ने इन सब लागतों को उसके लिए माफ कर दी थी। इस ताम्रपत्र को पंचोली लक्ष्मण ने बिहारीदास पंचोली के प्रतिदुवे से लिखा था।

इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणा श्री सग्रामसिह जी आदेशातु, भट्ट दिनकर महादेवरा न्यात महाराष्ट्र कस्य ग्राम कोपाखेडी पडगने भरखरे पेहली थारे पटे थो सो हिरण्याश्व महादान जेठ सुदि १५ भोमरे दिन दीधो, जदी दक्षिणारो लागत खडलाकड गामटका केलुखूंट तथा सर्वसूधो ऊदक आघाट करे श्री रामार्पण कीधो दुवे श्री मुख..............प्रतदुवे पचोली बिहारीदास लिखत पंचोली लखमण छीतरोत स० १७७० वर्षे दुती आसाढ सुदी १२ भोमे"

गांव आसोट्या का ताम्रपत्र[73] (१७१४ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा सग्रामसिंह द्वितीय के समय का है जिसमे उक्त महाराणा द्वारा आसोट्या गांव को द्वारकाधीश को भेंट किये जाने का उल्लेख है। इसको सभी राजकीय कर से भी मुक्त किये जाने का अंकन है। यहाँ काकरोली गांव मे गरीबदास पुरोहित के भाग का भी जिक्र है जो गरीबदास की जागीर मे था। ये अनुदान महाराणा ने यहाँ दर्शनार्थ आने के समय किया जिसकी आज्ञा पचोली बिहारी दास द्वारा दी गई और उसे पचोली लक्ष्मण छीतरोत ने लिखा।

इसका मूल इस प्रकार है—

'महाराजाधिराज महाराणा श्री संग्रामसिंघजी आदेशातु गुसाई गिरधारलाल जी कस्य ग्राम काकडोली पडगने राजनगर रे जणीमाहे प्रोहितजी री वंट थो सो तागीर गरीबदास जगनाथ थी गाम टका तथा लागत सरबमुधो गाम आसोट्यो श्री द्वारकानाथजी रे दरसण मागसेर वदि ११ दीन हजूर पधारा जदी उदक आघाट कर श्री रामार्पण कीधो दुअे श्री मुख स्वदत्ता ...... प्रतदुए पचोली बीहारीदास लीपत पचोली लछमण छीतरोत संवत् १७७१ वर्षे चेत सुदी ७ बुधे"

वेगूं का ताम्रपत्र[74] (१७१५ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा सग्रामसिंह के समय का है जिसमे प्रहलाद को वेगूं मे एक रहट व भूमि पीवल, माल, बाग आदि के देने का उल्लेख है। यह अनुदान भूमि के सभी वृक्ष, कुए, नीवाण समेत किया गया था। यहाँ का दाण राज्य का रहेगा ऐसा भी उल्लेख है। इसकी आज्ञा पंचोली बिहारीदास द्वारा दी गई थी। इसमे खेतो के अलग-अलग नाम दिये गये हैं जो उस समय की भूमि विभाजन की प्रथा

---

७३. ओल्ड डिपो० मिसल जागीर स० ६५, २६/४०६. बी०

७४. ओल्ड डिपोजिट रेकार्ड, न० १४७१

और पंचोली कान्हां ने इसे लिखा (इसका समय संवत् १७६०, आसोज सुदि १३ भोम है।

इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणा श्री अमरसिंघ जी आदेशातु ग्राम सुन्दर छा रा जोसो चुत्रभुज कान्हा प्रषोत्तम सोभारामा तथा समसत न्यात नागद्राकस्य थांरा ग्राम सुन्दरछो खालसै हुओ थो सो पाछो मया कीओ नैं पेहली धरती तांबापत्र है जठा उपरांत गायलारी धरती थी सो खालसे हुई थी जणीरा रुपया ८००० आठ हजार करे चांमोचांम उदक आघाट करे श्री रामापरण कीधी दुअे श्री मुख..............प्रतदुअे पंचोली दामोदरदास लीषतं पचोली कान्ह छीतरौत संवत् १७६० व्रीषे आसोज सुदि १३ भोमे"

कोघाखेडी गाँव का दानपत्र[७०] (१७१३ई०)

यह दानपत्र श्रावणादि वि० सं० १७७० (चैत्रादि १७७१) द्वितीय आषाढ़ सुदि १२ मंगलवार का है। इसमें महाराणा संग्रामसिंह द्वितीय के समय में दिनकर भट्ट को कोघाखेडी गाँव के दान करने का उल्लेख है। इससे महाराणा की दानशीलता पर प्रकाश पड़ता है और प्रमाणित होता है कि दिनकर भट्ट उस समय का एक अच्छा विद्वान था।

गांव भुवाणे का ताम्रपत्र[७१] (१७१३ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा संग्रामसिंह जी द्वितीय के समय का है जिसमें ठाकुर सीतारामजी वेदला को भुवाणा गाँव में दो हल भूमि भेंट करने का उल्लेख है। इसकी आज्ञा बिहारी दास के द्वारा दी गई थी और मूलतः यह भेंट बाईजीराज ने की थी जिसकी स्वीकृति का ताम्रपत्र उक्त महाराणा के नाम का है।

इसका मूल इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणा श्री संग्रामसिंघ जी आदेशातु ठाकुर श्री सीताराम जी गाँव वेदले बिराजे सेवग भगवत लछमणदास सेवा करे जणी हरिमंदिर पूजा सारू ग्राम भवाणो पडगने गिरवारे जणीमाहे धरती हल दोयरी वीघा १०० एक सौ तीमधे वीघा २० बीस पीवल उन्हाली ने वीघा ८० असी सीयाली माल श्री बाईजीराज चढाई तांबापत्र करे दीवाणो दुअे श्री मुख स्वदत्तां..........प्रतदुअे पंचोली बिहारीदास लीषतं पंचोली लखमण छीतरोत संवत् १७७० वरषे प्रथम आसाड सुदी ६ गुरे"

कोघाखेडी (मेवाड़) का ताम्रपत्र[७२] (१७१३ ई०)

यह ताम्रपत्र कोघाखेडी गाँव का है जिसको महाराणा संग्रामसिंह दूसरे ने दिन-

---

७०. ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भा० २, पृ० ६२२

७१. ओल्ड डिपो० रेकार्ड नं० ८२४

७२. वीरविनोद, भा० ४, पृ० ११७५

कर भट्ट को हिरण्याश्वदान में दिया था। ये गाँव भरख परगने के अन्तर्गत था जहाँ कई प्रकार की लागतें, जैसे खड, लाखड, गांवटका, पैन्तूखूट आदि ली जाती थी। महाराणा ने इन सब लागतों को उसके लिए माफ कर दी थी। इस ताम्रपत्र को पचोली लक्ष्मण ने बिहारीदास पचोली के प्रतिदुवे से लिखा था।

इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

> 'महाराजाधिराज महाराणा श्री संग्रामसिंह जी आदेशातु, भट्ट दिनकर महादेवरा न्यात महाराष्ट्र कस्य ग्राम कोंथाखेडी पडगने भरखरे पेहली थारे पट थो सो हिरण्याश्व महादान जेठ सुदि १५ भोमरे दिन दीधो, जदी दक्षिणारो लागत खडनाकड गामटका केलुखूट तथा सर्वसुधी उदक आघाट करे श्री रामार्पण कीधो दुव श्री मुख प्रतदुवे पचोली बिहारीदास लिखत पचोली लखमण छीतरोत स० १७७० वर्षे दुती आसाढ सुदी १२ भोमे'

गाव आसोट्या का ताम्रपत्र[73] (१७१४ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा संग्रामसिंह द्वितीय के समय का है जिसमें उक्त महाराणा द्वारा आसोटया गाँव को द्वारकाधीश को भेंट किये जाने का उल्लेख है। इसको सभी राजकीय कर से भी मुक्त किय जाने का कथन है। यहाँ काकरोली गाँव मे गरीबदास पुरोहित के भाग का भी जिक्र है जो गरीबदास की जागीर मे था। ये अनुदान महाराणा ने यहाँ दर्शनार्थ आने के समय किया जिसकी आज्ञा पचोली बिहारी दास द्वारा दी गई और उसे पचोली लक्ष्मण छीतरोत ने लिखा।

इसका मूल इस प्रकार है—

> 'महाराजाधिराज महाराणा श्री संग्रामसिंघजी आदेशातु गुसाई गिरधारलाल जी कस्य ग्राम काकडोली पडगने राजनगर रे जणीमाहे प्रोहितजी री वट थी सो तागीर गरीबदास जगनाथ थी गाम दत्ता तथा लागत सरबसुधी गाम आसोटयो श्री द्वारकानाथजी रे दरसण मागसेर वदि ११ दीन हजूर पधारा जदी उदक आघाट कर श्री रामार्पण कीधो दुवे श्री मुख स्वदत्तां प्रतदुए पचोली बीहारीदास लीखत पचोली लखमण छीतरोत सवत् १७७१ वर्षे चेत सुदी ७ बुधे

वेगू का ताम्रपत्र[74] (१७१५ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा संग्रामसिंह के समय का है जिसमें प्रहलाद को बेगू में एक रहट व भूमि पीवल, माल, बाग आदि के देने का उल्लेख है। यह भूमि के सभी वृक्ष, कुए नीवाण समेत दिया गया था। ।। दाग रहेगा ऐसा भी उल्लेख है। इसकी आज्ञा पचोली बिहारी इसमें खेतो के अलग अलग नाम दिये गये हैं जो उस समय

---

७३ ओल्ड डिपो० मिसल जागीर स० ६५,

७४ ओल्ड डिपोजिट रेकार्ड, न० १४७१

पर प्रकाश डालते है। इसका मूल इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज श्री संग्रामसिंघजी आदेसातु पेलाद जात सीसोदराकस्य गाम बेगम म्हे रेहट १ वडलारो कुडो धरती बीगा १५ पीवल माल बीगा २० वागरी धरती बीगा ४ धोढीरामेत १ बीगा ६ तोहे रावत देवीसीध श्री दरबार अरज करे दीवाणी उदक आघाट श्रीगमापरपण करे दीदी लागत बीलगत रुप वरप कुडा नीवाण सरवसुदी करे दीदी सोघारा बेटा पोता सपूत-कपूत खाया जासी दाण आश्री (जी) को वाजसी ग्गीआ हजार सात ७००० माहे सो आघाट दुए रावत देवसीव प्रतदुए पचोली बीहारीदास लपता पचोली लपमणरा संवत् १७७२ वरप आसोज सुद १०।

सखेडी का ताम्रपत्र[७५] (१७१६ ई०)

यह ताम्रपत्र महारावत गोपालसिंहजी का है जिसमें गुंसाई गंगागिरजी को नाबूगेडी के एवज गांव सेखडी को अनुदान के रूप में देने का उल्लेख है। इसमें कथकावल नामक कर का उल्लेख लागत-विलगत के साथ दिया गया है जो एक स्थानीय कर प्रतीत होता है। इस ताम्रपत्र का ऐतिहासिक महत्त्व है। रावत गोपाल सिंह रावत उम्मेदसिंह का भाई था। वह अपने भाई की मृत्यु के बाद प्रतापगढ़ का राजा बन बैठा। उसे भय था कि संभवतः कुछ सर्दार उम्मेदसिंह के अल्पवयस्क पुत्र सालिमसिंह का पक्ष लें और उसके राज्याधिकार पर आपत्ति उठावें। इस भय को टालने के लिए जिस वर्ष राज्य का स्वामी बना उसी वर्ष उदयपुर जाकर उसने वहां के राणा संग्रामसिंह (दूसरे) से मुलाकात की तथा अपनी गद्दीनशीनी की रस्म को सुदृढ़ कर लिया। इस अनुदान को भी उदयपुर रहते किया गया था जिससे उसका पक्ष प्रबल रहे। इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

"श्री महाराजाधिराज महारावतजी श्री गोपालसींघजी वचनातु गुंसाई श्री गंगागिरजी जोग्य यत् मोजे गाम १ सेखडी गांव भूमिहरा तथा टकरावद तीरेकी गाम नाबूलेडी पहेली रावत श्री पृथ्वीसिंघजी संवत् १७७३ रा जेठ सुदि १५ रे दिन चढावी जीरे बदले रावत श्री गोपालसिंघजी उदेपुर पधार्या मठे जदी गाम सखेडी कथकावल रहित लागट विलगट रहित उदक आघाट करे दीधी। मारा वंशरो कोई चोलण करसी नहीं। स्वदत्तं परदत्तं वाये हरन्ति वसुन्धरा षष्टि वर्ष सहस्राणि विष्ठायां जायते कृमिः। दुए शाह चंद्रभाणजी प्रेरक ठाकर फतेसिंघजी, लिखावत राव रिणछोड़दासजी मामा रामचंदजी उदेपुर मांहे हुकम थी लिखायो। संवत् १७७८ सावण सुदि १३ बुधे"

ओवरी गांव का ताम्रपत्र[७६] (१७१६ ई०)

ओवरी गांव डूंगरपुर जिले में है जिसका एक ताम्रपत्र वि. सं. १७७२ (चैत्रादि १७७३, अमांत ज्येष्ठ (पूर्णिमांत आषाढ़) वदि १० (ई. सं. १७१६ ता. ४

---

७५. ओझा, प्रतापगढ़ राज्य का इतिहास, पृ. २१८

७६. ओझा, बाँसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ. ५७

जून) का जोशी सहदेव के नाम का है। इसमे गांव के समस्त लोगो को सम्बोधित किया गया है जो उस समय की परम्परा और स्थानीय मान्यता का द्योतक है। इसके मूल लेख मे वख्तसिंह को, जो महारावल रामसिंह का दूसरा पुत्र था, महाकुंवरजी उल्लिखित किया है जो उसके शासकीय पद और अधिकार का द्योतक है। इसके मूलपाठ की एक पंक्ति इस प्रकार है—

"स्वस्त (स्ति) श्री डूंगरपोर सुभस्थाने माहाकुंभरजी श्री वखतसघजो'''।"

ग्रमलावदे के दो ताम्रपत्र[77] (१७१६ ई०)

ये ताम्रपत्र सग्रामसिंह (प्रतापगढ़) के समय के हैं जिनमे ग्रमलावदे मे भूमिदान का उल्लेख है। इनमे भी उस समय लिये जाने वाले करो को दानभूमि के सम्बन्ध मे माफ किया गया है। इनमे चन्द्रग्रहण मे दान देने का तथा गौतमेश्वर नामी तीर्थस्थान मे दान देने का उल्लेख है। इनका मूलपाठ इस प्रकार है—

(१)

"श्रीमन्महाराजाधिराज महारावतजी श्री संग्रामसिंहजी वचनातु जोसी रोडाजी सुखरामजी योग्य यत् खेत बीघा ६१ एकासु श्रीपृथ्वीसिंहजी तथा पहाडसिंह दीधाछै मे ग्रा चद्रार्क यावत उदक ग्राघाटे पाने दीधी। जेरा विगत बीघा ६० वर मंडल ग्ररवोदये चन्द्रग्रहणे दीधा बीघा ३१ ग्रमलावदे पहाडजी निमित्त जोमले ६१ बीघा जेम दीधी। दुवा साह जीवराज मेता द्वारिकादास लिखित विद्या शिरोमणि राय संवत् १७७६ वर्षे '' ''' ग्रषाड वदि २"

(२)

"महारावतेन्द्र श्री संग्रामसिंहजी वचनातु जोसी रोडाजी सुखरामजी जोग्य यत् गाम ग्रमलावद माहि गोहरा खालु खेत बीगा १३ ग्रके तेरा मा भलीजी थानो दीदू गोतमजी माहे दीदु जे मे ग्रा चन्द्रार्कयावत कृष्णार्पण दीदु जी टकी लागत बलत माफ करे दीदाजी''''' लिखिते विद्याशिरोमणि रायजी दुए सा जीवराज मेहता द्वारकादासजी संवत् १७७६ वर्षे ग्रषाड वदि ६ दीनो"

गांव गडरोड का ताम्रपत्र (१७१६ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा श्री संग्रामसिंहजी के समय का है जिसमे १६०० रु० की ग्राय का गांव चारभुजा के मंदिर मे सदाव्रत के लिए बाईजीराज तथा कुंवर जगतसिंह ने वहां दर्शनार्थ ग्राने के समय पुण्यार्थ किया। इस गाव की भूमि सोलंकियों के जागीर में थी उनसे लेकर सदाव्रत के खाते की गई, परन्तु वहां की डोलियां जो ब्राह्मणो के पास थी उन्हे बिना हासिल की रखी गई। इसकी ग्राज्ञा बिहारीदास द्वारा दी गई ग्रौर इसे पचोली लक्ष्मण ने लिखा। इस ताम्रपत्र मे उल्लिखित बाईजीराज या तो सर्वकुंवर या रूपकुंवर ग्रथवा व्रजकुंवर होना चाहिए, जो महाराणा सग्रामसिंह की तीनो पुत्रियां थीं। मंदिरो के साथ सदाव्रत का प्रबन्ध होने ग्रौर

---

७७ ग्रोझा, प्रतापगढ़ राज्य का इतिहास, पृ. २१४

ढोलियों का विगर हासिल होने के इसके उल्लेख महत्त्वपूर्ण हैं। इसका मूलपाठ इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणाश्री संग्रामसिंघजी आदेशातु ग्राम १ ऐक उपत रुपया १९००) एक हजार नव सो रा ठाकुर श्री चत्रभुजजी गडबोर बीराजे जठे श्री बाईजीराज ने कुंअर जगतसिंघजी दरसण पधार्‌या सो धर्मखाते सदाव्रत सारू चढाया सो सदाव्रत मांहे चुक पडेगा नहीं सो रामारपण कीधा वीगत रुपया.........
१९०० गाम गडबोर पडगने वमारट रे तागीर सोलंकी सावलदास सोभावत थी सो पहेनी इणीगांम महे गेत चढाया हे तथा वामणां रे डोहली तांबापत्र हे जणी वीगर हासल हे सो सो सदाव्रतरेवीनो..........दुए श्री मुख......प्रतदुत्रे पंचोली वीहारीदास लीपतं पचोली लषमण छीतरोत संवत १७७६ वरपे जेठ वदी ८ वुधे"

प्रतापगढ़ का एक ताम्र-पत्र,[७८] (१७२० ई०)

यह ताम्रपत्र भी नेग के सम्बन्ध में अनुदान का उल्लेख करता है जो ढोली सुन्दर को दिया गया था। इसका मूल इस प्रकार है—

"श्री महाराजाधिराज महारावतजी श्री गोपालसिंहजी वचनातु ढोली सुन्दर भोपा गारच्य राजट अग्रं च गाम मोजा प्रतापगड मध्ये सतु मुणरा नेग खेत मघेडी विगा २५ अडाज विगा ७ तावांपत्र कर दिधो लगर वलगर रहत दिवा दुअे साह चन्द्रभाणजी संवत १७७८ भाद्रवा सुदी १५ लिखेत विद्या शिरोमणी रायेजी प्रतदूवा माधोलालजी।

गांव वाडी का ताम्रपत्र, (१७२७ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा संग्रामसिंह द्वितीय का है जिसमें उल्लिखित है कि महाराणा ने जोशी हरवंस सनाढ्य को गांव वाडी में, परगना ऊंटाला, दो हल भूमि पुण्यार्थ दी। इसमें कुछ भूमि कम पड़ती थी तो उसकी पूर्त्ति गाँव डबोक से तथा खालसा भूमि से की गई। इस ताम्रपत्र से भूमि का विभाजन माल, मगरा, खालसा आदि के विचार से भी किया जाना प्रमाणित है। इसकी आज्ञा धावाई नगा के द्वारा दी गई और उसे पंचोली लक्ष्मण ने लिखा। धायभाई नगा उस समय बड़ा प्रभावशील व्यक्ति हो गया था। इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणाजी संग्रामसिंघजी आदेशातु जोसी हरवंश तारा रा न्यात सनावडकस्य ग्राम वाडी पडगनो ऊंटालारे जणी मांहे धरती हल दोयरी सांपलानामदास री थी सो धरती सरीनी मघे धरती वीघा १६ सोले घटी सो ग्राम डवोक पडगने ऊंटाला रे जापी मांहै ब्राह्मण ने तारी धरती सरे देता घटे सो माल मगरो पालसा मांहे थी दीवायगी सो उदक आघाट करे श्रीरामारपण कीधी दुअे श्रीमुख प्रतदुअे धायभाई नगा लीपतं पंचोली लषमाण शीधरोत संवत् १७८४ वर्पे जेठ वदी ११ सीनु"

---

७८. इसकी प्रतिलिपि श्री छगनलालजी दमामी से प्राप्त।

धनेमरी का ताम्रपत्र[७९], (१७२६ ई०)

'वि०स० १७८३ आषाढ सुदि १३ (ई०स० १७२६ ता. १ जुलाई) का नाथद्वारे मे श्रीनाथजी के मंदिर को गाँव धनेसरी भेंट करने का ताम्रपत्र जिसमे उक्त महारावत का विवाह के लिए धाणेराव जाते समय उपर्युक्त गाँव श्री नाथजी को भेंट करने का उल्लेख है। इसमे दुए शाह चन्द्रभाण तथा लेखक का नाम विद्याशिरोमणि राय दिया है और अन्त मे धनेसरी गाँव के बदले मे गाँव जेठ्यासेडी चढाने का उल्लेख होकर ये पत्तियाँ शाह चन्द्रभाण और सुन्दर द्वारा लिखी जाने का भी उल्लेख है।"

बाँसवाडा का दानपत्र[८०] (१७३३ ई०)

यह दानपत्र महारावल विष्णुसिह के समय का है जिसका समय वि०स० १७९० आश्विन सुदि १३ (ई० स० १७३३ ता० ११ अक्टूबर) है। इसमे विनेकुवरी राठौड द्वारा गुरु वख्तराम तल्लराम को गोत्रिरात्र व्रत के उद्यापन के समय सुनारिया नाम के एक रहँट को दान करने का उल्लेख है। इससे रानी की धार्मिक वृत्ति का बोध होता है।

गाँव सिहाड का ताम्रपत्र[८१], (१७३६ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा जगतसिह के समय का है जिसमे सिहाड गाँव ठाकुर गोवर्धननाथ जी के भेंट करने का उल्लेख है। इसमे सभी प्रकार के करो को माफ किए जाने एव उस पर पाटवी गोस्वामी के अधिकार होने का आदेश है। इसमे कुबेरचन्द द्वारा आज्ञा दिए जाने एव पचोली लक्ष्मण द्वारा इसे लिखा जाना अंकित है। इसका समय वि०स० १७९३ वैशाख सुदि ११ शुक्रवार है। इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणा श्री जगतसिहजी आदेशातु ग्राम स्याहड पडगने मगरारे ऊपत रुपया १०००) एक हजार रो ठाकुर श्री गोवर्धननाथजी ग्राम स्याहड विराजे जठे प्रवाना प्रमाणे चढायो थो सो लागत सर्वसुधी उदक आघाट करे श्री रामारपण कीधो सो इणी गामरो पाटवी गुसाई व्हे जे अमल करगा स्वदत्त प्रत दुवे पचोली कुबेरचद लीखत पचोली लखमण छीतरोत सवत १७९३ वर्षे वैसाख सुदी ११ सुके"

जगत्सिह का ताम्रपत्र[८२], (१७३७ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा जगत्सिह द्वितीय के समय का है जिसमे उल्लिखित है कि तीन जागीरदारो की सीमा के बीच वदनोर परगने मे आयस गुलाबराय का आसन स्थापित किया जिसमे प्रत्येक के गाँव से कुछ बीघा भूमि लेकर उसके लिए ७०१ बीघा

७९ ओझा, प्रतापगढ राज्य का इतिहास, पृ० २४३
८० ओझा, बाँसवाडा राज्य का इतिहास, पृ० १२६
८१ ओल्ड डिपो० रेकार्ड, न० मिसल १४०, ९१
८२ ओल्ड डिपो० रेकार्ड, न० ३४८

जमीन का प्रावधान किया गया और उसे सभी प्रकार की लागत के अधिकार सहित दिया। इससे जागीर के गाँवों से महाराणा का जमीन लेकर अनुदान देने के अधिकार की पुष्टि होती है। इसका मूलपाठ इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणाजी श्री जगतसिंघजी आदेशातु आयस गुलाबरायकस्य धरती बीघा ७०१ सातसे एक ग्राम ३ तीन पडगने बधनोर रे जणारी सीम बीचे आसण बंधायो सो नीमधे धरती वीघा ३०१ तो गाम गागाडामाहे थी तागीर राठौड जोगी रामजस करणोत थी ने धरती वीघा २२५ ग्राम लाँबा मांहे थी तागीर सीद्या जोरावर सीघ प्रताप सींघोत थी ने धरती वीघा १७५ ग्राम तीसवासा माँहे थी तागीर राठोड शिवसींघ साहिब सींघोत थी लागत सरबसुधी उदक आघाट करे श्री रामारपण कीधी·······प्रतदुए पंचोली कुबेरचंद लीषतं पंचोली लषमण छीत्रोत संवत् १७६४ वरषे पोस वदी ९ सोमे"

सिदसरा का दानपत्र[८३], (१७३८ ई०)

यह दानपत्र प्रतापगढ़ के रावत गोपालसिंहजी के काल का है जिसमें टकी, दुसी, लागर, वलगर आदि का उदक सम्बन्धी दान के उपलक्ष में छोड़ा गया है। इसका मूल इस प्रकार है—

"श्री महाराजाधिराज रावत श्री गोपालसिंघजी वचनातु मेता आनन्दराय योग्य यत् तु थाहे दोलतसिंघजी ऐ दरबार रा हुकम थी चन्द्रपर्व मध्ये अडाण वीघा ४ अंके चार गाम मोजे सिद्धसरा मध्ये कृष्णार्पण दीधु योमे थाहे पाले दिधु टकी दुसी लागत वलगर सहित कृष्णार्पण दिधु। हवे अणा अडारा री चोलण मारा वंश कोई करे नही करे जणे चित्तौड भागीरू पाप छै·······दुए साख हजूर लिखता मेला गोविन्द जी संवत् १७९५ वर्षे पोष सुदी १५ शनी।"

वरखेडी का ताम्रपत्र,[८४] (१७३९ ई०)

यह ताम्रपत्र महारावत गोपालसिंह के समय का है जिसमें वि० सं० १७९६ ज्येष्ठ वदि ३ (ई०स० १७३९ ता० १४ मई) को दसूंदी (भाट) कान्हा को लाख पसाव में वरखेडी गाँव और लखणा की लागत देने का उल्लेख है। इसमें लेखक का नाम मेहता गोविन्द दिया है। इसमें दिये गये लाख पसाव तथा लखणा की लागत बड़े महत्त्व के हैं। लाख पसाव एक सम्मानपूर्वक दिये गये इनाम से है जो कवीश्वरों तथा विद्वद्जनों को दिया जाता था। इसी तरह लखणा की लागत भी एक प्रतिष्ठासूचक लागत लेने का विशेष अधिकार था।

ईसरवास गाँव का दानपत्र,[८५] (१७३९ ई०)

यह ताम्रपत्र महारावल उदयसिंह (बाँसवाड़ा) के काल का है जिसमें वि० सं०

---

८३. मूल श्री महता नाथूलालजी के पास है।

८४. ओझा, प्रतापगढ़ राज्य का इतिहास, पृ० २४४।

८५. ओझा, बाँसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ० १२९।

१७९६ कार्तिक सुदि १० (ई० स० १७३६ ता० ३० अक्टूबर) भौमवार अंकित है। इसमे राजमाता विनयकु वरी के वार्षिक श्राद्ध के अवसर पर ईसरीवास गाँव म जोशी दलना को ३ हल भूमि दान दिये जाने का उल्लेख है। विनयकु वरी महारावल विष्णु-सिंह की राठौड राणी थी और वह कुशलगढ के ठाकुर की पुत्री थी।

बाँसवाडा के दो दानपत्र,[८८] (१७४७ ई० तथा १७५० ई०)

ये दो दानपत्र महारावल पृथ्वीसिंह के समय के हैं। एक का समय वि० स० १८०४ (अमांत) आश्विन (पूर्णिमांत कार्तिक) वदि ६ (ई०स० १७४७ ता० १६ अक्टू-बर) शुक्रवार का है। इसमे महारावल का उज्जैन मे क्षिप्रा के तट पर जानी वसीहा को १ रहँट दान करने का उल्लेख है। दानपत्र मे रहँट के पडोस तथा उसकी स्थिति का भी वर्णन अंकित है।

दूसरा दानपत्र वि० स० १८०६ (चैत्रादि १८०७ अमांत) वैशाख (पूर्णिमांत ज्येष्ठ) वदि (ई०स० १७५० मई) का पाठक गोपाल के सम्बन्ध में है। इसमे गोदावरी तीर्थ मे स्नान करते समय उसे महारावल द्वारा गाँव छोटी पाडी मे भूमि दान का उल्लेख है।

ये दोनो दानपत्र ऐतिहासिक महत्व के हैं। जब जसवन्तराय पँवार की सेना ने आकर बाँसवाडा को घेर लिया तब वि० स० १८०४ (ई० स० १७४७) मे महारावल सितारा गया और राजा शाहू से मिला और वहाँ प्रतिवर्ष नियमित रूप से खिराज देने का इकरार कर आया। इस पर मयश्याम बापूजी ने आकर इस मामले की जाँच की और मराठा का घेरा उठाया गया। सितारा स लौटते समय महारावल ने गोदावरी तीर्थ मे स्नान करते समय वि० स० १८०६ (ई० स० १७५० मई) गोपाल पाठक का भूमिदान किया और पुन बाँसवाडा लौट आया। वागडी भाषा के अठारहवी शताब्दी क स्वरूप को समझने म भी ये दोनो दानपत्र बडे उपयोगी हैं। इनके मूल के कुछ अ श इस प्रकार हैं —

(१)

स्वस्ति श्री वासवाला शुभस्थाने महाराजाधिराज महारावल श्री पृथ्वी सिंहजी विजयराज्य जानी वसीहा सुत भास्कर ह्ट (रहँट) १ चलए तारा माहे सवक केसववालो श्रीरामावणे आप्यो थी उजेण मध्ये क्षीप्राजी माहे आप्यो छे नदीना ढावा थी माँडीने मसीत की वाट सुधी पाटीयु छे जाना नाथा रायेला रूटी लागतो थो सवत् १८०४ वरषे आसोज वदि ६ शुक्रवासरे।'

(२)

'महाराजाधिराज महाराओल श्री पृथ्वीसिंहजी आदेशात् पाठक गोपालजी गाम पाडी छोटी स्वस्ती पत्रे आपी छे दक्षिण सतारा री मुभ (मुहीम) करी पाछा आवते श्री गोदावरी गगा मध्ये सवत १८०६ ना वैसाख वद तीरथ मध्ये

८८ ओझा, बाँसवाडा राज्य का इतिहास पृ० १३१

स्नान करीनो श्रीरामार्पण तुलसीपत्रेदत्त·······स्वस्ती भणावीछे·······संवत् १८०७ मास माघ सुदी ६ वार चन्द्रे·······।"

गोवर्धनपुर का ताम्रपत्र[८७], (१७५४ ई०)

इस ताम्रपत्र में उल्लिखित है कि महारावत गोपालसिंह अपने कुंवर सालिमसिंह के साथ नाथद्वारे गये जहाँ गोस्वामी गोवर्धन की गद्दीनशीनी पर गोवर्धनपुर नामक गाँव उन्हें भेंट किया। इस ताम्रपत्र से महारावत का वैष्णव धर्म के प्रति निष्ठा का बोध होता है और ऐसा प्रतीत होता है कि उनका मेवाड़ से अच्छा सम्बन्ध था।

बाँसवाड़ा के ताम्रपत्र[८८], (१७५६-१७७६ ई०)

महारावल पृथ्वीसिंह के समय के कई दानपत्र उपलब्ध हैं जिनमें ब्राह्मणों व चारणों को भूमिदान किये जाने के उल्लेख हैं। इससे प्रमाणित होता है कि महारावल काव्य-प्रेमी था और विद्वानों को भूमि देकर अपने राज्य में आश्रय देता था। उसमें एक धार्मिक भावना भी थी जिससे वह ब्राह्मणों के लिए जीविका के साधन जुटाकर उन्हें सन्तुष्ट रखता था। ऐसे दानों में कुछ एक दान इस प्रकार थे—

(१) सेरागांव के एक भाग को बारहट गोर्धनदास को वि०सं० १८१२ (अमात) फाल्गुन (पूर्णिमांत चैत्र) वदि ४ (ई०स० १७५६ ता २० मार्च) देने का उल्लेख है।

(२) टेकलागाँव वि०सं० १८१३ (अमांत) भाद्रपद (पूर्णिमांत आश्विन) वदि ४ (ई०स० १७५६ ता. १२ सितम्बर) को मेहड़ मयानाथ को दिया गया।

(३) वि०सं० १८१५ कार्तिक सुदि ११ (ई० स० १७५८ ता० ११ नवम्बर) का ताम्रपत्र तरवाडी मोरली (मुरली) सुत अमरा अदरिया के नाम का जिसमें रहँट व दुकानें दान देने का उल्लेख है।

(४) तलीगाँव का (आपाढादि) वि०सं० १८१६ (चैत्रादि १८१७) चैत्र सुदि १ (ई०स० १७६० ता० १८ मार्च) मंगलवार का दानपत्र जिसे सौदा चारण समरथ को दिया गया था।

(५) बारहट मनोहरदास के नाम वि० सं० १८१७ माघ सुदि ५ (ई० स० १७६१ ता. १० फरवरी) का ताम्रपत्र उबहरडी गाँव के अनुदान सम्बन्धी।

(६) आहोर गाँव वि० सं० १८२५ आश्विन सुदी ७ (ई०स० १७६८ ता० ७ अक्टूबर) संढायच गोविन्ददास के नाम।

(७) बारठ जीवणा वदनसिंह श्यामलदास के नाम का वि० सं० १८२८ पौष सुदि १३ (ई०स० १७७२ ता० १८ जनवरी) का माखिया गाँव का ताम्रपत्र।

(८) रणीटीखेडा का वि०सं० १८३६ आश्विन सुदी १ (ई०स० १७७८ ता० १० अक्टूबर) का ताम्रपत्र भट नरसिंह, देवकृष्ण और देवदत्त के नाम।

---

८७. ओझा, प्रतापगढ़ राज्य का इतिहास, पृ० २४४

८८. ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ. १३८-१४०

महाराणा भीमसिंह का ताम्रपत्र[८९]. (१७८५ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा भीमसिंह के समय का है जिसमें आचार्य सदारूप को पाँच हल की भूमि के दान के ताम्रपत्र को पुनः पुण्यार्थ कर नया बनवा देने का उल्लेख है। यह भूमिदान महाराणा जगत्सिंह की माता जाम्बुवती के द्वारा संवत् १७०९ में किया गया था। मूल ताम्रपत्र मुगलकालीन व मराठों के आक्रमणों में खो गया और भूमि पर से भी उसका कब्जा हट गया, अतएव इसे पुनः नया बना दिया गया। इसको पंचोली वल्लभदास गिरधरोत ने लिखा था। इसका बड़ा ऐतिहासिक महत्व है, क्योंकि इसमें जगत्सिंह की माता जांबुवती ने अपनी दोहिती नंदकुंवर के साथ तीर्थयात्रा की थी। इससे स्पष्ट है कि तब तक मेवाड़ मुगल सम्बन्ध अच्छे थे और इसीलिए राजपरिवार का यात्रा करना सम्भव था। इसका मूल इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणा श्री भीमसींघजी आदेशातु आचारज सदारूप तरो बेणा रोमारो जात दायमावरप श्री बाई जांबोती वमदे श्री राणा जगतसिंघजी री माता संवत् १७०९ मे तीरथ पधारा जठे हल पाचरी धरती भाग दोय मे उदक करे दीदी जीरो कवज जाती रही जीने निरधार करे पाछी आज भी उदक आघाट श्री राम अरपण की दी लीखता पंचोली वल्लभदास गीरधरोत संवत् १८४२ रा सावण सुदी ८ सनो"

गढे गाँव का दानपत्र [९०](१७९५ ई०)

यह दानपत्र महारावल विजयसिंह के समय का है जिसमें वि सं० १८५२ आश्विन सुदि १ (ई० स० १७९५ ता० १३ अक्टूबर) मंगलवार का है जिसमें भाट भवानीशंकर सुत दोलिया को उपर्युक्त गाँव पुण्यार्थ देने का उल्लेख है।

शामपुरे गाँव का दानपत्र, (१७९६ ई०)

महारावल विजयसिंह के समय का वि० सं० १८५२ माघ सुदि ५ (ई० स० १७९६ ता १३ फरवरी) का ताम्रपत्र खवास जयशंकर की पुत्री फतेबाई और उसके पति रंगेश्वर के नाम का ताम्रपत्र है। इसमें उपर्युक्त गाँव को फतेबाई के विवाह के अवसर पर कन्यादान में देने का उल्लेख है।

जानावाली गाँव का दानपत्र, [९१] (१७९९ ई०)

यह ताम्रपत्र वि०सं० १८५३ वैशाख सुदि ४ (ई०स० १७९७ ता० ४ अप्रैल) का है जिसे गोरखनाथजी को उपर्युक्त गाँव महारावल पृथ्वीसिंह के गया श्राद्ध के उपलक्ष में दिया गया था।

---

८९. ओल्ड डिपोजिट रेकार्ड, बिला नम्बर

९०. ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, १४७

९१. ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ. १४७

सव्ली (सिरोही) का ताम्रपत्र,[९२] (१८०१ ई०)

इसमें उदयसिंह द्वारा दिये गये भूमि दान का उल्लेख है जो 'सारनेश्वर' के निमित्त किया गया था। इसमें इसको लोपने वाले को गधे की गाल का भागी ठहराया गया है। इस समय तक सिरोही राज्य में खालसा भूमि का विभाजन और हासिल की जमाबन्दी की व्यवस्था हो चुकी थी, जैसाकि इस ताम्रपत्र से स्पष्ट है। भूमि कर के अलावा अन्य कर भी यहां प्रचलित थे जैसा इसमें उल्लिखित है। इसका मूल पाठ इस प्रकार है—

"महाराजे श्री उदेयसिंहजी ग्रचनाग्रेतां वांटी खालसा री लीखत परगने खारल रो गाम सवली श्री महादेवजी श्री सारनेश्वरजी नु चढावीई सो इण गाम री हासिल लागत वलगत पेदायश सरवेत श्री सारनेश्वरजी कोठार लेसी गाम श्री सारनेश्वरजी रो छे सो कोई लोपे नहीं लोपे जगे गदोतरे गाल छे दुग्रे श्री मुख हुकम सु सिरायाला लालारी वेही चडी संवत् १८५८ रा महा सुद ६ रवी"

पारडा गांव का ताम्रपत्र[९३] (१८०१) ई०)

यह ताम्रपत्र लापडी के पारडा गांव (बांसवाड़ा) के सम्बन्ध का वि० सं० १८५७ (चैत्रादि १८५८ अमांत) चैत्र (पूर्णिमांत वैशाख) वदि १२ (ई० स० १८०१ ता० १० अप्रैल) का है। इससे प्रगट है कि आनन्दराव की बांसवाड़ा पर १८०१ में चढ़ाई हुई थी जिसमें प्रभावजी काम आया, आनन्दराव (दूसरा) ई० स० १७८० से १८०७ तक धार का स्वामी रहा। यह गांव भूंपोल को दिया गया।

इसका मूल इस प्रकार है—

"राया राया महाराजाधिराजा माहारावल श्री विजयसिंघजी आदेशात्....जोग जत मया ओधारी ने गाम पारडो लापडी नो पुआंर आनन्दरावजी नी फोज वांसवाडे आवी तारे कजीयो थयो तारे प्रभावजी आ ओधार काम आव्या ते गाम पाडलो भूंपेली नो आल्यो... संवत् १८५७ ना चईत्रवद १२ दने दुआ ओत महतो अमरजी।"

अहीरावास का ताम्रपत्र[९४] (१८०२ ई०)

यह ताम्रपत्र महाराणा भीमसिंह के समय का है जिसमें व्यास केसरीराम को अहीरावास, परगने वदनौर में दो हल भूमि देने का उल्लेख है। इस भूमि का मूल में अनुदान राजसिंह द्वारा किया गया था। परन्तु शत्रुओं से युद्ध के समय ताम्रपत्र नष्ट होगया, अतएव इसे नया बनवा कर दिया। यहां जो 'राड' का उल्लेख किया है वह मराठों के आक्रमण से सम्बन्धित प्रतीत होता है क्यों कि वि० सं० १८४२, १८४४, १८५६ आदि समय में मेवाड़ पर मराठों के हमले हुये थे जिनसे जनजीवन अस्त-व्यस्त हुआ था। ऐसी स्थिति में ताम्रपत्र का नष्ट होना स्वाभाविक

---

९२. सिरोही रेकार्डस से प्राप्त अपेन्डिक्स, स

९३. ओझा, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ. १४४

९४. ओल्ड डिपोजिट रेकार्ड, नं. ७३०

था। इसका समय वि०सं० १८५६ जेष्ठ सुदि ११ है। इसका मूलपाठ इस प्रकार है—

"महाराजाधिराज महाराणाजी भीमसिंघजी ग्रादेशात् ब्यास केसीराम गुणपत कासीराम रा जात ग्रीदीचीकस्य गाम ग्रहीरावास प्रगने बदनोररे जणामहे धरती हल २ दोयेरी महाराणा श्री राजसिंजी चन्दपरव महे उदक ग्राघाट श्री राम ग्ररपण करे दीदी सो तांबापत्र थो सो राड महे जातो रयो सो यो तांबा पत्र करे दीवाणो" संवत् १८५६ जेठ सुदी ११"

अमलावद का ताम्रपत्र, [६५] (१८०३ ई०)

यह ताम्रपत्र महारावत सामन्तसिंह के समय का है जिसमें ब्राह्मण वेणीराम को ग्रमलावद में १० बीघा भूमि पुण्यार्थ देने का उल्लेख है। ये अनुदान रघुनाथ द्वारे की प्रतिष्ठा के अवसर पर किया गया था। इसका समय वि स. १८५६ माघ सुदि ११ का है।

वाडिया गाँव का ताम्रपत्र, [६६] (१८१३ ई०)

महारावल विजयसिंह (बाँसवाड़ा) के समय का वि० स० १८७० ग्राषाढ सुदि ५ (ई० स० १८१३ ता० २ जुलाई) के ताम्रपत्र में शिवनाथ के पंवार ग्रानन्दराव की सेना से लड़ कर काले पत्थरों की पहाड़ी पर काम ग्राने का तथा उसके पुत्र खवास शकरनाथ को (पीछे से) वड़िया गाँव तथा एक बावली दिये जाने का उल्लेख है। यह ताम्रपत्र दौलतराव सिंधिया ग्रौर धार की सम्मिलित सेना के बाँसवाड़े के ग्राक्रमण सम्बन्धी है जो पहिले हो चुका था। इस समय तीन महीने तक लगातार लड़ाई होती रही ग्रौर ग्रंत में मरहटा सेना बाँसवाड़ा में घुस कर लूट-पाट करती रही। इसी ग्रवसर पर शिवनाथ खवास ब्राह्मण भी खेत रहा। यहाँ खवास शब्द विशेष पद का सूचक है न कि जातिविशेष 'नाई' के लिए। खवास शब्द नाई, उपपत्नि तथा पद विशेष का सूचक है। ऐसे संदर्भ में उसका प्रयोग पद विशेष के लिये होता है ग्रौर ऐसे पदाधिकारी ब्राह्मण दर्जी ग्रादि भी होते थे।

इसका मूलपाठ इस प्रकार है—

"*राम. राय. महाराजाधिराज. महारावलजी. श्री. कवेसिंघजी. ग्रादेशात् खवास.* शकरनाथ जोग्य जत मया ग्रोधारी ने गाम वाडीयु तथा दोसी जदारी वाव जायगा सुधी खवास शिवनाथजी कारा भाटारी डोगरी ऊपर पुंग्रार ग्राणद रावरी फौज मे मराणा ते मूंडकटी मे यावत् चन्द्रार्क तनो दीदो दस्तखत जानी दत्त रामना संवत् १८७० ग्राषाढ सुदि ५... ...।"

चाचाखेडी का ताम्रपत्र[६७] (१८१६ ई०)

यह ताम्रपत्र वि० स० १८७३ ज्येष्ठ सुदि ४ (ई० स० १८१६ ता० ३० मई)

---

६५ ग्रोझा प्रतापगढ राज्य का इतिहास, पृ २७७

६६ ग्रोझा, बाँसवाड़ा राज्य का इतिहास, पृ १४३

६७. ग्रोझा, प्रतापगढ राज्य का इतिहास, पृ० २७७

सोमवार का है। इसमें द्वारिका के लक्ष्मी, सत्यभामा और राधिका के मंदिर के पुजारी वालकृष्ण, जयदेव और भंडारी जगन्नाथ का उल्लेख है जिनको महारावत सामन्तसिंह की द्वारिका यात्रा के समय चौहाण पूरबणी राणी ने अपनी जागीर का चाचाखेडी गाँव उक्त मंदिरों की भोग सामग्री के लिए भेंट किया। उक्त ताम्रपत्र को कुँवर दीपसिंह के कहने से किया गया।

सावली का ताम्र पत्र,[९८] (१८१६ ई०)

इस ताम्र पत्र से उस समय वोली जाने वाली सिरोही की भाषा का अनुमान लगाया जा सकता है। इसमें सोडेश्वर के मन्दिर के लिए सावली गाँव पुण्यार्थ देने उल्लेख है।

बीकानेर का दानपत्र (१८१६ ई०)

इसका समय वि० सं० १८७३ वैशाख सुदि ६ है। इसमें जो भाषा प्रयुक्त की गई है उसमें पंजाबी का भी प्रभाव दिखाई देता है।

प्रतापगढ़ का ताम्रपत्र,[९९] (१८१७ ई०)

यह ताम्रपत्र महारावत सामन्तसिंह के समय का है। जिसमें वि० सं० १८७४ द्वितीय श्रावण सुदि १५ (ई० स० १८१७ ता० २६ अगस्त) भौमवार को ज्येष्ठ वदि ३० के सूर्य पर्व के उपलक्ष में राज्य में लगने वाली ब्राह्मणों पर 'टंकी' को हटाने का उल्लेख है। यह 'टंकी' एक कर था जो प्रति रुपया एक आना के हिसाव से लगता था। इस कर से ब्राह्मणों को मुक्त करने का संकल्प महारावत ने शंखोद्धार तीर्थ में किया और उस संकल्प का पानी अमलावद के पंडित तारा के नाम छोड़ा गया। इसमें रावत की द्वारिका यात्रा की भी सूचना मिलती है। इस ताम्रपत्र को मेहता वेचरलाल ने महारावत के कुंवर दीपसिंह की आज्ञा से लिखा। इसका मूल इस प्रकार है।

"श्री मन्महाराजाधिराज महारावत जी श्री सामन्तसिंघ जी वचनात् कांठल देश ना समस्त ब्राह्मणां जोग्य अप्रंच श्री द्वारिका नाथजी नी जात्रा कीदी जदी श्रीवेट शंखोद्धार में ज्येष्ठ विदि ३० अमावस्यारे दिन सूर्य पर्व मध्ये त्राम्बा पत्रिक सर्व ब्राह्मण ने टंकी लागती हती ते गाम अमलावद नो पंडित तारा साथे हतो तेने हाथे श्री कृष्णार्पण करी दीधी आचन्द्रार्क यावत् उदक अघाट करी सारी लागट वलगट सहित निर्दोष करे दीधी जेनी हमारा वंसनो थई ने ब्राह्मणां थी चोलण करे नहीं चोलण करे जणीने चित्तोड नो पाप छे। अत्र दान वाक्य भूमि दत्वा भाविनो भूमिपालान् भूयो भूयो याचते रामचन्द्रः। सामान्योऽयं दानधर्मो नृपाणां स्वे स्वे कालो पालनीयो भवद्भिः।॥१॥ स्वदत्तांपर दत्तां वा यो हरेत वसुन्धरान्

---

९८. ओल्ड डि० रेकार्ड, नं० २१०६

९९. ओझा, प्रतापगढ़ राज्य का इतिहास, पृ. २७७-२७८।

षष्टि वर्ष सहस्त्राणि विष्टाया जायते कृमिः ॥२॥ हुकम श्री हजूरनो दुवे महाराज कु वर जी श्री दीपसिंघजी लिखितं येता बेचरलाल संवत् १८७४ रा वर्षे मास द्वितीय श्रावण सुदि १५ भौमवासरे ।"

भाचूंडला, पिपरोड का खेड़ा और माता खेडी का ताम्रपत्र,[100] (१८२५ ई०)

यह ताम्रपत्र प्रतापगढ राज्य के पिपरोड का खेड़ा और माता खेडी के गाँव के अनुदान सम्बन्धी है जिसका समय वि० सं० १८८२ प्रथम श्रावण सुदि १५ (ई० स० १८२५ ता० २६ जुलाई) है। इन तीनो गाँवो को द्वारिका मे सदाव्रत के लिए कृष्णार्पण करने का उल्लेख है।

सेमलखेडी का ताम्रपत्र,[101] (१८३५ ई०)

यह वि० स० १८६२ आषाढ सुदि २ तदनुसार ई० स० १८३५ ता० २८ जून चन्द्रवार का सेमलखेडी गाँव का ताम्रपत्र है, जिसमे राणी मेडतणी के बनवाये हुए मंदिर को गाँव सेमलखेडी भेंट करने का वर्णन है।

खेडा समोर गाँव का ताम्रपत्र,[102] (१८६३ ई०)

यह ताम्रपत्र डूंगरपुर के खेडा समोर गाँव का है जिसका समय वि० स० १९१८ (अमात) फाल्गुन (पूर्णिमात चैत्र) वदि ३ (ई० स० १८६३ ता० ८ मार्च) रविवार है। इसमे शाह निहालचन्द को वि० स० १९१६ मे कामदार नियत करने पर उक्त गाँव देने का उल्लेख है तथा उसकी सेवाओ का भी वर्णन है। यह ताम्रपत्र महारावल उदयसिंह के समय का है। इसमे वागडी भाषा प्रयुक्त की गई है।

मोरडी गाँव का ताम्रपत्र,[103] (१८७३ ई०)

यह ताम्रपत्र डूंगरपुर के मोरडी गाँव का है जिसका समय (आषाढादि) वि० सं० १९२९ (चैत्रादि १९३०) चैत्र सुदि ८ (ई० स० १८७३ ता० ५ अप्रैल) शनिवार है। इसमे निहालचन्द की अच्छी सेवाओ के उपलक्ष मे मोरडी गाँव देने का उल्लेख है। ताम्रपत्र महारावल उदयसिंह के समय मे दिया गया था, इसमे वागडी भाषा का प्रयोग है।

---

१००. ओझा, प्रतापगढ राज्य का इतिहास, पृ. २७८
१०१. ओझा, प्रतापगढ राज्य का इतिहास, पृ २७८
१०२. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ १-
१०३. ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास, पृ

सहायक ग्रन्थों की सूची

(अ) (अप्रकाशित सामग्री)

ओल्ड डिपोजिट रेकार्डस्

,, ,, फाइलें

,, ,, फोटो प्लेट

बीकानेर अभिलेखागार से प्रतिलिपियां

प्राइवेट कलेक्शन रेकार्डस्

(ब) (प्रकाशित पुस्तकें)

आर्कियोलोजिकल रिमेन्स, मोनुमेन्ट्स एण्ड म्यूजियम

आर्कियोलोजिकल एण्ड हिस्टोरिकल रिसर्च (सांभर)

ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भा० १-२

इण्डियन आर्कियोलोजी, १९६२-६३

ओझा, डूंगरपुर राज्य का इतिहास

,, जोधपुर राज्य का इतिहास भा० १-२

,, बीकानेर राज्य का इतिहास भा० १-२

,, प्रतापगढ़ राज्य का इतिहास

,, सिरोही राज्य का इतिहास

,, राजपूताने का इतिहास

,, बांसवाड़ा राज्य का इतिहास

,, भारतीय प्राचीन लिपिमाला

,, उदयपुर राज्य का इतिहास भा० १-२

एक्सकवेशन एट वैराट

खरतरगच्छ पट्टावली

गहलोत, राजपूताने का इतिहास, भा० १-२

,, कोटा राज्य का इतिहास

गोपीनाथ शर्मा, राजस्थान का इतिहास, भा० १

,, मेवाड़ एण्ड दि मुग़ल एम्परर्स

,, सोशल लाइफ इन मेडिवल राजस्थान

,, राजस्थान स्टडीज़

,, ए बिबलियोग्राफी ऑफ मेडिवल राजस्थान

टॉड, एनाल्स एण्ड एन्टिक्वीटीज ऑफ राजस्थान

नाहर, जैन शिलालेख संग्रह, भा० १-३
भावनगर इन्स्क्रिपशन्स
भंडारकर, इन्स्क्रिपशन्स
बिबलियोग्राफी ऑफ इण्डियन कोइन्स
मथुरालाल शर्मा (डा.) कोटा राज्य का इतिहास, भा० १-२
राइट, कैटलॉग ऑफ कोइन्स इन दि इण्डियन म्यूजियम
राजस्थान थ्रू एजेज
रेड एक्सकेवेशन, जयपुर
रेऊ, ग्लोरियस राठौड़्ज
रेऊ, जोधपुर राज्य का इतिहास, भा० १-२
वीलर, इण्डियन सिविलिजेशन
वेब, करेन्सीज ऑफ दि हिन्दू स्टेट्स ऑफ राजपूताना
श्यामलदास—वीर विनोद भा० १-५
सोमानी—कुंभा
सोमानी—चित्तौड़
सवानिया, एक्सकेवेशन ऐट आहड़, १९६९
स्मिथ, कैटलॉग ऑफ कोइन्स इन दि इण्डियन म्यूजियम
हन्सरेड, रंगमहल-दि स्वीडिश आर्कियालोजिकल एक्स्पीडीशन, १९५२-५४।

(स) (प्रकाशित पत्र-पत्रिकाएँ एवं रिपोर्टस्)

इण्डियन एन्टीक्वेरी
एडमिनिस्ट्रेटिव रिपोर्ट आर्कियोलोजिकल डिपार्टमेन्ट, जोधपुर, १९३४
एन्युअल रिपोर्ट राजपूताना म्यूजियम, अजमेर
एपिग्राफिया इन्डिका
कोर्प्स इन्सक्रिपशन, इन्डिया
जरनल ऑफ न्यूमिसमेटिक, भा० ८
जरनल ऑफ रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, बंगाल
जरनल ऑफ एशियाटिक सोसाइटी, बम्बई
जरनल ऑफ बिहार रिसर्च सोसाइटी
टाइम्स ऑफ इण्डिया, १४-१०-७२।
नागरी प्रचारिणी पत्रिका
प्रोग्रेस रिपोर्ट आर्कियालोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, वेस्टर्न सर्कल
प्रोसीडिंग्ज ऑफ इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस
प्रताप शोध प्रतिष्ठान पत्रिका
फ्लीट, गुप्ता कोइन्स

बंबई गज़ेटियर
भारतीय पुरातत्व
मरु भारती
राजस्थान भारती, वर्ष ६, अंक २
रायल एशियाटिक सोसाइटी रिपोर्ट्स
रिसर्चर, समर अङ्क
,, (फारसी लेख)
वरदा वर्ष १, अंक ४
वासुदेव उपाध्याय, भारतीय सिक्के
वियानी ओरियन्टल जरनल
सरस्वती, भाग १८
शोध पत्रिका

——

अनुक्रमणिका

अ

आ

औ

अं

क

ख

ग

घ

च

छ

ज

ध

न

प

फ

ब

य

र

ल

स

श

ष

ह

शुद्धि पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८८	१३	निरगति	निरर्गल
८८	१६	शेरदर	शेरार
८८	१९	शांटेः	शाहैः
८८	१६	प्रदढं	प्रबद्धं
८६	२४	राजमत्र	राजमस्त
६२	१२	भण्डारक	भण्डारकर
६३	५	द्रमा	द्रमा
६७	३४	रेञ्ह	रेऊ
६८	२	क्रिरोट	निराट
१०१	२६	वेल्हणक	वेल्हणके
१०१	२६	रजणीका	रउणीगा
१०२	११	सूणयसदी	सूणवसही
१०६	३२	की	को
११०	४	प्रचेह	प्रचेह
११२	६	सेलद्रुपर	सेतद्रुपर
११३	२५	सौंदर्य	सोदर्य
११४	१५	भर्तृप्ररीय	भर्तृपुरीय
११८	८	द्वादष्श	द्वादश
१२२	३१	वर्धरवाल	बघेरवाल
१२५	३०	स्त्राय	सत्राय
१२६	१०	न्याय	रयाय
१२६	२२	प्रबंद	प्रर्बुद
१२७	८	निहुण	तिहुण
१३४	८	मिल्लाद्	मिल्लाद्
१३४	२६	सेलहय	सेसहय
१४०	१६	सीगोदे	सीसोदे
१४०	१५	मुम्माण	गुम्माण
१४१	३	मडोर	मंडोर
१४१	४	सीलामरत्र	सीलामात्र
१४५	२०	राम	राज
१४६	२६	क्षेय	क्षेत्र
१५८	२८	घोसुन्दी	घोसुन्डी
१७३	१७	प्रगरसिहजी	प्रमरसिहजी
१७३	१६	माई	माई

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१७५	४	मेद्यपाने	मद्यपाने
१७५	२८	मांडलगढ़	मांडल
१८२	२२	मथुरानामे	मथुरानाथे
१९२	२	ह्र्यं	ह्वयं
१९२	२०	सुधार	सूथार
१९२	३१	भया	मया
२१०	६	छन्यानी	छन्याती
२२२	२५	ताग	ताक
२२७	६	मुर्जाअली	मिर्जाअली
२३५	४	भाका	भाऊ
२३५	५	आपिभ	आलिम
२३८	३०	प्रस्तादेन	प्रसादेन